डॉ. उमा गोयल

श्री हरि मोहन मालवीय
अध्यक्ष, हिन्दुस्तानी एकेडेमी
द्वारा प्रदत्त

वधर्म भारतीय संस्कृति का हृदय है और हृदय को पुष्ट किया है
वन धर्म-साधना के विविध संप्रदायों ने। चैतन्य संप्रदाय ने भाव
सिद्धांत दर्शन भाषा संस्कृति और ललित कलाओं के क्षेत्र में
नेक योगदान दिया। इस संप्रदाय का ब्रजभाषा-प्रदेय अत्यंत
धान है। इसके विशाल व उत्कृष्ट ब्रजभाषा-काव्य की सैद्धांतिक
साहित्यिक धरातल पर शोध-प्रविधि से मीमांसा की महती
वश्यकता अनुभव की जा रही थी। आह्लाद की बात है कि विदुषी
उषा गोयल ने इस दिशा में अत्यंत परिश्रम व निष्ठा से शोध-
किया।

प्रस्तुत ग्रंथ में चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य के
गत सिद्धांत-तत्त्व, आचार-विधान, दर्शन, काव्य-सौंदर्य
साहित्यिक मूल्यांकन—सबकी सुविस्तृत अनुसंधानात्मक मीमांसा प्रथम
प्रस्तुत की गयी है। लेखिका ने भक्तिरस शास्त्रीय मानदंड के साथ
काव्यशास्त्र के निकष पर इस काव्य को सम्यक्तः परखकर इसका
चित मूल्यांकन किया है। अनेक अज्ञात प्राचीन व महत्त्वपूर्ण
हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण व चित्रों को देकर जहाँ विषय-वस्तु को
अधिक प्रामाणिक बनाया है वहीं अनुसंधाताओं के लिए दिशा-
निर्देश भी किया है। वस्तुतः डॉ. उषा गोयल की यह कृति विशद
रस-तत्त्व की परिचायिका और काव्योत्कर्ष की मार्मिक संवाहिका
प्रस्तुत अध्ययन साहित्य, काव्यशास्त्र, भक्ति-रस शास्त्र, दर्शन
कला-अध्येताओं द्वारा समादृत होगा, ऐसा विश्वास है।

N 81-214-0355-3

मूल्य : २००.००

नल
ब्लशिग
स
रियागंज, नयी दिल्ली-११०००२

चैतन्य-संप्रदाय का ब्रजभाषा-काव्य

डॉ० उषा गोयल

नेशनल पब्लिशिंग हाउस
२३, दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं
चौड़ा रास्ता, जयपुर
३४, नेताजी सुभाष मार्ग, इलाहाबाद-३

ISBN 81-214-0355-3

मूल्य : २००.००

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२ द्वारा प्रकाशित / प्रथम संस्करण : १९९०//कला भारती, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२ में मुद्रित।

CHETANYA-SAMPRADAYA KA BRAJBHASHA-KAVYA
by Dr. Usha Goyal
Rs. 200.00

श्रद्धेय
पिताश्री
स्व० श्री विश्वेश्वरनाथ जी गुप्त
एवं
गुरुवर
स्व० डॉ० सत्येन्द्र जी
की
पावन स्मृति में
सादर समर्पित

नेशनल पब्लिशिंग हाउस
२३, दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं
चौड़ा रास्ता, जयपुर
३४, नेताजी सुभाष मार्ग, इलाहाबाद-३

ISBN 81-214-0355-3

मूल्य : २००.००

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३, दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२ द्वारा प्रकाशित / प्रथम संस्करण : १९९० /कला भारती, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२ में मुद्रित ।

CHETANYA-SAMPRADAYA KA BRAJBHASHA-KAVYA
by Dr. Usha Goyal
Rs. 200.00

श्रद्धेय
पिताश्री
स्व० श्री विश्वेश्वरनाथ जी गुप्त
एवं
गुरुवर
स्व० डॉ० सत्येन्द्र जी
की
पावन स्मृति में
सादर समर्पित

संकेतिका

अ०	अध्याय, अनुवाद (प्रसंगानुसार)
अ० मा०	अभिलाषा माधुरी
आ० वा०	आदि वाणी
उ० च०	उद्धव चरित्र
उ० नी०	उज्ज्वल नीलमणि
कि० क० क०	किशोरी करुणा कटाक्ष
क्र०	क्रमांक
कृ० ज० से० सं०	कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा
खो० रि०	खोज रिपोर्ट (नागरी प्रचारिणी सभा)
ग्रं० सं०, गु०	ग्रंथ संख्या, गुटका
ग० भ० वा०	गदाधर भट्ट की वाणी
गौ० भू० मं०	गौरांग भूषण मंझावली
चै० च०	चैतन्य चरितामृत
चै० म० ब्र० सा०	चैतन्य मत और ब्रज साहित्य
चै० स० हि० दे०	चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन
छ० सं०	छंद संख्या
टि०	टिप्पणी
द० वि०	दंपति विलास
दे०, द्र०	देखिए, द्रष्टव्य
प० स०	पद संख्या
प० म०	पथिक मराल
प्र०	प्रकाशक
प्रा० वि० प्र०	प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान
प्रे० र० वा०	प्रेम रस वाटिका

पृ० स०	पृष्ठ सख्या
ब्र० सा० इ०	ब्रज साहित्य का इतिहास
भ० क० व्यास	भक्त कवि व्यास जी
भ० र० सि०	भक्त रसामृत सिंधु
भा०	भागवत
मा० वा०	माधुरी वाणी
माधव० वा०	माधवदास की वाणी
मू०	मूल
र० क० द०	रस कलिका दल
र० का०	रचना काल
रा० र० सा०	राधारमण रस सागर
रा० शो० सं०	राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी (जोधपुर)
लि० का०, लि० क०, लि० स्था०	लिपि काल, लिपि कर्ता, लिपि स्थान
ले०	लेखक
व० र० वा०	वल्लभ रसिक की वाणी
वृ० शो० सं०	वृंदावन शोध संस्थान, वृंदावन
श०	शती
शो० प०	शोभन पदावली
सं०, स०	(वि०) संवत्, संदर्भ, संपादक, संख्या (प्रसंगानुसार); (ईसवी) सन्
संग्र०	संग्रहकर्ता, संग्रहालय (प्रसंगानुसार)
सा० सं०, रा० वि०	साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर
सू० म० वा०	सूरदास मदनमोहन की वाणी
ह० प्र०	हस्तलिखित प्रति

भूमिका

भागवद्धर्म भारतीय संस्कृति का हृदय है और हृदय को पुष्ट किया है भागवत धर्म-साधना के विविध संप्रदायों ने। वल्लभ, निंबार्क, राधावल्लभ, हरिदासी आदि संप्रदायों के अनेकानेक भक्त-कवियों ने अपने वाणी-विधान से भागवद्धर्म को महनीय बनाया है। चैतन्य संप्रदाय ने भाव, रस, सिद्धांत, भाषा, संस्कृति और ललित कलाओं के क्षेत्र में अप्रतिम योगदान दिया। इस संप्रदाय का ब्रजभाषा प्रदेय भी अत्यंत मूल्यवान है। इसके विशाल व उत्कृष्ट ब्रजभाषा-काव्य की सैद्धांतिक व साहित्यिक धरातल पर शोध-प्रविधि से मीमांसा की महती आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। आह्लाद की बात है कि विदुषी डॉ० उषा गोयल ने इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु बड़े परिश्रम व निष्ठा से शोध कार्य किया है तथा चैतन्य-साहित्य के चिंतन और उसके रस-समुद्र में अनवरत गोते लगाते हुए यह महनीय ग्रंथ-रत्न दिया है। महामहिम उपराष्ट्रपति डॉ० शंकरदयाल शर्मा ने गत वर्ष डॉ० उषा के प्रधान संपादकत्व में प्रकाशित, 'श्री चैतन्य महाप्रभु : संस्कृति और साहित्य' नामक वृहद् ग्रंथ (चैतन्य-पंचशती ग्रंथ) दिल्ली में राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित एक विशेष समारोह में लोकार्पित किया था और अब प्रस्तुत उत्कृष्ट साहित्य-समीक्षापूर्ण कृति विद्वत्-समाज को अर्पित है।

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य में निहित सिद्धांत तत्त्व, आचार-विधान, दर्शन, काव्य-सौंदर्य, आध्यात्मिक उन्मेष - सबकी सुविस्तृत अनुसंधानात्मक मीमांसा इस शोध कृति में प्रथम बार प्रस्तुत की गयी है। विषय-चयन, सामग्री-संकलन, तथ्य-निरूपण और अध्ययन-सापेक्ष अनुशीलन ने इस प्रबंध को प्रबुद्ध स्वरूप दिया है। आलोच्य ब्रजभाषा-काव्य में निहित उपास्य तत्त्व को व्यापक फलक पर उद्-घाटित करने के साथ ही लेखिका ने काव्य-सौष्ठव को भी मार्मिक भाषा में गहराई से उजागर किया है। इस संप्रदाय के विशिष्ट दर्शन-अचिंत्य भेदाभेद, मधुर रसो-पासना, मंजरी भाव साधना, राधाकृष्ण और उनके मिलित अवतार चैतन्य महा-प्रभु की महाभावपरक लीला-रस अभिव्यंजना की सूक्ष्म विवेचना करके प्रस्तुत

व्रजभाषा-काव्य के वैशिष्ट्य और महत्त्व को भली भांति प्रतिष्ठित किया है। चैतन्य संप्रदाय के आचार्यों द्वारा प्रतिपादित भक्ति-रस शास्त्रीय मानदंड के साथ ही काव्य-शास्त्रीय निकष पर इस काव्य को समग्रतः परखकर उनका समुचित मूल्यांकन किया है।

व्रजमंडल व राजस्थान के अनेक हस्तलिखित ग्रंथ-भंडारों में डॉ० उषा गोयल ने परिश्रम व मनोयोगपूर्वक प्राचीन पाडुलिपियों का अनुसंधानात्मक अध्ययन-अनुशीलन किया। इस पुस्तक में अनेक अज्ञात प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण उद्धरण एवं चित्रों को देकर जहां कथ्य व तथ्य को तर्कसम्मत व प्रमाण-सिद्ध किया गया है। वहीं अनेक ज्ञात-अज्ञात वाणीकारों के अनालोचित साहित्य को प्रस्तुत कर भावी अनुसंधाताओं के लिए दिशा-निर्देश भी किया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि चैतन्य सम्प्रदाय के साहित्य का अभी पाठानुसंधानपूर्वक प्रकाशन नितांत नगण्य है।

यह प्रबंध मनःप्रसादन से अधिक मनोन्नयन की वस्तु है। शोधार्थी लेखिका को भक्ति-संस्कृति विरासत में मिली है जिसे उन्होंने समाहित निष्ठा द्वारा अनुशीलन-परिशीलन से और पुष्ट कर लिया है। साथ ही, उन्होंने पूर्वाग्रह के स्थान पर शोधोचित तटस्थता रखते हुए विषय का तर्कोचित प्रतिपादन किया है। सब मिला-कर यह कृति विशद् भक्ति तत्त्व की परिचायिका और काव्योत्कर्ष की मार्मिक संवाहिका है। यह अध्ययन साहित्य, काव्य शास्त्र, भक्ति-रस शास्त्र, दर्शन और कला-अध्येताओं द्वारा समादृत होगा, ऐसा विश्वास है। शत-शत बधाई। आशा है कि डॉ० (श्रीमती) उषा गोयल आगे भी अपनी कृतियों द्वारा व्रज-वाङ्मय के विभिन्न आयामों को अपनी प्रखर प्रतिभा के साथ विमर्शित करती रहेंगी।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
संवत् २०४६

— डॉ० नरेशचन्द्र बंसल
(पूर्व निदेशक, वृंदावन शोध-संस्थान, वृंदावन)
तथा
रीडर एवं अध्यक्ष,
हिंदी स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध विभाग,
के० ए० (पी० जी०) कॉलिज, कासगंज (उ० प्र०)

प्राक्कथन

मध्यकाल में महान् भक्ति-आंदोलन से अनुप्रेरित होकर कृष्ण-भक्ति-काव्य-धारा प्रान्तीय सीमाओं को तोड़कर उमड़ पड़ी। विभिन्न संप्रदायों से सबद्ध हिंदी, बंगला, गुजराती, मराठी आदि अनेक भाषाओं में विशाल कृष्ण-भक्ति साहित्य का निर्माण हुआ। इस धारा में चैतन्य संप्रदाय का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न सप्रदायों के साहित्य पर विचार, विश्लेषण व अनुशीलन हिंदी में हुआ है, परंतु चैतन्य संप्रदाय का हिंदी साहित्य बहुत समय तक प्रकाश में नहीं आया। अतः यह माना जाता रहा कि चैतन्य संप्रदाय के अनुयायियों द्वारा संस्कृत व बंगला भाषा में साहित्य की रचना की गयी, ब्रजभाषा में अति न्यून मात्रा में रचनाएं हुई हैं।

अपने पारिवारिक परिवेश जन्य भक्ति-संस्कारों व भक्ति साहित्य के प्रति स्वाभाविक अनुराग और रुचि से प्रेरित होकर मुझे अपने पिता स्व० श्री विश्वेश्वर नाथजी गुप्त 'मधुर' के संग्रह में उपलब्ध भक्ति साहित्य के अंतर्गत चैतन्य सप्रदाय के कुछ सैद्धांतिक एवं साहित्यिक ग्रंथों के अध्ययन का सुअवसर मिला। इस साहित्य का अध्ययन-अनुशीलन करते हुए मेरे मन में यह सहज जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि चैतन्य महाप्रभु की जिस माधुर्य भक्ति का गहरा प्रभाव बंगाल पर ही नहीं अपितु बंगाल के बाहर ब्रज व अन्य दूर-दूर के प्रांतों तक पड़ा है और जिससे प्रेरित होकर बंगला एवं संस्कृत में विपुल साहित्य-सृजन हुआ है, क्या यह संभव है कि चैतन्य सप्रदाय के हिंदी कवि चैतन्य के इस प्रभाव से अछूते रहते? हिंदी-कवियों पर भी यह प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी था। युगीन भक्ति आंदोलन से प्रेरित होकर जब वल्लभ, निंबार्क, राधावल्लभ आदि अन्य संप्रदायों के कवियों ने ब्रजभाषा में रचनाएं की हैं तो चैतन्य संप्रदाय में भी कुछ कवि हुए होंगे जिन्होंने अपनी भक्ति भावना को ब्रजभाषा-काव्य के रूप में अभिव्यक्त किया होगा।

मैंने अपनी यह जिज्ञासा, चैतन्य सप्रदाय के मर्मज्ञ विद्वान आचार्य श्री रास-विहारी जी गोस्वामी (राधारमणीय गोस्वामी, वृंदावन) के समक्ष (जयपुर आगमन पर) प्रकट की। मुझे उनसे ज्ञात हुआ कि इस सप्रदाय के अंतर्गत संस्कृत व

बंगला में ही नहीं अपितु ब्रजभाषा में भी अनेक रचनाएं की गयी हैं जो हस्तलिखित ग्रंथों के रूप में ब्रज मंडल में उपलब्ध हैं। उन्होंने मुझे इस दिशा में कार्य हेतु प्रेरित किया। हस्तलिखित ग्रंथो के प्रति मेरी अभिरुचि तभी से है जब मैंने एम० ए० (हिंदी) में अध्ययनकाल के अंतर्गत लघु शोध प्रबंध के रूप में बिहारी सतसई के १२० दोहों के पाठालोचन पर कार्य करते हुए हस्तलिखित ग्रंथों का अनुशीलन किया। उस समय राजस्थान विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में रीडर डॉ० (श्रीमती) गायत्री वैश्य के सुनिर्देशन एवं अध्यक्ष डॉ० सत्येन्द्र व प्रो० डॉ० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण' के दिशा-निर्देशन में पाठानुसंधान व पाठनिर्माण विज्ञान से संबंधित जिन मूलभूत व महत्त्वपूर्ण तत्त्वों का ज्ञान हुआ वह आगे प्राचीन पाण्डुलिपियों के वैज्ञानिक अध्ययन-अनुशीलन में बहुत सहायक सिद्ध हुआ।

चैतन्य सम्प्रदाय से संबद्ध पाण्डुलिपियों के अवलोकन की प्रबल आकांक्षा लेकर जब मैंने वृंदावन की यात्रा की तब कुछ हस्तलिखित ब्रजभाषा ग्रंथ देखने के लिए उपलब्ध हुए व कुछ के विषय में सूचना मात्र प्राप्त हुई। इसी समय श्री प्रभुदयाल मीतल की पुस्तक 'चैतन्य मत और ब्रज-साहित्य' देखने पर मुझे विदित हुआ कि चैतन्य संप्रदाय के शताधिक कवियों की धारा हिंदी में चली आ रही है। अतः मैंने चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य पर शोधकार्य करने का विचार किया। इस विषय पर अनुसंधान की संभावना के संबंध में ब्रज-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान आचार्य डॉ० गौरी शंकर सत्येन्द्र व डॉ० गायत्री वैश्य से विचार-विमर्श करने पर उन्होंने इस विषय का सहर्ष स्वागत करते हुए कार्य हेतु प्रोत्साहन दिया। डॉ० वैश्य के सुनिर्देशन में मैंने व्यवस्थित रूप में शोध-कार्य प्रारंभ किया।

किसी भी संप्रदाय या धर्म के साहित्य पर शोध करते समय सर्वप्रमुख कठिनाई उससे संबंधित सामग्री उपलब्ध करने में होती है। चूंकि प्राचीन धार्मिक व सांप्रदायिक साहित्य अधिकांशतः हस्तलिखित प्रतियों के रूप में सम्प्रदाय के मंदिरों के पुजारियों-गोस्वामियों के पास या व्यक्तिगत संग्रह के रूप में परंपरागत रूप में विद्यमान रहता है, अतः सर्वसाधारण को सुलभ नहीं होने से यह साहित्य प्रकाश में नहीं आ पाता। चैतन्य संप्रदाय का ब्रजभाषा काव्य स्वल्प रूप में ही प्रकाशित हो पाया है। अधिकांशतः यह हस्तलिखित प्रतियों के रूप में इस संप्रदाय के गोस्वामियों, कवियों के वंशधरों, मंदिरों व कुछ संस्थाओं में उपलब्ध है। अपने शोध-कार्य से संबंधित सामग्री-संकलन के लिए मैंने अनेक बार वृंदावन की यात्रा की। इसके अतिरिक्त हस्तलिखित ग्रंथों की खोज में मैं मथुरा, गोवर्द्धन व उसके आसपास के स्थलों —आगरा, कासगंज, जोधपुर, अलवर व उदयपुर गयी।

प्रारंभ में सामग्री-संकलन के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कुछ महानुभाव अपना ग्रंथ देना तो दूर, उसे दिखाने के लिए भी तैयार नहीं होते थे। कई अपने अव्यवस्थित ग्रंथागार में से ग्रंथ खोजकर देने का कष्ट नहीं करते

थ। बारबार जाने और अनुरोध करने पर किसी तरह उन्हे विश्वास मे लिया, तब कुछ ने वहीं बैठकर कार्य करने के लिए स्वीकृति दी। उसमें भी कई कठिनाइया आयी। उनके अस्त-व्यस्त ग्रंथो को व्यवस्थित करना और उनमें से सामग्री का चयन करना काफी समय-साध्य एव कठिन कार्य था। सौभाग्य से हस्तलिखित ग्रथो पर शोध के दुष्कर कार्य को संपन्न कराने मे कुछ विद्वान महानुभावों का पर्याप्त सहयोग मुझे मिला। श्रद्धेय श्री रासविहारी जी गोस्वामी व श्री विश्वंभर जी गोस्वामी (राधारमणीय गोस्वामी, वृंदावन) एवं डॉ० नरेशचन्द्र जी बंसल ने अपने ग्रंथागार के द्वार मेरे लिए उदारतापूर्वक खोल दिये एवं संबधित व्यक्तियो से परिचय कराकर अनेक दुर्लभ ग्रथ भी उपलब्ध कराये। डॉ० नरेशचन्द्र बंसल (रीडर-अध्यक्ष, हिंदी विभाग, के० ए० स्नातकोत्तर कॉलेज, कासगज, उ० प्र०) प्राच्य विद्या व पांडुलिपियो के ज्ञाता एवं भक्ति-साहित्य-संस्कृति के मर्मज्ञ विद्वान लेखक है। इनके शोध प्रबंध —'चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन' (अब यह प्रबंध 'चैतन्य सप्रदाय: सिद्धात और साहित्य' नामक पुस्तक रूप मे विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा से प्रकाशित है।) से मुझे बहुत सहायता मिली। बसल जी ने न केवल अपने निजी पुस्तकालय (जिसमे अनेक हस्तलिखित ग्रथ, उनकी प्रतिलिपियां व प्राचीन चित्र आदि महत्त्वपूर्ण सामग्री भी है) का उपयोग करने की पूरी स्वतत्रता मुझे दी अपितु अपना अमूल्य समय देकर सांप्रदायिक सिद्धातों व गूढ़ तत्त्वों को समझाया, यहां तक कि शोध के लिए आवश्यक सामग्री भी भेजते रहे। इस प्रकार इनके आत्मीय व सक्रिय सहयोग से मेरा कार्य प्रशस्त होता गया।

शोध की आवश्यकता

चैतन्य सप्रदाय के बंगला व संस्कृत साहित्य पर विचार-चिंतन व विश्लेषण कुछ विद्वानों द्वारा किया गया है किंतु इस सप्रदाय का हिंदी साहित्य काफी समय तक अज्ञात रहा। अब तक यह धारणा रही कि वल्लभ, राधावल्लभ व निंबार्क आदि अन्य सप्रदायो मे विपुल परिमाण मे व्रजभाषा-काव्य की रचना हुई है किंतु चैतन्य सप्रदाय मे अति न्यून मात्रा में ही व्रजभाषा की रचनाएं है। वास्तविकता यह है कि अन्य सप्रदायो की भांति इस संप्रदाय का व्रजभाषा-काव्य परिमाण व काव्य-वैभव की दृष्टि से अत्यत समृद्ध है। इसमे विषय की व्यापकता-विविधता, गूढ भक्ति-तत्त्व के साथ-साथ उच्चस्तरीय काव्य-गुण भी निहित है। यह हमारे मध्य-युगीन व्रज-साहित्य व संस्कृति की अनुपम निधि है। वैभव सपन्न यह काव्य-राशि हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में सर्वथा उपेक्षित रही। इस विशाल और उत्कृष्ट साहित्य का, स्वतंत्र रूप से शोधात्मक समालोचना के अभाव मे, सम्यक् मूल्यांकन अब तक नहीं हो सका। प्रस्तुत शोध-प्रबंध इस अभाव की पूर्ति की दिशा में किया

आने वाला एक विनम्र प्रयास है

चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य को सर्वप्रथम प्रकाश में लाने का श्रेय तपोनिष्ठ बाबा कृष्णदास जी (कुसुम सरोवर, गोवर्धन) को है। इस सम्प्रदाय के कवियों एवं उनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं का परिचय डॉ० नरेशचन्द्र बंसल व डॉ० प्रभुदयाल मीतल ने एवं अति संक्षिप्त रूप में डॉ० सत्येन्द्र ने प्रस्तुत किया है (विस्तृत विवरण हेतु द्र० इस प्रबंध का द्वितीय अध्याय 'कवि और काव्य')। निस्संदेह इन सभी विद्वानों द्वारा किये गये कार्य चैतन्य सम्प्रदाय की अब तक उपेक्षित साहित्यिक धरोहर को प्रकाश में लाने हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण व स्तुत्य प्रयास है। शोध के मार्ग को आगे प्रशस्त करने में इनका अपूर्व योगदान है, किंतु इतने विशाल व उच्चस्तरीय साहित्य के समुचित मूल्यांकन के लिए यह आवश्यक था कि पृथक् रूप से इस काव्य की साहित्यिक व सैद्धान्तिक दृष्टि से सर्वांगपूर्ण मीमांसा व गवेषणात्मक समालोचना हो। यह पक्ष अभी तक सर्वथा अछूता रहा। अद्यावधि अनालोचित इस साहित्यिक व सैद्धान्तिक पक्ष का अनुसंधानात्मक अनुशीलन व विवेचन-विश्लेषण करने का अकिंचन प्रयास मैंने इस शोध-प्रबंध में किया है। अपने शोध कार्य के अंतर्गत मुझे अब तक अज्ञात अनेक महत्वपूर्ण पांडुलिपियां उपलब्ध हुईं, जिनसे प्राप्त नवीन तथ्यों व प्रमाणों के आलोक में प्रस्तुत ब्रजभाषा-काव्य व कृतिकारों पर पुनर्विचार व पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता अनुभव की गयी। प्रस्तुत कृति में इस आवश्यकता-पूर्ति का भी यथासंभव प्रयास किया गया है।

चैतन्य संप्रदाय से संबद्ध विपुल हस्तलिखित प्रतियों की उपलब्धि इस संप्रदाय के कवियों और उनकी रचनाओं की लोकप्रियता व महत्ता को स्वतः सिद्ध करती है। इनमें अनेक काव्य भक्ति तत्त्व व काव्यत्व की दृष्टि से इतने समृद्ध व उत्कृष्ट हैं कि वे स्वतंत्र अध्ययन व अनुसंधान की अपेक्षा रखते हैं। विभिन्न हस्तलिखित पद-संग्रहों में अनेक कवियों के पद बहुलता से उपलब्ध होते हैं जिनका प्रामाणिक रूप में संकलन अपेक्षित हैं। कृतियों के पाठालोचन, संपादन और समीक्षण से संबंधित शोध संभावनाएं भी निहित है। भावी शोधार्थियों को इस संप्रदाय संबंधी साहित्य के विभिन्न पक्षों पर कार्य करने हेतु प्रचुर सामग्री उपलब्ध है।

प्रबंध-परिचय

प्रस्तुत कृति राजस्थान विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि-प्राप्त मेरे शोध-प्रबंध का संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण है। इस प्रबंध पर उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् विगत दस वर्षों में पांडुलिपियों पर अनवरत शोध-कार्य करते हुए मुझे चैतन्य संप्रदाय से संबद्ध अन्य अनेक पांडुलिपियां मिलीं, नवीन कृतियां व नये

त य प्रकाश म आय (विशेष रूप स म धवदास जग नाथी भगवानदास हरिराम व्यास व लम्पट रसिक व गोपाल राय की रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियां एव सूरदास मदनमोहन व मनोहरदास जी के अनेक पद) उनका भी विवरण व विवेचन आवश्यक व महत्वपूर्ण जानकर, इस पुस्तक मे समाविष्ट कर दिया है।

प्रथम अध्याय में चैतन्य संप्रदाय के उद्भव, स्थापना एवं विकास का संक्षिप्त परिचय देते हुए इसके दर्शन, भक्ति व रस संबंधी सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। सिद्धांत-विवेचन में प्रमुख रूप से संप्रदाय के संस्कृत व बंगला ग्रंथ—विशेष रूप से रूप गोस्वामी व जीव गोस्वामी के ग्रंथ तथा कृष्णदास कविराज कृत 'चैतन्य चरितामृत' आधारभूत ग्रंथ रहे हैं। 'कवि और काव्य' शीर्षक द्वितीय अध्याय चैतन्य संप्रदाय के प्रमुख कवियों और उनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं के संक्षिप्त परिचय से संबंधित है। कवियों का चयन सांप्रदायिक एवं साहित्यिक—दोनों दृष्टि-कोणों को ध्यान में रखकर किया गया है। कवि एवं काव्य संबंधी परिचय में प्रमुख दृष्टि उनके समय आदि की प्रामाणिकता व निष्पक्षता पर रही है। इसके लिए अंतःसाक्ष्य व बहिर्साक्ष्य दोनों रूपों में अनेक हस्तलिखित प्रतियों व प्रामाणिक उल्लेखों-संदर्भों को आधार बनाया गया है। अब तक अज्ञात अनेक प्राचीन हस्त-लिखित ग्रंथों का भी परिचय दिया गया है।

तृतीय अध्याय के अंतर्गत इस संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों की भक्ति तत्त्व एवं दर्शन के संबंध में अभिव्यक्त मान्यताओं को स्पष्ट किया गया है। आलोच्य ब्रजभाषा-काव्य में उपलब्ध भक्ति तत्त्व, स्वरूप, महिमा, प्रकार व भक्ति के अनिवार्य अंगों, नवधा भक्ति के साधनों तथा अष्टप्रहर लीला सेवा-विधान का विवेचन है। आवश्यकतानुसार प्रसंग के अनुकूल, सांप्रदायिक मान्यताओं से तुलना करने की चेष्टा भी की गयी है। प्रबंध का चतुर्थ अध्याय—'भाव-चित्रण' भक्ति एवं काव्य दोनों दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। इसमें वर्ण्यवस्तु एवं उसमें अभिव्यक्त विविध भावों का विश्लेषण एवं विवेचन है। कृष्ण-लीला परक काव्य के साथ-साथ चैतन्य-लीला संबंधी काव्य के भाव-सौंदर्य को भी उद्घाटित किया गया है। चैतन्य-लीला विषयक पदों की रचना इस संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य की अपनी विशिष्टता है जो इसे ब्रज के अन्य संप्रदायों से पृथक् व विशिष्ट रूप प्रदान करती है। मधुर, वात्सल्य, दास्य एवं सख्य भाव से संपन्न विविध लीला-प्रसंगों के अंतर्गत भावों की गंभीरता, सूक्ष्मता एवं सुंदरता विश्लेषित है। इसमें भावों की अलौकिकता को स्पष्ट करने के साथ-साथ साहित्य के स्वाभाविक मापदंडों से भावों की विवेचना मौलिक रूप से की गयी है।

'रस-निरूपण' शीर्षक पंचम अध्याय में रस-शास्त्र की दृष्टि से प्रस्तुत काव्य की समालोचना है। चूंकि यह काव्य मात्र काव्य ही नहीं, अपितु भक्ति का भी इसमें समावेश है अतः इसके समुचित मूल्यांकन के लिए साहित्यिक रस शास्त्र के

साथ-साथ भक्ति-रस शास्त्र के सिद्धांतों के अनुसार भी इसके परीक्षण की आवश्यकता अनुभव की गयी अत: इन दोनों दृष्टियों से समीक्षा की गयी है। षष्ठ अध्याय चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य की कलागत समीक्षा से संबंधित है। विविध अलंकारों एवं छंदों के प्रयोग का दिग्दर्शन है जो काव्य-सौंदर्य के उत्कर्ष में सहायक रहे हैं। भाषा एवं शैली के विवेचन से कवियों की भावाभिव्यंजक शक्ति का परिचय प्राप्त होता है।

'उपसंहार' के अंतर्गत समग्र रूप से इस संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य का मूल्यांकन है। लोक संस्कृति, धर्म, दर्शन, साहित्य, संगीत आदि सभी दृष्टियों से प्रस्तुत काव्य के योगदान को स्पष्ट करते हुए इसके महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है। 'परिशिष्ट' में उन सभी अवशिष्ट कवियों एवं उनके ब्रजभाषा-काव्य की सूची है जिन्हें द्वितीय अध्याय में स्थान नहीं मिल सका है। परिशिष्ट में देने का यह अर्थ कदापि नहीं कि इनकी रचनाओं का महत्त्व नहीं है, अपितु शोध-प्रबंध की सीमाओं के कारण ऐसा हुआ है। यह सूची आगे शोध-कार्य में सहायक हो सकेगी। विविध संग्रहालयों में उपलब्ध चैतन्य संप्रदाय के हस्तलिखित ब्रजभाषा-काव्य-ग्रंथों की विवरणात्मक तालिका, जो मूल शोध-प्रबंध में नहीं थी, अब यथा आवश्यक पुस्तक के परिशिष्ट में दे दी गयी है ताकि आगे इन पांडुलिपियों के पाठालोचन, संपादन व समीक्षण से संबंधित शोध-कार्य प्रशस्त हो सके। इसी प्रकार कुछ दुर्लभ व महत्त्वपूर्ण प्राचीन पांडुलिपियों के चित्र भी बढ़ाये गये हैं जो परिशिष्ट में 'चित्रावली' के अंतर्गत प्रकाशित हैं।

इस प्रकार, इस शोध प्रबंध में चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य की अनेक प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के विवरण के साथ-साथ, इसके विवेचन-विश्लेषण संबंधी समीक्षात्मक सामग्री मौलिक रूप में प्रथम बार प्रस्तुत की गयी है।

आभार

सर्वप्रथम मैं अपने श्रद्धेय पिताश्री स्वर्गीय श्री विश्वेश्वरनाथ जी गुप्त 'मधुर' (टाटीवाला) के प्रति हार्दिक श्रद्धा-भाव समर्पित करती हूं। चैतन्य संप्रदाय पर शोध-कार्य करने की अभिलाषा-स्वरूप जो बीजारोपण उन्होंने मेरे मानस में किया उसी का प्रस्फुटन है यह शोध-प्रबंध। उनका अपार स्नेहाशीर्वाद सदा मेरे लिए सम्प्रेरक रहा। श्रद्धेय गुरुवर स्व० डॉ० सत्येन्द्र जी ने अत्यंत स्नेहपूर्वक अपना अमूल्य समय देकर, महत्त्वपूर्ण निर्देशों से सदा मेरा मार्ग प्रशस्त किया। इस शोध-प्रबंध को प्रकाशित रूप में देखने की उनकी हार्दिक आकांक्षा थी। मुझे अत्यंत खेद है कि उनके आकस्मिक निधन के कारण मैं इस आकांक्षा को उनके जीवन-काल में पूर्ण नहीं कर सकी। चैतन्य संप्रदाय के श्रद्धेय आचार्य गोस्वामी स्व० श्री रासबिहारी जी गोस्वामी एवं स्व० श्री विश्वंभर जी गोस्वामी का समुचित निर्देशन व सहयोग

मिला। इन सभी के प्रति कृतज्ञतापूर्ण श्रद्धा प्रणति।

आदरणीया गुरुवर डा० (श्रीमती) गायत्री वैश्य (भूतपूर्व अध्यक्ष हिंदी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय के सुनिर्देशन एवं निरीक्षण में यह शोध-कार्य संपन्न हुआ। उनके महत्त्वपूर्ण निर्देशों एवं सूक्ष्म शोध दृष्टि से इस प्रबंध को व्यवस्थित रूप मिल सका। वस्तुतः इस शोध कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न कराने का श्रेय उन्हीं को है। मैं उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती हूं। समादरणीय डॉ० नरेशचन्द्र जी बंसल के अतिशय स्नेह एवं अमूल्य सहयोग को कैसे विस्मृत कर सकती हूं? उनके विद्वत्तापूर्ण परामर्शों, विचारों तथा सक्रिय सहयोग से ही इस कृति की रचना इस रूप में संभव हो सकी है। उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं।

जिन महानुभावों ने मुझे हस्तलिखित ग्रंथ उपलब्ध कराकर व सहयोग देकर अनुगृहीत किया उनमें उल्लेखनीय हैं—वृंदावन के महानुभाव सर्वश्री अद्वैतचरण जी गोस्वामी, यमुनावल्लभ जी गोस्वामी, कृष्ण चैतन्य जी भट्ट, गो० प्रीतमलाल जी, अश्विनी कु० जी गोस्वामी, श्री जी की बड़ी कुंज के अधिकारी गोस्वामी, नन्दकिशोर जी मुकुटवाले, छुट्टन जी भट्ट, शाह गौर शरण जी गुप्त, श्यामलाल जी हकीम। विभिन्न शोध संस्थानों व संग्रहालयों के पदाधिकारी गणों ने हस्तलिखित ग्रंथों को दिखाने व आवश्यक चित्र उपलब्ध कराने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, उनमें है—वृंदावन शोध संस्थान, (वृंदावन) के संस्थापक-अध्यक्ष डॉ० आर० डी० गुप्त, पुस्तकालयाध्यक्ष श्री गोपालचन्द्र घोष, कृष्ण-जन्म-भूमि सेवा-संस्थान, मथुरा के पुस्तकालयाधिकारी श्री वासुदेव चतुर्वेदी व सहयोगी श्री विजयशंकर लवानिया, जयपुर में महाराजा संग्रहालय के निदेशक श्री ए० के० दास, पुस्तकालयाध्यक्ष श्री गोपाल नारायण जी बहुरा तथा रजिस्ट्रार डॉ० चन्द्र-मणि सिंह, राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी के अध्यक्ष डॉ० विष्णुचन्द्र पाठक, श्री रा० च० प्राच्य विद्यापीठ एवं संग्रहालय के संस्थापक-अध्यक्ष श्री रामचरण शर्मा 'व्याकुल' एवं दिगंबर जैन मंदिर (ठोलिया का रास्ता, जयपुर) के अधिकारी; जयपुर, जोधपुर, उदयपुर व अलवर स्थित प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों तथा महाराजा संग्रहालयों के अधिकारी-गण, उदयपुर में राजकीय संग्रहालय, साहित्य संस्थान राजस्थान विद्यापीठ एवं चौपासनी (जोधपुर) में राजस्थानी शोध संस्थान के पदाधिकारी गण। इन सभी को हार्दिक धन्यवाद।

प्राच्य विद्या व पांडुलिपियों के विशेषज्ञ सुप्रसिद्ध विद्वान प्रवर श्रद्धेय श्री गोपाल नारायण जी बहुरा ने महत्त्वपूर्ण पांडुलिपियों के कुछ आवश्यक अंशों को समझाने व अन्य उपयोगी जानकारी देने में अपना अमूल्य समय प्रदान किया। उनके प्रति श्रद्धापूर्ण प्रणति निवेदित करती हूं। श्री गोपालचन्द्र जी घोष की भी हृदय से आभारी हूं जिन्होंने वृंदावन शोध संस्थान में ग्रंथों के उपयोग का पर्याप्त

अवसर देने के साथ, मेरे अनुरोध पर बंगला ग्रंथों में से प्रमाणस्वरूप आवश्यक अंशों का हिंदी अनुवाद करके प्रामाणिक संदर्भ एकत्रित करने में मुझे सतत सहयोग दिया। जिन विद्वान महानुभावों के महत्त्वपूर्ण विचारों और परामर्शों से मैं लाभान्वित हुई, आभार सहित उनके नामोल्लेख हैं—वृंदावन के सर्वश्री डा० गौरकृष्ण जी गोस्वामी, अतुल कृष्ण जी गोस्वामी, नृसिंह वल्लभ जी गोस्वामी, डॉ० शरण बिहारी जी गोस्वामी, गो० दामोदराचार्य जी, महंत रामदास जी शास्त्री एवं डॉ० प्रभुदयाल जी मीतल (मथुरा)। जिन महानुभावों की पुस्तकों का मैंने उपयोग किया, उनके प्रति कृतज्ञ हूं। अपने महाविद्यालय की भूतपूर्व प्राचार्या सुश्री अणिमा मुकर्जी ने सदा मुझे कार्य हेतु उत्साहित एवं प्रेरित किया। महाविद्यालय की सहकर्मी प्राध्यापिका सुश्री उत्तरा कोठारी एवं उनके पिताश्री लोक कला के मर्मज्ञ विद्वान पद्मश्री कोमल जी कोठारी ने जोधपुर में कुछ हस्तलिखित ग्रंथों की फोटो-कापी उपलब्ध कराने एवं संबंधित महानुभावों से परिचय कराने में मेरी सहायता की, इसके लिए ये धन्यवाद के पात्र हैं।

इस संदर्भ में मैं अपने आत्मीय परिवार-जनों के सहयोग को भी विस्मृत नहीं कर सकती। मेरे श्रद्धेय श्वसुर श्री छीतरमल जी गोयल के स्नेहाशीषों और सतत प्रोत्साहन ने मुझे कार्य में प्रवृत्त रखा। मेरे पति श्री महावीर गोयल का पूर्ण सहयोग सदा मुझे मिलता रहा। शोध के प्रारंभ से लेकर उसके प्रकाशन तक उन्होंने मेरे कार्य के लिए हर प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध करायी एवं मुझे संबल प्रदान किया। वस्तुतः यह कृति उनके सक्रिय सहयोग एवं प्रोत्साहन का ही प्रतिफलन है। मेरी आदरणीया माता जी श्रीमती प्रेमदेवी टाटीवाला मेरे साथ कई दिन वृंदावन रहीं व अन्य स्थानों पर घूमती रहीं और निरंतर अत्यंत स्नेहपूर्वक मुझे कार्य के लिए समुद्यत करती रहीं। मेरे अग्रज भ्राता श्री रामेश्वरदास जी टाटीवाला ने अपने पुस्तकालय से चैतन्य संप्रदाय से संबंधित ग्रंथ प्रदान करने, आवश्यक सामग्री-संकलन में और चैतन्य संप्रदाय के कुछ विद्वान महानुभावों से परिचय कराने में मेरी अतिशय सहायता की। उनका स्नेहपूर्ण प्रोत्साहन अविस्मरणीय है। इन सभी आत्मीयजनों के प्रति क्या कहकर अपने कृतज्ञतापूर्ण श्रद्धा भाव को अभिव्यक्त करूं?

मैं इस कृति के प्रकाशक नेशनल पब्लिशिंग हाउस के संचालक श्री के० एल० मलिक एवं श्री देवेन्द्र मलिक के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करती हूं जिन्होंने इसे सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रकाशित करने का अनुग्रह किया।

अंत में, मैं उन सभी महानुभावों की आभारी हूं जिन्होंने इस कृति की रचना में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग दिया। इस शोध-कृति के द्वारा यदि साहित्यिक जगत् चैतन्य संप्रदाय एवं उसके ब्रजभाषा-काव्य की महत्ता से परिचित हो पाये व हिंदी साहित्य के इतिहास में इसे समुचित स्थान मिल सके तथा भक्ति

साहित्य के अनुरागियों, पाडुलिपियों के अनुसंधाताओं, हिंदी साहित्य के अध्येताओं व शोधार्थियों को स्वल्प भी सहायता मिल सके तो मैं अपने श्रम को सार्थक समझूंगी।

—उषा गोयल

व्याख्याता, हिंदी विभाग,
श्री सत्य साई कॉलेज फार वीमेन,
जयपुर

विषयानुक्रमणिका

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

न्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य में
वेत-तत्त्व एवं दर्शन

भक्ति तत्त्व —स्वरूप व महिमा, प्रेमाभक्ति के उपास्य देव : राधा-कृष्ण चैतन्य महाप्रभु; वृंदावन-महिमा, गोपी तत्त्व-सखी मंजरी, भक्ति के साधन —भगवत्कृपा किंवा अनुग्रह, गुरु-आश्रय, आत्मसमर्पण (शरणागति), नाम, सत्संग, साधनभक्ति के अन्य अंग नवधा भक्ति-- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्म-निवेदन, भक्ति और सदाचार, सेवा (अष्टकालिक नित्य लीला)— निशांत, प्रातः, पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न, सायं, प्रदोष, नैश लीला, दर्शन-अचिंत्य भेदाभेद, परब्रह्म श्रीकृष्ण, राधा, चैतन्य महाप्रभु, जीव, माया, जगत्।

चौथा अध्याय

न्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य में भाव-चित्रण १

माधुर्य भाव : रूप माधुर्य-युगल छवि, श्रीकृष्ण का रूप माधुर्य—नख-शिख रूप चित्रण, राधा का रूप माधुर्य-नखशिख रूप सौंदर्य, चैतन्य महाप्रभु का रूप सौंदर्य, माधुर्य भाव-प्रेमोदय, प्रेम की प्रतिक्रिया-विभ्रम व्याकुलता, गोपियों का मिलनोद्यम, कृष्ण के राधा एवं गोपियों से मिलनोद्यम की छद्म लीलाएं, माधुर्य भाव परक विभिन्न लीलाएं नित्य विहार एवं भाव चित्रण : दान लीला, चीरहरण लीला, सांझी लीला, ऋतु वर्णन एवं विभिन्न लीलाएं—ग्रीष्म ऋतु लीला, वर्षा ऋतु, हिंडोरा, शरद् ऋतु, वसंत लीला, होली (फाग), मान लीला, रास लीला, निकुंज लीला-सुरति केलि-विलास, चैतन्य की माधुर्य भावपरक लीलाएं, विरह, पुनर्मिलन, वात्सल्य भाव : कृष्ण-राधा जन्म लीला, चैतन्य-जन्म लीला, पालना—बाल छवि एवं मातृहृदय का भाव-सौंदर्य, कृष्ण की बाल-क्रीड़ाएं—चपलताएं एवं बाल-रूप सौंदर्य, चैतन्य की बाल्य क्रीड़ाएं, रूप सौंदर्य एवं शची का वात्सल्य भाव, गोचारण, माखन चोरी एवं गोपियों का उपालंभ, मथुरा-गमन (विरह) एवं पुनर्मिलन, दास्य भाव, सख्य भाव।

पाँचवाँ अध्याय

छठा अध्याय

पहला अध्याय

चैतन्य संप्रदाय एवं उसके सिद्धांत

चैतन्य संप्रदाय

बंगाल में चैतन्य महाप्रभु के भक्ति-आंदोलन ने एक संप्रदाय का रूप धारण किया, जिसके मूल प्रेरक श्री चैतन्य महाप्रभु के नाम पर इसे 'चैतन्य संप्रदाय' अथवा 'चैतन्य मत' कहा जाता है। गौड़ प्रदेश (प्राचीन बंगाल) में जन्म होने के कारण इसे 'गौड़ीय संप्रदाय' के रूप में भी जाना जाता है। चूंकि यह संप्रदाय माध्व संप्रदाय की परंपरा में विकसित हुआ अत: इस संप्रदाय को 'माध्व गौडेश्वर संप्रदाय' या 'माध्व गौडीय संप्रदाय' भी कहते हैं।[1] बहुप्रचलित नाम 'चैतन्य संप्रदाय' है।

उद्भव

चैतन्य संप्रदाय के उद्भव का संबंध चैतन्य के भक्ति आंदोलन से है। स्वयं महाप्रभु ने किसी विशिष्ट धार्मिक संप्रदाय या संस्था स्थापित करने का प्रयास नहीं किया, न ही उन्होंने संप्रदाय प्रवर्तक किसी धर्म-ग्रंथ के प्रणयन की आवश्यकता समझी, यद्यपि महाप्रभु स्वयं प्रकाण्ड पंडित एवं शास्त्र-ज्ञान के परम विद्वान होने के कारण ग्रंथ-रचना करने में सक्षम थे परंतु चूंकि उनका प्रमुख उद्देश्य भक्ति का प्रसार करना था अतएव वे स्वयं भक्ति भाव में विभोर होकर उसी भक्ति का पान जन-मानस को कराना चाहते थे। उनकी प्रेमा-भक्ति का प्रभाव इतना प्रबल एवं विस्तृत रूप में हुआ कि बंगाल में भक्ति के क्षेत्र में एक आंदोलन उपस्थित हो गया। यह 'बंगाल का आंदोलन' चैतन्य संप्रदाय का उद्गमस्थल है जिसका प्रवाह आगे ब्रज की ओर प्रवाहित होता हुआ सुनिश्चित रूप में प्रकट हुआ। इस प्रकार बंगाल से लेकर ब्रज तक संपूर्ण क्षेत्र चैतन्य की इस भक्ति-धारा से आप्लावित हुआ। महाप्रभु ने "भागवत पुराण के भक्ति तत्त्व को ग्रहण कर नृत्य-गीत

विचारों के लिए चैतन्य सम्प्रदाय में सर्वमान्य है। गोपाल भट्ट गोस्वामी एवं रघुनाथ भट्ट गोस्वामी दोनों ने सम्प्रदाय में लोगों को दीक्षा देने का कार्य बहुलता से किया। गोपाल भट्ट गोस्वामी के परिकर में ब्रजभाषा के अनेक विख्यात भक्त कवि हुए हैं एवं आज वृन्दावनस्थ राधारमणीय गोस्वामियों की जो महत्त्वपूर्ण परंपरा चली आ रही है उन्होंने भी चैतन्य सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। रूप-सनातन गोस्वामियों के उपरांत उनके सुयोग्य भतीजे जीव गोस्वामी ने इस संप्रदाय का नेतृत्व एवं संचालन बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक एवं कुशल ढंग से किया। उन्होंने इस संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों के निरूपण में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। ब्रज एवं इससे बाहर से भी भक्तजन आकर इनसे उपदेश एवं शिक्षा ग्रहण कर अपने-अपने स्थानों में चैतन्य संप्रदाय का प्रचार करते थे। ब्रज-वृंदावन में रचित ये ग्रंथ चैतन्य संप्रदाय में भक्तों को सदैव गौडीय प्रामाणिक साहित्य के रूप में मान्य रहे हैं। उन दिनों चैतन्य संप्रदाय के साहित्य तभी प्रामाणिक माने जाते थे जब ब्रज के विद्वान इसे मान्यता प्रदान कर देते थे।[११]

बंगाल और उड़ीसा में चैतन्य संप्रदाय का प्रारंभिक प्रचार सर्वश्री नित्यानंद एवं अद्वैताचार्य के द्वारा संपन्न हुआ जिन्होंने जगन्नाथपुरी में रह कर भक्ति तत्त्व का उपदेश दिया था। इनकी परंपरा के भक्तों ने आगे भी चैतन्य संप्रदाय का प्रचार किया। १७वीं शताब्दी के मध्य काल में बंगाल-उड़ीसा से कई उत्साही युवक-भक्त चैतन्य सम्प्रदाय का विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए ब्रज में आये थे, उनमें प्रमुख सर्वश्री श्रीनिवास, श्यामानंद और नरोत्तमदास हैं। उन्होंने गौडीय विद्वानों की सेवा में रहकर गौडीय भक्ति-तत्त्व की शिक्षा प्राप्त करना एवं विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों का अध्ययन करना प्रारंभ किया और कई ग्रंथों की प्रतिलिपियां तैयार कर गौडीय भक्ति-तत्त्व एवं साहित्य के प्रचार में योगदान दिया। जीव गोस्वामी के आदेशानुसार इन्होंने ग्रंथों की कई प्रतिलिपियों को साथ लेकर बंगाल-उड़ीसा में धर्म-प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इन तीनों भक्त-विद्वानों के परिकरों एवं शिष्यों द्वारा बंगाल, उड़ीसा, असम आदि पूर्वी प्रदेशों में इस सम्प्रदाय का व्यापक प्रचार हुआ था।[१२]

ब्रज-वृन्दावन में गौड़ीय गोस्वामियों के प्रयत्नों से चैतन्य सम्प्रदाय जिस चरम उत्कर्ष की स्थिति में पहुंचा था, वह इनके गोलोक धाम पधारने पर अवनति की ओर जाने लगा। जीव गोस्वामी ने अपनी वृद्धावस्था में भी इसे सम्हालने का कार्य किया, परन्तु उनके जाने के पश्चात् वृन्दावन में चैतन्य सम्प्रदाय के नभ से भक्ति-भावना एवं विद्वत्ता का प्रकाश विलुप्त होने लगा। इसके पश्चात् तो औरंगजेब के अत्याचार एवं दमन की नीति ने धार्मिक क्षेत्र में भय, आतंक तथा निराशा उत्पन्न कर इस संप्रदाय को और भी अंधकार के गर्त में पहुंचा दिया। औरंगजेब के आदेशानुसार जब ब्रज के देवालय नष्ट-भ्रष्ट किये जाने लगे तब भक्त-जनों को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय अपने उपास्य देव-विग्रहों की चिंता हुई। इसी संकट-काल में अनेक कठिनाइयों को सहन करते हुए गौडीय भक्त-जनों ने देव-विग्रहों को जयपुर आदि राज्यों के हिंदू-राजाओं के संरक्षण में पहुंचाने का कार्य किया। गौड़ीय विद्वान भी ब्रज-वृन्दावन छोड़कर अन्यत्र जाने

विचारो के लिए चैतन्य सम्प्रदाय मे सर्वमान्य है। गोपाल भट्ट गोस्वामी एवं रघुनाथ भट्ट गोस्वामी दोनो ने सम्प्रदाय मे लोगो को दीक्षा देने का कार्य बहुलता से किया। गोपाल भट्ट गोस्वामी के परिकर मे ब्रजभाषा के अनेक विख्यात भक्त कवि हुए हैं एवं आज वृन्दावनस्थ राधारमणीय गोस्वामियो की जो महत्त्वपूर्ण परंपरा चली आ रही है उन्होंने भी चैतन्य सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार मे महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। रूप-सनातन गोस्वामियो के उपरांत उनके सुयोग्य भतीजे जीव गोस्वामी ने इस संप्रदाय का नेतृत्व एवं संचालन बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक एवं कुशल ढंग से किया। उन्होंने इस संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धांतो के निरूपण में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। ब्रज एवं उससे बाहर से भी भक्तजन आकर इनसे उपदेश एवं शिक्षा ग्रहण कर अपने-अपने स्थानों मे चैतन्य सम्प्रदाय का प्रचार करते थे। ब्रज-वृंदावन मे रचित ये ग्रंथ चैतन्य संप्रदाय मे भक्तों को सदैव गौड़ीय प्रामाणिक साहित्य के रूप मे मान्य रहे हैं। उन दिनों चैतन्य संप्रदाय के साहित्य तभी प्रामाणिक माने जाते थे जब ब्रज के विद्वान इसे मान्यता प्रदान कर देते थे।[११]

बंगाल और उड़ीसा मे चैतन्य संप्रदाय का प्रारंभिक प्रचार सर्वश्री नित्यानंद एवं अद्वैताचार्य के द्वारा संपन्न हुआ जिन्होंने जगन्नाथपुरी मे रह कर भक्ति तत्त्व का उपदेश दिया था। इनकी परंपरा के भक्तों ने आगे भी चैतन्य संप्रदाय का प्रचार किया। १७वी शताब्दी के मध्य काल मे बंगाल-उड़ीसा से कई उत्साही युवक-भक्त चैतन्य संप्रदाय का विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए ब्रज में आये थे, उनमें प्रमुख सर्वश्री श्रीनिवास, श्यामानंद और नरोत्तमदास हैं। उन्होंने गौड़ीय विद्वानों की सेवा मे रहकर गौड़ीय भक्ति-तत्त्व की शिक्षा प्राप्त करना एवं विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों का अध्ययन करना प्रारंभ किया और कई ग्रंथों की प्रतिलिपियां तैयार कर गौड़ीय भक्ति-तत्त्व एवं साहित्य के प्रचार मे योगदान दिया। जीव गोस्वामी के आदेशानुसार इन्होंने ग्रंथों की कई प्रतिलिपियों को साथ लेकर बंगाल-उड़ीसा मे धर्म-प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इन तीनों भक्त-विद्वानो के परिकरो एवं शिष्यो द्वारा बंगाल, उड़ीसा, असम आदि पूर्वी प्रदेशों मे इस सम्प्रदाय का व्यापक प्रचार हुआ था।[१२]

ब्रज-वृन्दावन मे गौड़ीय गोस्वामियों के प्रयत्नों से चैतन्य सम्प्रदाय जिस चरम उत्कर्ष की स्थिति मे पहुंचा था, वह इनके गोलोक धाम पधारने पर अवनति की ओर जाने लगा। जीव गोस्वामी ने अपनी वृद्धावस्था में भी इसे सम्हालने का कार्य किया, परन्तु उनके जाने के पश्चात् वृन्दावन मे चैतन्य सम्प्रदाय के नभ मे भक्ति-भावना एवं विद्वत्ता का प्रकाश विलुप्त होने लगा। इसके पश्चात् तो औरंगजेब के अत्याचार एवं दमन की नीति ने धार्मिक क्षेत्र मे भय, आतंक तथा निराशा उत्पन्न कर इस संप्रदाय को और भी अंधकार के गर्त में पहुंचा दिया। औरंगजेब के आदेशानुसार जब ब्रज के देवालय नष्ट-भ्रष्ट किये जाने लगे तब भक्त-जनो को अपने प्राणो से भी अधिक प्रिय अपने उपास्य देव-विग्रहों की चिंता हुई। उसी संकट-काल मे अनेक कठिनाइयो को सहन करते हुए गौड़ीय भक्त-जनों ने देव-विग्रहो को जयपुर आदि राज्यों के हिंदू-राजाओं के संरक्षण मे पहुंचाने का कार्य किया। गौड़ीय विद्वान भी ब्रज-वृन्दावन छोड़कर अन्यत्र जाने

विचारों के लिए चैतन्य संप्रदाय में सर्वमान्य है।[1] गोपाल भट्ट गोस्वामी एवं रघुनाथ भट्ट गोस्वामी दोनों ने संप्रदाय में लोगों को दीक्षा देने का कार्य बहुलता से किया। गोपाल भट्ट गोस्वामी के परिकर में ब्रजभाषा के अनेक विख्यात भक्त कवि हुए हैं एवं आज वृन्दावनस्थ राधारमणीय गोस्वामियों की जो महत्त्वपूर्ण परंपरा चली आ रही है उन्होंने भी चैतन्य संप्रदाय के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। रूप-सनातन गोस्वामियों के उपरान्त उनके सुयोग्य भतीजे जीव गोस्वामी ने इस संप्रदाय का नेतृत्व एवं संचालन बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक एवं कुशल ढंग से किया। उन्होंने इस संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों के निरूपण में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। ब्रज एवं इससे बाहर से भी भक्तजन आकर इनसे उपदेश एवं शिक्षा ग्रहण कर अपने-अपने स्थानों में चैतन्य संप्रदाय का प्रचार करते थे। ब्रज-वृंदावन में रचित ये ग्रंथ चैतन्य संप्रदाय में भक्तों को सदैव गौड़ीय प्रामाणिक साहित्य के रूप में मान्य रहे हैं। उन दिनों चैतन्य संप्रदाय के साहित्य तभी प्रामाणिक माने जाते थे जब ब्रज के विद्वान इसे मान्यता प्रदान कर देते थे।[11]

बंगाल और उड़ीसा में चैतन्य संप्रदाय का प्रारंभिक प्रचार सर्वश्री नित्यानंद एवं अद्वैताचार्य के द्वारा संपन्न हुआ जिन्होंने जगन्नाथपुरी में रह कर भक्ति तत्त्व का उपदेश दिया था। इनकी परंपरा के भक्तों ने आगे भी चैतन्य संप्रदाय का प्रचार किया। १७वीं शताब्दी के मध्य काल में बंगाल-उड़ीसा में कई उत्साही युवक-भक्त चैतन्य संप्रदाय का विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए ब्रज में आये थे, उनमें प्रमुख सर्वश्री श्रीनिवास, श्यामानंद और नरोत्तमदास हैं। उन्होंने गौड़ीय विद्वानों की सेवा में रहकर गौड़ीय भक्ति-तत्त्व की शिक्षा प्राप्त करना एवं विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों का अध्ययन करना प्रारंभ किया और कई ग्रंथों की प्रतिलिपियां तैयार कर गौड़ीय भक्ति-तत्त्व एवं साहित्य के प्रचार में योगदान दिया। जीव गोस्वामी के आदेशानुसार इन्होंने ग्रंथों की कई प्रतिलिपियों को साथ लेकर बंगाल-उड़ीसा में धर्म-प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इन तीनों भक्त-विद्वानों के परिकरों एवं शिष्यों द्वारा बंगाल, उड़ीसा, असम आदि पूर्वी प्रदेशों में इस संप्रदाय का व्यापक प्रचार हुआ था।[12]

ब्रज-वृन्दावन में गौड़ीय गोस्वामियों के प्रयत्नों से चैतन्य संप्रदाय जिस चरम उत्कर्ष की स्थिति में पहुंचा था, वह इनके गोलोक धाम पधारने पर अवनति की ओर जाने लगा। जीव गोस्वामी ने अपनी वृद्धावस्था में भी इसे सम्हालने का कार्य किया, परंतु उनके जाने के पश्चात् वृन्दावन से चैतन्य संप्रदाय के नभ में भक्ति-भावना एवं विद्वत्ता का प्रकाश विलुप्त होने लगा। इसके पश्चात् तो औरंगजेब के अत्याचार एवं दमन की नीति ने धार्मिक क्षेत्र में भय, आतंक तथा निराशा उत्पन्न कर इस संप्रदाय को और भी अंधकार के गर्त में पहुंचा दिया। औरंगजेब के आदेशानुसार जब ब्रज के देवालय नष्ट-भ्रष्ट किये जाने लगे तब भक्त-जनों को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय अपने उपास्य देव-विग्रहों की चिंता हुई। इसी संकट-काल में अनेक कठिनाइयों को सहन करते हुए गौड़ीय भक्त-जनों ने देव-विग्रहों को जयपुर आदि राज्यों के हिंदू-राजाओं के संरक्षण में पहुंचाने का कार्य किया। गौड़ीय विद्वान भी ब्रज-वृन्दावन छोड़कर अन्यत्र जाने

को विवश हुए इस तरह उनके मंदिर भी नष्ट हुए और उनका प्रभाव [illegible]
से चैतन्य संप्रदाय के संगठन में शिथिलता आया।

ऐसी विषमावस्था में बंगाल में विश्वनाथ चक्रवर्ती ने [illegible]
विद्वत्ता एवं भक्ति भावना से नष्ट होते हुए संप्रदाय के गौरव को [illegible]
पुनर्प्रतिष्ठित किया। वृन्दावन में उन्होंने रूप गोस्वामी के [illegible]
ग्रंथों तथा शास्त्रों की सरल रसमयी व्याख्याएं एवं टीकाएं लिख कर [illegible]
प्रस्तुत किये और इस तरह वैष्णव एवं गौड़ीय सिद्धान्त-ग्रंथों के अध्ययन एवं प्रचार का
नवीन मार्ग प्रशस्त किया। जीव गोस्वामी के पश्चात् संप्रदाय के संगठन में जो शिथिलता
आ गयी थी उसे विश्वनाथ चक्रवर्ती ने अपने अपूर्व पांडित्य व महान् [illegible]
पर नेतृत्व द्वारा इस संप्रदाय के गौरव की पुनर्प्रतिष्ठा की। विश्वनाथ चक्रवर्ती के
योग्यतम उत्तराधिकारी के रूप में उनके शिष्य श्री बलदेव विद्याभूषण ने [illegible]
भक्ति-तत्व एवं रस-तत्त्व का विशेष अध्ययन कर उनके द्वारा विकसित परकीयावाद
तथा अन्य दार्शनिक तत्त्वों पर विद्वत्तापूर्ण विचार विद्वद् समाज के समक्ष प्रस्तुत किये।
उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की तथा टीकाएं लिखीं, जिनमें ब्रह्मसूत्र-भाष्य के रूप में
'गोविंद-भाष्य' सर्वाधिक प्रसिद्ध हुआ। गौड़ीय संप्रदाय में दार्शनिक सिद्धांतों के निरूपण
के रूप में यह सर्वमान्य है। अपनी रचनाओं द्वारा उन्होंने धर्म, दर्शन, साहित्य [illegible]
क्षेत्रों में समान रूप से महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। इसीलिए [illegible] गौड़ीय
भक्त विद्वानों में उनका सर्वप्रमुख स्थान माना जाता है। १८वीं शताब्दी में तत्कालीन
जयपुर नरेश जयसिंह के वैष्णव धर्म के प्रति विरोध का परिहार करने के लिए,
बलदेव विद्याभूषण ने चैतन्य संप्रदाय के सिद्धान्तों को वेदों से प्रमाणित करने की
चुनौती स्वीकार की। इसके निमित्त उन्होंने 'ब्रह्मसूत्र' पर 'गोविन्द भाष्य' की रचना की,
जिससे न केवल चैतन्य संप्रदाय के सिद्धान्तों की प्रामाणिकता सिद्ध कर दर्शन एवं भक्ति
के क्षेत्र में उसकी प्रतिष्ठा व सम्मान में वृद्धि की, अपितु अन्य संप्रदायों पर भी चैतन्य
संप्रदाय की धाक जमी और जयपुर नरेश द्वारा इसके प्रचार-प्रसार में यथेष्ट सहायता
प्राप्त हुई।[५]

विश्वनाथ चक्रवर्ती एवं बलदेव विद्याभूषण के काल में ब्रज के गौड़ीय विद्वानों
का बंगाल-उड़ीसा के भक्तजनों पर धार्मिक अनुशासन कायम होने से ब्रज व बंगाल के
चैतन्य मतानुयायी भक्तों की धार्मिक मान्यताओं में समन्वय एवं संतुलन बना रहा व
इस संप्रदाय की एकसूत्रता दृढ़ रही परंतु उनके पश्चात् नादिरशाह एवं अहमदशाह के
आक्रमणों ने इस संप्रदाय के महत्त्व को पुनः हानि पहुंचाई। बलदेव के अनंतर ब्रज में कोई
ऐसा महत्त्वपूर्ण गौड़ीय विद्वान नहीं रहा जो ब्रज-बंगाल की एकसूत्रता [illegible]
सकता। फलस्वरूप चैतन्य मतानुयायी भक्तों पर ब्रज का अनुशासन समाप्त होने से [illegible]
संप्रदाय की संगठनात्मकता भंग होकर वैचारिक मतभेद उत्पन्न हुए। इसका [illegible]
परिणाम तब समक्ष आया जब बंगाल के बौद्ध शाक्त-तंत्रवाद के प्रभाव से जनित परकीया-
वाद पर से ब्रज के स्वकीया भाव का अंकुश उठने से धार्मिक वातावरण असंतुलित होकर
परकीयावाद ने जोर पकड़ा और ब्रज के गौड़ीय गोस्वामियों की मान्यता के विरुद्ध बंगाल

में वासनामयी परकीया भक्ति के प्रचार ने चैतन्य संप्रदाय के महत्त्व को वैचारिक लोगों की नजरों में गिरा दिया।[६] इस अधःपतन से निकालकर पुनरुद्धार का कार्य भी बंगाल की अपेक्षा ब्रज में ही हुआ। इस संदर्भ में ब्रज के गोवर्द्धन ग्राम के (प्रायः सौ वर्ष पूर्व) सिद्ध बाबा नामक एक वैष्णव भक्त एवं उनके सुयोग्य शिष्य श्री कृष्णदास बाबा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने निष्काम सेवा-भावना से श्रीकृष्ण एवं चैतन्य महाप्रभु के लीलाग्रंथों का प्रकाशन एवं प्रचार करके इस संप्रदाय की विकृत भक्ति-भावना का परिष्कार किया और इसकी उखड़ी ख्याति को पुनः प्रतिष्ठित किया। कृष्णदास बाबा ने अनेक दुर्लभ गौडीय ग्रंथों को (संस्कृत, बंगला व ब्रजभाषा के ग्रंथ, अनुवाद सहित) प्रकाशित करके और उनका निःशुल्क वितरण करके इस संप्रदाय के प्रचार-प्रसार का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। मुद्रण यंत्र आदि आधुनिक प्रचार-प्रसार के साधनों द्वारा इस संप्रदाय के ग्रंथ सर्वसुलभ हुए और इस प्रकार विगत शताब्दी में इस संप्रदाय का व्यापक प्रचार होकर, इसका गौरव पुनः प्रतिष्ठित हुआ।

चैतन्य संप्रदाय के प्रमुख सिद्धांत

वैष्णव धर्म के प्रायः सभी भक्ति संप्रदाय विशिष्ट दार्शनिक विचारधारा से संपृक्त रहे हैं और उनके प्रवर्तक-प्रचारकों ने अपने मतों की प्रामाणिकता को ब्रह्मसूत्रादि भाष्यों से संपुष्ट कर सिद्धांत-ग्रंथों की रचना की है। चैतन्य महाप्रभु किसी एक विशिष्ट दार्शनिक विचारधारा को लेकर नहीं चले, क्योंकि उनका आग्रह भक्ति तत्त्व पर था। वस्तुतः उज्ज्वल प्रेमाभक्ति के आलोक में उन्होंने जिस दार्शनिक दृष्टिकोण को व्यक्त किया वह समन्वयात्मक कहा जा सकता है। उन्होंने भेद और अभेद का अभूतपूर्व समन्वय किया। दूसरी ओर महाप्रभु ने श्रीमद्भागवत को ब्रह्मसूत्र का प्रकृत-भाष्य मानकर उसे ही आधार-ग्रंथ के रूप में स्वीकार किया।[१७] यही कारण है कि अपनी अपूर्व विद्वत्ता के कारण समर्थ होते हुए भी उन्होंने किसी भी दार्शनिक सिद्धांत-ग्रंथ-रचना की आवश्यकता नहीं समझी।[१८] चैतन्य महाप्रभु द्वारा रचे गये कतिपय श्लोक व स्तोत्रादि ही उपलब्ध होते हैं जिनमें से आठ श्लोक 'शिक्षाष्टक' के रूप में प्रसिद्ध हैं। ये श्लोक कृष्णदास कविराज कृत 'चैतन्य चरितामृत' में सम्मिलित हैं। चैतन्यकृत श्लोकों और समय-समय पर रूप सनातनादि को दिये गये महाप्रभु के शिक्षात्मक उपदेशों में भक्ति तत्त्व एवं दार्शनिक सिद्धांतों के सूत्रों का समावेश है। महाप्रभु की वाणी भक्तों के लिए अमृत वाणी सदृश अनुकरणीय एवं समस्त तत्त्वों का सार थी।[१९] अपने समय के प्रसिद्ध धार्मिक विद्वान प्रकाशानंद सरस्वती एवं सार्वभौम भट्टाचार्य के साथ तत्त्व मंथन एवं राय रामानंद से विचार-विमर्श में चैतन्य महाप्रभु के विचारों की अभिव्यक्ति विभिन्न सिद्धांतों के निरूपण में एक दिशा बनी। तत्पश्चात वृन्दावन के भक्त-विद्वानों ने इसे शास्त्रीय धरातल पर प्रतिष्ठित किया। इनके द्वारा प्रणीत ग्रंथ चैतन्य संप्रदाय के स्वतंत्र ग्रंथ—आधारभूत ग्रंथ—माने गये क्योंकि महाप्रभु के भक्ति-तत्त्व एवं दार्शनिक सिद्धांतों का इनमें विस्तृत विवेचन किया गया है। चैतन्य दर्शन के स्वरूप-निर्धारण का कार्य भी इन्हीं के द्वारा संपन्न हुआ।

दार्शनिक सिद्धांत

विभिन्न सम्प्रदायों के दार्शनिक मतों को जिस प्रकार शुद्धाद्वैत [illegible] विशिष्टाद्वैत आदि विभिन्न नामों से अभिहित [illegible] के दार्शनिक मत को 'अचिंत्य भेदाभेदवाद' कहा गया [illegible] व्यक्त प्रमुख तत्वों—अचिंत्य व भेदाभेद [illegible] गोस्वामी ने 'श्रीमद्भागवत' पर अपने [illegible] दिनी' में किया है :

'शक्ति—शक्तिमतोर्भेदाभेदावेवांगीकृतौ [illegible]'

श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी [illegible] इसका स्पष्टीकरण किया गया है।[२२] इस दार्शनिक सिद्धांत [illegible] की दृष्टि से बलदेव विद्याभूषण ने 'गोविंद भाष्य' में [illegible]।

'अचिंत्य भेदाभेद' का शाब्दिक अर्थ ग्रहण करते हुए श्री [illegible] ने कहा है—'दुर्बोध्य द्वैतवादी-अद्वैतवाद अर्थात् अभिन्नता में भिन्नता [illegible] चिंतन से अगम्य होता।'[२३] दार्शनिक दृष्टिकोण से [illegible] श्री जीव गोस्वामी का कथन है कि भगवान श्रीकृष्ण एवं उनकी [illegible] परस्पर अभिन्न रूप से चिंतन करना अशक्य होने से उनमें भेद प्रतीत होता है और भिन्न रूप से चिंतन करना अशक्य होने के कारण परस्पर अभेद प्रतीत होता है। अतएव शक्ति एवं शक्तिमान में भेद एवं अभेद दोनों स्वीकृत हैं परंतु यह अचिंत्य है।[२४] इस प्रकार इनमें अचिंत्य भेदाभेद संबंध है। यह संबंध परब्रह्म के साथ सभी [illegible] अर्थात्, जीव, जगत, भगवद्धाम की समस्त वस्तु इत्यादि के साथ स्थापित किया गया है।

शक्ति-शक्तिमान संबंधानुसार ब्रह्म श्रीकृष्ण शक्तिमान एवं उनकी शक्ति के रूप में जीव, जगतादि की प्रतिष्ठा है। इनमें परस्पर भेदाभेद संबंध के लिए अग्नि व उसकी दाहिका शक्ति तथा कस्तूरी व उसकी गंध के उदाहरण दिये गये हैं। जिस प्रकार अस्तित्व की दृष्टि से अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति एवं कस्तूरी और उसकी गंध को पृथक् नहीं किया जा सकता परंतु इनके कार्य पृथक् ज्ञात पड़ते हैं, इसी प्रकार अस्तित्व की दृष्टि से ब्रह्म का जीव-जगतादि से अभेद है परन्तु कार्य की दृष्टि से भेद है। अतः भेद और अभेद दोनों स्वीकृत हैं, किंतु दोनों परस्पर विरोधी हैं। दोनों के एक साथ सत्य होने की कल्पना करना मानवीय बुद्धि से परे है। चूंकि यह भेदाभेद नित्य होते हुए भी मानवीय चिंतन (तर्क) से अगम्य है अतएव यह 'अचिन्त्य' है।[२४]

जीवगोस्वामी के अचिन्त्य भेदाभेद सिद्धांत की व्याख्या करते हुए श्री कृष्णदास बाबा ने कहा है—'ब्रह्म बृहत्, सर्वज्ञ, स्वाधीन एवं अबाध ज्ञान वाला है। जीव अणु, अल्पज्ञ, पराधीन एवं प्रतिहत ज्ञान वाला है। इस प्रकार दोनों का अनेक अंश में भेद देखा जाता है। परंतु 'तत्वमसि' इत्यादि अभेद प्रतिपादक शास्त्रों का समन्वय केवल कथञ्चित चैतन्यांश का सादृश्य लेकर ब्रह्म के साथ जीव का अभेदत्व, गौण रूप में स्वीकार करके होता है।'[२५] 'भेदाभेद' के विचार का विवेचन करते हुए श्री सनातन

गोस्वामी ने ब्रह्म एवं जीवादि सबंध का उदाहरण समुद्र और उसकी लहर से दिया है।[६]

जीवगोस्वामी के द्वारा अचिन्त्य भेदाभेद को स्वीकार करने का हेतु है 'अचिन्त्य शक्तिमयत्व'[७] अर्थात् भेदाभेद अचिन्त्य शक्ति (स्वभाव व प्रभाव) से युक्त है। इसका तात्पर्य यह है कि शक्ति और शक्तिमान के मध्य जो संबंध है वह ऐसी अचिन्त्य शक्ति या प्रभाव से युक्त है जिसके कारण भेद तथा अभेद युगपत् विद्यमान रह सकते हैं। यही स्वभाव या प्रभाव ही जीव चिंता से परे अर्थात् अचिन्त्य है। यह सर्वव्यापक विशिष्ट अचिन्त्य शक्ति अन्य किसी में नहीं केवल ब्रह्म में है।[८] इस संदर्भ में रूप गोस्वामी का मत ध्यान देने योग्य है। उनकी मान्यतानुसार अचिन्त्य अनंत शक्तियों के कारण उस एक ही पुरुषोत्तम (श्रीकृष्ण) में एकत्व और पृथकत्व, अंशत्व और अंशित्व का रहना कथमपि अयुक्त नहीं रहता।[९] इसी अचिन्त्य शक्ति को रूप गोस्वामी ने 'विरोध भञ्जिका' शक्ति कहा है जिसके कारण ब्रह्म परस्पर विरोधी अनंतगुणों व धर्मों का आश्रय है। इसी शक्ति के बल पर भेद और अभेद एक साथ सिद्ध होते हैं।[१०]

ब्रह्म का जीव एवं जगतादि से अचिन्त्य भेदाभेद संबंध इस प्रकार है:

परब्रह्म श्रीकृष्ण : परब्रह्म श्रीकृष्ण सत्-चित्-आनन्द स्वरूप है। वे सगुण भी हैं और निर्गुण भी। श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी को शिक्षा देने के प्रसंग में कहा है कि श्रीकृष्ण समस्त के आदि, अंशी, आश्रय एवं ईश्वर तथा चिदानन्द स्वरूप हैं:

> "सर्वादि सर्व-अंशी किशोर-शेखर।
> चिदानन्द देह सर्वाश्रय सर्वेश्वर॥"[११]

ब्रह्म, परमात्मा और भगवान्—ये एक ही तत्त्व के तीन नाम हैं।[१२] श्रीकृष्ण ही ज्ञानियों के परब्रह्म, योगियों के परमात्मा एवं भक्तों के भगवान हैं। चैतन्य मत में भक्तों के लिए श्रीकृष्ण का भगवान रूप ही श्रेयस्कर है। वही उनका पूर्णतम स्वरूप है। दार्शनिक दृष्टि से ब्रह्म और परमात्मा भगवान् की ही आंशिक अभिव्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। सूर्य के ज्योति-पुंज के समान ब्रह्म भगवान कृष्ण की अंग कांति है एवं एक ही सूर्य जैसे अनंत स्फटिक मणियों में अनेक रूप होकर भासित होता है वैसे ही भगवान कृष्ण का अंश रूप परमात्मा अनंत कोटि जीवों में प्रकाशित होता है।[१३] अतः श्रीकृष्ण के भगवान रूप में ब्रह्म की पूर्णाभिव्यक्ति है। श्रीकृष्ण ही परम ब्रह्म हैं।

श्रीकृष्ण अद्वय ज्ञान तत्त्व हैं।[१४] वे सजातीय, विजातीय और स्वगत भेद से रहित हैं। अर्थात् भिन्न-भिन्न अवतारादि सजातीय, ब्रह्माण्ड आदि विजातीय तथा देह-देही स्वगत—सभी तत्त्वों की सत्ता श्रीकृष्ण की सत्ता की अपेक्षा रखती है। परब्रह्म श्रीकृष्ण स्वयं सिद्ध तत्त्व हैं, वे सच्चिदानंद स्वरूप हैं। 'कृष्णस्तु भगवान स्वयम्'[१५] अर्थात् श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान हैं और यही इनका श्रेष्ठतम रूप भक्तों का चरम उद्देश्य है। यही परब्रह्म श्रीकृष्ण भगवान अपने अवतरित रूप में लीला पुरुषोत्तम हैं। अन्य अवतार इनके अंश कला आदि हैं, किंतु श्रीकृष्ण स्वयं अवतारी एवं पूर्ण ब्रह्म हैं।[१६]

दार्शनिक सिद्धांत

विभिन्न सम्प्रदायों के दार्शनिक मतों को जिस प्रकार [illegible] विशिष्टाद्वैत आदि विभिन्न नामों से अभिहित [illegible] के दार्शनिक मत को 'अचिंत्य भेदाभेदवाद' कहा गया [illegible] व्यक्त प्रमुख तत्त्वों —अचिन्त्य व भेदाभेद [illegible] गोस्वामी ने श्रीमद्भागवत पर अपने विवेचनात्मक ग्रंथ [illegible] दिनी' में किया है :

'शक्ति—शक्तिमतोर्भेदाभेदावेवांगीकृतौ [illegible]'

श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी विरचित चैतन्य [illegible] में इसका स्पष्टीकरण किया गया है।[21] इस दार्शनिक सिद्धान्त को [illegible] की दृष्टि से बलदेव विद्याभूषण ने 'गोविंद भाष्य' में [illegible]।

'अचिंत्य भेदाभेद' का शाब्दिक अर्थ ग्रहण करते हुए श्री [illegible] ने कहा है—दुर्बोध्य द्वैतवादी-अद्वैतवाद अर्थात् अभिन्नता में भिन्नता [illegible] चिंतन से अगम्य होना।'[22] दार्शनिक दृष्टिकोण से [illegible] श्री जीव गोस्वामी का कथन है कि भगवान श्रीकृष्ण एवं उनकी [illegible] परस्पर अभिन्न रूप से चिंतन करना अशक्य होने से उनमें [illegible] और भिन्न रूप से चिंतन करना अशक्य होने के कारण परस्पर अभेद प्रतीत होता है। अतः शक्ति एवं शक्तिमान में भेद एवं अभेद दोनों स्वीकृत है परन्तु यह अचिन्त्य है।'' इस प्रकार इनमें अचिंत्य भेदाभेद संबंध है। यह संबंध परब्रह्म के साथ सभी तत्त्वों —अर्थात्, जीव, जगत, भगवद्धाम की समस्त वस्तु इत्यादि के साथ स्थापित किया गया है।

शक्ति-शक्तिमान संबंधानुसार ब्रह्म श्रीकृष्ण शक्तिमान एवं उनकी शक्ति के रूप में जीव, जगतादि की प्रतिष्ठा है। इनमें परस्पर भेदाभेद संबंध के लिए अग्नि व उसकी दाहिका शक्ति तथा कस्तूरी व उसकी गंध के उदाहरण दिये गये हैं। जिस प्रकार अस्तित्व की दृष्टि से अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति एवं कस्तूरी और उसकी गंध को पृथक् नहीं किया जा सकता परंतु इनके कार्य पृथक् ज्ञात होते हैं, उसी प्रकार अस्तित्व की दृष्टि से ब्रह्म का जीव-जगतादि से अभेद है परन्तु कार्य की दृष्टि से भेद है। अतः भेद और अभेद दोनों स्वीकृत है, किंतु दोनों परस्पर विरोधी हैं। दोनों के एक साथ संभव होने की कल्पना करना मानवीय बुद्धि से परे है। चूंकि यह भेदाभेद नित्य होते हुए भी मानवीय चिंतन (तर्क) से अगम्य है अतएव यह 'अचिन्त्य' है।[24]

जीवगोस्वामी के अचिन्त्य भेदाभेद सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए श्री कृष्णदास बाबा ने कहा है—'ब्रह्म बृहत्, सर्वज्ञ, स्वाधीन एवं अबाध ज्ञान वाला है। जीव अणु, अल्पज्ञ, पराधीन एवं प्रतिहत ज्ञान वाला है। इस प्रकार दोनों का अनेक अंश में भेद देखा जाता है। परंतु 'तत्त्वमसि' इत्यादि अभेद प्रतिपादक शास्त्रों का समन्वय केवल कथञ्चित चैतन्यांश का सादृश्य लेकर ब्रह्म के साथ जीव का अभेदत्व, गौण रूप में स्वीकार करके होता है।'[25] 'भेदाभेद' के विचार का विवेचन करते हुए श्री सनातन

गोस्वामी ने ब्रह्म एवं जीवादि संबंध का उदाहरण समुद्र और उसकी लहर से दिया है।[६]

जीवगोस्वामी के द्वारा अचिन्त्य भेदाभेद को स्वीकार करने का हेतु है 'अचिन्त्य शक्तिमयत्व'[७] अर्थात् भेदाभेद अचिन्त्य शक्ति (स्वभाव व प्रभाव) से युक्त है। इसका तात्पर्य यह है कि शक्ति और शक्तिमान के मध्य जो संबंध है वह ऐसी अचिन्त्य शक्ति या प्रभाव से युक्त है जिसके कारण भेद तथा अभेद युगपत् विद्यमान रह सकते हैं। यही स्वभाव या प्रभाव ही जीव चिंता से परे अर्थात् अचिन्त्य है। यह सर्वव्यापक विशिष्ट अचिन्त्य शक्ति अन्य किसी में नहीं केवल ब्रह्म में है।[८] इस संदर्भ में रूप गोस्वामी का मत ध्यान देने योग्य है। उनकी मान्यतानुसार अचिन्त्य अनन्त शक्तियों के कारण उस एक ही पुरुषोत्तम (श्रीकृष्ण) में एकत्व और पृथक्त्व, अंशत्व और अंशित्व का रहना कथमपि अयुक्त नहीं रहता।[९] इसी अचिन्त्य शक्ति को रूप गोस्वामी ने 'विरोध भञ्जिका' शक्ति कहा है जिसके कारण ब्रह्म परस्पर विरोधी अनंतगुणों व धर्मों का आश्रय है। इसी शक्ति के बल पर भेद और अभेद एक साथ सिद्ध होते हैं।[१०]

ब्रह्म का जीव एवं जगतादि से अचिन्त्य भेदाभेद संबंध इस प्रकार है:

परब्रह्म श्रीकृष्ण : परब्रह्म श्रीकृष्ण सत्-चित्-आनन्द स्वरूप हैं। वे सगुण भी हैं और निर्गुण भी। श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी को शिक्षा देने के प्रसंग में कहा है कि श्रीकृष्ण समस्त के आदि, अंशी, आश्रय एवं ईश्वर तथा चिदानन्द स्वरूप हैं:

> "सर्वादि सर्व-अंशी किशोर-शेखर।
> चिदानन्द देह सर्वाश्रय सर्वेश्वर॥"[११]

ब्रह्म, परमात्मा और भगवान्—ये एक ही तत्त्व के तीन नाम हैं।[१२] श्रीकृष्ण ही ज्ञानियों के परब्रह्म, योगियों के परमात्मा एवं भक्तों के भगवान हैं। चैतन्य मत में भक्तों के लिए श्रीकृष्ण का भगवान रूप ही श्रेयस्कर है। वही उनका पूर्णतम रसरूप है। दार्शनिक दृष्टि से ब्रह्म और परमात्मा भगवान् को ही आंशिक अभिव्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। सूर्य के ज्योति-पुंज के समान ब्रह्म भगवान कृष्ण की अंग कांति है एवं एक ही सूर्य जैसे अनंत स्फटिक मणियों में अनेक रूप होकर भासित होता है वैसे ही भगवान कृष्ण का अंश रूप परमात्मा अनंत कोटि जीवों में प्रकाशित होता है।[१३] अतः श्रीकृष्ण के भगवान रूप में ब्रह्म की पूर्णाभिव्यक्ति है। श्रीकृष्ण ही परम ब्रह्म हैं।

श्रीकृष्ण अद्वय ज्ञान तत्त्व हैं।[१४] वे सजातीय, विजातीय और स्वगत भेद से रहित हैं। अर्थात् भिन्न-भिन्न अवतारादि सजातीय, ब्रह्माण्ड आदि विजातीय तथा देह-देही स्वगत—सभी तत्त्वों की सत्ता श्रीकृष्ण की सत्ता की अपेक्षा रखती है। परब्रह्म श्रीकृष्ण स्वयं सिद्ध तत्त्व हैं, वे सच्चिदानंद स्वरूप हैं। 'कृष्णस्तु भगवान स्वयम्'[१५] अर्थात् श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान हैं और यही इनका श्रेष्ठतम रूप भक्तों का चरम उद्देश्य है। यही परब्रह्म श्रीकृष्ण भगवान अपने अवतारित रूप में लीला पुरुषोत्तम हैं। अन्य अवतार इनके अंश कला आदि हैं, किंतु श्रीकृष्ण स्वयं अवतारी एवं पूर्ण ब्रह्म हैं।[१६]

चैतन्य सम्प्रदाय में सगुण रूपधारी माधुर्यमंडित व्रजेन्द्रनंदन कृष्ण आराध्य हैं। वे भाव निधि हैं। उनमें ऐश्वर्य, सौंदर्य, माधुर्य आदि प्रत्येक का पूर्णतम विकास होने पर भी माधुर्य का प्राधान्य है। उनका ऐश्वर्य भी माधुर्यानुगत है। माधुर्य ही भगवत्ता का सार है। श्रीकृष्ण नित्य विहारी हैं। उनकी प्रकट और अप्रकट दोनों ही लीलाएं नित्य हैं। अपनी स्वरूप माधुरी के आस्वादन के लिए वे [illegible]-वृन्दावन (व्रज) में अवतीर्ण होते हैं। गुण तारतम्यानुसार श्रीकृष्ण का रूप वृन्दावन में पूर्णतम, मथुरा में पूर्णतर तथा द्वारका में पूर्ण है।[17] ब्रज—वृन्दावन माधुर्य की पराकाष्ठा है। चैतन्य सम्प्रदाय में चैतन्य महाप्रभु को श्रीकृष्ण का साक्षात् रूप माना गया है—'[illegible] गोविन्द साक्षात् चैतन्य गोसाईं।'[18]

शक्ति तत्त्व : शक्तिमान परब्रह्म श्रीकृष्ण की अनन्त शक्तियाँ हैं जिनमें तीन शक्तियां प्रमुख हैं—चित् शक्ति, माया शक्ति तथा जीव शक्ति। इन्हें क्रमशः अंतरंगा, बहिरंगा एवं तटस्था शक्ति कहा गया है।[19] इनमें अंतरंगा (चित्, स्वरूप शक्ति) सर्व प्रधान है। महतत्वादि से लेकर महाभूत एवं भौतिक वस्तुओं सहित प्रकृति बहिरंगा शक्ति कहलाती है। अंतरंगा में राधा एवं तटस्था शक्ति में जीव का स्थान है।

अंतरंगा शक्ति (राधा) : श्रीकृष्ण के चित् स्वरूप से संबंधित इस शक्ति को चित् शक्ति, स्वरूप शक्ति एवं अंतरंगा शक्ति कहा जाता है।[20] श्रीकृष्ण का स्वरूपगत प्रभाव विद्यमान होने से राधा अंतरंगा शक्ति कही गयी है। इस शक्ति के विलास से लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण अंतरंग लीला-विलास के द्वारा अपने स्वरूपगत अनिर्वचनीय आनंद की अनुभूति करते हैं। चंद्रा, ललिता, विशाखा आदि गोपियाँ भी अंतरंगा शक्ति की वृत्तियां हैं। श्रीकृष्ण के सत्, चित् व आनंद स्वरूप के अनुसार उनकी अंतरंगा शक्ति के भी क्रमशः तीन रूप हैं—संधिनी, संवित् एवं ह्लादिनी। आनंदरूपिणी ह्लादिनी शक्ति सर्वश्रेष्ठ है। ह्लादिनी का सार है प्रेम और प्रेम का परम सार है मादनाख्य महाभाव। श्री राधा मादनाख्य महाभाव स्वरूपा हैं।[21] ह्लादिनी शक्ति राधा श्रीकृष्ण को पूर्ण आनंदास्वादन कराती है।

पूर्णशक्तिमान श्रीकृष्ण एवं उनकी पराशक्ति राधा में परस्पर भेद भी है एवं अभेद भी। ये दोनों एक साथ नित्य एवं सत्य हैं। इनमें परस्पर भेदाभेद संबंध अचिन्त्य है। कस्तूरी व उसकी गंध तथा अग्नि व उसकी दाहिका शक्ति में जैसे तत्त्वगत भेद नहीं है उसी प्रकार तत्त्वतः राधा-कृष्ण अद्वैत हैं, लीलारस के आस्वादन हेतु ये दो रूप धारण कर लेते हैं।[22] इन दोनों के सम्मिलित-संयुक्त रूप हैं— श्री गौरांग। ये युगल रूप एवं संयुक्त रूप दोनों ही समान हैं। इनमें रूप का अंतर है, तत्त्वगत भेद नहीं।[23]

शक्तिमान श्रीकृष्ण श्याम वर्ण के हैं और उनकी शक्ति राधा गौरांग। अतः इनका युगल रूप श्याम-गौर होता है, परंतु दोनों परस्पर सम्मिलित होने पर कृष्ण वर्ण गौर वर्ण से आवृत्त हो जाता है। चैतन्य महाप्रभु दोनों के मिलित विग्रह हैं अतः उनका स्वरूप गौरांग है। चैतन्य संप्रदाय की यह दृढ़ मान्यता है कि राधा के महाभावपरक प्रेमानंद का आस्वादन करने हेतु श्रीकृष्ण स्वयं चैतन्य महाप्रभु के रूप में आविर्भूत हुए। श्रीकृष्ण के मन में उत्कट जिज्ञासा व कामना उत्पन्न हुई कि वे भी राधा द्वारा आस्वादित

अपने अदभुत प्रेम माधुर्य को उसी रूप में अनुभव कर आनंदित हों जिस रूप में राधा ने उसका अनुभव किया है। अतः वे स्वयं राधा भाव युक्त होकर गौर कृष्ण के रूप में अवतरित हुए।[४४] [illegible] ने [illegible] में लिखा है कि राधा भाव द्युतियुक्त कृष्ण ही गौर हरि हैं जो अंतः कृष्ण और बहिर्गौर थे।[४५] चैतन्य संप्रदाय में ये दोनों ही (कृष्ण व चैतन्य) एक अवतार के दो भाव हैं। 'ब्रजलीला' और 'नवद्वीप लीला' भी एक ही लीला प्रवाह के दो रूप हैं। लीलावाद इस संप्रदाय की साधना और चिंतन का प्राण है।[४६]

जीव : स्वरूपतः श्रीकृष्ण परब्रह्म एवं सर्वेसर्वा है तथा जीव उनका नित्य दास है। चैतन्य मतानुसार जीव श्रीकृष्ण की तीन शक्तियों में से तटस्था शक्ति है :

"जीव नाम तटस्थाख्य एक शक्ति हय।"[४७]

शक्तिमान कृष्ण व शक्ति-रूप जीव में परस्पर भेदाभेद संबंध हैं। परब्रह्म श्रीकृष्ण विभुचित् एवं जीव अणुचित् हैं। जीव भगवान का अंश है। किंतु, जैसाकि बलदेव विद्याभूषण ने स्पष्टतः लिखा है कि, ब्रह्म के अंश होने से जीव को ब्रह्म के समान नहीं समझ लेना चाहिए क्योंकि ब्रह्म के साथ यह अंशत्व विभिन्नांश रूप में है, ईश्वर के अवतारों के सदृश स्वांश रूप में नहीं।[४८] स्वांश रूप में भगवान की अंतरंग स्वरूप शक्ति विद्यमान रहती है जबकि विभिन्नांश रूप जीव में शुद्ध स्वरूपशक्ति नहीं है। जीव, जीव-शक्ति (तटस्था) विशिष्ट ब्रह्म का अंश है, शुद्ध स्वरूप शक्ति समन्वित ब्रह्म का नहीं।[४९] चेतन होने के कारण जीव-शक्ति जड़ माया शक्ति से उत्कृष्ट हैं। जीव भगवान के चित्कण का एक क्षुद्र अंश है और षडैश्वर्यपूर्ण श्रीकृष्ण सूर्य के समान हैं। ज्वलंत अग्निराशि और एक क्षुद्र चिनगारी जैसे कभी समान नहीं हो सकते, तद्रूप जीव और ईश्वर कभी समान नहीं हो सकते।[५०] परंतु इस भेद के साथ ही दोनों में 'चित्' का अस्तित्व रहने से अभेद भी है अर्थात् 'भेदाभेद' है। ब्रह्म और जीव में यह भेदाभेद संबंध उसी प्रकार है जिस प्रकार सूर्य और उसकी किरण एवं अग्नि और उसका ताप परस्पर भिन्न होते हुए भी अभिन्न है।[५१] किंतु जैसे सूर्य की किरणें सूर्यमंडल के अंदर नहीं होती, बाहर होती है ऐसे ही जीव भगवान का अंश होते हुए भी भगवद् स्वरूप के अंतर्भूत नहीं है, बहिर्भूत है।[५२]

जीव परतंत्र है और ब्रह्म स्वतंत्र। स्वरूप एवं सामर्थ्य में अणुचित जीव विभुचित् ब्रह्म से सदैव भिन्न होता है। ईश्वर का नियमन होते हुए भी अणु होने का अर्थ यह नहीं है कि जीव की कोई स्वतंत्र कार्य-शक्ति नहीं है। इसीलिए विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इसे 'अणु स्वतंत्र' कहा है। वस्तुतः श्रीकृष्ण सेवा-विधान के लिए ही उसका यह अणु-स्वातंत्र्य है, सांसारिक सुख-विधान के लिए नहीं है। माया से मुग्ध होकर वह मायाधीन होता है। ईश्वर एवं जीव में मायाधीश व मायाधीन का अंतर है।[५३] जीव गोस्वामी ने 'तदपाश्रयाम्' कहकर माया को ईश्वर की अनुगता एवं 'यया सम्मोहितः' कहकर जीव को माया से मुग्ध बताया है।[५४] इस प्रकार जीव मायाधीन है और माया ईश्वराधीन। श्रीकृष्ण-विमुखता से जीव मायाबद्ध होता है एवं श्रीकृष्ण-कृपा से ही वह माया-मुक्त भी होता है।[५५] मुक्ता-

वस्था मे जीव 'ब्रह्मानंद सहोदर'—ब्रह्म सदृश आनंद की प्राप्ति [illegible] 'ब्रह्म' नही होते उससे पृथक् बने रहते है । ब्रह्म स्वरूप होते हुए भी [illegible] दिव्य लोक मे अपने पद को ईश्वर के दास के रूप मे अनुभव [illegible] नही होती । यहा भी अभेद में भेद की परिकल्पना ही सिद्ध होती है ।

इस प्रकार मोक्ष के पूर्व और पश्चात् जीवात्मा का [illegible] 'चैतन्यचरितामृत' मे भगवान के विभिन्नांश जीव के प्रकार [illegible] (१) नित्य मुक्त जीव, (२) नित्य संसारबद्ध जीव ।[५६] नित्य मुक्त [illegible] सेवा-सुख का आस्वादन करते है । ये स्वरूप शक्ति के [illegible] होकर नित्य भगवद्-परिकर-स्वरूप बने रहते है । नित्यबद्ध जीव [illegible] से कृष्ण-बहिर्मुख हैं, मायाबद्ध होकर संसार के बंधन में फंसे हुए है । [illegible] मुक्त होकर उन्हे भगवत्सेवा का सुअवसर प्राप्त हो सकता है । अतः कृष्ण-[illegible] का परम धर्म है—प्रमुख अभिधेय तत्त्व है ।[५७]

जगत् : चैतन्य दर्शन के अनुसार जगत् भी जीव की भांति [illegible] एवं उनमें परस्पर भेदाभेद संबंध है । भगवान की बहिरंगा शक्ति अर्थात् माया शक्ति के दो भेद है—जीवमाया और गुणमाया । जीवमाया जगत् का निमित्त कारण है और गुण-माया जगत् का उपादान कारण है ।[५८] सांख्य मत में भी [illegible] जगत् का [illegible] कारण माना गया है ।

जगत् परब्रह्म श्रीकृष्ण का अविकृत परिणाम है यथा—'[illegible]' [illegible] सोना प्रसव करती हुई भी स्वयं विकारहीन रहती है, उसी प्रकार ईश्वर जगत् में अनेक पदार्थों का रूप धारण करते हुए भी स्वयं सर्वदा अविकारी रहता है ।[५९] परमात्मा का अविकृत परिणाम होने के कारण यह जगत् न तो मिथ्या है और न ही परमात्मा से बिल्कुल भिन्न । श्री बलदेव उपाध्याय ने कहा है—'चैतन्य मत में जगत [illegible] पदार्थ है, क्योंकि यह सत्य-संकल्प सर्वविद् श्री हरि की बहिरंग शक्ति का विलास [illegible] 'अक्षय' तथा नित्य है ।[६०] यद्यपि जीव गोस्वामी के अनुसार जगत् '[illegible] मिथ्या' न होते हुए भी घटवत् नश्वर है, परन्तु यहा नश्वरता का तात्पर्य [illegible] है ।[६१] बलदेव विद्याभूषण ने एक उदाहरण द्वारा इसे स्पष्ट किया है । '[illegible]' जगत ब्रह्म मे अनभिव्यक्त रूप मे विद्यमान रहता है, अर्थात् जिस प्रकार [illegible] की सत्ता रात्रि-काल मे विद्यमान रहते हुए भी व्यक्त नही होती, उसी प्रकार [illegible] मे सृष्टि के नष्ट हो जाने पर भी जगत् ब्रह्म मे अव्यक्त रूप मे विद्यमान रहता हुआ नित्य रहता है ।[६२] जगत् और ब्रह्म के इस संबंध मे भेदाभेद स्थापित होता है । चूंकि जगत् ब्रह्म से उद्भूत होते हुए भी उन्हीं की भांति सत्य एवं नित्य है अतः स्वरूप की दृष्टि से उनमें परस्पर अभेद है परंतु गुणों की दृष्टि से उनमें भेद है । नित्य होते हुए भी जगत् का आविर्भाव एवं तिरोभाव होता रहता है । तिरोभाव के आधार पर जगत् की अनित्यता जीवों की अनासक्ति के लिए कथित है । जगत् ईश्वराधीन है अर्थात् सृष्टि के नियामक, पालक एवं संहारक परब्रह्म श्रीकृष्ण ही है ।

इस प्रकार जगत, ईश्वर की शक्ति से उद्भूत, उसके अधीन एवं आश्रित होता

हुआ न तो [illegible] पूर्ण [illegible] और [illegible] अति[illegible] [illegible] भी [illegible] सत्य है अर्थात अचिन्त्य [illegible]

प्रकृति : परब्रह्म श्रीकृष्ण की गुणमाया [illegible] प्रकृति [illegible] भी प्रकृति श्रीकृष्ण-कृपा-शक्ति [illegible] जगत् का [illegible] कारण [illegible] के गर्भ में रहने वाले [illegible] अर्थात् [illegible] माया [illegible] 'प्रकृति[illegible] अजातान्तस्थान'।[53] एक दूसरा [illegible] हुए श्रीकृष्ण [illegible] का कथन है कि [illegible] निमित्त कारण (बनाने वाला) जैसे कुम्हार है और उसके सहायक [illegible] प्रकार जगत् का निमित्त कारण पुरुषावतार श्रीकृष्ण [illegible] जगत् की रचना में [illegible] (गुणमाया) उनकी सहायक मात्र है।[54]

डॉ० राधाकृष्णन् के अनुसार—'जहा रामानुज आत्माओं तथा प्रकृति को [illegible] के विशेषण रूप मानते है, वहा जीव गोस्वामी और बलदेव उनको ईश्वर की शक्ति [illegible] व्यक्त रूप मानते है।'[55] चैतन्य मतानुसार जड प्रकृति को ईश्वर का विशेषण मानने पर ईश्वर के स्वरूप मे विषमता आ जाती है, क्योंकि ईश्वर चैतन्य स्वरूप है।[56]

प्रकृति ईश्वर की शक्ति के रूप मे उनके आधिन एव वशवर्तिनी है जो स्वरूपत ईश्वर से अभिन्न होते हुए, शक्ति एवं शक्तिमान के भेदानुसार भिन्न भी है। यहां पर उनका 'भेदाभेद' सिद्ध होता है।

इस प्रकार जीव, जगत्, प्रकृति आदि परब्रह्म श्रीकृष्ण के अंश रूप होते हुए भी [illegible] स्वरूपत: पूर्ण रूप से भिन्न भी नहीं है और अधीन-अधीश संबंध होते हुए सामर्थ्य (गुणो) की दृष्टि से अभिन्न भी नहीं है अर्थात् उनमे न तो परस्पर मात्र भेद कहा जा सकता है और न अभेद। यह भेदाभेद चिंतन से परे है, इसीलिए 'अचिन्त्य भेदाभेद' है। श्री ठाकुर भक्ति विनोद ने संप्रदाय के प्रमुख सिद्धांतो को, 'दशमूला' (Ten Roots) रूप मे संक्षिप्तीकरण करते हुए, एक श्लोक मे इन्हें अभिव्यक्त किया है, जिसमे 'अचिन्त्य भेदाभेदवाद' का भी समाहार है।[57]

चैतन्य दर्शन के सारभूत सिद्धांत 'अचिन्त्य-भेदाभेदवाद' की केंद्रीय विचारधारा यह है कि यह नित्य है। जीव की अमुक्त अवस्था में (सांसारिक रूप से) ब्रह्म एवं जीव का भेदाभेद संबंध होता ही है परतु मुक्तावस्था में भी यह विद्यमान रहता है। बौद्ध-दर्शन के 'निर्वाण' द्वारा जीव अंतिम रूप से मुक्त हो जाता है एव ज्ञानमार्गियों की योग-साधना द्वारा भी अंतिम रूप से जीव मुक्तावस्था मे ब्रह्म मे लीन हो जाता है। दोनों में ही जीव एव ब्रह्म का अभेद होता है। परंतु चैतन्य दर्शन में इससे भी ऊपर की अवस्था का वर्णन है जहा जीव अंतिम रूप मे कभी मुक्त नही होता और संसार-मुक्त होते हुए भी भगवान के नित्य दास के रूप मे रहता है पर भगवान मे कभी विलीन नहीं होता। गौडीय भक्त कभी भगवान नही बनना चाहता क्योंकि मिश्री कभी अपने माधुर्य का रसास्वादन नही कर सकती, उसी प्रकार भक्त भगवान बनकर उनके माधुर्य के रसास्वादन से वंचित रह जाता है इसलिए मुक्तावस्था मे जीव ब्रह्म श्रीकृष्ण का सामीप्य पाकर भी उनसे भिन्न रहते हुए चिरदास के रूप में अवर्णनीय आनंद प्राप्त करता है। यही नित्य भेदाभेद है।

चैतन्य महाप्रभु ने जिस महाभावपरक भक्ति—प्रेमाभक्ति—की धारा प्रवाहित की, उसको शास्त्रीय धरातल पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय आचार्य रूप गोस्वामी एवं जीव गोस्वामी को है। रूप गोस्वामी विरचित 'भक्तिरसामृत सिंधु' एवं 'उज्ज्वलनीलमणि' ग्रंथों में रस सिद्धांत की दृष्टि से भक्ति का विवेचन किया गया है। इन ग्रंथों पर जीव गोस्वामी ने अपनी विद्वत्तापूर्ण टीकाओं द्वारा भक्ति की विभिन्न स्थितियों की अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक पक्ष उजागर किया है।

भक्ति तत्त्व : भक्ति का लक्षण प्रस्तुत करते हुए रूप गोस्वामी का कथन है—

अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा॥[६८]

अर्थात् किसी भी प्रकार की अन्य कामनाओं से रहित, ज्ञान और कर्म आदि के आवरण से मुक्त अनुकूल भावना से कृष्ण का अनुशीलन (सेवन) उत्तम भक्ति है।

'कृष्ण' शब्द यहां परमात्मा का वाचक है। उत्तम भक्ति वही है जिसमें निष्काम भाव से अपने आराध्य भगवान की प्रसन्नता के लिए अपेक्षित सेवा-व्यापार किये जाते हैं। गोस्वामी-आचार्यों द्वारा प्रतिपादित भक्ति मुख्यतया भावरूपा है। यहां ज्ञान एवं कर्म का स्थान उतने ही अंश में स्वीकार्य है जितना वह भक्ति-भाव में सहायक हो। प्रेम-भावना ही भक्ति है। भक्ति स्वतः साधन भी है और साध्य भी।

भक्ति का स्वरूप : कृष्ण-भक्ति प्रेम स्वरूपा है।[६९] यह प्रेममयी भक्ति आनंदरूपी है। कृष्ण-भक्त की इंद्रियां स्वसुख (काम) की परितृप्ति के लिए नहीं अपितु कृष्ण के आस्वादन हेतु हैं।[७०] यही कृष्ण-प्रेम कृष्ण-भक्ति है। जिस प्रकार धन का प्रयोजन सुख-भोग है, उसी प्रकार भक्ति का प्रयोजन कृष्ण-प्रेम की प्राप्ति है।[७१] वृन्दावन के निकुंजों में लीलारत रसिक शिरोमणि प्रिया-प्रियतम की उपासना भक्ति का चरम साध्य है।

भक्ति के भेद : अखण्ड आनंदस्वरूपिणी भक्ति एक ही है परंतु भक्त की भावदशा एवं उसके क्रमिक विकास के अनुसार भक्ति विविध रूप धारण करती है। 'भक्तिरसामृत सिंधु' में भक्ति के विविध रूपों का सांगोपांग वर्णन किया गया है। साधन, भाव एवं प्रेम के भेद से भक्ति त्रिधा कही गयी है। वस्तुतः इन तीनों रूपों का समाहार साधन एवं साध्य रूपा—इन दो भेदों में किया जा सकता है। भाव की प्रबल प्रगाढ़ उन्नतावस्था ही प्रेम रूप में परिणत हो जाती है।[७२] 'उज्ज्वलनीलमणि' में ह्लादरूपा (प्रेम) भक्ति की क्रमशः प्रगाढ़ होती विभिन्न अवस्थाएं बतायी गयी हैं—स्नेह, मान, प्रणय राग, अनुराग, भाव, महाभाव।

साधन भक्ति : साधनों द्वारा साधित भक्ति, जिसके द्वारा भावरूपा भक्ति की सिद्धि होती हो, साधन भक्ति कही जाती है।[७३] भक्त के विभिन्न व्यापारों अर्थात् श्रवण, कीर्तन आदि साधनों द्वारा साधित इस साधन भक्ति का साध्य (उद्देश्य) भाव या प्रेम का प्रस्फुरण करना ही होता है। भावोदय के अनंतर साधन भक्ति का क्षेत्र समाप्त हो जाता है। साधन भक्ति के दो प्रकार हैं—वैधी एवं रागानुगा।

होता है कि वैधी भक्ति के अंगों श्रवण कीर्तन आदि की उपासना [illegible] म भी स्वीकृत की गयी है इनमें प्रमुख अंतर [illegible] एवं बुद्धि से भक्त भाव का उदय [illegible] जाता है जबकि रागानुगा भक्ति में हृदय [illegible] की उत्कृष्टता अनुभव की जाती है एवं रागाविष्ट भक्तों के भावों का [illegible] अनुगमन कर उनकी अनुभूति की जाती है। प्रथम में बुद्धि-तर्क प्रधान है और दूसरे में [illegible]-जन्य लोभमय वृत्ति।

कामानुगा : कामरूपा भक्ति का अनुगमन करने वाली भक्ति को कामानुगा भक्ति कहा गया है। यह संभोगेच्छामयी एवं तद्भावेच्छामयी भेद से दो प्रकार की [illegible]।[3] संभोग से तात्पर्य केलि-क्रीड़ा से है अतः संभोगेच्छामयी कामानुगा भक्ति वह है जिसमें कृष्ण और गोपियों की केलिक्रीड़ा विषयक लीलाओं को देख-सुनकर उस भाव-प्राप्ति की इच्छा उत्पन्न होती है। इससे श्रेष्ठ तद्भावेच्छामयी भक्ति है जिसमें स्वयं आराध्य के प्रेम-माधुर्य को प्राप्त करने की इच्छा होती है। जिनके मन में कृष्णमूर्ति के माधुर्य को देखकर या उनकी मधुर लीलाओं को सुनकर तद्भाव अर्थात् उनका प्रेम प्राप्त करने की इच्छा हो जाती है, वे भक्तजन दोनों प्रकार की कामानुगा भक्ति की साधना के अधिकारी होते हैं। ये अधिकारी स्त्री एवं पुरुष दोनों हो सकते हैं। 'पद्मपुराण' में कथा [illegible] प्रसिद्ध है कि दंडकारण्य के महर्षिगणों ने, राम के प्रति संभोग इच्छा [illegible], कृष्णावतार में गोपी रूप प्राप्त किया। शुद्ध रमण की इच्छा से (गोपी भाव से) विधि मार्ग के अनुसरण द्वारा कृष्ण की सेवा करने पर स्वर्गलोक में महिषी भाव प्राप्त होता है।[4]

संबंधानुगा : काम संबंध रूप कान्ता भाव व्यतिरिक्त अन्य समस्त भावात्मक संबंधों को संबंधानुगा के अंतर्गत माना गया है। अपने अंतस् में वात्सल्य-सख्यादि के मनन एवं आरोपण से जो भक्ति होती है उसे संबंधानुगा कहा गया है। जीव गोस्वामी की इस संबंध में स्पष्ट मान्यता है कि कृष्ण के प्रति पितृत्वादि अभिमान भक्त को अभीष्ट नहीं होना चाहिए, अपितु उस भावना का आचरण करते हुए सेवा सम्बन्ध की मर्यादा बराबर बनी रहनी चाहिए।[5] संबंध रूपा भक्ति का अनुगमन करने के कारण इसे संबंधानुगा भक्ति कहते हैं।

भाव-भक्ति : कृष्ण-प्राप्ति की अभिलाषा से समन्वित, प्रेम स्वरूप (प्रातःकालीन) सूर्य की किरणों के समान अपनी कांति द्वारा चित्त को द्रवीभूत करने वाली शुद्ध सत्त्वमयी भक्ति भाव-भक्ति कहलाती है।[6] यह अत्यंत स्निग्ध, पवित्र एवं सगुण भाव है। यह भाव ही अधिक सांद्र एवं प्रौढ़ होने पर प्रेम में परिपुष्ट होता है। वस्तुतः भाव प्रेम की प्राथमिक अवस्था है। ('प्रेमस्तु प्रथमावस्था भावः'—तंत्र) यह प्रेम-सूर्य का अंशु मात्र है। रूप गोस्वामी ने भाव व प्रेम को कारण-कार्य रूप में मानकर इनकी पृथक् स्थिति भी स्पष्ट की है। भाव व प्रेम भक्ति—दोनों साध्य भक्ति होती हैं और इनकी साधन रूप चेष्टाएं ही वैधी व रागानुगा भक्तियां हैं।

भाव-भक्ति के आविर्भाव के दो प्रमुख कारणों के अनुसार यह द्विविध है—साधनाभिवेशज एवं कृष्ण-तद्भक्त प्रसादज। प्रथम में साधन भक्ति के वैधी तथा रागा-

नुगा मार्गों के अनुष्ठान से भगवान के प्रति क्रमश. रुचि व आसक्ति विकसित होकर रति या प्रेम उत्पन्न होता है। दूसरे में इन साधनों की अपेक्षा नहीं होती अपितु कृष्ण अथवा उनके भक्तों की कृपा से सहसा भाव स्फूर्त हो जाता है। अत्यन्त सौभाग्यवानों को ही इस प्रकार की भक्ति प्राप्त होती है। कृष्ण का प्रसाद (कृपा) तीन प्रकार का होता है—१. वचनों द्वारा प्रदत्त अनुग्रह—वाचिक प्रसाद, २. दर्शन द्वारा द्रवीभूत होना—आलोक दान प्रसाद तथा ३. कृष्ण का मानस जन्य प्रसाद हार्द (मानसिक) कहा गया है।[47]

भावांकुरण के पश्चात् उसका आभास देने वाले अनुभावों का भी रूप गोस्वामी ने कथन किया है, वे हैं—१. क्षान्ति—क्षोभ का कारण उपस्थित होने पर भी क्षुब्ध न होना, २. अव्यर्थ कालत्व—भगवद्-भक्ति से रहित होकर, व्यर्थ में समय नष्ट न करना, ३. वैराग्य, ४. मानशून्यता, ५. आशाबंध—भगवद् प्राप्ति की दृढ संभावना, ६ समुत्कठा—अभीष्ट प्राप्ति हेतु अतिशय लोभ, ७ नाम-गान में रुचि (संकीर्तन), ८. भगवद्-गुणाख्यानासक्ति और ९. वास-स्थल—धाम से अनुरक्ति।[48]

भक्ति-मार्ग में मुमुक्षु की भांति सकाम कर्म नहीं होता अपितु मुक्ति-वांछा से रहित निष्काम कर्म (कृष्ण-सुख हेतु) किया जाता है. अतः मुमुक्षुओं के भाव एवं विकारों को रति के व्यंजक नहीं माना गया है अपितु रति का आभास मात्र देने के कारण रत्याभास या भावाभास कहा गया है। यह आभास दो प्रकार का होता है—प्रतिबिम्ब रूप और छाया रूप। दैवात् भगवद्-भक्तों के संसर्ग से मुमुक्षु के हृदय में भक्ति प्रतिबिंबित हो सकती है। क्षुद्र कौतूहलमयी, चंचला रति की छाया रूप भक्ति अज्ञानियों में भी भक्तादि की कृपावश लक्षित हो जाती है।[49]

प्रेम-भक्ति : अंतःकरण को सर्वतोभावेन स्निग्ध कर देने वाला, अत्यधिक ममता से युक्त भाव ही प्रगाढता प्राप्त होने पर प्रेम कहलाता है।[50] प्रेम के दो भेद होते हैं—भावोत्थ व अतिप्रसादोत्थ। भक्ति के अंतरंग अंगों के निरंतर सेवन द्वारा परमोत्कर्ष पर पहुंचा हुआ भाव ही भावोत्थ प्रेम है। यह द्विविध है—वैध व रागानुगा भावोत्थ प्रेम। अतिप्रसादोत्थ प्रेम भगवान की अत्यंत कृपा-दान से प्राप्त होता है। यह भी द्विविध है—महात्म्य ज्ञान युक्त और 'केवल' अर्थात् माधुर्यमात्र संवलित। माधुर्य संवलित प्रेम स्वयं में पूर्ण है। इस प्रकार की केवल भक्ति भगवान को वश में करने वाली है। ऐसी भक्ति ब्रज-गोपियों में परिलक्षित होती है।

प्रेमोदय की प्रक्रिया इस प्रकार वर्णित की गयी है—१. श्रद्धा, २. साधुसंग, ३ भजन क्रिया, ४ अनर्थ निवृत्ति, ५. निष्ठा, ६. रुचि, ७. आसक्ति, ८. भाव तथा ९ प्रेम। साधकों के भीतर प्रेम का प्रादुर्भाव इसी क्रम से होता है।[51]

प्रेम चैतन्य संप्रदाय की साधना-चिंतना का मूल आधार है। यही प्रेमकृष्ण स्वरूपिणी ह्लादिनी की वृत्ति विशेष है। गोस्वामी-आचार्यों द्वारा प्रतिपादित उपासना राग-मार्गीय है जिसमें लोभ मार्ग का अनुसरण किया जाता है। रूप गोस्वामी ने स्पष्टतया निर्देश किया है कि कृष्ण के माधुर्य आदि के श्रवण-गोचर होने पर मन उनके प्रति अत्यंत उत्कंठित हो जाता है। इस लोभमय उत्कंठा में शास्त्र एवं युक्ति अनापेक्षित हो जाते हैं।

लोभ की इस विशिष्ट वृत्ति की स्फूर्ति तीन प्रकार से होती है—१. श्रीगुरुमुख से,

चैतन्य महाप्रभु ने जिस भक्ति प्रेमाभक्ति की [illegible]
उसको शास्त्रीय धरातल पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय आचार्य रूप गोस्वामी एवं जीव गोस्वामी को है। रूप गोस्वामी विरचित 'भक्ति-रसामृत सिंधु' एवं 'उज्ज्वलनीलमणि' ग्रंथों में रस सिद्धांत की दृष्टि से भक्ति का विवेचन किया गया है। इन दोनों ग्रंथों पर जीव गोस्वामी ने अपनी विद्वत्तापूर्ण टीकाओं द्वारा भक्ति की विभिन्न [illegible] की अनुभूतियों का मनोवैज्ञानिक पक्ष उजागर किया है।

भक्ति तत्त्व : भक्ति का लक्षण प्रस्तुत करते हुए रूप गोस्वामी का कथन है —

अन्याभिलषिताशून्यं ज्ञानकर्म्माद्यनावृतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा॥[६८]

अर्थात् किसी भी प्रकार की अन्य कामनाओं से रहित, ज्ञान और कर्मों आदि के आवरण से मुक्त अनुकूल भावना से कृष्ण का अनुशीलन (सेवन) उत्तम भक्ति है।

'कृष्ण' शब्द यहाँ परमात्मा का वाचक है। उत्तम भक्ति वही है जिसमें निष्काम भाव से अपने आराध्य भगवान की प्रसन्नता के लिए अपेक्षित सेवा-व्यापार किये जाते हैं। गोस्वामी-आचार्यों द्वारा प्रतिपादित भक्ति मुख्यतया भावरूपा है। यहाँ ज्ञान [illegible] का स्थान उतने ही अंश में स्वीकार्य है जितना वह भक्ति-भाव में सहायक हो। प्रेम [illegible] ही भक्ति है। भक्ति स्वतः साधन भी है और साध्य भी।

भक्ति का स्वरूप : कृष्ण-भक्ति प्रेम स्वरूपा है।[६९] यह प्रेममयी भक्ति [illegible] है। कृष्ण-भक्त की इंद्रियाँ स्वसुख (काम) की परितृप्ति के लिए नहीं अपितु कृष्ण के आस्वादन हेतु हैं।[७०] यही कृष्ण-प्रेम कृष्ण-भक्ति है। जिस प्रकार धन का प्रयोजन सुख-भोग है, उसी प्रकार भक्ति का प्रयोजन कृष्ण-प्रेम की प्राप्ति है।[७१] वृन्दावन के [illegible] में लीलारत रसिक शिरोमणि प्रिया-प्रियतम की उपासना भक्ति का चरम साध्य है।

भक्ति के भेद : अखण्ड आनंदस्वरूपिणी भक्ति एक ही है परन्तु भक्तों की भावना एवं उसके क्रमिक विकास के अनुसार भक्ति विविध रूप धारण करती है। 'भक्तिरसामृत सिंधु' में भक्ति के विविध रूपों का सांगोपांग वर्णन किया गया है। साधन, भाव एवं प्रेम के भेद से भक्ति त्रिधा कही गयी है। वस्तुतः इन तीनों रूपों का समाहार साधन एवं साध्य रूपा—इन दो भेदों में किया जा सकता है। भाव की प्रबल प्रगाढ़ उन्मत्तावस्था ही प्रेम रूप में परिणत हो जाती है।[७२] 'उज्ज्वलनीलमणि' में ह्लादरूपा (प्रेम) भक्ति की क्रमशः प्रगाढ़ होती विभिन्न अवस्थाएं बतायी गयी हैं—स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव, महाभाव।

साधन भक्ति : साधनों द्वारा साधित भक्ति, जिसके द्वारा भावरूपा भक्ति की सिद्धि होती हो, साधन भक्ति कही जाती है।[७३] भक्त के विभिन्न व्यापारों अर्थात् श्रवण, कीर्तन आदि साधनों द्वारा साधित इस साधन भक्ति का साध्य (उद्देश्य) भाव या प्रेम का प्रस्फुरण करना ही होता है। भावोदय के अनंतर साधन भक्ति का कार्य समाप्त हो जाता है। साधन भक्ति के दो प्रकार हैं—वैधी एवं रागानुगा।

वैधी भक्ति : जहां राग के अभाव से केवल शास्त्र शासन से ही प्रवृत्ति उत्पन्न होती है वह वैधी भक्ति है।[74] इसमें स्वाभाविक ईश्वरानुराग के कारण ईश्वर भक्ति उत्पन्न नहीं होती अपितु शास्त्र-मर्यादा के पालन हेतु भक्ति में प्रवृत्ति होती है इसलिए इसे मर्यादा मार्ग भी कहा गया है।[75] शास्त्रों में उल्लिखित सभी विधि-निषेध वैधी भक्ति के अन्तर्गत आते हैं। वैधी भक्ति के पालन से ईश्वर के ऐश्वर्यात्मक स्वरूप की सिद्धि होती है परन्तु व्रजेन्द्रनंदन कृष्ण की सेवा माधुर्यभाव की भक्ति से प्राप्त होती है।[76]

रागानुगा भक्ति : व्रजवासियों में स्पष्ट रूप से विद्यमान रागात्मिका भक्ति (भाव रूपा---साध्य) का अनुसरण करने वाली भक्ति (साधन रूपा) रागानुगा कहलाती है।[77] इष्ट में स्वाभाविक रूप से प्रबल आकर्षण (आवेश---प्रेममयी तृष्णा) का नाम राग है। राग प्रधान भक्ति ही रागात्मिका भक्ति है। यह रागात्मिका भक्ति कामरूपा व संबंध रूपा भेद से द्विविध है।

कामरूपा : जो भक्ति संभोग-तृष्णा को प्रेम रूप में व्यक्त करती है, वह कामरूपा भक्ति कहलाती है। इसमें काम-तृष्णा द्वारा स्व-सुख की लालसा के निमित्त नहीं अपितु केवल कृष्ण-सुख के लिए ही उद्यम किया जाता है। अतः इसे 'कामरूपा' कहा गया है। स्व-सुख की स्वार्थ-गंध से भी दूर यह संभोग की इच्छा वाली काम-भावना व्रज-गोपियों में पायी जाती है। यह एक प्रकार का विशिष्ट प्रेम कहा गया है जो किसी अनिर्वचनीय माधुरी को प्राप्त कर उन्हीं काम-क्रीड़ाओं का हेतु बन जाता है जो काम से वर्णित होती है।[78] राधावल्लभ संप्रदाय में इसी विशिष्ट काम को 'नेम' कहा गया है।[79] वस्तुतः काम-रूपा भक्ति में, डॉ० प्रेम स्वरूप के शब्दों में, 'लौकिक काम जैसी गर्हित वृत्ति का चरम निर्मलीकरण और उदात्तीकरण ही नहीं है, चरम निर्वैयक्तीकरण भी है।...इस भावना (स्व-सुख विहीन काम भावना) में लौकिक संभोग भावना घुलकर विशुद्ध 'कामरूपा' रह जाती है'[80]। कामरूपा के विपरीत स्व-सुख की लालसा से युक्त काम प्रधान रति को 'कामप्राया' कहा गया है जो कुब्जा में मानी जाती है।[81]

संबंध रूपा : भगवान के प्रति पितृत्व आदि (सखा, बंधु, माता) संबंधों की अभिमान भावना पर आधारित भक्ति को संबंध रूपा भक्ति कहा जाता है। नंद में पितृ रूप व गोपों में सख्य रूप भक्ति संबंध रूपा भक्ति है। इस प्रकार की भक्ति में कृष्ण के प्रति ईश्वरत्व बुद्धि न होकर पितृत्व रूपेण राग की प्रधानता होती है, अतएव यह रागात्मिका (साध्य---भावरूपा) भक्ति के अंतर्गत है, साधन रूपा भक्ति के अंतर्गत नहीं।

रागात्मिका भक्ति के इन्हीं दो भेदों के आधार पर रागानुगा भक्ति के भी दो प्रकार बताये गये हैं---कामानुगा एवं संबंधानुगा। रागानुगा भक्ति के अधिकारी वे भक्त हैं जो बिना किसी बुद्धिजन्य तर्क या शास्त्र-युक्ति के रागात्मिका वृत्ति में निरत व्रजवासी जनों के भावों को प्राप्त करने के लोभी होते हैं।[82] जब तक भाव का आविर्भाव नहीं होता तभी तक वैधी भक्ति का प्रयोजन रहता है, परंतु भाव या प्रेम के उदय होने पर रागानुगा भक्ति को प्रधानता मिल जाती है। वैधी भक्ति में शास्त्रानुमोदित विधि-विधान एवं अनुकूल तर्क की अपेक्षा करना उचित है परंतु रागानुगा में शास्त्र की नहीं चित्त की रागात्मिका वृत्ति की प्रधानता होती है। दोनों का थोड़ा संबंध वहीं तक ही

होता है कि वैधी भक्ति के अंगों श्रवण कीर्तन आदि की उपयोगिता रागानुगा भक्ति मे भी स्वीकृत की गयी है इनमे प्रमुख अंतर भक्त की मनोदशा का है [illegible] एक बुद्धि से भक्ति-भाव का उदय किया जाता है और [illegible] उसको [illegible] किया जाता है जबकि रागानुगा भक्ति मे हृदय की भाव-प्रबलता से [illegible] भक्ति [illegible] उत्कृष्टता अनुभव की जाती है एवं रागाविष्ट भक्तों के भावों का [illegible] से अनुगमन कर उनकी अनुभूति की जाती है। प्रथम मे बुद्धि-तर्क प्रधान है और दूसरे मे [illegible]-जन्य लोभमय वृत्ति।

कामानुगा : कामरूपा भक्ति का अनुगमन करने वाली भक्ति को कामानुगा भक्ति कहा गया है। यह संभोगेच्छामयी एवं तद्भावेच्छामयी भेद से दो प्रकार की है। [illegible] संभोग से तात्पर्य केलि-क्रीड़ा से है अतः संभोगेच्छामयी कामानुगा भक्ति वह है जिसमे कृष्ण और गोपियों की केलिक्रीडा विषयक लीलाओं को देख-सुनकर उस भाव-प्राप्ति की इच्छा उत्पन्न होती है। इससे श्रेष्ठ तद्भावेच्छामयी भक्ति है जिसमे अपने आराध्य के प्रेम-माधुर्य को प्राप्त करने की इच्छा होती है। जिनके मन मे कृष्णमूर्ति के माधुर्य को देखकर या उनकी मधुर लीलाओं को सुनकर तद्भाव अर्थात् उनका प्रेम प्राप्त [illegible] इच्छा हो जाती है, वे भक्तजन दोनो प्रकार की कामानुगा भक्ति की साधना के अधिकारी होते है। ये अधिकारी स्त्री एवं पुरुष दोनों हो सकते है। 'पद्मपुराण' मे [illegible] प्रसिद्ध है कि दंडकारण्य के महर्षिगणों ने, राम के प्रति [illegible] इच्छा [illegible] कारण, कृष्णावतार मे गोपी रूप प्राप्त किया। शुद्ध रमण की इच्छा से (गोपी भाव से) [illegible]-मार्ग के अनुसरण द्वारा कृष्ण की सेवा करने पर स्वर्गलोक मे महिषी भाव प्राप्त होता है।[8]

संबंधानुगा : काम संबंध रूप कांता भाव व्यतिरिक्त अन्य [illegible] भावात्मक संबंधों को संबंधानुगा के अंतर्गत माना गया है। अपने अन्तस् मे वात्सल्य-[illegible] मनन एवं आरोपण से जो भक्ति होती है उसे संबंधानुगा कहा गया है। जीव गोस्वामी की इस संबंध मे स्पष्ट मान्यता है कि कृष्ण के प्रति पितृत्वादि अभिमान भक्त को [illegible] नहीं होना चाहिए, अपितु उस भावना का आवरण करते हुए सेवा भक्तत्व की मर्यादा अवश्य बनी रहनी चाहिए।[9] संबंध रूपा भक्ति का अनुगमन करने के कारण [illegible] संबंधानुगा भक्ति कहते है।

भाव-भक्ति : कृष्ण-प्राप्ति की अभिलाषा से समन्वित, प्रेम स्वरूप (प्रा[illegible]) सूर्य की किरणों के समान अपनी कांति द्वारा चित्त को द्रवीभूत करने वाली शुद्ध [illegible] भक्ति भाव-भक्ति कहलाती है।[10] यह अत्यंत स्निग्ध, पवित्र एवं मसृण भाव है। यह भाव ही अधिक सांद्र एवं प्रौढ़ होने पर प्रेम मे परिपुष्ट होता है। वस्तुतः भाव प्रेम की प्राथमिक अवस्था है। ('प्रेमस्तु प्रथमावस्था भाव:'—तंत्र) यह प्रेम-सूर्य का [illegible] है। रूप गोस्वामी ने भाव व प्रेम को कारण-कार्य रूप मे मानकर उनकी पृथक् स्थिति भी स्पष्ट की है। भाव व प्रेम भक्ति—दोनों साध्य भक्ति होती है और इनकी साधन रूप चेष्टाएं ही वैधी व रागानुगा भक्तियां हैं।

भाव-भक्ति के आविर्भाव के दो प्रमुख कारणों के अनुसार यह द्विविध है—साधनाभिवेशज एवं कृष्ण-तद्भक्त प्रसादज। प्रथम मे साधन भक्ति के वैधी तथा राग-

नुगा मार्गों के अनुष्ठान से भगवान के प्रति क्रमश. रुचि व आसक्ति विकसित होकर र्ग या प्रेम उत्पन्न होता है। दूसरे में इन साधनों की अपेक्षा नहीं होती अपितु कृष्ण अथव उनके भक्तों की कृपा से सहगा भाव स्फूर्त हो जाता है। अत्यंत सौभाग्यवानों को ही इस प्रकार की भक्ति प्राप्त होती है। कृष्ण का प्रसाद (कृपा) तीन प्रकार का होता है— १. वचनों द्वारा प्रदत्त अनुग्रह—वाचिक प्रसाद, २ दर्शन द्वारा द्रवीभूत होना—आलोक दान प्रसाद तथा ३. कृष्ण का मानस जन्य प्रसाद हार्द (मानसिक) कहा गया है।[७]

भावांकुरण के पश्चात् इसका आभास देने वाले अनुभावों का भी रूप गोस्वामी ने कथन किया है, वे हैं—१. क्षान्ति—क्षोभ का कारण उपस्थित होने पर भी क्षुब्ध न होना, २. अव्यर्थ कालत्व—भगवद्-भक्ति से रहित होकर, व्यर्थ में समय नष्ट न करना, ३. वैराग्य, ४. मानशून्यता, ५. आशाबंध—भगवद् प्राप्ति की दृढ़ संभावना, ६. समुत्कंठा—अभीष्ट प्राप्ति हेतु अतिशय लोभ, ७ नाम-गान में रुचि (संकीर्त्तन), ८. भगवद्-गुणाख्यानासक्ति और ९. वास-स्थल—धाम में अनुरक्ति।[८]

भक्ति-मार्ग में मुमुक्षु की भांति सकाम कर्म नहीं होता अपितु मुक्ति-वांछा से रहित निष्काम कर्म (कृष्ण-सुख हेतु) किया जाता है, अतः मुमुक्षुओं के भाव एवं विकारों को रति के व्यंजक नहीं माना गया है अपितु रति का आभास मात्र देने के कारण रत्या-भास या भावाभास कहा गया है। यह आभास दो प्रकार का होता है—प्रतिबिंब रूप और छाया रूप। दैवात् भगवद्-भक्तों के संसर्ग से मुमुक्षु के हृदय में भक्ति प्रतिबिंबित हो सकती है। क्षुद्र कौतूहलमयी, चंचला रति की छाया रूप भक्ति अज्ञानियों में भी भक्तादि की कृपावश लक्षित हो जाती है।[९]

प्रेम-भक्ति : अंतःकरण को सर्वतोभावेन स्निग्ध कर देने वाला, अत्यधिक ममता से युक्त भाव ही प्रगाढ़ता प्राप्त होने पर प्रेम कहलाता है।[१०] प्रेम के दो भेद होते हैं—भावोत्थ व अतिप्रसादोत्थ। भक्ति के अंतरंग अंगों के निरंतर सेवन द्वारा परमोत्कर्ष पर पहुंचा हुआ भाव ही भावोत्थ प्रेम है। यह द्विविध है—वैध व रागानुगा भावोत्थ प्रेम। अतिप्रसादोत्थ प्रेम भगवान की अत्यंत कृपा-दान से प्राप्त होता है। यह भी द्विविध है—महात्म्य ज्ञान युक्त और 'केवल' अर्थात् माधुर्यमात्र संवलित। माधुर्य संवलित प्रेम स्वयं में पूर्ण है। इस प्रकार की केवल भक्ति भगवान को वश में करने वाली है। ऐसी भक्ति ब्रज-गोपियों में परिलक्षित होती है।

प्रेमोदय की प्रक्रिया इस प्रकार वर्णित की गयी है—१. श्रद्धा, २. साधुसंग, ३ भजन क्रिया, ४. अनर्थ निवृत्ति, ५. निष्ठा, ६. रुचि, ७. आसक्ति, ८. भाव तथा ९ प्रेम। साधकों के भीतर प्रेम का प्रादुर्भाव इसी क्रम से होता है।[११]

प्रेम चैतन्य संप्रदाय की साधना-चिंतना का मूल आधार है। यही प्रेमकृष्ण स्वरूपिणी ह्लादिनी की वृत्ति विशेष है। गोस्वामी-आचार्यों द्वारा प्रतिपादित उपासना राग-मार्गीय है जिसमें लोभ मार्ग का अनुसरण किया जाता है। रूप गोस्वामी ने स्पष्टतया निर्देश किया है कि कृष्ण के माधुर्य आदि के श्रवण-गोचर होने पर मन उनके प्रति अत्यंत उत्कंठित हो जाता है। इस लोभमय उत्कंठा में शास्त्र एवं युक्ति अनापेक्षित हो जाते है।

लोभ की इस विशिष्ट वृत्ति की स्फूर्ति तीन प्रकार से होती है—१. श्रीगुरुमुख से,

२ अनुरागी भक्त के श्रीमुख से एव ३ भक्त द्वारा परिमार्जन चित्त मे स्वत भाव लोभ प्रधान रागमार्गीय उपासक भक्त के लिए अवलम्बनीय है । १ श्रीकृष्ण एवं उनके प्रियजनो क स्मरण चितन एव कथा म अनुरक्त होकर निरन्तर व्रज म वास करना। ... का अनुगमन करते हुए साधक एव सिद्ध रूप सेवा म लीन रहना ... श्रवण ... साधन-भक्ति के अंगो का ग्रहण ।[१२]

भक्ति के अंग : श्री रूप गोस्वामी ने 'भक्तिरसामृत सिंधु' म साधन-भक्ति के चौसठ अंगो का उदाहरण सहित विवेचन किया है ।[१३] इनमें दस अंग विधि-रूप और दस निषेध-रूप अंग कहे गये हैं । ये बीस अंग भक्ति के प्रवेश-द्वार है । अन्य अंग भक्ति के मुख्य अंग है जिनमें श्रवण कीर्त्तनादि नवधा भक्ति के साधनो का भी समावेश है । चैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओ के आधार पर श्री रूप गोस्वामी और कृष्णदास कविराज ने भक्ति के अंगो मे से इन पाच अंगो का विशेष महत्त्व प्रतिपादित किया है— १. साधु-संग, २ हरिनाम-कीर्त्तन, ३. भागवत-श्रवण, ४. मथुरा-मडल-वास, ५. श्री मूर्ति-सेवा ।[१४] इनके मतानुसार साधक-गण इन अंगो मे से किसी एक अंग अथवा अनेक अंगो की अपनी निष्ठानुसार साधना करके कृष्ण-प्रेम की प्राप्ति कर सकते है । उदाहरणार्थ राजा परीक्षित ने केवल श्रवण से, शुकदेव ने कीर्त्तन से, प्रह्लाद ने स्मरण से, लक्ष्मी ने पाद-सेवन से, पृथु ने पूजन से तथा इसी प्रकार कई भक्तों ने अन्य अंगों के अनुष्ठान से भगवान के प्रेम को प्राप्त किया था ।[१५]

यद्यपि साधन-भक्ति के सभी अंग उपादेय है तथापि चैतन्य सम्प्रदाय में हरिनाम-संकीर्त्तन को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है । नाम-कीर्त्तन ही कलियुग का धर्म है । कृष्णदास कविराज ने नवधा-भक्ति के अंतर्गत नाम संकीर्त्तन को सर्वश्रेष्ठ बताया है— "भजनेर मध्ये श्रेष्ठ नवविधा भक्ति । तार मध्ये सर्वश्रेष्ठ नाम-संकीर्त्तन ।"[१६] महाप्रभु चैतन्य ने 'शिक्षाष्टक' मे सर्वप्रथम श्रीकृष्ण-संकीर्त्तन का ही गुणगान किया है । उन्होंने संकीर्त्तन को सर्वाधिक लोकप्रिय बनाया, महाप्रभु को संकीर्त्तन का प्रवर्तक कहा जाता है ।

श्री नाथ चक्रवर्ती ने चैतन्य मतानुसार भक्ति-तत्त्व का विश्लेषण करते हुए उसके प्रमुख उपकरण इस प्रकार बताये है—भगवान श्रीकृष्ण एकमात्र आराध्य है, उनका धाम वृन्दावन है । उनकी आराधना का आदर्श व्रज-गोपियो की उपासना है । श्रीमद्भागवत प्रमाण-ग्रंथ है और प्रेम ही जीव का परम पुरुषार्थ है :

> आराध्यो भगवान व्रजेशतनयस्तद्धाम वृंदावनं ।
> रम्या काचिदुपासना व्रज वधू वर्गेण या कल्पिता ।
> भागवतं प्रमाणममलं प्रेमा पुमर्थो महान ।
> श्री चैतन्य महाप्रभोर्मतमिदं तत्राग्रहो नः परः ॥[१७]

चैतन्य संप्रदाय के गोस्वामी-आचार्यो ने साधन भक्ति के इन विभिन्न अंग-पागों का विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण विवेचन किया है, जिनमे से प्रमुख अंगो का, आगामी अध्याय—'चैतन्य संप्रदाय के व्रजभाषा काव्य में भक्ति तत्त्व'—में हम यथास्थान

निरूपित करगे

नित्य विहार चैतन्य सम्प्रदाय के सिद्धातो मे नित्य विहार का विशिष्ट महत्त्व हे। सम्प्रदायानुसार नित्य विहार का सबध श्रीकृष्ण का विभिन्न लीलाओ से है। यह सबध मात्र संभोग श्रृंगार रस से ही नही है अपितु उनकी सभी क्रीड़ाएं नित्य मानी गयी है चाहे वे ब्रज-वृंदावन की गोष्ठ लीला हो, कुंज लीला हो अथवा निकुंज लीला। इसी प्रकार श्रीकृष्ण बाल, पौगण्ड, किशोर सभी अवस्थाओ मे लीला-रमण एक साथ करते है। उनकी प्रकट व अप्रकट सभी लीलाओं मे नित्यता है। एक ही समय वे कुज-निकुंज मे ब्रजांगनाओं के साथ क्रीडारत रहते है, उसी समय माता यशोदा की गोद मे लालित होते है तथा सखाओं के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार, क्रीड़ाएं करते हैं।

रूप गोस्वामी ने इन विभिन्न लीलाओ की एक साथ नित्यता का समाधान 'प्रकाश भेद' सिद्धांत मे प्रस्तुत किया है। 'लघुभागवतामृतम्' मे उन्होंने बताया है कि आकार, गुण एवं लीला मे एकता होने से एक ही विग्रह का अधिकला से अनेक स्थानो में आविर्भाव 'प्रकाश' कहलाता है।[९८] श्रीकृष्ण का स्वयं का रूप ही अनेक रूपों मे प्रकाशित होता है। इन लीलाओं के क्रम में विरह-मिलन भी इसी प्रकार होता है—एक ही प्रकाश मे कृष्ण का गोपियों से मिलन होता है और एक ही प्रकाश मे विरह। संप्रदाय के रसाचार्यो ने रस की पुष्टि के लिए क्रममयी लीलाओं मे वियोग के पश्चात् संयोग व सयोग के पश्चात् वियोग को अवश्यंभावी बताया है। राधा-कृष्ण की संयोगमयी लीलाओ का अनुभव करता हुआ भक्त विरहावस्था को भूल जाता है, इसी प्रकार विरह-लीला में तन्मय होकर वह उनकी संयोगावस्था को विस्मृत कर देता है। प्रबोधानद सरस्वती ने 'वृंदावन महिमामृतम्' मे कृष्ण की संयोगपरक व वियोगपरक विभिन्न लीलाओं के विभिन्न स्थलो पर एक साथ प्रकाशन का सुदर चित्रण किया है।[९९]

'विहार' शब्द का अर्थ संप्रयोगात्मक है।[१००] संप्रयोगमयी लीलाओं का सबंध राधा-कृष्ण की मिलनावस्था से है। संयोग के अतिशय आनंद की तन्मय दशा में विरह की स्थिति विस्मृत हो जाती है। चैतन्य सप्रदाय के आचार्यों ने विरह के साथ संयोगमयी लीला पर भी बल दिया है।[१०१]

'नित्य विहार' अपने विशिष्ट अर्थो मे आज निकुज लीला का पर्यायवाची बन गया है। इनसे निष्पन्न रस को 'निकुंज रस' कहा गया है। वस्तुतः यह प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण की शाश्वत, गूढ एवं मधुर प्रेम-रस लीला ही है जिसमें श्रृंगार अपने सर्वोत्कृष्ट रूप-सौंदर्यावस्था मे अभिव्यक्त होता है। 'नित्य विहार' इसीलिए विदग्ध रसिको का सर्वोपरि हार्द एवं चरम उपास्य तत्त्व है, जो चैतन्य संप्रदाय के आचार्य-गोस्वामियो के समान ही ब्रजभाषा-कवियों का भी अभिप्रेत रहा है। नित्य विहार या निकुज लीला रस का आस्वादन व विस्तार सखी भाव से होता है।[१०२] यह रसोपासना चैतन्य संप्रदाय के साथ ही साथ निम्बार्क संप्रदाय, सखी संप्रदाय व राधावल्लभ संप्रदाय का भी उपास्य तत्त्व है। वस्तुतः राधाकृष्ण की युगलोपासना में सखी भाव सहज-स्वीकृत भाव है जो व्यापक रूप मे प्रायः सभी संप्रदायों में गृहीत है। डॉ० शरण बिहारी गोस्वामी ने विभिन्न संप्रदायो के अंतर्गत सखी-भाव की उपासना को विवेचित

किया है।

चैतन्य सम्प्रदाय में रस-स्वरूप श्रीकृष्ण की लीलाओं का प्रकाशन अनेक रूपों में माना गया है जिनमें मधुर रसाश्रित वात्सल्य, सख्य, दास्य लीलाएं भी आती हैं। ब्रज में संबंधित इन सभी लीलाओं से निष्पन्न रस को 'ब्रज रस' कहा गया है। साधना में विकास-क्रम में यह ब्रज रस कांता भाव व सखी भाव में आरोहण करता है। डॉ० विजयेन्द्र स्नातक भी यह मानते हैं कि नित्य-विहार-वर्णन के लिए जिन क्रमिक स्थितियों से होकर गुजरना होता है उनमें ब्रज रस का स्थान है।[१०६] चैतन्य संप्रदाय में तो सखी भाव से भी उच्चतर मंजरी भाव की अन्तरंग में भी अन्तरंग उपासना मान्य है।

रूप गोस्वामी ने गोपियों के विभिन्न भेदोपभेदों का विस्तृत विवेचन करते हुए कहा है कि श्रीराधा चंद्रावली प्रभृति यूथेश्वरियों के समान रूप, वय, वेषादि से संपन्न परस्पर निश्छल प्रेम संपन्न गोपियां ही सखियां हैं। ये सखियां प्रेम लीला के विहार और विलास की संपोषिका हैं।[१०७] सेवा के विभेद से गोपियों के दो प्रकार हैं— सखी और मंजरी। जो गोपियां राधा की समजातीया सेवा से कृष्ण का प्रीति विधान करती हैं उन्हें सखी कहते हैं जैसे ललिता, विशाखा आदि। जो सखियां राधा कृष्ण के मिलन एवं सेवा के अनुकूल कार्य करने में तत्पर रहती हैं उन्हें मंजरी कहते हैं जैसे श्रीरूप मंजरी, श्री अनंग मंजरी। ये श्री राधा की किंकरी हैं। राधा-माधव की अन्तरंग सेवा में सखियों की अपेक्षा मंजरियों का अधिकार अधिक है।[१०८] मंजरियों की भाव-शुद्धि विलक्षण है। सखियां राधा के अतिशय आग्रह के कारण कभी-कभी श्रीकृष्ण का अंग-संग स्वीकार भी कर लेती हैं किन्तु मंजरियां राधा के अनुरोध पर भी श्रीकृष्ण अंग-संग की कभी भी वांछा नहीं करतीं, उनमें विशुद्ध सेवा-वासना है।[१०९]

साधक अपनी साधना के विकास के द्वारा जब सिद्ध देह का लाभ प्राप्त करते हैं तभी उन्हें निकुंज सेवा में नियुक्ति का अधिकार मिलता है। 'वस्तुतः 'मंजरी भाव' साधक की क्रमशः समृद्धि प्राप्त साधना की समर्थी रति की परिणति'।[११०] मंजरी भाव की साधना उच्चतर मानसी साधना मानी गयी है। चैतन्य संप्रदाय में रागानुगा साधना की अतिशय महत्ता है जिसमें राधा-गोविंद की अष्टकालीन लीला का अष्टयाम चिंतन किसी मंजरी के आनुगत्य में किया जाता है। मंजरी भाव की उपासना चैतन्य महाप्रभु और उनके अनुयायी आचार्य-गोस्वामियों की विशिष्ट मौलिक देन है। महाप्रभु चैतन्य से पूर्व इसका उल्लेख नहीं मिलता।

लीला-विस्तार सखित्व का विशेष लक्षण है। चूंकि सखी व मंजरी दोनों से ही यह लीला-विस्तार साधित होता है अतः सामान्य रूप से दोनों को ही सखी कहा जाता है। चैतन्य संप्रदाय के आचार्यों ने निकुंज रस और सखी भाव का सैद्धांतिक निरूपण तो किया ही है, इस रसोपासना से संबंधित विपुल काव्य की रचना भी की है। रूप गोस्वामी ने सर्वप्रथम इस रस की व्याख्या की। प्रबोधानंद सरस्वती ने स्वामी हरिदास व हितहरिवंश के वृंदावन-आगमन से १५ वर्ष पूर्व ही 'वृंदावन महिमामृतम्', 'राधारससुधानिधि', 'संगीत माधवम्' आदि अपनी संस्कृत रचनाओं में निकुंज-लीला का विस्तृत एवं सरस आख्यान किया है। इस संप्रदाय के अनेक रससिद्ध कवियों ने

अपनी रचनाओं में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से निकुंज रस का निरूपण किया है। इन रचनाओं में प्रमुख हैं—रूप गोस्वामी कृत उज्ज्वलनीलमणि, निकुंज रहस्य स्तव, श्री कुंजविहार्याष्टकम्, श्री गांधर्वा-संप्रार्थनाष्टकम्, श्री राधामाधवयोर्नामयुगाष्टकम्, स्मरण मंगल स्तोत्र, पद्यावली (श्रीस्तव कल्पद्रुम) आदि; ठाकुर नरोत्तम कृत प्रार्थना, जीव गोस्वामी कृत षट् संदर्भ व टीकाएं, रसिकानंद गोस्वामी विरचित श्री निकुंज केलि स्तोत्रम्, विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत श्री निकुंज केलि विरुदावली, गोवर्द्धन भट्ट कृत मधु केलि वल्ली व युगल कथामृत आदि। संस्कृत के अतिरिक्त बंगला में भी निकुंज रस से संबंधित विपुल काव्य रचनाएं की गयी हैं। इस संप्रदाय के अनेक ब्रजभाषा कवियों ने भी निकुंज रस की विस्तृत एवं सरस अभिव्यंजना की है जिसकी समालोचना हम आगे के अध्यायों में माधुर्य भाव व रस के प्रसंग में करेंगे।

सेवा-उपासना : इष्ट की श्रद्धापूर्वक सेवा भक्ति-भाव को परिपक्व करती है। यह सेवा-उपासना भगवान के नाम व स्वरूप (श्रीमूर्ति) दोनों की होती है। अमूर्त रूप में होने के कारण नाम की सेवा उतनी प्रचलित नहीं, जितनी स्वरूप-विग्रह के मूर्त रूप की। राधा-कृष्ण के विग्रह की सेवा मूर्ति समझकर नहीं, अपितु साक्षात् राधा-कृष्ण के रूप में की जाती है। नित्य सेवा के रूप में अष्टप्रहर सेवा का विधान है। चैतन्य संप्रदाय में जिस प्रकार राधा-कृष्ण के युगल रूप की अष्टकालीन सेवा-पूजा की जाती है, उसी प्रकार चैतन्य महाप्रभु की, राधा-कृष्ण के सम्मिलित विग्रह-रूप में, पूजा-भक्ति करते हुए सेवा होती है।

राधा-कृष्ण की लीलाओं के स्मरण एवं ध्यान द्वारा उनकी सेवा उपासना करने के निमित्त गौड़ीय भक्तों ने अष्टकालीन लीलाओं का वर्णन किया है। सर्वप्रथम रूप गोस्वामी ने 'स्मरण मंगल स्तोत्र' में इनका विभाजन इस प्रकार किया है—निशांत लीला, प्रातःकालीन लीला, पूर्वाह्न लीला, मध्याह्न लीला, अपराह्न लीला, सायंकालीन, प्रदोषकालीन एवं निशीथकालीन लीला। इसके आधार पर इनका विस्तृत वर्णन कवि कर्णपूर कृत 'कृष्णाह्निक कौमुदी', कृष्णदास कविराज कृत 'गोविंद-लीलामृत', विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत 'श्रीकृष्ण भावनामृत' एवं बाबा कृष्णदास द्वारा संपादित 'भावना सार संग्रह' में किया गया है। इस संप्रदाय की सेवा-प्रणाली में लीलाओं की विविधता, रोचकता एवं सूक्ष्म विश्लेषण की प्रवृत्ति विद्यमान है। परकीया भाव होने के कारण यह रोचकता अतिशय हो गयी है। राधा-कृष्ण के अनुरागमय मिलन में सखियों की चाटु-लीलाएं विशेष रूप में आकर्षक हैं।

रस सिद्धांत

मध्य युग से पूर्व ज्ञान एवं कर्म की विशेष महत्ता होने से भक्ति गौण रूप में ही प्रतिष्ठित थी। काव्य-शास्त्र में भक्ति की रस रूप में मान्यता नहीं हुई थी अपितु भक्ति को मात्र 'भाव' की संज्ञा दी गयी थी। मध्य युग में जब कृष्ण भक्ति धारा के रूप में भक्ति का पूर्ण परिपाक होकर रागात्मिका भक्ति का संचार हुआ तब उस अनिर्वचनीय आनंद-रूपा भक्ति की रसात्मकता का तीव्रता से बोध होने लगा। भक्ति को काव्य

शास्त्र की दृष्टि से रस की श्रेणी मे प्रतिष्ठापित करने का सर्वप्रथम श्रेय चैतन्य संप्रदाय के आचार्य-गोस्वामियों को ही है। रूप गोस्वामी कृत 'भक्तिरसामृत सिंधु' एवं 'उज्ज्वलनीलमणि' मे काव्य-शास्त्र की दृष्टि से भक्ति रस एवं उसके विविध रूपों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

रूप गोस्वामी के अनन्तर भी भक्ति रस का शास्त्रीय चिंतन किया गया है। जीव गोस्वामी कृत 'भक्ति संदर्भ' व 'प्रीति संदर्भ' तथा 'उज्ज्वलनीलमणि' पर लोचन रोचनी टीका, नारायण भट्ट विरचित 'भक्ति रसायन', कवि कर्णपूर कृत 'अलंकार कौस्तुभ', विश्वनाथ चक्रवर्ती प्रणीत 'उज्ज्वलनीलमणि किरण', भक्ति रसामृत सिंधु बिंदु, रागवर्त्मचन्द्रिका, कृष्णदास कविराज द्वारा रचित 'चैतन्य चरितामृत' आदि अनेक कृतियों मे चैतन्य संप्रदाय का भक्ति रस सिद्धान्त प्रतिष्ठित है।

कृष्ण-भक्ति रस की परिभाषा देते हुए रूप गोस्वामी का कथन है—भक्त के हृदय मे आस्वाद्यता को प्राप्त हुआ कृष्ण रति रूप स्थायी भाव ही विभाव, अनुभाव, सात्विक तथा व्यभिचारी भावों के द्वारा परिपुष्ट होकर भक्ति रस कहलाता है।[१] यह परिभाषा रस-निष्पत्ति के संबंध मे काव्यशास्त्र में मान्य भरत-सूत्र 'विभावानुभाव-व्यभिचारिसंयोगाद्रस निष्पत्तिः' के अनुसार ही भक्ति-रस की निष्पत्ति सिद्ध करती है। काव्य-रस की अनुभूति एवं आस्वादन हेतु जिस प्रकार संस्कारयुक्त सहृदय का होना अनिवार्य है, उसी प्रकार भक्ति रस का अनुभावन उत्तम भक्ति संस्कार से युक्त सहृदय को ही हो सकता है।

भक्ति रस के उपकरण : कृष्ण भक्ति रस मे आलंबन एवं उद्दीपन दो प्रकार के विभाव होते हैं। ये रति के आस्वादन के हेतु बनते है।

आलंबन विभाव : कृष्ण और उनके भक्त—दोनों को भक्ति रस का आलंबन विभाव माना गया है। कृष्ण, भक्ति के विषय रूप एवं भक्त, भक्ति के आधार रूप होने से आश्रय रूप आलंबन होते है।

समस्त गुणों से युक्त, नायक-शिरोमणि भगवान् कृष्ण, अन्य रूप में एवं अपने स्वरूप से भक्ति रस में आलंबन बनते है। कृष्ण का अपना स्वरूप आवृत्त व प्रकट भेद से दो प्रकार का कहा गया है। अनन्त गुणशाली नायक कृष्ण के प्रमुख रूप में सांगठ गुणों का 'भक्तिरसामृत सिंधु' में लक्षण व उदाहरण सहित उल्लेख किया गया है।[११०] उनमें से कुछ गुण है—सुरम्यांग, सर्वलक्षणान्वित, रुचिर, तेजोयुक्त, बलवत्ता, वय-सान्वित, प्रियवदता, बुद्धिमान, विदग्ध, दक्ष, कृतज्ञ, शुचि, वशी, स्थिर, क्षमाशील, गंभीर, सम, धृतिमान, शूर, करुण, विनयी, शरणागतपालक, भक्तसुहृद्, प्रेमवश्य, कीर्तिमान, सर्वजन प्रिय, सर्वाराध्य, ईश्वर, सर्वज्ञ, सच्चिदानंद, अनेक अवतार-धारी आदि। लीला माधुरी, प्रेम माधुरी, वंशी माधुरी और रूप माधुरी श्रीकृष्ण के असाधारण गुण कहे गये हैं।

नित्य गुणों से युक्त कृष्ण यद्यपि नायकों के शिरोमणि हैं, फिर भी भक्तों के लिए इनके पूर्णतम, पूर्णतर और पूर्ण—ये तीन रूप ही अपेक्षित है। गोकुल में कृष्ण का पूर्णतम रूप व मथुरा में पूर्णतर तथा द्वारिका में पूर्ण रूप प्रकट हुआ है। साहित्य

शास्त्रोक्त चारो प्रकार के नायको के लक्षण कृष्ण मे विद्यमान है, जिनमे धीर ललित उनमें विशिष्ट रूप मे है। कृष्ण में, लीला-विशेषशाली होने के कारण, चतुर्विध नायकत्व परस्पर विरोधी नही हो पाते और धीरोद्धत का दोष भी गुण बन जाता है। उन्हे विरुद्ध धर्मो का आश्रय कहा गया है। कृष्ण शोभा, विलास, माधुर्य, मांगल्य, स्थैर्य, तेज, लालित्य और औदार्य—इन आठ पुरुषगत सत्व गुणो से युक्त है।

कृष्ण के प्रेम से अपने अन्तःकरण को पवित्र करने वाले कृष्ण-भक्त कहलाते हैं।[111] इनके साधक व सिद्ध दो भेद बताये गये है। सिद्ध दो प्रकार के—संप्राप्त सिद्ध व नित्य सिद्ध—कथित हैं। सप्राप्त सिद्ध भक्त भी साधना सिद्ध और कृपा सिद्ध दो प्रकार के कहे गये है। विविध उपायो द्वारा सिद्धि प्राप्त करने वाले भक्त संप्राप्त सिद्ध, एवं पूर्व जन्म के संस्कारो के कारण जन्म से ही सिद्धि प्राप्त करने वाले भक्त नित्य सिद्ध होते हैं। कृष्ण-भक्त पाच प्रकार के माने गये हैं—शांत (विरक्त), दास-पुत्रादि, सखा, गुरुवर्ग और प्रेयसीगण।

उद्दीपन विभाव : कृष्ण रति को उद्दीप्त करने वाले भाव उद्दीपन विभाव कहलाते हैं। इनमे हैं—कृष्ण के गुण, चेष्टाएं, प्रसाधन, स्मित, अंग-सौरभ, वशी, शृंग, नूपुर, शंख, चरण-चिह्न, क्षेत्र, तुलसी, भक्त गण तथा जन्माष्टमी आदि पुण्य दिवस।[112] कायिक, वाचिक तथा मानसिक भेद से गुण तीन प्रकार के कथित हैं। कायिक गुण के अतर्गत वयस्, सौन्दर्य, रूप व मृदुता आते हैं। वयस् की तीन अवस्थाए है—कौमार, पौगण्ड व कैशोर। रासादि लीलाएं व दुष्टदलन आदि चेष्टाएं कृष्ण-भक्ति की उद्दीपन विभाव होती है। प्रसाधन के अंतर्गत वस्त्र, आकल्प तथा मंडन आते हैं।

अनुभाव : अनुभाव चित्तस्थ भावो के बोधक तथा बाह्य विक्रिया रूप होते हैं। विभाव द्वारा उद्भासित भाव अनुभाव रूप में प्रकट होने से अनुभाव को 'उद्भासुर सज्ञा प्रदान की गयी है।[113] काव्यशास्त्र में वर्णित परम्परागत अनुभावो के अतिरिक्त भक्ति रस मे कुछ विशिष्ट व नवीन अनुभाव भी वर्णित है—नृत्य, लुठित, गीत, तनुमोटन, हुंकार, जृम्भण, दीर्घनिःश्वास, अट्टहास, घूर्णा, हिक्का आदि। स्वयं चैतन्य महाप्रभु में इन अनुभावो का प्रकाशन हुआ करता था।

सात्विक भाव : साक्षात् अथवा नकिंचित व्यवधान से कृष्ण संबंधी भावो से आक्रान्त चित्त को सत्व एवं उससे उत्पन्न भाव को सात्त्विक भाव कहा गया है।[114] ये त्रिविध हैं—स्निग्ध एवं रुक्ष। स्तंभादि परंपरागत सात्विको को भक्ति रस मे स्वीकार किया गया है! उद्दीपन की मात्रानुसार ये क्रमशः धूमायित, ज्वलित, दीप्त तथा उद्दीप्त—अवस्थाओं मे होते हैं। महाभाव में समस्त सात्विक एक साथ चरम अवस्था मे पहुच जाते हैं। यह विभाजन सर्वथा नवीन दृष्टि का परिचायक है। इसके अतिरिक्त चार प्रकार के सात्विक भासों की कल्पना में भी नूतनता है, ये हैं—रत्याभास से उत्पन्न, सत्वाभास से उत्पन्न, सत्व रहित तथा प्रतीप (विपरीत)।

व्यभिचारी भाव : स्थायी भाव के प्रति विशेषतया व अनुकूलता से संचरण-शील भाव कहलाते हैं की गति का करने के कारण इन्हें सचारी भाव भी कहा गया है ये भाव स्थायी भाव रूप मे

लहरों के सदृश उन्मज्जन व निमज्जन [illegible] तद्रूपता को प्राप्त होते हैं।[115] परंपरागत [illegible] व्यभिचारियों [illegible] कुछ नवीन संचारियों का उल्लेख किया गया है [illegible], क्षमा, उत्कंठा, संशय, विनय आदि। चार प्रकार का [illegible] भाव [illegible] आभासोत्पत्ति, संधि, शबलता एवं शांति।

स्थायी भाव : विरुद्ध एवं अविरुद्ध भावों को [illegible] समान शोभित होने वाला भाव स्थायी भाव [illegible] स्थायी भाव है।[116] भगवद्-रति में स्थायीभाव [illegible] भावत्व एवं स्थायित्व विद्यमान है। रति के दो भेद हैं—मुख्या और गौणी। [illegible] विशेष रूप (प्रेम रूपा) रति मुख्या कहलाती है। मुख्या रति [illegible] द्विविध है। इन दोनों भेदों के पांच प्रकार हैं—शुद्धा, प्रीति, सख्य, वात्सल्य [illegible] (मधुरा)। स्फटिक आदि विभिन्न वस्तुओं में सूर्य के अनेक प्रतिबिम्ब [illegible] विभिन्न [illegible] भी कृष्ण-विषयक रति के अनेक प्रतिबिम्ब [illegible] आभासित होते हैं।[117]

गौणी रति के सात भेद इस प्रकार बताये गये हैं [illegible], उत्साह, शोक, क्रोध, भय तथा जुगुप्सा। भक्ति रस-विवेचन में परंपरागत [illegible] मान्यताओं को अपनाते हुए भी पर्याप्त नवीनता है। परंपरागत [illegible] स्थायीभाव और उनके नौ रस स्वीकृत थे वहां गौड़ीय विद्वानों [illegible] रस-शास्त्र में एक मात्र कृष्ण रति को स्थायी भाव मानकर [illegible] स्थायी भावों से किया गया है, जिसमें पांच मुख्य रति और [illegible] गौण [illegible] मानकर तदनुसार पाच ही मुख्य रस और सात गौण भक्ति रस स्वीकार किये गये हैं। मुख्य रतियों में परंपरागत रति (शृंगार का स्थायी भाव) और [illegible] का स्थायी भाव) को छोड़कर सर्वथा नवीन हैं। गौण रतियों के सभी प्रकार [illegible] स्थायी भावों के ही कृष्णरत्यात्मक रूपांतर हैं। इस प्रकार काव्यशास्त्र [illegible] भाव यहां कृष्ण रति के लिए गौण बन जाते हैं तथा जिन्हें [illegible] दिया गया था, वे कृष्ण रति में मुख्य स्थान ग्रहण कर लेते हैं। [illegible] काव्य-शास्त्रीय स्थायीभावों की स्वतंत्र सत्ता स्वीकार नहीं की गयी है, उनकी [illegible] यही है कि वे कृष्ण रति नामक मुख्य स्थायी भाव एवं उसके पांच प्रमुख भेदों [illegible] बनकर उनको पुष्ट करते हैं। इसका कारण यह है कि भक्ति में शोक, क्रोध आदि अन्य सभी वृत्तियों का संयमन होकर कृष्ण रति ही प्रमुख रहती है। भक्ति-रस के विभिन्न भेदों का विवेचन आगे 'ब्रजकाव्य में रस निरूपण' नामक अध्याय में किया जायेगा।

संदर्भ

१ (क) ब्रज के धर्म सम्प्रदायों का इतिहास—प्रभुदयाल मीतल, पृ० ३०३

(ख) Chaitanya : *His Life and Doctrine*—A. K. Majumdar, pg 260-263.

२. मधुर रस : स्वरूप और विकास, भाग २—रामस्वार्थ चौधरी, पृ० १२२

३. रीति कविता और शृंगार रस का विवेचन—डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, पृ० २११

४ (क) चैतन्य पूर्व बंगाल में वैष्णव भक्ति के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए श्री सुशील कुमार डे ने लिखा है कि जयदेव, विद्यापति, उमापति और चंडीदास आदि बंगीय साहित्य के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों ने वैष्णव धर्म में बहुत योगदान दिया और यह इस बात का प्रमाण है कि चैतन्य पूर्व बंगाल में वैष्णव धर्म का प्रभाव था।

—*Early History of Vaishnava Faith and Movement in Bengal*, p. 1, 9

(ख) डॉ० राधाकृष्णन् के शब्दों में, "…जयदेव, विद्यापति, उमापति तथा चंडीदास (चौदहवीं शताब्दी) बंगाल तथा बिहार में राधाकृष्ण संप्रदाय के बढ़ते हुए प्रभाव का दिग्दर्शन कराते हैं, जिसका श्रेय शाक्त दर्शन की विचारधारा तथा व्यावहारिक प्रचलन को है। इस प्रकार के वातावरण में प्रशिक्षण पाकर वैष्णव मत के एक महान् प्रचारक चैतन्य (पंद्रहवीं शताब्दी) विष्णुपुराण, हरिवंश, भागवत् और ब्रह्मवैवर्त पुराण में दिए गए कृष्ण-विषयक वर्णन से आकृष्ट हुए और उन्होंने अपने व्यक्तित्व तथा आचरण से वैष्णव मत को एक नया रूप दिया।"

—भारतीय दर्शन, डॉ० राधाकृष्णन् (हिंदी अनुवाद) भाग २, पृ० ७६१

५. Chaitanya · *His Life and Doctrine*, p. 79

६. नाभा जी के 'भक्तमाल' में इसका संकेत मिलता है—देखिए 'भक्तमाल' छ० सं० ७२

७. *The Chaitanya Movement*—M. T. Kennedy. p. 54

८ ब्रज साहित्य का इतिहास—डॉ० सत्येंद्र, पृ० १७१

९. *Early History of Vaishnava Faith and Movement in Bengal*, p 87

१०. चैतन्य चरितामृत में सांप्रदायिक अनेक संस्कृत व बंगला ग्रंथों के प्रमाण देकर सिद्धांतों का विवेचन किया गया है। इसके अतिरिक्त श्री रघुनाथ दास गोस्वामी ने नीलाचल में निवास करते हुए चैतन्य महाप्रभु के सत्संग में रहकर उनकी अंतिम लीलाओं को प्रत्यक्ष देखा था तथा महाप्रभु के अंतरंग पार्षद स्वरूप दामोदर आदि से उनकी लीलाओं को सुना था। ये सभी बातें श्री रघुनाथ गोस्वामी से सुनकर कृष्णदास कविराज ने चैतन्य चरितामृत में प्रस्तुत की हैं। इसका उल्लेख चैतन्य चरितामृत' में हुआ है। अतः इस ग्रंथ को प्रामाणिक चरित्र ग्रंथ के रूप में माना गया है।

११ ब्रज के धर्म संप्रदायों का इतिहास, पृ० ३३३, एवं *Early History of Vaishnava Faith and Movement in Bengal*, p. 82

१२ ब्रज के धर्म संप्रदायों का इतिहास, पृ० ३३६

१३ चैतन्य मत और ब्रज साहित्य—प्रभुदयाल मीतल, पृ० ८२

१४. ब्रज के धर्म संप्रदायों का इतिहास, पृ० ३४०

१५ चै० म० ब्र० सा०, पृ० ८२

१६ ब्रज के धर्म संप्रदायों का इतिहास, पृ० ३४१ एवं चै० म० ब्र० सा०, पृ० ११५, ११६

१७ चैतन्य चरितामृत २।२५।१०८

१८ चै० म० ब्र० सा०, पृ० १११

१९ श्रीकृष्ण चैतन्य-वाणी अमृतेर धार।
तेहो ये कहेन वस्तु सेइ तत्त्व सार॥

—चैतन्य चरितामृत—कृष्णदास कविराज गो० २।२५।४६

२० सर्वसंवादिनी—जीव गोस्वामी, पृ० ३३

२१. चै० च०—मध्य लीला, विंश परिच्छेद।

२२ "Incomprehensible dualistic monism, that is, an inscrutable relation

of difference in non difference

Chaitanya *His Life and Doctrine* by A K Majumdar p 270

२३ स्वमवादिनी प० ३३

२४ वह प० ३

२५. तत्त्व सदर्भ, जीव गोस्वामी, पृ० ९२

२६. बृहद् भागवतामृत—सनातन गोस्वामी, २।२।१९६

२७. सर्वसंवादिनी, पृ० १४६

२८. चै० च० १।७।११७

२९. लघु भागवतामृत, रूप गोस्वामी, १।५०

३०. वही १।५१

३१. चै० च०, २।२०।१३२

३२. "एकं तत्त्वं त्रिधा शब्द्यते, क्वचिद् ब्रह्मेति, क्वचिद् परमात्मेति, क्वचिद् भगवानिति ।"

—भगवत्संदर्भ—पृ० ४९

३३. चै० च० १।२।१०, १३

३४ वही २।२०।१३१-१३२

३५. श्रीमद्भागवत, १।३।४२

३६. "कृष्ण स्वयं भगवान सर्व अवतंस"—चै० च०, १।२।५७

"कृष्ण स्वय अवतारी" —चै० च०, १।२।८२

३७. भक्ति रसामृत सिंधु, द० वि०, वि० ल०, का० ७६-७८

३८. चै० च० १।२।१४

३९. वही, २।८।११५-११७

४०. वही, १।४।५१-५५

४१. वही, २।८।११८-१२३ व १।४।५९, ६० एव उज्ज्वल नीलमणि—रूप गोस्वामी, पृ० ४९९, श्लोक २०२

४२. वही, १।४।८४, ८५

४३. वही, १।१।१, २ तथा १।४।१७९, १८२, १८६

४४. वही, १।१।५ ६ व १।४।१०३-१३०

४५. अन्त. कृष्ण बहिर्गौर दर्शिताङ्गादिवैभवम् ।
कलौ सकीर्तनाद्यै: स्म. कृष्ण चैतन्यमाश्रिता: ॥

—तत्त्व सदर्भ—श्लोक सं० २

४६. चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० नरेश चद्र बसल, पृ० १४३

४७. चै० च० १।५।३८ एवं २।२०।१०१, १०२

४८. गोविंद भाष्य—बलदेव विद्याभूषण, २।३।४७

४९. परमात्म सदर्भ—जीव गोस्वामी, श्लोक ३१

५०. चै० च० २।१८।१०५, १०६

५१. वही, २।२०।१०१, १०२

५२ परमात्म सदर्भ—४३

५३. "मायाधीश मायावश ईश्वर जीवे भेद" । चै० च० २।६।१४८

५४ तत्त्व संदर्भ, पृ० ८२

५५. चै० च० २।२०।१०४

५६. वही, २।२२।७-१०

५७ चै० च० २ २२ ११ १५

५८. "तत्र निमित्तांशो जीवमाया, उपादानांशो गुणमाया"—भगवत्सदर्भ, पृ० ६८

५९. चै० च० २।६।१५५

६०. भागवत सम्प्रदाय—बलदेव उपाध्याय, पृ० ५२४

६१. परमात्म संदर्भ—पृ० २५५, २५९

श्री शंकराचार्य के विवर्त्तवाद में "ब्रह्म एव विकारात्मना य परिणाम." कहकर जगत् को ब्रह्म का विकारात्मक परिणाम एवं रज्जु में सर्प की भ्रमवश प्रतीति की भांति मिथ्या कहा गया है। किंतु चैतन्य मत में इसके विपरीत जगत को भगवान की शक्ति—माया का अविकृत परिणाम मानने के कारण सत्य व नित्य माना गया है।

६२. प्रमेय रत्नावली—बलदेव विद्याभूषण, ३।२, पृ० ५२

६३. चै० च० १।५।५३

६४. वही, १।५।५५-५६

६५. भारतीय दर्शन—डॉ० राधाकृष्णन् (हिंदी अनुवाद) पृ० ७६३

६६. वही, ७६४

६७ Sri Chaitanya Mahaprabhu : *His Life and Precepts*, by Thakur Bhakti Vinod, p. 3

६८ भक्ति रसामृत सिंधु—रूप गोस्वामी, पूर्व विभाग, प्रथमा लहरी—सामान्य भक्ति लहरी, कारिका सं० ११

६९ "तत्त्ववस्तु कृष्ण, कृष्णभक्ति प्रेम रूप।"—चैतन्य चरितामृत, १।१।५४

७० चै० च, १।४।१५३

७१ वही, २।२०।१२२, १२४

७२ "भावः स एव सान्द्रात्मा बुधै: प्रेमा निगद्यते।"—भ० र० सिं० १।४।१

७३. "कृतिसाध्या भवेत् साध्यभावा सा साधनाभिधा।"—भ० र० सिं०, १।२।१

७४. भ० र सिं०, १।२।३

७५. वही, १।२।७८

७६ चै० च० १।३।१५; २।८।१८२

७७. वही, १।२।७९

७८. भ० र० सिं०, १।२।८२

७९. सिद्धांत विचार लीला (ब्यालीस लीला)—ध्रुवदास, पृ० ४६

८० हिंदी वैष्णव साहित्य में रस परिकल्पना—डॉ० प्रेमस्वरूप, पृ० १६०

८१ भ० र० सिं०, १।२।८७।९०

८२. वही, १।२।९४

८३ "कामानुगा भवेत्तृष्णा कामरूपानुगामिनी।"—भ० र० सिं०, १।२।१००

८४. भ० र० सिं०, १।२।१०१-१०४

८५ भक्ति रसामृत सिंधु की दुर्गम संगमिनी टीका—जीव गोस्वामी, पृ० ६३

८६. शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेम सूर्यांशुसाम्यभाक्।
रुचिभिश्चित्तमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते॥—भ० र० सिं०, १।३।१

८७. भ० र० सिं०, १।३।९, १०

८८ वही, १।३।१२-१६

८९. वही, १।३।२०-२४

९० सम्यङ्मसृणितस्वान्तो ममत्वातिशयाङ्कित
भाव स एव स ब्रात्मा बध प्रमा निगद्यते
—भ० र सि० १४१

९१ भ० र० सि १४६, ७

९२, वही, ११४

९३. वही, १।२।२२-६३

९४. वही, १।२।४३ व चै० च०, २।२२।७४, ७५

९५. वही, १।२।१२९

९६. चै० च०, ३।४।६५-६६

९७. श्री चैतन्य मन मंजूषा—श्रीनाथ चक्रवर्ती; श्लोक १

९८. लघुभागवतामृतम् पूर्व खंड, पृ० १५

९९. वृंदावन महिमामृतम्—द्वितीय शतकम्, श्लोक ३५, ८३ व चतुर्दश शतकम् श्लोक ४४-५५

१००. "विहारश्च सम्प्रयोगात्मको"—विश्वनाथ चक्रवर्ती, उज्ज्वल नीलमणि की आनंद चंद्रिका टीका, पृ० १८९

१०१. उज्ज्वल नीलमणि—रूप गोस्वामी, शृंगार भेद प्रकरण, श्लोक ३ एवं आनंद चंद्रिका टीका—विश्वनाथ चक्रवर्ती, पृ० १८९

१०२. चैतन्य चरितामृत, २।८

१०३. कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव, पृ० ७८७

१०४. राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य—डॉ० स्नातक, पृ० २३६

१०५. उज्ज्वल नीलमणि, सखी प्रकरण, पृ० १९०-१९७

१०६. वैष्णव सिद्धांत रत्न संग्रह, पृ० १०३

१०७. प्रबोधानंद सरस्वती ने 'वृंदावन महिमामृतम्' (१६।६४) में मंजरी के इन स्वरूप व भाव की विस्तारपूर्वक सरस अभिव्यंजना की है।

१०८. उज्ज्वल नीलमणि, आनंद चंद्रिका टीका—विश्वनाथ चक्रवर्ती, पृ० ६९

१०९. भ० र० सि०, २।१।६

११०. वही, २।१।१९-७४

१११. "तद्भावभावितस्वान्ताः कृष्ण भक्ता इतीरिता ।"
—भ० र० सि०, २।१।१०१

११२. वही, २।१।११४

११३. भ० र० सि०, २।२।१

११४. वही, २।३।१, २

११५. वही, २।४।१, २

११६. वही, २।५।१

११७. वही, २।५।३-७

दूसरा अध्याय

कवि और काव्य

मध्य-काल मे विभिन्न संप्रदायो के अंतर्गत विपुल साहित्य-सृजन हुआ है। बल्लभ सम्प्रदाय, निंबार्क संप्रदाय, राधाबल्लभ संप्रदाय आदि से सबद्ध पर्याप्त विचार-चिंतन हिंदी मे हुआ है, परंतु चैतन्य संप्रदाय काफी अरसे तक हिंदी जगत के लिए अपरिचित रहा है। इधर हिंदी के कुछ विद्वान इस ओर प्रवृत्त हुए हैं और उन्होंने इस सम्प्रदाय के भक्ति, रस, दर्शन आदि पर विचार किया है। अब तक यह धारणा बनी हुई थी कि चैतन्य संप्रदाय के अंतर्गत संस्कृत एवं बंगला में सिद्धांत-निरूपण एवं विपुल काव्य-रचना हुई है। ब्रजभाषा साहित्य न्यून मात्रा मे रचित है। वस्तुतः यह सम्प्रदाय ब्रजभाषा साहित्य की दृष्टि से भी समृद्ध है। इस संप्रदाय के शताधिक कवियों की परंपरा निर्बाध रूप से चली आ रही है। चैतन्य सप्रदायी गोस्वामियों के शिष्यों-प्रशिष्यों एवं परंपरा से अनेकानेक ब्रजभाषा कवि हुए हैं। गोपाल भट्ट गोस्वामी के परिकरों की परंपरा मे सर्वाधिक कवि हुए है।

बाबा कृष्णदास[1] ने सर्वप्रथम चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य-ग्रंथों को खोजकर प्रकाशित कराने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। चूंकि बाबा कृष्णदास का ध्येय चैतन्य संप्रदाय के अधिकाधिक ग्रथों को प्रकाश मे लाना था और इसके लिए ग्रंथो की पाडुलिपिया उन्हे जहा से भी जिस अवस्था में उपलब्ध हुई, उनकी प्रतिलिपि करके येनकेनप्रकारेण उन्हें मुद्रित कराने मे जुटे रहे। अतः उनमे पाठ संबंधी अशुद्धियां रहना स्वाभाविक था। इस सप्रदाय के कवियों एव उनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं का परिचय श्री प्रभुदयाल मीतल[2] एवं डॉ० नरेश चंद्र बंसल[3] ने प्रस्तुत किया है। डॉ० सत्येन्द्र ने भी कुछ कवियों व उनकी कृतियों के विषय मे संक्षिप्त जानकारी दी है।[4] हिंदी साहित्य के इतिहास-ग्रंथों मे तीन-चार कवियो का अति संक्षिप्त उल्लेख प्राप्त होता है। शोध-कार्य के अंतर्गत मुझे इस संप्रदाय की अब तक अज्ञात अनेक प्राचीन हस्तलिखित प्रतियां उपलब्ध हुई है[5] एवं

कवियो व उनकी रचनाओ के सबध मे नय त यो की जानकारी [illegible]
तक चली आ रही कुछ भ्रात धारणाओ का निराकरण हुआ [illegible]
की पुष्टि हुई है इस अध्याय मे यथास्थान इनका विवेचन किया गया [illegible]
उनकी काव्य-रचनाओ क परिचय प्रस्तुत करने म अत साक्ष्य और [illegible]
की सामग्री का उपयोग किया गया है। अंत.साक्ष्य मे स्वय कवि की रचनाओ मे प्राप्त
उल्लेख है। इनके लिए इन रचनाओ की अनेक हस्तलिखित प्रतियो का अवलोकन करके
हमने उनमे से आवश्यकतानुसार उदाहरण दिये है। बहिर्साक्ष्य के रूप मे उपर्युक्त विद्वानो
द्वारा प्रस्तुत सामग्री, अन्य लेखको द्वारा दिये गये सदर्भो, विभिन्न स्थलो से प्राप्त
उल्लेखो को समाविष्ट किया गया है। इस प्रकार उपलब्ध समस्त सामग्री का उपयोग
करते हुए हमने इस अध्याय में उनका आलोचनात्मक परीक्षण-विवेचन किया है और
विभिन्न प्रमाणो के आधार पर यथास्थान अपने निष्कर्षो व मतो को भी प्रस्तुत किया
है व अनेक नवीन कृतियो की जानकारी भी दी है। विभिन्न सग्रहालयों मे इस सप्रदाय
के काव्य की जो अनेक हस्तलिखित प्रतियां हमने देखी है उनका उल्लेख कृतियो के परि-
चय के अंतर्गत किया है।

चैतन्य संप्रदाय के विपुल ब्रजभाषा काव्य-साहित्य मे सबका विस्तृत परिचय देना
यहां संभव नही है, अतः प्रमुख कवियो एवं उनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं का परिचय
सक्षेप मे दिया गया है। कवियो के चयन मे साप्रदायिक एव साहित्यिक--दोनों दृष्टि-
कोणों को ध्यान मे रखा गया है। कुछ कृतियां साहित्यिक महत्त्व की अधिक न होते हुए
भी इसलिए समाविष्ट की गयी हैं कि उनका सांप्रदायिक सिद्धांतो की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण
स्थान है। सप्रदाय-निर्धारण की दृष्टि से विशेष विवादास्पद कुछ कवियों को यहां छोड
दिया गया है। (जिनके लिए पृथक् रूप से विस्तृत अध्ययन अपेक्षित है) कुछ कवियों का
उल्लेख मिलता है परंतु उनकी काव्य-रचनाएं उपलब्ध न हो सकने के कारण उन्हे
सम्मिलित नही किया जा सका है। इसी प्रकार चैतन्य महाप्रभु और उनकी लीलाओं व
साप्रदायिक सिद्धांतों संबंधी कुछ रचनाएं व अनेक स्फुट पद उपलब्ध होते हैं किंतु उनके
रचयिता-कवि के सबंध में स्पष्ट रूप से ज्ञात नही होने के कारण उन्हें भी छोड देना पड़ा
है। ऐसे सभी कवि, जिनको इस अध्याय मे स्थान नही मिल सका है, परिशिष्ट म उन
कवियों एवं उनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं की विस्तृत सूची दी गई है। परिशिष्ट मे
देने का यह अर्थ कदापि नहीं कि इनकी रचनाओं का महत्त्व नही, अपितु शोध-प्रबंध की
अपनी सीमाएं है। विभिन्न संग्रहालयों में उपलब्ध चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य-
ग्रथों की विवरणात्मक तालिका परिशिष्ट मे दी गयी है।

माधवदास जगन्नाथी

चैतन्य संप्रदाय के आरंभिक ब्रजभाषा कवियों में माधवदास जगन्नाथी का स्थान
प्रमुख है। माधवदास नामक कई ब्रजभाषा कवि हुए है किंतु इनकी पृथकता 'जगन्नाथी'
नाम छाप से ज्ञात होती है। जगन्नाथ जी के परम भक्त होने और जगन्नाथपुरी मे
अधिकतर निवास करने के कारण ये माधवदास जगन्नाथी के नाम से प्रसिद्ध है।[१] इन्होंने

अपनी अधिकाश रचनाओ के अत मे श्री जगन्नाथ कौ दासानुदास गाव माधोदासा लिखा है।

इनके जन्म-संवत्, स्थान व देहावसान की निश्चित तिथि अज्ञात है। इन्हे चैतन्य महाप्रभु का समकालीन माना जाता है। ये चैतन्य महाप्रभु के दादागुरु श्री माधवेन्द्र पुरी के शिष्य थे।[८] माधवदास जी को भक्त कवि हरिराम व्यास के पिता सुमोखन शुक्ल का गुरु माना गया है।[९] स्वयं व्यास जी ने माधवदास के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनसे अपने संदेहों के शमन का कथन किया है।[१०] व्यास जी का काल सं० १५६७ से १६६९ माना जाता है।[११] इस आधार पर माधवदास जगन्नाथी का जन्म स० १५४० और रचना काल सं० १५८० तथा गोलोकवास सं० १६१० के लगभग अनुमानित किया गया है।[१२]

माधवदास के जीवन-वृत्तांत के संबंध मे कुछ सूत्रो का उल्लेख प्रियादास जी ने 'भक्तमाल-टीका' मे किया है। उनके अनुसार ये द्विज कुलोत्पन्न थे और इनके स्त्री-पुत्रादिक थे। पत्नी के असामयिक निधन से नश्वर-शरीर पर अविश्वास करते हुए, विरक्त होकर ये नीलाचल धाम मे पहुचकर जगन्नाथ जी की सेवा-भक्ति मे प्रवृत्त हुए। ये अत्यंत सहिष्णु, कृपालु तथा प्रकाड पण्डित होते हुए भी निरभिमानी वैष्णव थे। अहर्निश ब्रज-लीलाओं के गायन मे रत रहने मे इनकी वृन्दावन-दर्शन की प्रबल इच्छा हुई और ये वृन्दावन आ गये। यहां आकर इन्होंने स्वामी हरिदास जी के उपास्य श्री बिहारी जी के दर्शन कर प्रसादी चने ग्रहण किये।[१३] तभी उन्होंने ब्रज के अनेक स्थलो की यात्रा की। प्रियादास ने माधवदास के अलौकिक भक्ति भाव की अनेक चमत्कारपूर्ण कथाओ का भी वर्णन किया है। अपने अंत समय मे ये नीलाचल जगन्नाथपुरी मे ही रहे। जिस प्रकार अद्वैताचार्य और नित्यानंद महाप्रभु चैतन्य के अनुगत पार्षद हो गये थे उसी प्रकार जगन्नाथपुरी मे निवास करने के बाद संभवतः माधवदास भी महाप्रभु जी के अनुगत हुए होंगे। इसीलिए इन्हे चैतन्य संप्रदायांतर्गत स्थान दिया जाता है।[१४] ऐसा ज्ञात होता है कि उस समय जगन्नाथ क्षेत्र मे निवास करने वाले महाप्रभु के अनुगत भक्तों के संपर्क में आकर इन्होंने भक्तिपूर्ण रचनाएं की थीं। इनकी रचनाओ मे इसका उल्लेख हुआ है।[१५] इन्होंने अपनी रचनाओ मे चैतन्य संप्रदाय की भावना के अनुरूप जगन्नाथ जी की रथयात्रा व योगपीठ (साम्प्रदायिक ध्यान पद्धति) का वर्णन किया है और संकीर्त्तन के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। इससे इनके चैतन्य सम्प्रदायी होने की धारणा पुष्ट होती है।

नाभा जी ने 'भक्तमाल' में इनकी विद्वत्ता, भक्ति व वैराग्य वृत्ति का कथन किया है। उनके अनुसार संस्कृत साहित्य मे जो स्थान महर्षि द्वैपायन वेदव्यास का है, वही ब्रजभाषा साहित्य में माधवदास का है।[१६]

रचनाएं : कहा जाता है कि माधवदास जगन्नाथी ने महाभारत और इतिहास कथासार समुच्चय जैसे विशाल संस्कृत ग्रंथों का ब्रजभाषा में पद्यानुवाद किया था[१७] परतु आज ये उपलब्ध नही है। बाबा कृष्णदास (कुसुम सरोवर, वृन्दावन) ने माधवदास जी की रचनाओं का प्रकाशन 'माधवदास जी की वाणी' के नाम से सं० २०२० मे किया है

जिसमें उनके जीवन परिचय के साथ ये रचनाएँ सम्मिलित हैं—१ बाल लीला २ जानराय लीला ३ जनम करम लीला ४ रथ लीला ५ ध्यान लीला ६ मध्य लीला ७ रघनाथ लीला नारायण लीला ९ प नि ... बसगो एव कुछ स्फुट पद। इनकी समस्त रचनाओं में 'माधवदास जगन्नाथी' नाम छाप प्रयुक्त हुई है।

माधवदास जी की रचनाओं की अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ विभिन्न संग्रहालयों में उपलब्ध होती हैं जिनसे इनकी लोकप्रियता का पता चलता है। महाराजा संग्रहालय जयपुर में इनकी रचनाओं की कई हस्तलिखित प्रतियाँ हमें मिली हैं जिनमें सर्वाधिक प्राचीन पोथी सं० १६६७ में लिपिबद्ध है।[२८] इस पोथी में (ग्रं सं ...) कविकृत ये रचनाएं सम्मिलित है—नारायण लीला, रघनाथ लीला, जानराय लीला, जन्म लीला, बाल लीला, ध्यान लीला, रथ लीला व स्फुट पद। इनके अतिरिक्त इस पोथी में भ्रमरगीत, मल्ल अखाड़ो लीला व गीत गोविंद भाषार्थ नामक अन्य तीन रचनाएं भी लिपिबद्ध हैं जो इस संग्रहालय की ग्रंथ-सूची में माधवदास जगन्नाथी की रचनाओं के अंतर्गत सम्मिलित की गयी हैं।[२९] किन्तु वस्तुतः ये रचनाएं माधवदास जगन्नाथी कृत नहीं हैं अपितु क्रमशः कवि जनमोहन, कल्याणदास व अज्ञात कविकृत हैं। इनकी पुष्पिकाओं में यह स्पष्ट ज्ञात होता है। 'गीत गोविंद भाषार्थ' नामक ग्रंथ में रचनाकार का नाम नहीं है। इसी प्रकार इस संग्रहालय की ग्रंथ-सूची में (सं० १ ११ में लिपिबद्ध) एक अन्य पोथी (ग्रं० सं० २४३८/१) में 'विहार माधुरी' नामक रचना को भी भूल से माधवदास जगन्नाथी की रचनाओं में दिखा गया है जो कि वस्तुतः चैतन्य सम्प्रदायी अन्य कवि माधवदास कपूर (उपनाम माधुरीदास) कृत है।[३०]

महाराजा संग्रहालय, जयपुर में माधवदास जगन्नाथी कृत रचनाओं की अन्य प्रतियों में ५ प्रमुख हैं जिनके लिपिकाल क्रमशः सं० १७२४, सं० १७२४, सं० १७६६, सं० १६६५ एवं सं० १७२४ से १७७६ के मध्य तक है। अंतिम प्रति जयपुर महाराजा रामसिंह प्रथम के समय की है, इस पर रामसिंह प्रथम की मोहर अंकित है। इन पोथियों में उपर्युक्त प्रथम पोथी (सं०१६६७) में प्राप्त रचनाओं के अतिरिक्त एक अन्य रचना स्वयंवर लीला भी मिलती है।[३१] प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में हमने माधवदासकृत रचनाओं की दो हस्तलिखित प्रतियां देखी हैं जिनका लिपिकाल क्रमशः सं० १ व सं० १८६७ हैं।[३२] एक प्राचीन प्रति (लि० का० सं० १७४०) डॉ० ... (कासगंज) के संग्रह में उपलब्ध है जिसमें बाल लीला, ध्यान लीला, रथ लीला, रघनाथ लीला तथा जयन्ती नाम सर्वथा मिलते हैं। सं १७७६ में लिपिबद्ध एक ह० प्रति श्री जी की बड़ी कुंज, वृन्दावन में है जिसमें कवि की उपर्युक्त लगभग समस्त रचनाएं हैं। पुरोहित हरिनारायण जी विद्याभूषण के संग्रह की एक पोथी प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर में उपलब्ध है, सं.१८२५ में लिपिबद्ध इस प्रति में जन्मकर्म लीला, जानराय लीला, ध्यान लीला व नारायण लीला है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में ग्वालिनी झगरो (६६८/५०३), जगन्नाथ महात्म्य (१७०५/६६६), जनम करम लीला (८०६/५६८) की ह० प्रतियां उपलब्ध हैं।[३३] खोज रिपोर्ट[३४] में नारायण लीला व रथ

लीला तथा राजस्थान रिपोट[१] मे ध्यान लीला नारायण लीला व स्फुट पदो का उल्लेख हुआ है।

'नारायण लीला' की प्रतिया, माधवदास जी की अन्य रचनाओ के साथ सकलित होने के अतिरिक्त स्वतंत्र रूप से भी सर्वाधिक संख्या मे उपलब्ध होती है। इनमें सबसे अधिक प्राचीन पोथी (सं० १६७० मे लिपिबद्ध) जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान मे है जिसमे पत्र सं० १३४ से १६७ तक 'नारायण लीला' लिखी हुई है। इसी पोथी मे 'बाल लीला' भी है। गुलजार बाग (पटना) के गो० कृष्ण चैतन्य के पुस्तकालय में 'परतीति परीक्षा' की हस्तप्रति है। इसके अतिरिक्त 'नारायण लीला' की दो प्रतिया व 'रघुनाथ लीला' की एक प्रति बाबा कृष्णदास के सग्रह मे है।[२६] माधवदास जगन्नाथी की अलग-अलग रचनाओं की अनेक हस्तलिखित प्रतिया विभिन्न सग्रहालयो में उपलब्ध होती है।[२७]

भ्रमणशील प्रकृति के कारण माधवदास जी की रचनाओ में कई भाषाओं और बोलियों के शब्द मिलते है। इनकी वाणी का उड़ीसा मे बड़ा प्रचार है।[२८] इनकी रचनाओ मे लोक तत्त्व प्रधान है। मौखिक रूप मे लोक-प्रचलित होने के कारण इनकी रचनाओ के स्वरूप मे कही-कही विभिन्नता पायी जाती है। चैतन्य प्रवर्तित भक्ति की अभिव्यजना इनके काव्य मे हुई है। 'माधवदास जी की वाणी' (प्रकाशित) मे सकलित इनकी रचनाओ का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. **बाल लीला :** यह रचना कृष्ण की बाल्य-क्रीडाओं से संबंधित है। इसकी भाषा सरल बोलचाल की ब्रजभाषा है। इसमें कुल ६६ दोहे है। इस लघु रचना मे बालक कृष्ण की चपलताओं, गोपियो के उपालंभ तथा माता यशोदा के वात्सल्य की सुदर एवं स्वाभाविक व्यजना हुई है।

२. **जानराय लीला :** १३२ चौपाइयों में रचित इस कृति मे श्रीमद्भागवत मे वर्णित लीलाओ का अति संक्षेप मे सूत्रात्मक कथन किया गया है।

३. **जनम-करम लीला :** इसमे कुल १०० दोहे हैं। यह रचना कृष्ण की व्रज-लीला से संबंधित है। कृष्ण-जन्म से लेकर द्वारिका राज्य पर्यंत लीलाओं का वर्णन है। हरिलीला और हरिनाम-संकीर्तन का महत्त्व भी इस रचना मे प्रतिपादित हुआ है। कीर्तन तत्त्व चैतन्य सम्प्रदाय की साधना का प्राण है।

४. **रथ लीला :** १६० दोहो मे लिखित इस रचना में जगन्नाथ जी की रूप-शोभा एव रथ यात्रा का सरस चित्रण किया गया है। रथ यात्रा का चैतन्य संप्रदाय मे विशिष्ट महत्त्व है। स्वयं चैतन्य महाप्रभु का रथ यात्रा के अवसर पर कीर्तन व नृत्य प्रसिद्ध है। पूर्व उल्लिखित प्रतियों के अतिरिक्त इसकी एक हस्त० प्रति (लि० का० १९ वीं श०) पुस्तक प्रकाश जोधपुर (राजस्थान) में सुरक्षित है।[२९] १० पत्रो मे लिखित इस प्रति मे कुल १५५ छंद है।

५. **ध्यान लीला :** ध्यान उपासना से संबंधित इस लघु रचना मे ७९ दोहे है। माधुर्योपासना के लिए ध्यान-नि[illegible] को कवि ने आवश्यक बताया है। सांप्रदायिक भावना के अनुरूप ध्यान-नि[illegible] [illegible] वर्णन सुललित भाषा में किया गया है। इसमें गदाधर भट्ट के सम[illegible] पीठ' का उल्लेख भी हुआ है।[३०]

६ स्वयंवर लीला : इस रचना में कुल २[illegible]८ दोहे हैं जिसका विषय श्रीकृष्ण रुक्मिणी की परिणय कथा है जो भागवतादि पुराण पर आधारित है।

७. रघुनाथ लीला : २६६ दोहा-छंदों में रचित इस काव्य-रचना का कथ्य रामकथा है जिसका वर्णन वाल्मीकि रामायण, विष्णु पुराणादि के आधार पर किया गया है। वर्णनात्मक शैली में लिखी गयी यह रचना सरस एवं महत्त्वपूर्ण है। इस रचना का महत्त्व इसलिए और भी बढ़ जाता है कि यह तुलसी से करीब ५० वर्ष पूर्व ब्रजभाषा में लिखी गयी थी, रामायण परंपरा में यह उल्लेखनीय है। जिस प्रकार सूरदास का 'सागर' किसी चली आती हुई लोक-परम्परा का विकसित रूप है[31] उसी प्रकार तुलसी का राम-चरित मानस किसी चली आती हुई लोक कथा का विकसित रूप कहा जा सकता है।[32]

८. नारायण लीला : २६३ द्वैतुकी छंदों की लीला विषयक इस रचना की सबसे अधिक संख्या में हस्तलिखित प्रतियां उपलब्ध होती हैं जिससे इसकी लोकप्रियता सिद्ध होती है। इसमें जगन्नाथ नारायण की रूप शोभा व लीला का चित्रण है। जगन्नाथ जी की स्तुतिपरक एक रचना 'जगन्नाथ माहात्म्य' के नाम से उपलब्ध होती है जिसको देखने पर नारायण लीला एवं जगन्नाथ माहात्म्य एक ही पुस्तक के दो नाम जान पड़ते हैं। नारायण लीला की एक हस्तलिखित प्रति में कुल ३०४ छंद हैं।[33]

९. परतीति परिच्छा : राधा-कृष्ण की मधुर लीला विषयक यह रचना भावाभिव्यंजन एवं सरस है। इसमें कुल ४४ चौपाइयां हैं। माधुर्य के विस्तार के लिए छद्म लीलाओं की प्रसंगोद्भावना चैतन्य संप्रदाय की विशेषता है जिसका निर्वाह इस रचना में भी किया गया है। साँवरी सखी का छद्म वेश बनाकर श्रीकृष्ण राधिका की प्रीति-परीक्षा करते हैं। कथोपकथन शैली में रचित यह रचना सरल एवं पर्याप्त रोचक है। 'परतीति परिच्छा' की एक हस्तलिखित प्रति कृष्ण-जन्म भूमि सेवा संस्थान के संग्रहालय में सुरक्षित है। बाबा कृष्णदास के संग्रह की इस पोथी में पत्र सं० १८ से २४ तक यह रचना सं० १८८६ में गोपालदास वैष्णव द्वारा वृंदावन में अति सुंदर व स्पष्ट अक्षरों में लिपिबद्ध हुई है।

१०. ग्वालिन झगरौ : भ्रमरगीत की टेक मिश्रित शैली में रचित यह एक लघु रचना है। श्रीकृष्ण के बाल-विनोद का चलती ब्रजभाषा में सहज-स्वाभाविक वर्णन है। इसमें कृष्ण-गोपियों के मध्य मधुर झगड़ा, गोपियों की शिकायत एवं यशोदा द्वारा गोपियों को फटकारना, वर्णित है। 'ग्वालिन झगरौ' की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी में मैंने देखी है।[34] १२ पृष्ठों में पूर्ण इस रचना में कुल १८ छंद हैं। इसकी लिपि सुंदर व स्पष्ट है। इस रचना के अन्तिम छंद में व बीच में दो स्थलों पर माधोदास नाम की छाप है।[35]

माधवदास कृत कुछ अन्य लघु रचनाएं (जो अब तक अज्ञात रहीं) हमें अनुसंधान में उपलब्ध हुई हैं। 'माधवदास जी की बाणी' (प्रकाशित संस्करण) में ये रचनाएं सम्मिलित नहीं हैं। इन स्तुतिपरक रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

११. जय जय व जयति (आरती संग्रह) : चौदह अवतारों की स्तुति से सम्बन्धित

इन दो लघु रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियां महाराजा संग्रहालय, जयपुर मे सुरक्षित है।[36] कुल १० पृष्ठो मे लिखित 'जय जय' नाम की प्रथम कृति मे १४ अवतारो की आरती से सबधित पद है। यह पोथी जयपुर महाराजा रामसिंह प्रथम के समय (वि० स० १७२४ से वि० सं० १७४६ तक) की है। इस पर रामसिह प्रथम की मोहर अकित है। इस रचना के अन्त मे कवि ने नीलगिरि के श्री जगन्नाथ व स्वय के नाम का उल्लेख किया है।[37] 'जय जय व जयति' नाम से उपलब्ध दूसरी कृति मे कुल २८ पत्र है जिनमे १४ अवतारों की स्तुति के साथ-साथ उनकी लीलाओ का भी वर्णन है। इसमे जगन्नाथ जी के रूप-सौदर्य, महिमा व लीलाओ का अधिक विस्तारपूर्वक सरस चित्रण किया गया है। इसमे भी जगन्नाथ के दास माधवदास के नाम का उल्लेख कई बार हुआ है।[38] यह रचना प्रथम कृति से भिन्न होते हुए भी विषय की दृष्टि से समान है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनो रचनाए एक ही कृति के दो भाग है।

१२. हनुमान जयति : यह भी ब्रजभाषा मे रचित स्तोत्र काव्य है। हनुमान जी की स्तुति करते हुए कवि ने उनकी महिमा व बलशाली वीर रूप का वर्णन ओजस्वी भाषा में किया है। अब तक अज्ञात इस लघु रचना की तीन हस्तलिखित प्रतियां हमे अनुसंधान मे उपलब्ध हुई हैं। ये प्रतिया महाराजा सग्रहालय जयपुर मे सुरक्षित हैं।[39] इनमें सर्वाधिक प्राचीन पोथी का लिपिकाल सं० १८७६ है। यह पोथी सवाई जयनगर में फतहचद महात्मा द्वारा अति सुंदर व स्पष्ट अक्षरो मे लिखी गयी है। 'हनुमान जयति' नामक रचना मे कुल ८ पृष्ठ है। अन्य दो प्रतियां १९वी शताब्दी मे लिपिबद्ध है जिनमे कुल पत्र सख्या क्रमश: १० व ६ है। इस रचना के अत मे "इति श्री माधोदास कृत हनुमान जयति सपूर्ण" लिखा हुआ है।

१३. नृसिंह जयति : इस लघु कृति मे नरसिह अवतार मे भगवान के उग्र-वीर, बलशाली रूप की स्तुति, महिमा व लीला का गान है। वीर रस प्रधान इस रचना मे भाषा ओज गुण से युक्त है। इस रचना की दो हस्तलिखित प्रतियां महाराजा संग्रहालय, जयपुर मे विद्यमान है। सं० १८७६ मे लिपिबद्ध पोथी मे 'हनुमान जयति' नामक रचना के पहले 'नृसिह जयति' नामक रचना कुल ८ पृष्ठो मे लिखी हुई है। इस रचना मे श्री जगन्नाथ के दास माधवदास के नाम का उल्लेख हुआ है।[40]

१४. स्फुट पद : माधवदास जगन्नाथी कृत पदो की संख्या शताधिक है। ये पद विभिन्न पद-सग्रहों की हस्तलिखित पोथियो मे सकलित है। इन पोथियों मे माधवदास जी कृत ऐसे अनेक पद मुझे उपलब्ध हुए है जो इनकी प्रकाशित वाणी मे नही है।[41] प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर मे पु० हरिनारायण जी विद्याभूषण के ग्रंथ संग्रह का एक गुटका है जिसका लिपिकाल सं० १७४१ है।[42] इसमे माधवदास जगन्नाथी कृत १२ पद मिले है। इनमें कवि की नाम छाप अकित है। इन पदों मे हरि जगन्नाथ व राम के प्रति अनन्य भक्ति भाव प्रकट हुआ है। राम जी की बधाई स सबधित माधवदास जी के कुछ पद कृष्ण जन्म भूमि सेवा सस्थान

मथुरा के संग्रहालय की एक हस्तलिखित पोथी में भी संकलित है। इसी प्रकार जिन अन्य हस्तलिखित पद-संग्रहों में माधवदास जी के पद उपलब्ध होते हैं उनमें प्रमुख है—प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर की सं० १७१५ में लिपिबद्ध प्रति, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में प्राप्त ३ प्रतियां (लिपिकाल क्रमशः सं० १७८६, सं० १८५३ व सं० १८४०); महाराजा संग्रहालय, जयपुर में प्राप्त ४ प्रतियां (तीन प्रतियों के लि० का० स० १६६७, स० १७२८ व सं० १८५५)।[४४] माधवदास जगन्नाथी कृत एक पद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है—

हरि हरि हरण विषम विषाद।
दवन इंद्रिय दुख दारन श्रवण मन उन्माद।
दीन बंधु दयासिंधु दालिद्र दलन सधीर।
क्रोध करि षण लोभ धरि षण मोह भंजन भीर।
सुमति कारण कुमति वारण विपति तारण नाम।
पाप खंडण प्रीति मंडण भगत जन विश्राम।
भगत बछल हिया कोमल अभय दानि मुरारि।
जगन्नाथ समरथ सुनहु विनती माधौदास पुकारि।[४५]

'मदालसा आख्यान' नामक एक रचना, जिसका विषय मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत सती मदालसा के आख्यान से सम्बद्ध है, विद्वानों द्वारा अब तक भ्रमवश माधवदास जगन्नाथी कृत मानी जाती रही है।[४६] किंतु हमारे शोध-कार्य के अन्तर्गत यह तथ्य सामने आया है कि यह माधवदास जगन्नाथी कृत नहीं है अपितु माधवदास नामक अन्य कवि की रचना है जो दामोदर जी के शिष्य थे। इसे माधवदास जगन्नाथी कृत मानने का भ्रम नाम साम्य के कारण हुआ है। 'मदालसा आख्यान' की दो हस्तलिखित प्रतियों का हमने अवलोकन किया है जिनकी पुष्पिकाओं में इस रचना को दामोदर के शिष्य माधवदास द्वारा रचित बताया गया है। राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी में सुरक्षित 'मदालसा आख्यान' की हस्तलिखित प्रति (लि० का० सं० १८२६) का अंतिम छंद व पुष्पिका इस प्रकार है—"ज्यों हू नचावै रामजी, त्यौं नाचै माधौदास। श्री दामोदर के शिष्य को, राम तुम्हारी आस ॥८॥६७७॥४३॥ इति श्री मदालसा आख्यान ग्रंथ संपूरण भवेत्॥ संवत् १८२६ मिती वदि २ वार मंगल लिखतं व्यास चतुर्भुज। वैष्णव नेणीदास जी के शिष्य मयाराम पठनार्थ।"[४७] इसी प्रकार स० १८३८ में लिपिबद्ध इस रचना की दूसरी हस्तलिखित प्रति प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में उपलब्ध हुई है जिसमें भी प्रथम प्रति के समान ही अंतिम छंद में स्पष्ट रूप से दामोदर के शिष्य माधौदास का उल्लेख हुआ है।[४८] यह प्रति नागौर में जती त्रिलोकचंद द्वारा लिखी गयी है।

रामराय

वृंदावनस्थ चैतन्य मतानुयायी श्री यमुनावल्लभ जी गोस्वामी[४९] की वंश-सामग्री के अनुसार रामराय जी उनकी वंश परंपरा में 'गीत गोविंद' के रचयिता श्री

जयदेव की ११वी पीढ़ी में हुए थे । इनके पिता का नाम गौर गोपाल था । नाभा जी कृत 'भक्तमाल' मे उन्हे सारस्वत ब्राह्मण, भक्त, ज्ञानी, विरक्त, योगी और कथा-कीर्तन मे मग्न रहने वाला साधु-सेवी बतलाया गया है ।[५०] प्रियादास जी ने 'भक्ति-रस-बोधिनी' (भक्तमाल टीका) एवं 'भक्त सुमरिनी' मे रामराय जी का उल्लेख किया है ।[५१]

'श्री रसिकाचार्य चरितावली' मे रामराय जी की जन्म तिथि सं० १५४० की वैशाख शु० ११ बताई गयी है ।[५२] मीतल जी इनका समय कुछ वर्ष बाद का इसलिए अनुमानित करते है कि कवि कृत 'गीत गोविंद भाषा' की रचना (स० १६२२) के समय उनकी आयु ८२ वर्ष की होती है जो उन्हे साधारणतया स्वीकारणीय प्रतीत नही होती ।[५३] इस सबंध मे यह ध्यान देने योग्य बात है कि रामराय जी को योगी बतलाया गया है, दीर्घ आयु प्राप्त करना उनके लिए असभव नही हो सकता । कृष्णदास कविराज ने चैतन्य चरितामृत को ७६ वर्ष की अवस्था मे लिखना प्रारभ किया था और आज भी शतक पार करने वाले प्रख्यात लेखक श्रीपाद दामोदर सातवलेकर हुए है ।[५४] 'सरोज सर्वेक्षण' मे रामराय को अकबर का समकालीन मानते हुए इनका समय सं० १६५० के आसपास बताया गया है[५५] जो कि सही नही है । रामराय कृत 'गीत गोविंद भाषा' की रचना इससे पूर्व सं० १६२२ मे हो चुकी थी ।

रामराय जी के गुरु श्री नित्यानद थे । अंत:साक्ष्य व अन्य प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि उन्होने श्री नित्यानंद से दीक्षा ली थी । संप्रदाय मे नित्यानद को अनंग मजरी का अवतार माना जाता हे । रामराय ने अपनी रचनाओं मे अनेक स्थलो पर अनग मंजरी या अनग सखी का उल्लेख एवं मगल-स्मरण किया है ।[५६] अपने पद में उन्होंने स्वयं नित्यानंद से भेंट का उल्लेख करते हुए अपने हृदय-सरोबर के पकजों का नित्यानद रूपी रवि से खिलना बताया है ।[५७] मीतल जी का यह अनुमान कि रामराय जी पहले वल्लभ मतानुयायी थे और बाद में चैतन्य मत की ओर आकर्षित हो गए थे,[५८] संगत प्रतीत नही होता । रामराय जी जैसे श्रेष्ठ वैष्णव भक्त के लिए यह शास्त्र-निषिद्ध बात स्वीकारणीय नही कि एक गुरु का आश्रय छोडकर उन्होने अन्य से मंत्र-दीक्षा ली हो । इसी प्रकार रामराय जी के पदों का वल्लभ संप्रदाय में आदरपूर्वक गाया जाना इस बात का प्रमाण नही कि उनका सबध चैतन्य मत की अपेक्षा वल्लभ संप्रदाय से अधिक सिद्ध होता है ।[५९] चैतन्य सप्रदाय की कीर्तन-पोथियों मे अन्य सप्रदायी कवियों के पद भी श्रद्धापूर्वक गाये जाते रहे है तो क्या उनको चैतन्य मतानुयायी मान लिया जा सकता है ? वस्तुतः श्रीनाथ जी की सेवा-पूजा से प्रारंभ में चैतन्य सप्रदायी एवं वल्लभ सप्रदायी दोनों ही सबद्ध रहे हैं । श्रीनाथ जी महाप्रभु चैतन्य देव के दादा गुरु माधवेंद्रपुरी के सेव्य ठाकुर है । इन दोनों संप्रदायों में एक-दूसरे के भक्त-कवियों के प्रति आदर भाव प्रकट होना स्वाभाविक है

वस्तुत जी प्रारभ से ही चैतन्य मतानुयायी थे मीतल जी भी यह

मानते है कि रामराय जी के अनुज चद्रगोपाल जी ... निश्चित रूप से चैतन्य मतानुयायी थे चद्रगोपाल जी ... की प्रेरणा से ही गौर चरणाश्रित हुए थे ... महाप्रभु का पार्षद कहा गया है। रामराय जी ... के सेव्य ठाकुर—राधारमण, गोविंददेव, गोपीनाथ, राधामाधव मदनमोहन का मगल स्तवन किया है। चैतन्य महाप्रभु और उनके ... नित्यानद अद्वैत, गदाधर आदि भक्तो की भी रामराय जी ने वदना की है। चैतन्य मतानुयायी भक्तो मे रामराय अति सम्माननीय व लोकप्रिय रहे है। ... रचित पद चैतन्य सप्रदाय की कीर्तन-पोथियो मे मिलते है। ... रामराय चैतन्य संप्रदायी सिद्ध होते है। इनके अनेक शिष्य हुए है। ... भगवानदास सहित १२ शिष्य प्रमुख थे जो सभी कवि भी थे।[?] भगवानदास ने अपने कई पदो मे स्वय के नाम के साथ गुरु के नाम का उल्लेख किया है। उनमे 'भगवान हितु रामराय' की छाप मिलती है।

रचनाएं : रामराय जी सस्कृत के प्रकांड विद्वान एव ब्रजभाषा के रस सिद्ध कवि थे। उनकी ब्रजभाषा रचनाओ मे 'आदिवाणी' एव 'गीत गोविंद भाषा' प्रसिद्ध रचनाएं है जिनका प्रकाशन यमुनावल्लभ जी गोस्वामी द्वारा किया जा चुका है।

आदिवाणी : चैतन्य संप्रदाय के प्रारंभिक वाणीकार होने से श्रद्धापूर्वक रामराय जी की इस रचना को 'आदिवाणी' कहा जाता है। इसमे १०१ पदों का संकलन है। ब्रह्मगोपाल जी ने 'बारह वैष्णवन की बानी' मे इसका रचनाकाल सं० १५७० बताया है। इनके पद विभिन्न सप्रदायो की कीर्तन-पोथियो मे बिखरे हुए मिलते हैं। ऐसे पदो का संकलन करके यमुनावल्लभ जी ने 'आदिवाणी' का उत्तरार्द्ध भी प्रकाशित करा दिया है जिसमे कुल ८२ पद हैं। इनके पदो की भाषा परिष्कृत एवं शैली सरस एव भावपूर्ण है। माधुर्य भावपरक इनके पदो के विविध विषय हैं—राधा-कृष्ण की अष्टकालिक नित्य सेवा-लीला, बसंत आदि विभिन्न उत्सव, सांझी, रथयात्रा, भक्ति-सिद्धात, प्रिया-प्रियतम का मधुर मिलन, रस केलि, मान और निकुज विहार लीला।

गीत गोविंद भाषा : यह रचना श्री जयदेव कृत सुप्रसिद्ध गीति-काव्य 'गीत गोविंद' का ब्रजभाषा मे सरस पद्यानुवाद है। इस सफल अनुवाद मे मूल का सौंदर्य विद्यमान है। रामराय जी ने 'गीत गोविंद' को निजकृत की रचना कहा है।[63] विविध छंदो में पद्यबद्ध 'गीत गोविंद भाषा' का रचना-काल सं० १६२० है।[64]

स्वप्न लीला : रामराय जी कृत एक लघु रचना—'स्वप्न लीला' के नाम से यमुनावल्लभ जी गो० ने प्रकाशित की है। श्री राधिकानाथ कृत 'महावाणी' में यह संकलित है। इसका विषय राधा का स्वप्न मे कृष्ण का दर्शन और लीला रस है। यह रचना पद एव दोहा छंद के क्रम में रचित है।

गौरगणदास

गौरगणदास के जीवन-वृत्तांत के संबंध में निश्चित रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं है सर्वप्रथम नागरी प्रचारिणी सभा के खोज विवरण द्वारा पता चलता है कि ये गौडीय सम्प्रदाय के वैष्णव व वृंदावन के प्रसिद्ध महात्मा कवि थे।[५५] बाबा कृष्णदास जी ने 'गौरांग भूषण मंजावली' नाम से इनकी रचनाओं का प्रकाशन सं० २००७ में किया। इसके प्राक्कथन में लिखा है—"आपके विषय में कोई विशेष बात हमें मालूम नहीं है। परन्तु इस ग्रंथ से पता चलता है कि आप श्री सनातन गोस्वामी-चरणों के आश्रित प्रिय शिष्य थे।"

गौरगणदास जी ने अपनी रचनाओं में श्री गौरांग महाप्रभु, श्री रूप-सनातन तथा अन्य गौडीय संतों की जो वंदनाएं की हैं,[६६] उनसे उनका चैतन्य सम्प्रदायी कवि होना सिद्ध होता है। डॉ० कु० चन्द्रप्रकाश जी के अनुसार "गौरगणदास सीतलदास के बहुत पहले हुए हैं। वह सनातन गोस्वामी जी के शिष्य थे और कबीर के कुछ ही समय बाद हुए थे।"[६७] मीतल जी को यह मान्य नहीं है। उनको गौरगणदास वल्लभ रसिक के समकालीन और १८वीं शती के आरंभिक काल में विद्यमान जान पड़ते हैं।[६८] उनके मतानुसार गौरगणदास जी ने अन्य आचार्यों के दार्शनिक सिद्धांतों के नामोल्लेख के साथ-ही-साथ माध्व गौड़ेश्वर सिद्धांत को स्पष्ट रूप से "अचिंत्य भेदाभेद" कहा है और चैतन्य मत की शाखा-प्रशाखाओं तथा ६४ महंतों का भी उल्लेख किया है। इससे उनका काल सनातन गोस्वामी के बाद का सिद्ध होता है।

गौरगणदास जी ने अपनी रचनाओं में अनेक स्थलों पर सनातन-रूप गोस्वामी को गुरु बताया है तथा उनकी कृपा व उनके द्वारा प्रदत्त दृष्टि के प्रकाश की बात का भी स्पष्ट उल्लेख किया है।[६९] कवि द्वारा रचित 'शृंगार-मंझावली' की हस्त-लिखित प्रति के प्रारंभिक अंश में भी 'श्री रूप सनातन चरन कमल भजन परायन श्री गौरगनदास' लिखा है।[७०] इनसे यह निष्कर्ष निकलता है कि ये रूप व सनातन में से ही किसी के अनुगत शिष्य थे परंतु निर्णायक रूप में यह कहना अवश्य कठिन है कि ये सनातन गोस्वामी के ही शिष्य थे। कवि के काल निर्धारण में डॉ० नरेशचंद्र बंसल का मत अधिक समीचीन जान पड़ता है। उन्होंने गौरगणदास जी का काल १६वीं शती का उत्तरार्ध व १७वीं शती का पूर्वार्ध माना है। उनके मतानुसार "मीतल जी 'गोविंद भाष्य' के पश्चात् गौरगणदास जी का काल निर्धारित करना चाहते हैं, जो ठीक नहीं। कारण, गोविंद भाष्यकर्ता से कवि परिचित होता तो उनका नामोल्लेख अवश्य करता। यह बात तो दूर उसने परकीयावाद के परम प्रतिष्ठापक श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती का नामोल्लेख तक नहीं किया है।"[७१] इसके अतिरिक्त 'अचिंत्य भेदाभेद' के सिद्धांत की स्थापना बलदेव विद्याभूषण (गोविंद भाष्यकर्त्ता) से पूर्व ही हो चुकी थी। ६४ महंतों की प्रणाली भी परवर्ती नहीं है।

डॉ० कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने 'गौरांग भूषण मंजावली' की भाषा का

विश्लेषण करते हुए उचित ही कहा है, "जिस खड़ी बोली का अस्तित्व अपभ्रंशकाल में उसकी कुछ रचनाओं में झलक जाता है और जो योगमार्गी साधुओं की बानी में अपना रंग कुछ-कुछ दिखाने लगती है, जिसका पहला कवि खुसरो माना जाता है और जिसका किंचित् अधिक विकसित रूप कबीर की रचना में मिलता है, उसी को 'गौरांग भूषण मंजावली' में विशेष सरस बनाकर ब्रजभाषा में घुला मिला दिया गया है। काव्य में खड़ी बोली के प्रयोग के इतिहास में इस रचना का स्थान अविस्मरणीय है, पर अब तक अज्ञात रहने के कारण इस पर विचार नहीं हो सका है।"[७२]

रचनाएं : गौरगणदास का महत्व उनके द्वारा रचित 'मंझ' या 'मांझ' रचनाओं के कारण है। साहित्य की इस विशिष्ट रचना पद्धति में ब्रजभाषा के साथ खड़ी बोली और अरबी, फारसी के शब्दों का मिश्रित प्रयोग होता है। हिन्दी साहित्य में इस काव्य रूप के प्रसिद्ध कवि सीतलदास को मिश्र बंधुओं ने खड़ी बोली का प्रथम कवि माना है, किंतु सीतल से पूर्व गौरगणदास और वल्लभ रसिक ने इसी प्रकार की काव्य रचना की थी। इतना अवश्य है कि सीतल की भाषा में शुद्धता है और गौरगणदास की रचना में च्युत-संस्कृति दोष कहीं-कहीं पाया जाता है, परन्तु गौरगणदास की खड़ी बोली की पंक्तियों में सरकृत पदावली जैसी सरसता व सूक्ष्म सौंदर्य की अभिव्यजना जिस प्रकार से हुई है वैसी सीतल के काव्य में नहीं। गौरगणदास जी की मांझ रचनाओं की यह विशिष्टता है कि उन्होंने ब्रजभाषा में खड़ी बोली व अरबी-फारसी के शब्दों के साथ संस्कृतनिष्ठ शब्दों का भी प्रचुर व सरस प्रयोग किया है। बाबा कृष्णदास द्वारा प्रकाशित 'गौरांग भूषण मंजावली' में गौरगणदास कृत चार रचनाएं संकलित हैं---१. गौरांग भूषन बिलास मंझावली, २. प्रार्थना, ३. शृंगार मंझावली, (पूर्व तथा उत्तर भाग) और ४. सिद्धांत प्रणाली शाखा। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. गौरांग भूषण विलास मंझावली : 'मांझ' नामक छंद में रचित होने से इसे 'मंझावली' कहा गया है। मांझ २८ मात्रा का छंद होता है जिसमें १६ मात्रा पर यति होती है। हिंदी साहित्य में इसकी विशिष्ट पद्धति है। इसमें कवि ने अरबी-फारसी के साथ संस्कृतनिष्ठ पदावली का भी बहुलता से प्रयोग किया है। इस रचना में कुल मिलाकर ८४ मांझ, २ छप्पय, १ कुंडलिया तथा ६ दोहे हैं। लिपिकर्त्ता के प्रमादवश यति व छंद-भंग के दोष भी आ गये हैं। यह रचना भाव व कलागत सौंदर्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है। इसके आरंभ में गुरुदेव का स्मरण-वर्णन सात सवैयों एवं एक छप्पय में भावपूर्ण एवं अलंकृत शैली में किया गया है। गौरांग महाप्रभु के स्वरूप-माहात्म्य एवं संप्रदायगत सिद्धांतों का कथन भी हुआ है। इस रचना की हस्तलिखित प्रति बाबा वंशीदास, वृंदावन के पास उपलब्ध है।[७३]

२. प्रार्थना : इस लघु रचना में गौरांग महाप्रभु एवं उनके पार्षद गणों की स्तुति के साथ ब्रज, गोप-गोपी, यमुना की भक्ति प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की गई है। व्रजदेवी (वृंदा) से प्रिया-प्रियतम की युगल-रस माधुरी के आस्वादन हेतु

कृपा करने की विनती की गइ है क्योंकि उनकी कृपा के बिना युगल प्रेम र अलभ्य है

३. **शृंगार मंझावली :** इस कृति के दो विभाग है—पूर्व व उत्तर। पूर्व विभाग में ३२ मांझ और उत्तर विभाग मे २७ मांझ है। इसमे गौरांग महाप्रभु की वदन के पश्चात् राधा-कृष्ण के रूप सौंदर्य एवं माहात्म्य तथा वृंदावन ध्यान लीला क वर्णन किया गया है। 'गौरागभूषण विलास' की भाषा जहा संस्कृत प्रधान है वह इस रचना मे अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग अधिक है। इससे ज्ञात होता है कि कवि को संस्कृत के साथ अरबी-फारसी का भी अच्छा ज्ञान था।

४. **सिद्धांत प्रणाली शाखा :** इस लघु रचना का विषय मधुर रस-सिद्धात है। प्रेम-मार्ग के विधि-विधान एव आचार शास्त्र का सरल शैली में कथन किया गया है।

सूरदास मदनमोहन

चैतन्य संप्रदाय के रस सिद्ध कवियो मे सूरदास मदनमोहन का नाम अग्रगण्य है। हिंदी साहित्य के इतिहास-ग्रंथों में इस संप्रदाय के जिन दो-चार कवियों का उल्लेख हुआ है उनमे इनका भी स्थान है। नाभादास, प्रियादास तथा नागरीदास द्वारा किए गये कुछ उल्लेखो से इनके जीवन-चरित्र के विषय में ज्ञात होता है। वल्लभ संप्रदाय में जिस प्रकार सुप्रसिद्ध भक्त कवि सूरदास हुए है, उसी प्रकार चैतन्य संप्रदाय मे सूरदास मदनमोहन की प्रतिष्ठा है। ये सनातन गोस्वामी के शिष्यत्व में उनके सेव्य ठाकुर श्री मदनमोहन जी की सेवा किया करते थे, इसी कारण ये सूरदास 'मदनमोहन' के नाम से प्रख्यात हुए।

नाभा जी ने 'भक्तमाल' में इनका उल्लेख करते हुए इनके कवित्व की प्रशंसा की है।[३४] उनके अनुसार सूरदास मदनमोहन नाम से प्रख्यात ये भक्त कवि गान-विद्या व काव्य मे अति निष्णात थे। नव रसो मे से मुख्यत: मधुर रस का विविध प्रकार से इन्होंने गायन किया था। उपास्य—राधा-कृष्ण की निकुंज लीला में सहचरी-सखी के अवतार होने से ये उस रहस्यानंद के अधिकारी थे।

प्रियादास कृत 'भक्तिरस बोधिनी' में सूरदास मदनमोहन के विषय में कहा गया है कि ब्राह्मण कुलोत्पन्न इनका नाम 'सूरध्वज' था। अकबर के शासन काल मे ये संडीला परगना के अमीन (अधिकारी) थे। महाप्रभु (चैतन्य देव) इनके इष्ट एवं ठाकुर मदनमोहन उपास्य थे। मदनमोहन जी के सेवक गुसाई (सनातन) इनके गुरु थे। ये अत्यत निष्ठावान विनीत तथा साधु-संत चरण सेवी थे जो युगल-प्रेम माधुरी मे निमग्न होकर अपने पदों का गायन करते रहते थे।[३५] नागरीदास ने भी इनके जीवन के सबंध में इन्ही बातों का उल्लेख किया है।[३६]

सूरदास मदनमोहन के विषय मे यह कहा जाता है कि भगवद्भक्ति व साधु सेवा मे अनुराग रखने के कारण ये सरकारी खजाने से मदनमोहन जी को श्रद्धांजलि स्वरूप भेंट भेजा करते थे। ऐसा प्रसिद्ध है कि इन्होंने तेरह लाख रुपया साधु-सेवा

में व्यय कर दिया था। जब उस रुपये को सरकारी कोष में दाखिल करने का समय आया, तब रुपयों की पेटियों को कंकड़-पत्थर से भरकर, साथ में यह दोहा लिख भेजा था—

> तेरह लाख सडीले उपजे, सब साधुन मिलि गटके।
> 'सूरदास मदनमोहन' वृंदावन को सटके॥

तब सडीले से भागकर ये वृंदावन चले आये थे और निश्चिंत होकर स्थायी रूप से वहां रहने लगे थे।[७७] ऐसा कहा जाता है कि गुणग्राही अकबर उनकी उदारता, सरलता व वैराग्य वृत्ति से अत्यंत प्रभावित हुआ और उनको माफीनामा भेजकर वापस बुलाया परंतु उन्होंने वृंदावन-परित्याग का स्वीकार नहीं किया। इस घटना से उनके त्यागमय महान चरित्र एवं सुदृढ़ भक्ति-भावना का परिचय प्राप्त होता है।

उपर्युक्त उल्लेख से तथा आचार्य रामचंद्र शुक्ल[७८] एवं मिश्र बंधुओं[७९] ने उनके रचनाकाल के जो संवत (क्रमशः सं० १५९० और १६०० के आसपास) दिये हैं उनसे यही अनुमान होता है कि वृंदावन आगमन पर उनकी आयु लगभग ४० वर्ष रही होगी। इनका जन्म संवत १५६० के लगभग तथा इनका कविता काल सं० १५९० और १६०० के मध्य अनुमानित किया गया है।[८०] इनका गोलोकवास वृंदावन में हुआ था। वृंदावनस्थ पुराने मदनमोहन जी के मंदिर के निकट श्री सनातन गोस्वामी जी के समाधि-स्थल के मार्ग में एक कोने में, उनकी समाधि आज भी विद्यमान है।[८१]

रचनाएं : सूरदास मदनमोहन ने अनेक सरस पदों की रचना की थी जो इनके जीवन-काल में ही ब्रज के मंदिरों में गाये जाते थे। इनके पद विभिन्न संप्रदायों की कीर्तन-पोथियों में संकलित मिलते हैं जिससे इनकी लोकप्रियता सिद्ध होती है।[८२] नामसाम्य के कारण यह संभव हो सकता है कि वल्लभ संप्रदायी सूरदास के कुछ पद सूरदास मदनमोहन के मान लिए गये हों और इसी प्रकार 'सूर सागर' में सूरदास मदनमोहन के कुछ पदों का समावेश हो गया हो। बाबा कृष्णदास ने सूरदास मदनमोहन के १०५ पदों का संकलन 'श्री सूरदास मदनमोहन की सुहृद वाणी' नाम से प्रकाशित किया है, इसके द्वितीय संस्करण में १४८ पदों का संग्रह 'श्री सूरदास मदनमोहन की वाणी' नाम से (सं० २०१५ में) प्रकाशित हुआ है। श्री प्रभुदयाल मीतल ने सूरदास मदनमोहन की जीवनी के साथ उनके १०५ पदों का सुसंपादित संकलन प्रकाशित किया है।[८३]

सूरदास मदनमोहन के पदों की रचना-शैली अत्यंत सरस एवं मधुर है। इनमें राधा-कृष्ण की केलि-क्रीड़ाओं, दान, मान, खंडिता, अभिसारिका, विरह, अनुराग, बसंत, होली, फूलडोल, रास, वर्षा विषयक लीलाओं का सरस वर्णन हुआ है। ये सभी विषय चैतन्य संप्रदाय की स्वीकृत भावोपासना के अनुरूप तथा 'अष्टयाम' व वर्षोत्सव सेवा-उपासना के अनुकूल हैं। कुछ पद वात्सल्य भाव संबंधी लीला के भी हैं। संगीत की विविध राग-रागनियों में निबद्ध होने से इनके पद संगीत-

गोष्ठियों एवं कीर्तन मंडलियों में विशेष प्रिय रहे हैं। इनमें भाषा की सरसता। लालित्य के साथ भक्ति भावना, उदात्त शृंगार भाव की अभिव्यक्ति अनुपम। डॉ० शरण बिहारी गोस्वामी ने इनकी रचना में सखी भाव की उपासना अभिव्यंजना लक्षित की है।[84] इनके काव्यगत सौष्ठव का मूल्यांकन डॉ० नग द्वारा इन शब्दों में उचित ही किया गया है--"इनकी उपासना में 'राधा' की प्रधानता है और सखियों का लीलानुगत्य भी सर्वत्र वर्णित है। इनके काव्य का कला-विधान भी उत्कृष्ट कोटि का है। भाषा सरल और श्रुति सुखद है। वर्णनगत सजीवता और कहीं-कहीं संवादों में सहज नाटकीयता भी इनके काव्य गुण हैं। प्रसाद गुण के साथ ही माधुर्य की अभिव्यंजना इनमें श्रेष्ठ है। वास्तव में भाव और अभिव्यक्ति दोनों ही दृष्टियों से इनकी रचनाएं उत्तम हैं।"[85]

गदाधर भट्ट

गदाधर भट्ट चैतन्य संप्रदाय के सुप्रसिद्ध ब्रजभाषा कवि थे। हिंदी साहित्य के इतिहास-ग्रंथों में इनके विषय में यह भ्रांति चली आ रही है कि ये चैतन्य महाप्रभु के समकालीन व उनके दीक्षा-प्राप्त शिष्य थे।[86] वस्तुतः महाप्रभु जी को भागवत कथा सुनाने वाले उनके शिष्य गदाधर पंडित गोस्वामी थे जो बंगाली थे और ये गदाधर भट्ट उनसे भिन्न आंध्र प्रदेशीय दाक्षिणात्य वेल्लनाटीय तैलंग ब्राह्मण थे[87] जो जीव गोस्वामी की प्रेरणा से वृंदावन में आकर श्री रघुनाथ भट्ट के अनुगत शिष्य हो गए थे।[88] गदाधर भट्ट को चैतन्य महाप्रभु के शिष्य समझने का भ्रम नाम-साम्य व संप्रदाय साम्य के कारण हुआ है। यों गदाधर पंडित के समान गदाधर भट्ट भी भागवत के श्रेष्ठ प्रवक्ता थे, परंतु गदाधर भट्ट और चैतन्य के समय में पर्याप्त अंतर है। गदाधर नाम के अन्य भक्त कवियों में गदाधर मिश्र ब्रजवासी और गदाधरदास द्विवेदी भी हुए हैं जो वल्लभ संप्रदाय के कवि हैं।

नाभा जी, प्रियादास, ध्रुवदास, नागरीदास, भगवत रसिक प्रभृति सुप्रसिद्ध भक्त कवियों ने[89] गदाधर भट्ट के उज्ज्वल चरित्र व उत्कट भक्ति भावना के साथ ही उनकी वाणी की मधुरता और उनके द्वारा कथित भागवत कथा की सरसता की बहुत प्रशंसा की है। इनके द्वारा किए गये उल्लेखों से गदाधर भट्ट के जीवन के संबंध में कुछ ज्ञात होता है। प्रियादास जी की टीका में यह बात उल्लिखित है कि वृंदावन आने से पूर्व ही ये ब्रजभाषा में भक्तिभाव से परिपूर्ण सरस पदों की रचना में लीन रहते थे। ऐसी जनश्रुति है कि 'सखी, हौं स्याम रंग रंगी' की टेक वाला पद सुनकर जीव गोस्वामी ने उन्हें एक श्लोक भेजा[90] जिसे सुनकर ये अत्यंत आनंदविभोर हो गए। उक्त श्लोक के मर्म को समझकर इन्होंने यह अनुभव किया कि वृंदावन में निवास किये बिना वास्तव में वे मधुर रस के वर्णन के उचित अधिकारी नहीं हो सकते। अतएव ये तत्काल सब कुछ त्यागकर वृंदावन चले आये और श्री रघुनाथ भट्ट गोस्वामी से चैतन्य मत की दीक्षा ली। भागवत कथा-मर्मज्ञ अपने गुरु-रघुनाथ भट्ट के संसर्ग में रहने से गदाधर भट्ट भी भागवत के प्रसिद्ध वक्ता हो गये। वे

संस्कृत के प्रकांड विद्वान और भक्त हृदय तो थे ही, वाणी की मधुरता और माधुर्य ने इनकी प्रसिद्धि को अतिशय कर दिया। नाभा जी आदि भक्त कवियों ने उनकी भागवत कथा की बड़ी प्रशंसा की है। उनके वंशजों में अनेक सुकवि एवं प्रसिद्ध वक्ता होते रहे हैं।

गदाधर भट्ट के काल का अनुमान उनके वृंदावन आगमन के समय से लगाया जा सकता है। जीव गोस्वामी का जन्म वि० सं० १५६८ और वृंदावन आगमन काल १५९० के आसपास माना जाता है। उस समय इनकी ख्याति विस्तृत रूप से फैल गयी होगी। रघुनाथ भट्ट गो० का गोलोकवास सं० १६११ माना जाता है। अतः वि० सं० १५९०-१६११ के मध्य ही गदाधर भट्ट का वृंदावन आगमन तथा दीक्षा-ग्रहण काल ज्ञात होता है। श्री गौरीशंकर द्विवेदी उनका जन्म काल सं० १६२० और काव्य काल सं० १६६० तथा मिश्र बन्धु इनका समय सं० १६३२ व कविता-काल सं० १७२२ मानते हैं जो ठीक नहीं है क्योंकि वृंदावन आने से पूर्व ही गदाधर भट्ट गृहस्थ थे अतः उस समय इनकी आयु २५-३० वर्ष रही होगी। इस आधार पर डॉ० बंसल ने इनका जन्म सं० १५८० के लगभग अनुमानित किया है।[८५]

गदाधर भट्ट को उनके सेव्य ठाकुर मदनमोहन जी यमुना की रेणुका में माघ शुक्ला पंचमी (बसंत पचमी) के दिन प्राप्त हुए थे। यह विग्रह अठखंभा मुहल्ले में आज भी विद्यमान है और इसकी भावमयी सेवा-पूजा भट्ट जी के वंशजों द्वारा परंपरा से की जाती रही है। यहां आयोजित 'समाज' वृंदावन में बहुत प्रसिद्ध है। ब्रजभाषा के सुप्रसिद्ध कवि वल्लभ रसिक तथा संस्कृत के प्रकांड पंडित और रसिक भक्त रसिकोत्तंस गदाधर भट्ट के पुत्र बताए जाते हैं। किन्तु यह सही प्रतीत नहीं होता। ये दोनों गदाधर भट्ट के पुत्र न होकर उनके वंशजों में से थे।

रचनाएं : गदाधर भट्ट की रचनाओं से ज्ञात होता है कि उन्होंने संस्कृत की उच्च शिक्षा प्राप्त की थी एवं श्रीमद् भागवत आदि भक्ति ग्रंथों का भली प्रकार से अनुशीलन किया था। ब्रजभाषा काव्य रचना में भी इनकी दक्षता एवं रसिकता का पता लगता है।

गदाधर भट्ट ने ब्रजभाषा में सरस पदों की रचना की है। इनके द्वारा रचित एक शतक के लगभग स्फुट पद उपलब्ध हुए हैं। विभिन्न हस्तलिखित पद-संग्रहों में गदाधर भट्ट के पद मिलते हैं, उनका संकलन करने पर इनके और अधिक पद प्रकाश में आ सकते हैं। बाबा कृष्णदास जी (कुसुम सरोवर, वृंदावन) ने इनके पदों का संकलन सं० २००० में जयपुर से प्रकाशित कराया था, तत्पश्चात् इसका पुनर्मुद्रण 'श्री गदाधर भट्ट जी वाणी' के नाम से सं० २०१५ वि० में कराया था जिसमें कुल ८५ पद हैं। इसमें 'योगपीठ' नामक रचना उपासना-रहस्य को बताने हेतु लिखी गयी स्वतंत्र रचना ज्ञात होती है। इसमें कुल १०८ पंक्तियां हैं जो सुमिरिनी के १०८ मनको की भांति समझनी चाहिए। ध्यान-उपासना से संबंधित इस कृति में वृंदावन एवं राधा-कृष्ण की रूप-शोभा का सुंदर वर्णन किया गया है।

योग पीठ' की सं० [illegible] १७ में लिपिबद्ध [illegible] हस्तलिखित प्रति प्राच्य [illegible]
प्रतिष्ठान जयपुर में है। [illegible] [illegible] प्र
कुल ६ पत्र व ५७ छंद हैं। इसमें इस रचना का नाम 'वृंदावन [illegible]' दिया
है।[97] वृंदावन शोध संस्थान में भी 'योग पीठ' की एक प्रति है।

गदाधर भट्ट की 'वाणी' में कुछ सरस [illegible] के पद भी हैं [illegible] (सं-
काव्य के लक्षण हैं। संस्कृतनिष्ठ कोमल कांत पदावली के साथ ब्रजभाषा
सुमधुर शब्दावली इनकी रचना की विशेषता है। इनके पदों में माधुर्य-भक्ति व
ब्रजरस की प्रगाढ़ व्यंजना हुई है। गदाधर भट्ट प्रमुख रूप से राधा-कृष्ण के
कैशोर-लीलाओं के गायक हैं। इनकी रचना के विषय हैं—युगल स्वरूप वर्णन
होरी, वर्षा झूलन, रास, योगपीठ, बधाई, यशोदानंदन आदि की वंदना, वंशी
अनुराग, मान, कालियमर्दन, विवाह, ज्योनार, विनय, नाम-महिमा आदि।
धमार, वसंत हिंडोल, रास, चैतन्य सम्प्रदाय की मधुर भावना के अनुरूप विषय हैं।
नंदगांव, बरसाना और छुट्टन भट्ट जी के मंदिर (वृंदावन) के समाजों में भट्ट जी की
धमार बड़े उल्लास से प्राचीन परंपरा के अनुसार गायी जाती है। गदाधर भट्ट के
पदो की हस्तलिखित प्रतियां श्रीकृष्ण चैतन्य भट्ट, वृंदावन, डॉ० नरेश चंद्र बंसल
(कासगंज) व वृंदावन शोध संस्थान में उपलब्ध हैं। स० १८१७ में लिपिबद्ध एक
गुटका जयपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान मे है जिसमे गदाधर भट्ट कृत ८ पद हैं।
जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में उपलब्ध गुटके में (स० १७४१ में लिपिबद्ध)
कवि के तीन पद हैं।[98]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गदाधर भट्ट के पद विन्यास की बड़ी प्रशंसा करते
हुए इनकी रचना को गो० तुलसीदास के समकक्ष बताया है।[99] श्री वियोगी हरि ने
इनकी रचना को अष्टछाप के उत्कृष्ट कवियों के जोड़ की[100] एवं डॉ० शरण
बिहारी गोस्वामी ने हरिवंश जी के टक्कर की बताया है तथा उसमें सखी भाव
की प्रधानता लक्षित की है।[101] इनके पद प्राय: सभी कृष्णभक्ति संप्रदायों की
कीर्तन-पोथियो मे मिल जाते है और आज भी बिना किसी सांप्रदायिक दुराग्रह के
उनका विभिन्न उत्सवो पर सेवानुरूप गायन होता है। इस प्रकार अनुभूति और
अभिव्यंजना दोनो ही दृष्टियों से ये हिंदी के भक्तिकालीन कवियो में उच्च स्थान
पाने के अधिकारी हैं।

हरिराम व्यास

ब्रज मे हरित्रयी या रसिकत्रयी के नाम से प्रख्यात तीन महात्माओं में से एक
हरिराम व्यास उत्कृष्ट भक्त कवि है। हरिवंश, हरिदास व हरिराम व्यास—ये
तीनों मधुर रसोपासक अनन्य भक्त है। व्यास जी का जन्म-स्थल निर्विवाद रूप से
ओरछा माना जाता है। ये ओरछा नरेश मधुकर शाह के राजगुरु थे। व्यास जी
रचित 'स्वद्धर्म पद्धति' या 'नवरत्न', नाभादास के 'भक्तमाल', ध्रुवदास कृत 'भक्त
नामावली', प्रियादास द्वारा रचित 'भक्तिरसबोधिनी टीका' मे व्यास जी के

जीवन चरित्र संबंधी कुछ सूत्र उपलब्ध होते हैं [illegible]
श्री व्यास जी ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक [illegible]
रखते और [illegible]
मानते थे।[102]

श्री वासुदेव गोस्वामी ने प्रामाणिक शोधपरक तथ्यों के आधार पर व्यास जी का जन्म वि० सं० १५६७ की मार्गशीर्ष कृष्णा-पंचमी, बुधवार को माना है, [illegible] ज्योतिष गणना द्वारा भी परिपुष्ट होता है।[103] इसी दिन व्यास जी की जयन्ती वृंदावन, दतिया, झांसी आदि अनेक स्थानों में व्यास पंचमी महोत्सव के रूप में मनायी जाती है। इनके पिता का नाम समोखन शुक्ल था।[104] अपने पदों में व्यास जी ने पिता के लिए 'सुकुल' शब्द का प्रयोग किया है।[105] इनकी माता का नाम देविका था। ये सनाढ्य ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे। संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित व भागवतादि पुराण के वक्ता होने के कारण ये 'व्यास' उपाधि से विभूषित हुए। इन्होंने अपनी रचनाओं में 'व्यास' को उपनाम के रूप में प्रयुक्त किया है। व्यास के नाम से ये इतने प्रसिद्ध हुए कि इनका मूल नाम व उपनाम [illegible] भी छिप गया। वृंदावन में गुरु गद्दी पर आसीन होने के बाद ये व्यासवंशी गोस्वामी भी कहलाने लगे। व्यास जी सद्गृहस्थ थे, इनके परिवार में [illegible], पत्नी, एक पुत्री व तीन पुत्र थे।[106]

हरिराम व्यास चैतन्य संप्रदाय के भक्त कवि माधवदास जगन्नाथी के शिष्य थे। माधवदास जी से इन्होंने मंत्र दीक्षा ली थी। डॉ० बंसल ने इस मत के प्रमाण स्वरूप व्यास जी द्वारा रचित संस्कृत ग्रंथ 'नवरत्न' ('स्वधर्म पद्धति') की हस्त-लिखित प्रति से व्यास जी की गुरु परंपरा उद्धृत की है।[107] इस रचना का प्रकाशन बाबा कृष्णदास जी ने बाबा वंशीदास जी की प्रति के आधार पर वि० सं० २००६ में किया था। उक्त रचना की एक हस्तलिखित प्रतिलिपि हमने कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय में देखी है। इसमें भी यही गुरु परंपरा दी हुई है। इससे स्पष्ट होता है कि व्यास जी ने अपने को माध्व संप्रदाय की गुरु परंपरा में माधवदास जी का शिष्य बताया है। इस लघु कृति में व्यास जी ने अपने पूर्वा-चार्य श्री मध्व के मत का उल्लेख करते हुए उनके द्वारा वर्णित नव प्रमेयों को अपना सब कुछ माना है।[108] बंगाली विद्वान हरिदास जी ने "श्री गौड़ीय वैष्णव अभिधान"[109] नामक विशाल बंगला ग्रंथ में एवं लालदास (मूलनाम कृष्णदास) ने बंगला भक्तमाल"[110] में तथा पुलिन विहारीदत्त[111] ने भी चैतन्य महाप्रभु के दादा गुरु श्री माधवेंद्र पुरी के शिष्य माधवदास को व्यास जी का दीक्षा गुरु बताया है। गुरु शिष्य वंशावली के अनुसार व्यास जी ने अपनी जगदीश यात्रा में माधवदास जी से मंत्र लेकर उन्हें अपना गुरु बनाया।[112] स्वयं व्यास जी ने अपने पद में माधवदास जी की शरण में आकर उनकी कृपा से संदेह-निवारण का उल्लेख किया है।[113] इनके पिता समोखन शुक्ल ने इन्हीं माधवदास से दीक्षा प्राप्त की थी।[114] हो सकता है कि व्यास जी के बाल्य-काल में ही इनके पिता ने अपने गुरु माधवदास जी

से इन्हें मंत्र दीक्षा दिलाई थी। श्री वासुदेव गोस्वामी की मान्यतानुसार व्यास जी के दीक्षा गुरु स्वयं उनके पिता समोखन शुक्ल थे।[११५]

कुछ विद्वानों ने राधावल्लभी हित हरिवंश जी को व्यास जी का दीक्षा-गुरु माना है और व्यासवाणी के कुछ पदों में हित जी के साथ 'गुरु' शब्द के प्रयोग को उल्लिखित किया है। राधावल्लभीय वैष्णव महासभा द्वारा प्रकाशित 'व्यास वाणी' की प्रस्तावना में ऐसे कुछ उद्धरण देकर व्यास जी को हरिवंश जी का शिष्य सिद्ध करने की चेष्टा की गयी है। आगे इसी मत की स्थापना का प्रयत्न डॉ० विजयेंद्र स्नातक ने अपने शोध-प्रबंध 'राधावल्लभ संप्रदाय : सिद्धांत और साहित्य' में किया है। किंतु श्री वासुदेव गोस्वामी ने कुछ प्रामाणिक हस्तलिखित प्रतियों के फोटो चित्र देकर यह सिद्ध किया है कि उक्त पदों में हित हरिवंश के साथ 'गुरु' शब्द नहीं है अतः वे प्रक्षिप्त हैं[११६] उदाहरणार्थ—

(अ) "व्यासहि गुरु हरिवंश बताई अपनी जीवन मूरि"

—व्यास वाणी (राधावल्लभीय) पृ० ज

"व्यासहि हित हरिवंश बताई अपनी जीवन मूरि"

(सं० १८८८ में लिपिबद्ध व्यास वाणी की हस्तलिखित प्रति)

—भक्त कवि व्यास जी (वासुदेव गोस्वामी) पृ० ५९

(ब) अब हम वृंदावन धन पायौ।
चरण सरन राधे मन दीनौ, श्री हरिवंश बतायौ॥
सोयौ हुतौ विषय मंदिर में, हित गुरु टेर जगायौ॥

—व्यास वाणी (राधावल्लभीय) पृ० ८४

इस पद के दूसरे चरण में 'श्री हरिवंश बतायौ' पाठ प्रक्षिप्त है इसके स्थान पर 'मोहनलाल रिझायौ' प्रामाणिक पाठ है और तीसरे चरण में 'हित गुरु टेर जगायौ' के स्थान पर 'श्री गुरु टेरि जगायौ' शुद्ध पाठ है। इसके प्रमाणस्वरूप वासुदेव गोस्वामी ने सं० १८९४ की हस्तलिखित प्रति का फोटो चित्र दिया है।

(स) इसी प्रकार राधावल्लभीय 'व्यास वाणी' में प्रकाशित अन्य ऐसे ५ पदों को भी वासुदेव गोस्वामी ने प्रक्षिप्त माना है जिनमें हितहरिवंश जी का नाम 'गुरु' शब्द के साथ या गुरु भाव के द्योतनार्थ प्रयुक्त हुआ है।

डॉ० विजयेंद्र स्नातक ने श्री वासुदेव गोस्वामी के उपर्युक्त आक्षेपों का उत्तर देने के लिए व्यास वाणी की केवल एक ऐसी हस्तलिखित प्रति का उल्लेख किया है जो वासुदेव गोस्वामी द्वारा उल्लिखित प्रतियों से अधिक प्राचीन बतायी गयी है। उनके अनुसार सं० १७९१ में लिपिबद्ध यह प्राचीन प्रति कैलारस (ग्वालियर) नामक स्थान में उपलब्ध है। डॉ० स्नातक के शब्दों में "इस प्रति के आधार पर पाठ-भेदों का मिलान करने पर राधावल्लभीय 'व्यास वाणी' के प्रक्षिप्त पदों का निर्णय हो सकता है।—इस प्रति में वे समस्त पाठ विद्यमान हैं जिन्हें प्रक्षिप्त ठहराया गया है।"[११७] यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है (जैसा कि स्वयं स्नातक जी ने फुटनोट में लिखा है) कि कैलारस वाली 'व्यास वाणी' की प्रति

इस प्रकार प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के साक्ष्य से यह सिद्ध होता है कि हित हरिवंश जी व्यास जी के दीक्षा गुरु नही थे। राधावल्लभीय 'व्यास वाणी' में 'गुरु हरिवंश' पाठ देकर भ्रमोत्पादन किया गया है। व्यास जी को राधावल्लभ संप्रदाय का बताने की धारावाहिक प्रक्रिया के अन्तर्गत स्वाभीष्ट पाठातर किए जाते रहे है जो 'रसिक अनन्यमाल' की रचना के समय ही परिलक्षित होते हैं। इसे गो० ललिताचरण भी स्वीकार करते है कि रसिक अनन्यमाल की रचना के समय ही व्यास जी की शिष्यता का प्रश्न विवादास्पद बन चुका था।[१२३] भगवत मुदित के नाम से आरोपित 'रसिक अनन्यमाल' नामक ग्रंथ के आधार पर व्यास जी को हितहरिवंश जी का अनुयायी बताना तथ्यविहीन है क्योंकि 'रसिक अनन्यमाल' के विभिन्न प्रसंगो मे व्याप्त असंगतियों के कारण यह विश्वसनीय नही है। उदाहरणार्थ 'रसिक अनन्यमाल' मे प्रबोधानंद सरस्वती (चैतन्य महाप्रभु के पार्षद गोस्वामी) व स्वामी हरिदास को हितहरिवंश जी का अनुगत प्रदर्शित करना तथ्य से परे नितांत असगत है।[१२४] इसी प्रकार राधावल्लभीय उत्तमदास कृत 'रसिक परचई' (यह कृति 'रसिक अनन्यमाल' के साथ जुडी हुई मिलती है) मे भी स्वामी हरिदास को हित मतानुयायी बताया गया है। अतः 'रसिक अनन्यमाल' की अप्रामाणिकता सिद्ध होने के कारण[१२५] उसमे प्राप्त व्यास जी संबंधी प्रसंगों को साक्ष्य के रूप मे प्रस्तुत नही किया जा सकता।

व्यास जी ने अपने पदों मे जहां हरिवंश जी की वंदना करते हुए उनकी कृपा और पथ-प्रदर्शन को स्वीकार किया है उसी प्रकार की वंदनात्मक स्तुतियां अनेक संतों के प्रति व्यक्त की है। उन्होने रूप सनातन को साधुशिरोमणि और प्राणस्वरूप बताया है और नारद, शुकदेव, जयदेव, स्वामी हरिदास, माधवदास, कबीर, नामदेव, प्रबोधानंद और अपने पिता समोखन शुक्ल की भी वंदना की है।[१२६] वस्तुतः व्यास जी ने सब भक्तों के प्रति विनम्र भाव से श्रद्धा अर्पित की है, "संत सबै गुरुदेव है",[१२७] पर उनकी अटूट आस्था रही।

अनेक संतों के प्रति अभिव्यक्त इसी श्रद्धा के आधार पर परवर्ती आलोचकों ने भ्रमवश उन्हे व्यास जी के गुरु के रूप मे आरोपित कर दिया।

व्यास जी द्वारा रचित शृंगार रस विहार के पदों को हितहरिवंश जी के नित्य विहार के पदों के समीप देखकर डॉ० स्नातक एक ओर उन्हे हितहरिवंश द्वारा दीक्षित मानते है किंतु दूसरी ओर यह विचित्र संभावना भी व्यक्त करते हैं कि "हो सकता है पहले उन्होने पितृचरण से कोई धर्म-दीक्षा ग्रहण की हो किंतु वृंदावन आने पर वे शुद्ध राधावल्लभीय होकर ही उपासना करते रहे। अतः उन्हें हित-हरिवंश जी से पुनः दीक्षा-मंत्र लेना आवश्यक प्रतीत हुआ।"[१२८] व्यास जी जैसे उच्च कोटि के परम वैष्णव के संबंध मे पुनः दीक्षा मंत्र लेने की बात संगत प्रतीत नही होती। एक गुरु का परित्याग कर अन्य से मंत्र दीक्षा लेना शास्त्र-निषिद्ध है। व्यास वाणी के अंतःसाक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के आधार पर व्यास जी का जो महान चरित्र प्रकाशित होता है उससे भी यह प्रमाणित नही होता। नित्य विहार वर्णन

म व्यास जी जहां हितहरिवंश की साधना पद्धति से प्रभावित हुए हैं वहीं भागवत रूप-सनातन व प्रबोधानंद की भक्ति-पद्धति से भी प्रेरित हैं। रूप गोस्वामी व प्रबोधानंद सरस्वती ने अपनी रचनाओं में संप्रयोगमयी लीला [illegible] माना है।[130] चैतन्य संप्रदाय में भी सखी भावोपन्न नित्य विहार की मधुर लीलाओं का [illegible] वर्णन हुआ है। व्यास जी के काव्य में व्रज रस और निकुंज रस दोनों की मधुर अभिव्यंजना हुई है। यह चैतन्य संप्रदाय की रसोपासना [illegible] "वस्तुतः वृंदावन की सहज माधुरी और कुंज केलि का [illegible] भी हुआ है अपनी रुचि के अनुरूप स्वभावतः श्रद्धा सहित [illegible] किया है।

'व्यास वाणी' में ऐसे अनेक स्थल हैं जहां हितहरिवंश और हरिदास स्वामी को सखी-सहेली के रूप में चित्रित किया गया है। उदाहरणार्थ "[illegible] सहेली कब मिलि है, वे हरिवंसी-हरिदासी", "हरिवंसी फूलन हरिदासी, [illegible] सुरत हिंडोर", "हरिवंसी-हरिदासी बोली नहिं [illegible] समाज कोऊ [illegible]", "हरिवंसी हरिदासी सों मिलि कुंज केलि रस गाय सुनायौ" आदि।[131] [illegible] ध्यान देने योग्य बात है कि व्यास जी ने अधिकांशतः हरिवंश और हरिदास [illegible] का समान भाव से एक साथ स्मरण करते हुए उल्लेख किया है और वह भी सखी भावोचित मधुर उपासना के संदर्भ में। इससे यह स्पष्ट होता है कि हित जी और हरिदास जी दोनों से व्यास जी को अपनी साधना-पद्धति में सहायता मिली। इस संदर्भ में वासुदेव गोस्वामी का यह मत समीचीन प्रतीत होता है कि हितहरिवंश जी व स्वामी हरिदास व्यास जी के सद्गुरु थे।[132] डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने भी हरिवंश जी को व्यास जी का साधना गुरु माना है।[133] कुछ इतिहास लेखकों ने व्यास के संप्रदाय के संबंध में लिखा है कि ये पहले चैतन्य संप्रदाय में थे पीछे हितहरिवंश जी के अनुगत होकर उनके शिष्य हो गए।[134] व्यास जी ने एक गुरु में दृढ़ श्रद्धा-विश्वास न रखकर इधर-उधर अनगिनत गुरु करके सबकी जूठन खाने वाले को गणिका सुत के रूप में निंदनीय बताया है।[135] अतः व्यास जी का संप्रदाय-परिवर्तन करने की बात इनकी एकनिष्ठ गुरु-भक्ति भावना को देखते हुए प्रमाणित नहीं होती। उपर्युक्त मतों से यह अवश्य संकेतित होता है कि लगभग सभी विद्वानों ने (डॉ० स्नातक ने भी पितृ-चरण से धर्म-दीक्षा की बात कहकर) व्यास जी का सर्व-प्रथम संबंध चैतन्य संप्रदाय से स्वीकार किया है।

व्यास जी ने अपने एक पद में इस बात का उल्लेख किया है कि माधवदास जी की शरण में आने पर ही इन्हें प्रेम भक्ति का फल मिल गया था जिसे हरिवंश जी तथा हरिदास जी से मिलकर और पुष्ट किया।[136] सखी भाव की उपासना का रहस्य समझने में उन्हें अपने पिता समोखन शुक्ल से भी बहुत सहायता मिली थी। वे उनके शिक्षा गुरु थे।[137] व्यास जी ने मंगलाचरण के रूप में अपने पिता 'शुक्ल' की वंदना की है। उनके कुछ पदों में पिता के लिए 'गुरु सुकल' शब्द का प्रयोग हुआ है।[138] वासुदेव गोस्वामी ने व्यास जी के मंत्र गुरु उनके पिता समोखन शुक्ल को माना है।[139] मीतल जी ने व्यास जी को माधवदास की शिष्य परंपरा में मानने

हुए लिखा है दीक्षा गुरु संबंधी समस्त उपलब्ध सामग्री की आलोचनात्मक विवेचना करने से ज्ञात होता है कि व्यास जी के पिता समोखन शुक्ल ने चैतन्य महाप्रभु के गुरु भाई माधवदास नामक संन्यासी से माध्व संप्रदाय की दीक्षा प्राप्त की थी और व्यास जी ने अपने बाल्यकाल मे अपने पिता से उसी संप्रदाय की दीक्षा ली थी। इस प्रकार स्वयं व्यास जी माधवदास के शिष्य न होते हुए भी उनकी शिष्य-परंपरा में आते हैं।[140] उपर्युक्त सभी मतों व उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यास जी के दीक्षा गुरु चाहे माधवदास जी हों या उनके पिता समोखन शुक्ल, उनके संप्रदाय-निर्धारण में कोई अंतर नहीं आता, वे चैतन्य संप्रदाय के ही सिद्ध होते हैं। व्यास जी की वंश-परंपरा में चैतन्य संप्रदाय की भक्ति-पद्धति व आचरण-विधान अब भी मान्य है।

व्यास जी संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। युवावस्था के प्रारंभ मे ही उन्होंने अनेक प्रसिद्ध पंडितों को शास्त्रार्थ मे पराजित कर दिया था। किंतु भक्ति-भावना की प्रगाढता होने पर उन्होंने शास्त्रीय वाद-विवाद को तुच्छ माना। साधु-संतो द्वारा वृंदावन-रस की चर्चा सुनने पर उनके मन में वृंदावन-गमन की अभिलाषा तीव्र होती। व्यास जी के वृंदावन-आगमन के संबंध मे कुछ विद्वानो का मत है कि वे दो बार वृंदावन आये थे।[141] और कुछ विद्वान यह मानते हैं कि वे एक बार ही सब कुछ त्यागकर वृंदावन आने के पश्चात् फिर कभी वापस नहीं गये।[142] सं० १६१२ में ४५ वर्ष की अवस्था में व्यास जी स्थायीरूप से वृंदावन-वास के लिए आ गये थे।[143] यदि व्यास जी का दो बार वृंदावन-आगमन माना जाये तो सं० १६१२ से पूर्व प्रथम बार वे रूप, सनातन, प्रबोधानंद के निकट संपर्क मे अवश्य आए होंगे, जो उनकी वाणी के साक्ष्य से संकेतित होता है। वि० सं० १६११ मे रूप सनातन का तिरोधान हो गया था।[144]

वृंदावन मे व्यास जी ने अपने आराध्य देव युगलकिशोर जी का मंदिर बनवाया था। सं० १६२० मे आपने युगलकिशोर जी की मूर्ति प्रतिष्ठित की।[145] यवन-उत्पीड़न काल मे यह पन्ना राज्य मे ले जाई गई, तब से वहीं विद्यमान है। किशोर-किशोरी कृष्ण-राधा की उपासना उनका प्रमुख लक्ष्य था। व्यास जी विशाखा सखी के अवतार माने जाते हैं, रास के वे अनन्य भक्त थे। नाभा जी ने उनकी इस विशेषता का प्रमुखरूप से उल्लेख किया है। व्यास जी की भक्ति भावना व निष्ठा अपूर्व थी। किशोर-किशोरी की रास-विलास लीला के प्रतीक स्वरूप उन्होंने अपने पुत्रों के नाम रासदास, विलासदास व किशोरदास रखे।

व्यास जी का चरित्र सच्चे भक्त के रूप में उदात्त गुणों से समन्वित था। भक्तो के प्रति उनकी अपार श्रद्धा को लक्षित कर नाभा जी ने व्यास जी के इष्ट रूप में भक्तों को माना है। व्यास वाणी के अनेक पदों मे भक्तों की महिमा का गान किया गया है। प्रियादास जी ने व्यास द्वारा साधु-संतों के सत्कार का उल्लेख करते हुए उनकी भक्ति-निष्ठा संबंधी कई घटनाओं का वर्णन किया है। व्यास जी की भगवद्-प्रसाद में इतनी अधिक निष्ठा थी कि कहते हैं, एक बार भगिन की

डलिया में से प्रसाद की एक पकौड़ी उठाकर उन्होंने खा ली थी।[१४३] कबीर के समान उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में समस्त भेदभावों और पाखंडों का विरोध किया। व्यास जी का जीवन इतना महान था कि उनके जीवन काल में ही उनसे संबंधित अनेक चमत्कारपूर्ण कथाएं प्रचलित हो गयी थीं। व्यास जी का निकुंज गमन सं० १६६९ में माना जाता है।[१४४]

रचनाएं : व्यास जी कृत ३ रचनाएं विख्यात हैं-- (१) स्वधर्म पद्धति या नवरत्न---संस्कृत में रचित इस कृति का प्रकाशन बाबा कृष्णदास जी (कुसुम सरोवर) द्वारा किया जा चुका है। (२) रागमाला--हिंदी में रचित यह अप्रकाशित कृति संगीत शास्त्र से संबधित है जिसमें कुल ६०४ दोहों में विभिन्न राग रागनियों का वर्णन किया गया है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति स्टेट लाइब्रेरी टीकमगढ़ में सुरक्षित है। इसका लिपिकाल वि० सं० १८५५ है।[१४५] (३) व्यास वाणी---व्यास कृत अनेक पद विभिन्न पद-संग्रहों में उपलब्ध होते हैं। उनके पदों के ३ सकलन विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रकाशित हुए हैं---१. व्यास वंशीय राधा किशोर गोस्वामी द्वारा प्रकाशित व्यास वाणी, २. श्री हित राधावल्लभीय वैष्णव महासभा द्वारा प्रकाशित 'व्यास वाणी', ३. वासुदेव गोस्वामी द्वारा रचित ग्रंथ 'भक्त कवि व्यास जी' के अंतर्गत प्रकाशित 'व्यास वाणी'। 'भक्त कवि व्यास जी' नामक इस ग्रंथ के प्रथम खंड में वासुदेव गोस्वामी ने प्राचीन एवं प्रामाणिक सामग्री से अनुसंधान व परीक्षण द्वारा व्यास जी के जीवन वृत्तांत व उनके काव्य की समीक्षा की है। उन्होंने विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों में से व्यास जी के पदों का संकलन किया। ग्रंथ के द्वितीय खंड---'वाणी सकलन' में श्री प्रभुदयाल मीतल ने व्यास जी के पदों के दो मुद्रित संकलनों व ४ हस्तलिखित प्रतियों व अन्य कीर्तन संग्रहों के आधार पर व्यास वाणी का सुसंपादन किया है। इस व्यास वाणी में कुल ७५७ पद संकलित हैं। इनके अतिरिक्त 'रास पंचाध्यायी' के ३० पद व साखी के १४८ दोहे भी हैं।

व्यास जी की रचनाओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-- १. सिद्धांत व शृंगार रस विषयक पद, २. लौकिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष से संबधित पद व साखियां। प्रथम प्रकार की रचनाओं में व्यास जी के माधुर्यभावपरक भक्ति-उपासना विधान एवं लीला संबंधी पद आते हैं। इनमें भक्ति के साधन अंग, भक्ति-महिमा, गुरु, साधु व प्रसाद का माहात्म्य, भक्तों की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया गया है। लीला के पदों में प्रमुख रूप से राधा-कृष्ण की शृंगार रस प्रधान नित्य विहार की लीलाओं का सांगोपांग सरस चित्रण हुआ है। नित्य विहार के विधायक तत्वों---राधा-कृष्ण, वृंदावन और सहचरी का सुंदर निरूपण हुआ है। ब्रज रस व निकुंज रस दोनों की अभिव्यक्ति में व्यास जी सिद्धहस्त हैं। दूसरी प्रकार की रचनाओं में व्यास कृत वे साखियां व पद लिए जा सकते हैं जिनमें जीवन के व्यवहार पक्ष से संबंधित नीति और उपदेशपरक विचारों की अभिव्यक्ति हुई है। इनमें व्यास जी का 'समाज सुधारक उपदेष्टा का ओजस्वी स्वर' बड़ी

प्रखरता से गूजा है कबीर के समान उ होने सामाजिक व धार्मिक भेदभाव दम्भ ढोंग, आडबर, कृत्रिम व मिथ्या आचरण का कठोर शब्दों में विरोध किया है। उपदेशात्मक साखियों मे जहां व्यास जी ने आराधना पद्धति, संत-प्रशंसा, हरिजन-महिमा, प्रसादोत्कृष्टता, नाम-गुणगान, भक्ति उपदेश व साधना पर अपने विचार व्यक्त किये है वही कुसंग त्याग, कपट से घृणा, अभिमान व सांसारिक भ्रमजाल से दूर रहने की जीवनोपयोगी बातों की शिक्षा दी है।

चद्रगोपाल

'भक्तमाल' आदि भक्त-नामावलियो एवं हिंदी-साहित्य के इतिहासों मे चंद्रगोपाल जी के जीवन से संबधित कुछ भी ज्ञात नही होता। यमुनावल्लभ जी गोस्वामी, वृ दावन की सामग्री के आधार पर ही इनका परिचय प्राप्त होता है।

चंद्रगोपाल जी को जयदेव महाप्रभु की वंश-परपरा मे माना जाता है। ये गो० गौर गोपाल जी के छोटे पुत्र एवं रामराय जी के छोटे भाई थे। इनका जन्म सवत् १५७३ चैत्र शुक्ला नवमी को लाहौर में हुआ था तथा देहावसान सं० १६२२ माघ शुक्ला ११ को हुआ।[१४६] वृंदावन आने के पश्चात् रामराय जी की प्रेरणा से ये चैतन्य मतानुयायी हो गये।[१५०] इन्हें चित्रा सहचरी-स्वरूप माना गया है।[१५१] इनके पश्चात् सभी वंशज वृंदावन में स्थायी रूप से निवास करते हुए इसी मत के अनुयायी रहे। इनके पुत्र श्री राधिकानाथ जी तथा इनके वंशजों मे अनेक जभाषा के कवि हुए हैं।

रचनाए : चद्रगोपाल जी ने सस्कृत एवं ब्रजभाषा दोनों मे सशक्त एवं श्रेष्ठ रचनाएं की है। चैतन्य प्रवर्तित राग मार्ग मे इनकी गहन निष्ठा थी अतः इनकी रचनाओं में भी माधुर्य भाव-अनुभूति अत्यंत गहन एवं रस व्यंजना प्रबल रूप से हुई है। इनके द्वारा प्रणीत ब्रजभाषा काव्य-रचनाएं ये है— १. चद्र चौरासी, २ अष्टयाम सेवा सुधा, ३. गौरांग अष्टयाम, ४. राधामाधव ऋतु विहार और ५ श्री राधा विरह शतक। ये सभी अप्रकाशित रचनाएं यमुनावल्लभ जी गोस्वामी (वृ दावन) के पास है। ये अत्यंत सरस, भावपूर्ण, परिमार्जित तथा कोमल-कात पदावली से युक्त है।

(१) **चंद्र चौरासी :** इस अप्रकाशित रचना मे सिद्धांत, उत्सव और नित्य सेवा सबधी कुल ८४ पद है, इसीलिए इसका नामकरण 'चंद्र चौरासी' रखा गया है। इसमे 'सुधा' नाम से तीन भाग है। प्रथम भाग मे चैतन्य संप्रदाय के सिद्धांतों का सक्षिप्त वर्णन है, द्वितीय में राधा-माधव की सेवा-भावना का तथा तृतीय मे विभिन्न उत्सव-कार्यो का अत्यंत भावपूर्ण एवं सरस वर्णन है। काव्य एवं भक्ति की दृष्टि से यह रचना श्रेष्ठ है। इसमें बीच-बीच में दोहे भी दिये गये हैं। इसकी सुदर अक्षरों में लिखित एक हस्त प्रति यमुनावल्लभ जी गोस्वामी के पास विद्यमान है।

(२) **अष्टयाम सेवा-सुधा** · इसमे उपास्य—श्री राधा-माधव की अष्टकालीन

डलिया मे से प्रसाद की एक पकौड़ी उठाकर उन्होंने खा ली थी।[183] कबीर के समान उन्होंने भक्ति के क्षेत्र मे समस्त भेदभावो और पाखंडों का विरोध किया। व्यास जी का जीवन इतना महान था कि उनके जीवन काल मे ही उनसे संबधित अनेक चमत्कारपूर्ण कथाएं प्रचलित हो गयी थी। व्यास जी का निकुंज गमन सं० १६६६ मे माना जाता है।[184]

रचनाएं : व्यास जी कृत ३ रचनाएं विख्यात है—(१) स्वधर्म पद्धति या नवरत्न—संस्कृत मे रचित इस कृति का प्रकाशन बाबा कृष्णदास जी (कुसुम सरोवर) द्वारा किया जा चुका है। (२) रागमाला—हिंदी में रचित यह अप्रकाशित कृति संगीत शास्त्र से संबधित है जिसमे कुल ६०४ दोहों मे विभिन्न राग-रागनियों का वर्णन किया गया है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति स्टेट लाइब्रेरी टीकमगढ़ मे सुरक्षित है। इसका लिपिकाल वि० सं० १८५५ है।[185] (३) व्यास वाणी—व्यास कृत अनेक पद विभिन्न पद-संग्रहों में उपलब्ध होते है। इनके पदो के ३ संकलन विभिन्न विद्वानो द्वारा प्रकाशित हुए हैं—१. व्यास वंशीय राधा किशोर गोस्वामी द्वारा प्रकाशित व्यास वाणी, २. श्री हित राधावल्लभीय वैष्णव महासभा द्वारा प्रकाशित 'व्यास वाणी', ३. वासुदेव गोस्वामी द्वारा रचित ग्रंथ 'भक्त कवि व्यास जी' के अंतर्गत प्रकाशित 'व्यास वाणी'। 'भक्त कवि व्यास जी' नामक इस ग्रंथ के प्रथम खंड मे वासुदेव गोस्वामी ने प्राचीन एवं प्रामाणिक सामग्री के अनुसंधान व परीक्षण द्वारा व्यास जी के जीवन वृत्तांत व उनके काव्य की समीक्षा की है। उन्होंने विभिन्न हस्तलिखित प्रतियो मे से व्यास जी के पदो का संकलन किया। ग्रंथ के द्वितीय खंड—'वाणी संकलन' मे श्री प्रभुदयाल मीतल ने व्यास जी के पदो के दो मुद्रित संकलनों व ४ हस्तलिखित प्रतियों व अन्य कीर्तन संग्रहों के आधार पर व्यास वाणी का सुसंपादन किया है। इस व्यास वाणी मे कुल ७५७ पद संकलित है। इनके अतिरिक्त 'रास पंचाध्यायी' के ३० पद व साखी के १४८ दोहे भी हैं।

व्यास जी की रचनाओं को दो भागों मे विभाजित किया जा सकता है-१. सिद्धांत व शृंगार रस विषयक पद, २. लौकिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष से संबंधित पद व साखिया। प्रथम प्रकार की रचनाओं मे व्यास जी के माधुर्यभावपरक भक्ति-उपासना विधान एवं लीला संबंधी पद आते हैं। इनमें भक्ति के साधन अंग, भक्ति-महिमा, गुरु, साधु व प्रसाद का माहात्म्य, भक्तों की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया गया है। लीला के पदों में प्रमुख रूप से राधा-कृष्ण की शृंगार रस प्रधान नित्य विहार की लीलाओं का सांगोपांग सरस चित्रण हुआ है। नित्य विहार के विधायक तत्वों—राधा-कृष्ण, वृंदावन और सहचरी का सुंदर निरूपण हुआ है। ब्रज रस व निकुंज रस दोनों की अभिव्यक्ति में व्यास जी सिद्धहस्त है। दूसरी प्रकार की रचनाओं में व्यास कृत वे साखियां व पद लिए जा सकते हैं जिनमे जीवन के व्यवहार पक्ष से संबधित नीति और उपदेशपरक विचारों की अभिव्यक्ति हुई है। इनमे व्यास जी का 'समाज सुधारक उपदेष्टा का ओजस्वी स्वर' भी

प्रखरता से गूंजा है। कबीर के समान उन्होंने सामाजिक व धार्मिक भेदभाव दम्भ ढोंग आडम्बर कृत्रिम व मिथ्या आचरण का कठोर शब्दों मे विरोध किया है उपदेशात्मक साखियों म जहां व्यास जी ने आराधना पद्धति सत प्रशंसा, हरिजन महिमा प्रसादो कृष्टता, नाम-गुणगान, भक्ति उपदेश व साधना पर अपने विचार व्यक्त किये है वहीं कुसंग त्याग, कपट से घृणा, अभिमान व सांसारिक भ्रमजाल से दूर रहने की जीवनोपयोगी बातों की शिक्षा दी है।

चंद्रगोपाल

'भक्तमाल' आदि भक्त-नामावलियों एवं हिंदी-साहित्य के इतिहासों में चंद्रगोपाल जी के जीवन से संबंधित कुछ भी ज्ञात नहीं होता। यमुनावल्लभ जी गोस्वामी, वृंदावन की सामग्री के आधार पर ही इनका परिचय प्राप्त होता है।

चंद्रगोपाल जी को जयदेव महाप्रभु की वंश-परंपरा मे माना जाता है। ये गो० गौर गोपाल जी के छोटे पुत्र एवं रामराय जी के छोटे भाई थे। इनका जन्म सवत् १५७३ चैत्र शुक्ला नवमी को लाहौर में हुआ था तथा देहावसान सं० १६२२ माघ शुक्ला ११ को हुआ।[१४९] वृंदावन आने के पश्चात् रामराय जी की प्रेरणा से ये चैतन्य मतानुयायी हो गये।[१५०] इन्हे चित्रा सहचरी-स्वरूप माना गया है।[१५१] इनके पश्चात् सभी वंशज वृंदावन में स्थायी रूप से निवास करते हुए इसी मत के अनुयायी रहे। इनके पुत्र श्री राधिकानाथ जी तथा इनके वंशजो में अनेक ब्रजभाषा के कवि हुए हैं।

रचनाएं : चंद्रगोपाल जी ने संस्कृत एवं ब्रजभाषा दोनों में सशक्त एवं श्रेष्ठ रचनाएं की है। चैतन्य प्रवर्तित राग मार्ग मे इनकी गहन निष्ठा थी अतः इनकी रचनाओं मे भी माधुर्य भाव-अनुभूति अत्यंत गहन एवं रस व्यंजना प्रबल रूप से हुई है। इनके द्वारा प्रणीत ब्रजभाषा काव्य-रचनाएं ये हैं— १. चंद्र चौरासी, २. अष्टयाम सेवा सुधा, ३. गौरांग अष्टयाम, ४. राधामाधव ऋतु विहार और ५. श्री राधा विरह शतक। ये सभी अप्रकाशित रचनाएं यमुनावल्लभ जी गोस्वामी (वृंदावन) के पास हैं। ये अत्यंत सरस, भावपूर्ण, परिमार्जित तथा कोमल-कांत पदावली से युक्त हैं।

(१) **चंद्र चौरासी :** इस अप्रकाशित रचना में सिद्धांत, उत्सव और नित्य सेवा संबंधी कुल ८४ पद हैं, इसीलिए इसका नामकरण 'चंद्र चौरासी' रखा गया है। इसमें 'सुधा' नाम से तीन भाग हैं। प्रथम भाग में चैतन्य सम्प्रदाय के सिद्धांतो का संक्षिप्त वर्णन है, द्वितीय मे राधा-माधव की सेवा-भावना का तथा तृतीय में विभिन्न उत्सव-कार्यो का अत्यंत भावपूर्ण एवं सरस वर्णन है। काव्य एवं भक्ति की दृष्टि से यह रचना श्रेष्ठ है। इसमें बीच-बीच मे दोहे भी दिये गये हैं। इसकी सुंदर अक्षरों में लिखित एक हस्त प्रति यमुनावल्लभ जी गोस्वामी के पास विद्यमान है।

(२) **अष्टयाम सेवा-सुधा :** इसमें उपास्य—श्री राधा-माधव की अष्टकालीन

सेवा-लीला का सरस निरूपण किया गया है। इसकी पदों की संख्या ३४ है। इसकी हस्तलिखित दो प्रतियाँ वृन्दावन शोध संस्थान में विद्यमान हैं।[illegible]

(३) **गौरांग अष्टयाम** : इसमें श्री चैतन्य महाप्रभु की अष्टयाम सेवा का वर्णन किया गया है। चैतन्य महाप्रभु राधा-कृष्ण के मिलित अवतार माने जाते हैं। इस दृष्टि से चैतन्य-लीला संबंधी यह रचना सम्प्रदाय में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। इसमें माधुर्य भाव की सरस अभिव्यंजना है।

(४) **राधा माधव ऋतु विहार** : इसमें बसन्त आदि षड् ऋतुओं में राधा-माधव के विहार-माधुर्य का सरस कथन किया गया है। निकुंजों का वर्णन भी सरस किया गया है। इस रचना में कुल ११ छप्पय और एक दोहा है।

(५) **श्री राधा विरह** : इस काव्य-रचना में राधिका के विरह का वर्णन किया गया है। इसमें कुल एक सौ अरिल्ल छंद हैं। यह सरल शैली में रचित रचना है। इस रचना के संबंध में यमुनावल्लभ जी गोस्वामी से पता चला है कि यह उनके पास उपलब्ध नहीं है।

भगवान दास

रामराय जी के द्वादश शिष्यों में भगवान दास प्रमुख भक्त कवि हुए हैं। ये आमेर के राजा थे जिन्होंने गोवर्धन में श्री हरिदेव जी का मंदिर बनवाया था।[illegible] ये अकबर के अनुगत राजा भारमल के पुत्र, राजा मानसिंह के पिता तथा जगन्नाथ के अग्रज बताये जाते हैं। कहा जाता है कि अकबर के शासन काल में ये लाहौर के सूबेदार भी थे और इनकी बहिन का नाम सूर्ज कुंवरि था।[illegible] नाभादास द्वारा गिनाये गये भगवद्भक्त राजवंशी राजाओं के उल्लेख में भगवानदास का नाम भी आता है।[illegible] प्रियादास जी ने उनके द्वारा हरिदेव जी का मंदिर बनवाने की बात लिखी है।[illegible] इस बात को अनेक ऐतिहासिक तथ्यों व अन्य प्रमाणों से पुष्ट करते हुए [illegible] का मत है कि "वस्तुतः राजा भगवानदास ने गोवर्धन में हरिदेव जी का मंदिर अवश्य बनवाया था। जयपुर के इस राजवंश (आमेर) में, जैसलमेर के भाटियों में और राठौर वंश में उच्चकोटि के कई संत हुए हैं। राजा मानसिंह, जो कि श्री रघुनाथ भट्ट गोस्वामी का शिष्य माना जाता है, उसने [illegible] सन् १५९० में लाल पत्थर का वृहद् मंदिर बनवाया था जो गोविंद देव के मंदिर नाम से प्रख्यात है। इस मंदिर की प्रशस्ति में राजा भारमल्ल के पुत्र भगवद्दास (भगवान दास) का राजा मानसिंह के पिता के रूप में उल्लेख हुआ है। यह मत सर्वथा इतिहाससम्मत भी है। ये राजा भगवानदास यही (भक्त कवि) जान पड़ते हैं।"[illegible] इनका काल सं० १५९० से १६६० तक अनुमानित किया गया है।[illegible]

वल्लभ संप्रदायी वार्ता साहित्य में भगवानदास को गौड़ीय सम्प्रदायी और गोविंद देव जी का सेवक बताया है जो बाद में रामदास जी की प्रेरणा से वल्लभ संप्रदायी हो गये थे। वार्ता के अनुसार रामदास भगवानदास के गुरु व ठाकुर पुरोहित थे। गो० विट्ठलनाथ से उन्होंने दीक्षा ली थी।[illegible] यह कथन मान्य नहीं

है। रामराय कभी बल्लभ सम्प्रदायी नहीं रहे [१५९] ये भगवानदास के गुरु ही थे भगवानदास के पदों में प्रायः भगवान हित रामराय रहने से इनकी रामराय के प्रति गहन गुरु निष्ठा प्रकट होती है बल्लभ सम्प्रदायी कवि अपनी रचनाओं में अपने नाम के साथ अपने इष्टदेव या गुरु के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति का नाम नहीं लगाते। यदि भगवानदास गो० विट्ठल के द्वारा दीक्षित होते तो रामराय जी के स्थान पर गो० विट्ठल का नाम अपनी रचनाओं में रखते। अतः भगवानदास सदैव चैतन्य मतानुयायी ही रहे थे।

रचनाएं: प्राचीन कीर्तन पोथियों में 'भगवान हित रामराय' की छाप से उपलब्ध पद इन्हीं भगवानदास द्वारा रचित हैं। सखी भगवान, भगवानदास की छाप के पद भी इन्हीं भक्त कवि के हैं। स्फुट पदों के अतिरिक्त इन्होंने एक ब्रजभाषा काव्य-ग्रंथ 'प्रेम पदारथ' की रचना भी की है।

१. **स्फुट पद**: भगवानदास ब्रजभाषा के उत्कृष्ट पद-कर्ता थे। इन्होंने अपने अधिकांश पद रामराय जी को श्रद्धांजलि स्वरूप अर्पित कर रखे हैं। रामराय कृत 'आदि वाणी' व 'गीत गोविंद भाषा', तथा अन्य ग्रंथों—'वार्ता', 'पद प्रसंग माला', 'क्षणदा गीति चिंतामणि', 'राग कल्पद्रुम' व कीर्तन-संग्रहों में इनके पद उपलब्ध होते हैं। भगवानदास द्वारा रचित १४८ पदों की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति हमने दिगंबर जैन मंदिर (ठोलिया का रास्ता) जयपुर में देखी है। सं० १८०३ में लिपिबद्ध [१६०] इस प्रति में कुल ६५ पत्र हैं। इसमें अधिकांश पदों में 'भगवान हित रामराय' की नाम छाप प्रयुक्त हुई है। कुछ में 'भगवान सखी' व 'भगवान' की छाप है। कवि के सभी पदों में माधुर्य भाव की अभिव्यंजना है। ये भाव तथा भाषा दोनों दृष्टियों से श्रेष्ठ हैं।

२. **प्रेम पदारथ**: यह रचना आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी में विद्यमान है।[१६१] इसका विषय कृष्ण भक्ति की महिमा, फल तथा लक्षणों का निरूपण है। इसमें कवि भगवानदास व रामराय के नाम का उल्लेख हुआ है।[१६२]

भगवानदास कृत उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त खोज रिपोर्ट में इनकी दो अन्य रचनाएं 'रुक्मिणी मंगल' व 'प्रह्लाद चरित्र' भी बताई गयी हैं जिनमें भी भगवानदास ने अपने नाम के साथ रामराय के नाम का उल्लेख किया है।[१६३]

राधिकानाथ

रामराय जी के शिष्यों में भगवानदास के पश्चात् राधिकानाथ प्रमुख भक्त कवि हुए हैं। ये चंद्रगोपाल जी के पुत्र और रामराय जी के भतीजे थे। यमुनावल्लभ जी के मतानुसार इनका जन्म संवत् १५७० है, परन्तु मीतल जी एवं डॉ० सत्येंद्र ने सं० १६०० के लगभग अनुमानित किया है,[१६४] जो चंद्रगोपाल जी के जन्म समय (सं० १५७७) के अनुसार ठीक जान पड़ता है। बाल्यावस्था से ही रामराय जी के संपर्क में रहने के कारण ये परम विद्वान, उत्तम भक्त एवं प्रसिद्ध कवि हुए। इनकी

अन्य रचनाओं मे इनके 'राधाप्रिया', 'श्यामा' और 'माखन' उपनाम मिलते हैं।

रचनाएं : राधिकानाथ जी ने ब्रजभाषा मे सुदर एव भावपूर्ण पदो की रचना की है। इनके द्वारा रचित काव्य-रचनाए है—१. महावाणी, २. प्रेम संपुट ३ राधा रस सुधानिधि, और ४. रस बिंदु।

(१) **महावाणी :** इसकी रचना 'राधा प्रिया' उपनाम से हुई हे। इसमे ब्रज-महिमा से संबंधित भावपूर्ण पद संकलित है। ऐसा अनुमानित किया जाता है कि इस रचना का 'महावाणी' नाम स्वय कवि-प्रदत्त नही है, अपितु बाद मे रामराय जी और उनके परिकर की रचनाओं के संकलन-संपादन के आयोजन मे रामराय जी के पदो को 'आदिवाणी' और राधिकानाथ के पद-संग्रह को 'महावाणी' नाम दिया गया। इस रचना की ह० प्रति यमुनाबल्लभ जी के पास है जिसका प्रकाशन उन्होंने (सं० २०२३ मे) करा दिया है। इसमें बिलास नाम से कई परिच्छेद है। आरभ मे संस्कृत के ३ श्लोकों के पश्चात् मंगलाचरण और परिचय के ६ दोहे है। इस रचना के विषय वृंदावन, यमुना व गोवर्धन की महिमा तथा योग पीठ है। एक दोहे और एक पद के क्रम से रचना की गयी है।

(२) **प्रेम संपुट :** इस पुस्तिका मे पदावली के साथ वार्ता भी है। इसका वर्ण्य-विषय श्रीकृष्ण का सखी रूप में राधिका के निवास-स्थल पर जाना एव मधुर भाव सपन्न वार्तालाप है।

(३) **राधा-रस सुधा-निधि :** इसकी रचना 'स्यामा' नाम छाप से हुई है। राधा के रूप-सौदर्य एवं मधुर प्रेम-रस की व्यंजना इस कृति मे हुई है। इसमें सवैया छद का प्रयोग किया गया है।

(४) **रस बिंदु :** 'माखन' छाप से इसकी रचना की गयी है। सखियो द्वारा प्रिया राधिका के श्रृंगार तथा रस निधि प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण के मधुर प्रेम का निरूपण इसमें किया गया है।

कृष्णदास

कृष्णदास प्रसिद्ध गौड़ीय विद्वान-आचार्य श्री जीव गोस्वामी के शिष्य थे। जीव गोस्वामी का उपस्थिति काल वि० सं० १५६८ से १६७१ के लगभग माना जाता है।[१६५] इसके अनुसार कृष्णदास का समय सं० १६२० से १६९० तक अनु-मानित किया जा सकता है। कृष्णदास कृत 'गौरनाम रस चम्पू' तथा 'लघु गोपाल चम्पू भाषा'[१६६] नामक रचनाओ के अंत मे दिये गये लिपि काल क्रमशः वि० सं० १७४२ व १७४७ से अनुमान होता है कि इनका रचना-काल स १६९० के पूर्व होगा।

कृष्णदास के जीवन वृत्तान्त के संबंध मे अधिक ज्ञात नही है। 'गौरनाम रसचम्पू' के आरंभ में कवि द्वारा दिए गये संक्षिप्त परिचय मे केवल इतना ही मालूम होता है कि ये जीव गोस्वामी के सेवक थे एवं ब्रजवास करते थे।[१६७] इनकी रचनाओ मे बंगला प्रभाव के परिलक्षन से संभव है ये बंगाली भक्त हों और बंगाल से आकर

ब्रजवास करने लगे हो। कृष्णदास न अपनी रचनाओं के प्रारम मे श्रीकृष्ण चतन्य देव, गुरु जीव गोस्वामी एव सनातन, रूप आदि गोस्वामियो की वंदना की है।[१६८]

रचनाएं : इनकी रचनाओ में कृष्णदास तथा कृष्ण कवि दोनो ही नाम-छाप मिलती है। इनकी ब्रजभाषा-रचना के रूप मे 'श्री गौरनाम रस चम्पू' और 'लघु गोपाल चम्पू भाषा' नामक दो काव्य-कृतियां उपलब्ध होती है, जिन्हे बाबा कृष्णदास ने एक ही पुस्तिका मे प्रकाशित किया है।

(१) **गौर नाम रस चम्पू :** इस कृति मे १६ अक है। इसकी हस्त० प्रति मे सुदर अक्षरो मे लिखित ५२ खुले पत्र है। यह वृंदावन मे यमुना तट पर सं०१७४२ की कार्तिक शु० १५ शनिवार को लिपिबद्ध हुई है। बाबा कृष्णदास के संग्रह की यह प्रति अब कृष्ण-जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा मे सुरक्षित है। इस रचना की ह० प्रतिया श्रीराधा दामोदर जी के मदिर, वृ दावन व बडौदा विश्वविद्यालय के पुस्तकालय मे भी होने का उल्लेख हुआ है।[१६९] उक्त रचना से कवि की गौर, ब्रज व राधा में दृढ निष्ठा ज्ञात होती है। मंगलाचरण में कवि ने गौरांग महाप्रभु एव जीव, रूप, सनातन आदि गोस्वामियों की वंदना की है। इन्होंने संकीर्तन करते हुए गौराग महाप्रभु की परम भाव विह्वल दशा का सुंदर चित्रण किया है। गौराग व कृष्ण-राधा के रूप-सौंदर्य व मधुर लीलाओं के सरस निरूपण के साथ ही भक्ति, गुरु व वृंदावन की महिमा पर भी प्रकाश डाला गया है।[१७०] इसमे सतों की रचनाओं के समान खडी बोली का प्रयोग भी हुआ है।

(२) **लघु गोपाल चम्पू भाषा :** यह जीव गोस्वामी कृत 'गोपाल चम्पू' नामक प्रसिद्ध ग्रंथ का अत्यंत संक्षिप्त ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। 'गोपाल चम्पू' जैसे पांडित्य पूर्ण संस्कृत-ग्रथ का पद्यबद्ध अनुवाद कवि की विद्वत्ता का सूचक है। इस रचना की हस्त० प्रति जगन्नाथ भट्ट द्वारा सं० १७४७ की वैशाख कृ० ५ को लिपिबद्ध की हुई उपलब्ध हुई है। बाबा कृष्णदास के संग्रह की यह प्रति अब कृष्ण-जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय मे है। १३ पत्रो में लिखित इस रचना मे कुल ७६ छंद हैं। इसी संग्रहालय में सं० १८७७ मे लिपिबद्ध इसकी दूसरी प्रति भी विद्यमान है।

भगवंत मुदित

भगवत मुदित श्री माधव मुदित के पुत्र व पंडित हरिदास जी के शिष्य थे। प० हरिदास वृ दावन के ठाकुर श्री गोविंद देव जी के सेवाधिकारी थे। भगवत मुदित ने अपनी ब्रजभाषा काव्य-रचना 'वृंदावन सत' के मंगलाचरण मे सर्वप्रथम चैतन्य महाप्रभु की वंदना की है।[१७१] इसके उपरांत इष्टदेव श्री गोविंद, वृंदावन, ललिता सखी, गुरु हरिदास, पिता माधोमुदित की बदना के पश्चात रूप, सनातन गोस्वामी, प्रबोधानद सरस्वती, स्वामी हरिदास व हित-हरिवंश के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है। कवि ने यह बताया है कि चैतन्य देव के श्री मुख से उच्चारित व बहु प्रचारित कृष्ण नाम की महिमा अपार है। इन्होंने अपने पिता, गुरु व इष्टदेव गोविंद

की कृपा का भक्ति भाव से कथन किया है।[172] इस प्रकार भगवंत मुदित की रचना मे प्राप्त इन उल्लेखो से यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित होता है कि ये चैतन्य मतानुयायी भक्त कवि थे।

भगवंत मुदित के विषय मे नाभा जी ने 'भक्तमाल'[173] के एक छप्पय मे और प्रियादास जी ने 'भक्ति रसबोधिनी टीका'[174] के ४ कवित्तों व 'भक्त सुमिरनी'[175] के एक छंद मे लिखा है। नाभा जी व प्रियादास जी ने इन्हे माधव मुदित का पुत्र बताया है। प्रियादास के अनुसार भगवत मुदित आगरा के सूबेदार शुजाउलमुल्क के दीवान थे। ये ब्रजवासी भक्तों, संतों व साधुओं की धनादि से सेवा करने वाले उदार भक्त थे और गुरु के प्रति अपार श्रद्धा व भक्ति का भाव रखते थे।

कुछ विद्वानों ने भ्रमवश भगवंत मुदित को अन्य संप्रदायो का अनुयायी माना है। किसी ने राधाबल्लभ संप्रदाय[176] का और किसी ने टट्टी संप्रदाय[177] का बताया है। यह भ्रम प्रमुखत: इनके गुरु हरिदास तथा 'रसिक अनन्यमाल' नामक ग्रंथ के कारण हुआ है। विद्वानो ने इनके गुरु स्वामी हरिदास को मान लिया है जबकि वस्तुत: भगवंत मुदित के गुरु स्वामी हरिदास से भिन्न चैतन्य संप्रदाय के प्रसिद्ध आचार्य पं० हरिदास अधिकारी थे जो श्री गोविंद देव जी के सेवाधिकारी थे।[178] 'रसिक अनन्यमाल' नाम ग्रंथ भगवंत मुदित कृत माने जाने के कारण भी भ्रमोत्पादन हुआ है। प्रस्तुत ग्रंथ मे हित हरिवंश जी के पुत्रो, प्रपौत्रो व शिष्यो का विवरण मिलता है अत: इस कारण भगवत मुदित को राधाबल्लभी मान लिया गया है। वस्तुत: 'रसिक अनन्यमाल' एक सर्वथा अप्रामाणिक कृति है। भगवंत मुदित के नाम से आरोपित की गयी यह एक ऐसी जाली रचना है जिसका मुख्य उद्देश्य चैतन्य संप्रदाय के प्रबोधानंद सरस्वती, हरिराम व्यास तथा उनकी रचनाओ को राधाबल्लभी बताना है। 'रसिक अनन्यमाल' के विविध प्रसगो मे व्याप्त असंगतियों के कारण यह विश्वसनीय नही है। उदाहरणार्थ इसमे प्रबोधानंद सरस्वती (चैतन्य महाप्रभु के पार्षद गोस्वामी) व स्वामी हरिदास को हितहरिवंश जी का अनुयायी प्रदर्शित करना तथ्य से परे नितांत असंगत है। विगत पृष्ठों में हरिराम व्यास के सबंध मे बताते हुए हम 'रसिक अनन्यमाल' की अप्रामाणिकता पर प्रकाश डाल आये हैं।[179]

भगवंत मुदित के अस्तित्व-काल का अनुमान उनके रचनाकाल के आधार पर किया जा सकता है। भगवंत मुदित कृत 'वृंदावन-सत' का रचनाकाल सं० १७०७ है।[180] प्रियादास ने कवि के संबंध मे उल्लेख किया है। प्रियादास का रचनाकाल सं० १७६९ है[181] अत: भगवंत मुदित का समय स० १६३५ से सं० १७१० तक के लगभग माना जा सकता है।

रचनाएं—(१) वृंदावन सत : यह रचना चैतन्य संप्रदाय के सुप्रसिद्ध संस्कृत कवि प्रबोधानंद सरस्वती कृत 'श्री वृंदावन महिमामृतम्' के १४५ श्लोकों का ब्रज-भाषा पद्यानुवाद है।[182] इस कृति मे जहां मूल ग्रंथ की विषय-वस्तु व सौंदर्य विद्यमान है वहीं कवि की स्वानुभूत भाव-व्यंजनाएं भी अभिव्यक्त हुई हैं। अत:

अनुवाद ग्रंथ होते हुए भी यह कवि की मौलिक प्रतिभा का परिचायक है। इसक रचना सं० १७०७ के चैत्र मास में हुई थी। इसमें मंगलाचरण के रूप में चैतन्य महाप्रभु, गुरु हरिदास, पिता माधव मुदित, प्रबोधानंद सरस्वती, रूप सनातन आदि रसिक भक्तों की वंदना की गयी है। कवि ने वृंदावन की श्री शोभा का सुंदर वर्णन किया है। राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं और सखी-मंजरी का सरस चित्रण हुआ है। नित्य विहार के विधायक तत्वों का आख्यान है। साम्प्रदायिक भावोपासना के अनुरूप मधुर रस की सुंदर अभिव्यंजना है। 'वृंदावन सत' की तीन हस्तलिखित प्रतियां हमने देखी है। इनमें सर्वाधिक प्राचीन प्रति वृंदावन शोध संस्थान में है जिसका लिपिकाल सं० १७७३ है। जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में सं० १७८६ में लिपिबद्ध एक प्रति है। कृष्ण-जन्मभूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय में उपलब्ध प्रति में (लि० का० सं० १८१५) कुल २६ पत्र हैं। यह बाबा कृष्णदास के संग्रह की प्रति है। इन तीनों प्रतियों मे रचनाकाल सं० १७०७ दिया हुआ है।

(२) **स्फुट पद :** भगवत मुदित कृत २०७ पदों का उल्लेख किया गया है।[१८३] इनके पद विभिन्न हस्तलिखित पद-संग्रहों में उपलब्ध होते है।[१८४] इनके पदों मे प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं का सरस वर्णन है। एक पद द्रष्टव्य है—

> रसिक सों बातें लाड़ लड़ोंहीं।
> हसि हसि जाति समाति हिये मे फिरि चितवत पिय सोंहीं।
> करत विहार उदार सकल अंग प्रेम विविध ललचौंहीं।
> भगवंत मुदित लड़ावति छिन छिन छैल दसा गहि गोंहीं।।[१८५]

माधुरीदास

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों में माधुरीदास सुप्रसिद्ध रस सिद्ध कवि है। माधुर्योपासक भक्त कवियों में इनका प्रमुख स्थान है। इनकी रचनाओं में इनका नाम 'माधुरी' मिलता है।[१८६] डॉ० जगदीश गुप्त ने अपने शोध प्रबंध में यह उल्लेख किया है कि कांकरोली विद्या विभाग में इनकी 'माधुरियों' की एक हस्तप्रति (बंध सं० ७४) उपलब्ध है जिसकी पुष्पिका मे 'श्री माधवदास विरचिता' एवं 'माधव-दास कपूर श्री वृंदावनवासी रचित' दिया है।[१८७] इनकी 'विहार माधुरी' (वृंदावन माधुरी) नामक रचना की पुष्पिका मे भी 'श्री माधवदास विरचिता' लिखा हुआ है।[१८८] इससे ज्ञात होता है कि इनका मूल नाम माधवदास था और वे कपूर खत्री थे। यह संभव है कि इनके पूर्वज पंजाब से आकर ब्रज मे बस गये हों। कवि की रचनाओं में ब्रजभाषा के सरस एवं सरल प्रयोग से यह प्रतीत होता है कि इनका ब्रज से घनिष्ठ संबंध रहा है अतएव या तो इनका जन्म ही ब्रज में हुआ अथवा वे शैशवावस्था से ब्रज मे निवास करने लगे थे। मथुरा-गोवर्द्धन मार्ग पर एक स्थान माधुरी कुंड है जो बाबा कृष्णदास जी के मतानुसार माधुरी जी का भजन स्थल है।

उनके नाम पर ही इसका नाम माधुरी कुंड पड़ा है।[१५९] श्री नारायण भट्ट के कथनानुसार इस स्थान का यह नाम श्री राधिका की सखी माधुरी की विहार-स्थली होने के कारण पड़ा है।[१६०] ऐसा लगता है माधुरी सखी के आनुगत्य के कारण ही इनका उपासना परक नाम माधुरीदास प्रसिद्ध हुआ होगा।

इन अति प्रसिद्ध भक्त कवि के जीवन-वृत्तांत के संबंध मे पर्याप्त सामग्री प्राप्त नही होती। इनके जन्मकाल की निश्चित तिथि अज्ञात है, किंतु इनकी रचनाओं द्वारा इनके रचना-काल का पता लगता है। 'केलि माधुरी' और 'दान माधुरी' का रचना-काल सं० १६८७ है।[१६१] तथा 'वंशीवट माधुरी' और 'वृंदावन माधुरी' का रचना-काल सं० १६९९ लिखा हुआ है[१६२] इस आधार पर इनका रचना-काल सं० १६७५ से १७१० वि० के लगभग तथा जन्म सं० १६४० व देहावसान सं० १७१५ के लगभग अनुमानित किया जा सकता है।

माधुरी जी ने अपनी रचनाओं मे चैतन्य महाप्रभु और रूप-सनातन गोस्वामियों की वंदना की है।[१६३] रूप गोस्वामी की उपासना पद्धति में इनकी विशेष आस्था प्रकट हुई है। रूप गोस्वामी ने अष्टकालीन सेवा-उपासना तथा रागानुगा भक्ति भावना का सुव्यवस्थित रूप प्रस्तुत किया है अत: चैतन्य सम्प्रदाय मे राग-भक्ति साधना के लिए रूप-अनुगता अनिवार्य माना गया है। इस सम्प्रदाय की भावनानुसार रूप गोस्वामी श्री राधिका की अन्तरंगा सेविका रूप मंजरी के अवतार थे और इसी रूप मे राधिका की सेवा में नित्य उपस्थित रहते है। कदाचित इसी लिए माधुरी जी ने रूप मंजरी का वर्तमान कालिक क्रिया मे उल्लेख किया है। ऐसी भी संभावना है कि रूप मंजरी नामक कोई सिद्ध महात्मा इनके दीक्षा-गुरु रहे हों। अपनी रचनाओं में इन्होंने रूप गोस्वामी के प्रति अत्यंत श्रद्धा व्यक्त की है अत: भावना के क्षेत्र मे रूप गोस्वामी इनके भजन-गुरु रहे है।

रचनाएं—माधुरीदास जी रचनाओं का प्रकाशन (सन् १९३९ मे) बाबा कृष्णदास ने 'श्री माधुरी वाणी' के नाम से किया है। उसमे कवि कृत ये रचनाएं संकलित हैं—१. उत्कंठा माधुरी, २. वंशीवट माधुरी, ३. केलि माधुरी, ४. वृंदावन माधुरी, ५ दान माधुरी, ६. मान माधुरी, ७. होरी माधुरी, और ८. प्रिया जू की बधाई। नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट मे इन सभी रचनाओं के अतिरिक्त 'भंवर गीत' का भी उल्लेख मिलता है।[१६४] इनकी रचनाएं विविध छंदों मे रचित है। इनमें रूप, सनातन और रघुनाथदास आदि गोस्वामियों की उक्तियों का प्रचुरता से प्रयोग होने से सरसता के साथ भाव-गांभीर्य भी रचनाओं मे अभिव्यक्त हुआ है। इनके छंदों एवं पदों का गायन रास-लीलाओं मे किया जाता है। ब्रज के भजनानंदी महात्मा इनका नित्य पाठ करते हैं। विभिन्न रचनाओं के अतिरिक्त इनके स्फुट पद विविध कीर्तन पोथियों में भी मिलते हैं, ऐसे कुछ पद डॉ० नरेश बंसल ने अपने शोध प्रबंध[१६५] के परिशिष्ट में दिये है। कवि माधुरी की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

(१) **उत्कंठा माधुरी**—यह रचना ३ कवित्त, २०३ सोरठा व दोहा छंद मे

रचित है। इसमें गोपियों के रूप में भक्त हृदय का तीव्र अनुराग, असह्य विरह व्यथा और मिलन की उत्कंठा पूर्ण चाह व्यक्त हुई है। यह रचना रघुनाथदास गोस्वामी के प्रसिद्ध कृति 'विलाप कुसुमांजलि' से प्रेरित प्रतीत होती है। इसमें बताया गया है कि बिना उत्कंठा के साधक को ब्रज की प्राप्ति नहीं हो सकती। मिलन उत्कंठा तथा विरह वेदना पर विशेष बल दिया गया है। 'उत्कंठा माधुरी' की एक हस्तलिखित प्रति कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय में उपलब्ध है।[१९६]

(२) **वंशीवट माधुरी**—इसमें ३६ कवित्त, २२० दोहा, ५ सवैया, १४ रोला, ३२ चौपाई तथा १ सोरठा छंद का प्रयोग किया गया है। इसमें संयोग शृंगार के अंतर्गत प्रिया-प्रियतम की सरस चेष्टाओं, मनुहारों तथा क्रीड़ाओं के वर्णन के साथ प्रकृति का सुंदर चित्रण हुआ है। 'वंशीवट माधुरी' की दो हस्त-प्रतियाँ वृंदावन शोध संस्थान में विद्यमान हैं जिनमें से एक प्रति सं० १८३७ में लिपिबद्ध हुई है।[१९७] सुंदर अक्षरों में लिखित इस प्रति में कुल २५३ छंद हैं।

(३) **केलि माधुरी**—इस रचना में ६ कवित्त, १५ दोहा, ६ रोला, ६२ चौपाई, १ सवैया, ११ सोरठा तथा १ छप्पय छंद का प्रयोग है। इसका विषय प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण का केलि विलास है। 'केलि माधुरी' की एक हस्तलिखित प्रति वृंदावन शोध संस्थान में उपलब्ध है जिसकी पुष्पिका में इसका रचना-काल सं० १६८७ श्रावण कृ० ६ बुधवार लिखा हुआ है।[१९८]

(४) **वृंदावन माधुरी**—१२ कवित्त, ४५ दोहा, २ सवैया, ३१ चौपाई और ३ सोरठा छंद में वृंदावन के श्री वैभव, विशाल कुंज, प्राकृतिक सुषमा का सरस वर्णन है तथा उनमें राधा-कृष्ण की मधुर क्रीड़ा-लीला का चित्रण किया गया है। इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति (पोथी का लि० का० सं० १७११) 'विहार माधुरी' के नाम से महाराजा संग्रहालय, जयपुर में है। कुल १४ पत्रों में लिखित इस रचना में ६४ छंद हैं। अन्त में माधवदास नाम का उल्लेख है।[१९९] जयपुर महाराजा संग्रहालय की ग्रंथ-सूची में इसे भ्रमवश माधवदास जगन्नाथी की रचना समझकर उनकी रचनाओं में सम्मिलित कर लिया गया है।[२००] जबकि वस्तुत: यह रचना माधुरीदास जी (माधवदास कपूर) की है। 'वृंदावन माधुरी' की एक ह० प्रति वृंदावन शोध संस्थान में भी है जिसमें लिपिकाल नहीं दिया है।

(५) **दान माधुरी**—१७ कवित्त, १६ दोहा, ३ सोरठा छंद में रचित यह लघु रचना सरस है। रूप गोस्वामी कृत 'दान केलि कौमुदी', तथा रघुनाथदास कृत 'दान केलि चिंतामणि' जैसा शिष्ट हास-परिहास इसमें दृष्टिगत होता है। श्रीकृष्ण हास्य के आस्वादन हेतु श्री राधिका तथा ललितादिक सखियों से दान की याचना करते हैं। परस्पर मधुर हास परिहास से युक्त वाद-विवाद की चरम परिणति 'दम्पति सुख' में होती है। इसमें कथोपकथन शैली प्रयुक्त है। 'दान माधुरी' की हस्त-लिखित प्रतियाँ वृंदावन शोध संस्थान (दो प्रतियों में से एक प्रति का लि० का० सं० १८३२); राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी (लि० का० सं० १८४०);

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर तथा कृष्ण-जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय (सं० १८८६ में लिपिबद्ध गुटका) में विद्यमान है। अंतिम प्रति बाबा कृष्णदास के संग्रह की है। यह पोथी वृंदावन मे गोपालदास वैष्णव द्वारा अति सुंदर व स्पष्ट अक्षरों में लिपिबद्ध है।[२०१]

(६) **मान माधुरी**—इसमें १६ कवित्त, ९ दोहा, १५ सवैया और ६ सोरठा छंद का प्रयोग है। इस रचना मे प्रिया जू के मान का सरस वर्णन है। प्रिया राधिका अपने प्राणाधार प्रियतम कृष्ण के शरीर मे अपने ही अगों का प्रतिबिंब देखकर अन्य नायिका के भ्रम से मानिनी हो जाती है तब ललिता की युक्ति से मान-मोचन होता है। इसी मान-जनित माधुरी का अतिशय सान्द्र चित्रण इसमें हुआ है। यह लघु रचना पर्याप्त सरस एव आकर्षक है। 'मान माधुरी' की एक हस्तलिखित प्रति (सं० १८८६ में लिपिबद्ध गुटका) श्रीकृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान मथुरा मे है। बाबा कृष्णदास के संग्रह की इस प्रति में कुल ९० छंद है। अलवर व जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों मे भी इस रचना की हस्तलिखित प्रतिया (लि० का० क्रमश: १९वीं श०, १८वीं श०) विद्यमान है। वृंदावन शोध संस्थान में इसकी ७ प्रतियां हैं जिनमें से सं० १८३२ मे लिपिबद्ध एक प्रति सर्वाधिक प्राचीन है।

(७) **होरी माधुरी**—इस रचना मे होली विषयक ६ पदों का समावेश है। जिसमे होली का सरस वर्णन हुआ है।

(८) **प्रिया जू की बधाई**—इसमे प्रिया राधिका की जन्म बधाई के केवल दो पद हैं।

वल्लभ रसिक

वल्लभ रसिक सरस एवं अलंकृत शैली मे काव्य-रचना के लिए प्रसिद्ध हैं। चैतन्य संप्रदाय के अंतर्गत ये गदाधर भट्ट के वंशजों मे हुए हैं। बाबा कृष्णदास ने इन्हे गदाधर भट्ट का पुत्र एवं 'प्रेमपत्तनकार' रसिकोत्तंस का अनुज बताया है।[२०२] 'प्रेम पत्तनम्' नामक ग्रंथ के मंगलाचरण मे रसिकोत्तंस ने चैतन्य महाप्रभु की वंदना की है।[२०३] 'प्रेमपत्तनम्' के संपादक श्री कृष्ण पंत शास्त्री ने रसिकोत्तंस का जन्म सं० १६९५ स्थिर किया है।[२०४] रसिकोत्तंस ने स्वयं अपनी रचना मे वल्लभ रसिक को अपना अनुज लिखा है—'वल्लभ-रसिकोममनुजः'। अतः वल्लभ रसिक का जन्म काल सं० १७०० के लगभग और रचनाकाल सं० १७२५ के आसपास माना जा सकता है।[२०५] गदाधर भट्ट के जन्म काल (सं० १५६० के लगभग) के अनुसार वल्लभ रसिक इनके पुत्र नही हो सकते। वे इनकी कुछ पीढी बाद उत्पन्न हुए होंगे। वल्लभ रसिक की अलंकृत रचना शैली गदाधर भट्ट के समानकालीन कवियों जैसी नही है अपितु रीतिकालीन कवियो के समान है। अतः इससे भी इनका उपर्युक्त समय ही सिद्ध होता है।

वल्लभ रसिक ने अपने काव्य में कई स्थलो पर इष्टदेव ठाकुर मदनमोहन जी का भक्तिभाव से स्मरण एवं उल्लेख किया है। मदनमोहन जी गदाधर भट्ट एवं उनके वंशजों के सेव्य ठाकुर हैं। वल्लभ रसिक की रचनाओ की हस्तलिखित

प्रतियां गदाधर भट्ट के वंशजों के पास से उपलब्ध हुई हैं। इनकी रचनाओं का विषय भी चैतन्य सम्प्रदाय की भावापन्नता के अनुरूप रथ यात्रा, रास, अभ्यास, निकुंज विहार व मधुर भावपरक अन्य लीलाएं हैं। अतः उपलब्ध समस्त प्रमाणों से ये चैतन्य सम्प्रदाय के सिद्ध होते हैं।

रचनाएं—वल्लभ रसिक की रचनाओं में भावों की उदात्तता तो है ही, अलंकृत शैली ने उन्हें प्रभावोत्पादक बना दिया है। इनकी समस्त रचनाओं का संकलन बाबा कृष्णदास जी ने सं० २००४ में 'वल्लभ रसिक की वाणी' के नाम से प्रकाशित कर दिया है। इनकी 'वाणी' की एक ह० प्रति मिश्र बंधुओं द्वारा देखे जाने का उल्लेख हुआ है।[२०६] नागरी प्रचारिणी सभा की रिपोर्ट में भी इनकी अनेक रचनाओं का उल्लेख मिलता है।[२०७] वल्लभ रसिक की वाणी की अनेक हस्तलिखित प्रतियां हमने विभिन्न संग्रहालयों में देखी हैं। वृंदावन शोध संस्थान में इसकी तीन प्रतियां हैं जिनमें से कवि कुल माझ की एक प्रति लघु आकार के गुटके के रूप में अति उत्तम व आकर्षक है। सरला गोस्वामी द्वारा शोध संस्थान को प्रदत्त इस गुटके में लघु आकार के (६.५ सें० मी० × ६ सें० मी०) उत्तम स्तरीय १३ पत्रों पर बहुत छोटे अक्षरों में अत्यंत सुंदरता व स्पष्टता से लिखा गया है। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर में भी इसकी एक प्रति है जिसमें कुल ३८ पत्र हैं। जयपुर के महाराजा संग्रहालय में वल्लभ रसिक की वाणी की ६ हस्तलिखित प्रतियां सुरक्षित हैं[२०८] जिनमें सर्वाधिक प्राचीन पोथी सं० १८४० में जयपुर महाराजा सवाई प्रतापसिंह के राज्य में गोपीदास द्वारा लिपिबद्ध हुई है।[२०९] इसमें बड़े आकार के कुल १४ पत्र हैं। अन्य प्रतियों में एक प्रति १८वीं शताब्दी व चार प्रतियाँ १९वीं श० में लिपिबद्ध हैं जिनमें से एक प्रति में कुल ४३ पत्र हैं और दूसरी में कुल २१ पत्रों में १०६ छंद लिखे हुए हैं। इनकी वाणी की अन्य ह० प्रतियां कृष्ण चैतन्य भट्ट, वृंदावन (कुल ९४ पत्र); प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर व कृष्ण जन्मभूमि सेवा संस्थान, मथुरा में (कुल ६० पत्र) विद्यमान हैं।

'वल्लभ रसिक की वाणी' (प्रकाशित) में विभिन्न शीर्षकों से ये रचनायें सम्मिलित हैं—१. सांझी २. होरी खेल ३. माझ ४. सुरतोल्लास ५. बारह बाट अठारह पैंडे, ६. वर्षोत्सव के पद, ७. नित्य गान के पद, ८. फुटकर दोहा कवित्त, सवैया। वल्लभ रसिक की नाम छाप से युक्त इन रचनाओं में विभिन्न राग-रागनियों में राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं का सरस वर्णन है। हिंडोरा, पवित्रा, वर्षगांठ, दशहरा, दीवाली, वर्षा आदि की माझ दी गई हैं। विभिन्न उत्सवों से संबंधित प्रिया-प्रियतम की लीलाओं का मधुर कथन हुआ है। राधा-कृष्ण के रूप-माधुर्य, शृंगार तथा रति-विलास का सुंदर चित्रण हुआ है। इनके काव्य में संयोग शृंगार और माधुर्य-भक्ति को ही स्थान मिला है। अलंकारों के सुष्ठु प्रयोग से भाव-व्यंजना अधिक प्रबल हो गयी है। विशेष रूप में यमक और अनुप्रास की छटा द्रष्टव्य है। इससे रचना में कुछ क्लिष्टता अवश्य आ गयी है परंतु सरसता भी पर्याप्त है। अपनी वंश-परंपरा के अनुरूप ये संस्कृत के श्रेष्ठ विद्वान थे,

की है चैतन्य संप्रदाय की मान्यतानुसार महाप्रभु चैतन्य के अवतार रूप पर प्रकाश डालते हुए कवि ने उनके प्रेम-स्वरूप, दिव्य व्यक्तित्व व माहात्म्य का कथन किया है। इसके पश्चात् वृंदावन, यमुना व भागवत महिमा संबंधी पद है। तदनन्तर लाल जू की बधाई, वर्षा, हिंडोरा-झूलन, राखी, पालना, राधाष्टमी, बावन-जन्म, दान लीला, साझी, विजयदशमी, रास, गोवर्द्धन पूजा, दीपमालिका, गोपाष्टमी, बसंत, होरी, रामनवमी, नृसिंह-जन्म, रथ-यात्रा आदि सभी प्रमुख उत्सवों के पद हैं। गाये जाने के कारण इन पदों को 'कीर्तन' कहा गया है।

उत्सव संबंधी पद बल्लभ संप्रदायी कवियों द्वारा प्रचुरता से रचे गये हैं। चैतन्य संप्रदाय में किशोरीदास जी ने इस प्रकार के पदों की सर्वाधिक मात्रा में रचना की है। इनके पदों में संगीतगत वैविध्य के साथ विषयगत वैविध्य भी है। लोक-गीतों की सी सरस एवं सरल शैली में रचना है।

मनोहरदास

सुप्रसिद्ध बंगाली महात्मा मनोहरदास जी ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि हुए हैं। मनोहरदास जी की रचनाओं में प्राप्त उल्लेखानुसार ये चैतन्य महाप्रभु के पार्षद गोस्वामी गोपाल भट्ट जी की शिष्य परंपरा में रामशरण चट्टराज के शिष्य और ठाकुर राधारमण जी के सेवक थे।[२१३] इन्होंने अपने गुरु की प्रशंसा करते हुए अपना नाम 'मनोहरदास' गुरु-प्रदत्त बताया है।[२१४] 'भक्तमाल' के सुप्रसिद्ध टीकाकार प्रियादास जी मनोहरदास जी के शिष्य थे। प्रियादास जी ने भक्तमाल टीका में चैतन्य महाप्रभु के साथ मनोहरदास जी की भी वंदना की है और इन्हें ठाकुर श्री राधारमण जी का परम भक्त, वृंदावन के रसिक समाज में सर्वमान्य व कविताई-रसिकता के प्रेरणा स्रोत बताया है। प्रियादास जी ने स्वयं को मनोहरदास जी का दासानुदास कहकर अपनी रचना का समस्त श्रेय अपने इन्हीं गुरुदेव को दिया है।[२१५] प्रियादास जी जैसे सुप्रसिद्ध भक्त कवि द्वारा मनोहरदास जी का बहु-गुण-प्रशस्ति-गान इनके महत्व को सिद्ध करता है।

कवि की विभिन्न कृतियों में इनके विभिन्न नाम—मनोहरदास, मनोहरन, दास मनहरण, रसिक मनोहर, मनोहरराय—प्रयुक्त हुए हैं। अपनी समस्त रचनाओं में मनोहरदास ने गोपाल भट्ट गो० के सेव्य ठाकुर श्री राधारमण को अपना सर्वस्व मानकर इष्टदेव के रूप में चित्रित किया है। इनके शिष्य प्रियादास जी ने अपनी प्रायः समस्त कृतियों में उपर्युक्त संज्ञाओं का अपने गुरु के लिए प्रयोग किया है और इन्हें राधिकारमण से संबद्ध किया है। अतः इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि उन विभिन्न नाम-छापों में युक्त रचनाएं इन्हीं मनोहरदास की हैं। इनके जन्म-काल का अनुमान इनके रचना-काल से किया जा सकता है। 'श्रीराधारमण रस सागर' की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि उसकी पूर्ति सं० १७५७ की श्रावण कृष्णा पंचमी को वृंदावन में हुई थी।[२१६] इनकी अन्य ब्रजभाषा कृति 'रसिक कर्णाभरण लीला' का रचनाकाल सं० १७५४ (वैसाख सुदी ५) है[२१७] तथा बंगला ग्रंथ

इनकी रचनाएं इसका प्रमाण हैं। इनकी भाषा परिष्कृत एवं संस्कृत गर्भित है।

गौरगणदास के समान ही वल्लभ रसिक की 'मांझ' रचनाएं भी प्रसिद्ध हैं। है। इनकी मांझ की यह विशेषता है कि जहां सामान्यतः मांझ नामक रचनाओं में खड़ी बोली और फारसी के शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है, वहां इन्होंने इसे प्रधानतः ब्रजभाषा में लिखा है। इन्होंने 'सदा की मांझ' में पंजाबी भाषा का प्रयोग किया है। दाक्षिणात्य तैलंग ब्राह्मण होते हुए भी पंजाबी में रचना इनके उदार दृष्टिकोण का परिचायक है। ऐसा लगता है इन्होंने पंजाब प्रांत का भ्रमण किया हो या पंजाबी महात्माओं के निकट संपर्क में रहे हों। ब्रज के कीर्तन-संग्रहों में वल्लभ रसिक के पद बिखरे हुए मिलते हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि इनकी रचनाएं बहु-प्रचलित हुई हैं।

किशोरी दास

किशोरीदास नामक अनेक ब्रजभाषा भक्त-कवि हुए हैं जिनमें चैतन्य संप्रदायी किशोरीदास भी प्रसिद्ध कवि हैं। इनकी रचनाएं परिमाण में विपुल एवं साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इनके पदों का विभिन्न स्थलों पर उत्सवादि में व्यापक रूप से गायन होने से ये अति प्रसिद्ध हुए हैं। इनके पद-संग्रह—'किशोरीदास जी की वाणी' (प्रकाशित) की भूमिका में इसकी हस्त प्रति को २५० वर्ष से अधिक प्राचीन बताया गया है।[२१०] स्व० डॉ० बड़थ्वाल ने इन्हें गौड़ीय मतानुयायी बताते हुए इनको दो सौ वर्ष पूर्व का माना था। डॉ० बंसल ने इनका अस्तित्व-काल वि० सं० १७००-१७७० तक अनुमानित किया है।[२११]

किशोरीदास के जीवन वृत्तांत के विषय में विशेष ज्ञात नहीं होता। इस संबंध में कुछ प्रकाश बाबा कृष्णदास जी ने डाला है।[२१२] उनके अनुसार ये ग्वालियर राज्य के अन्तर्गत श्योपुर के एक बड़े जागीरदार थे। औरंगजेब के अत्याचार के काल में बरसाने की श्री जी का विग्रह-स्वरूप स्थानान्तरित करके कुछ समय तक श्योपुर में रहा था। वहां के जागीदार किशोरीदास श्री जी के अनन्य भक्त थे। ब्रज के प्रति आकर्षित होकर ये ब्रज-यात्रा को गये परंतु फिर वहां से वापिस न आकर बरसाने में ही शेष जीवन व्यतीत किया। इनके निवास-स्थल के रूप में वहाँ पर आज भी 'श्योपुर वाली कुंज' विद्यमान है। वहां रहते हुए इन्होंने उपासना-भक्ति के साथ ब्रजभाषा में सुंदर पदों की रचना की।

रचनाएं : इनकी पदावली 'श्री किशोरीदास जी की वाणी' नाम से बाबा कृष्णदास द्वारा (सं० २०१७) प्रकाशित हो चुकी है। इसमें विभिन्न राग-रागनियों में उत्सवों के सरस पदों का संकलन है। ऐसा प्रतीत होता है कि मंदिरों में गाये जाने के लिए इनकी रचना हुई है। बरसाना, नंदगांव, वृंदावन आदि के मंदिरों में विविध उत्सवों पर होने वाले समाज में आज भी इनके पदों का अत्यंत उत्साह से गायन होता है। 'वाणी' के आरंभिक अनेक पदों में किशोरीदास जी ने श्री चैतन्य महाप्रभु की वंदना और बधाई व संप्रदाय के प्रमुख आचार्यों की वंदना

की है चन प सम्प्रदाय की मान्यतानुसार महाप्रभु चैतन्य के अवतार रूप पर प्रकाश डालते हुए कवि ने उनके प्रेम स्वरूप दिव्य व्यक्तित्व व माहात्म्य का कथन किया है। इसके पश्चात् वृंदावन, यमुना व भागवत महिमा संबंधी पद है। तदनन्तर लाल जू की बधाई, वर्षा, हिंडोरा-झूलन, राखी, पालना, राधाष्टमी, वावन-जन्म, दान लीला, सांझी, विजयदशमी, रास, गोवर्द्धन पूजा, दीपमालिका, गोपाष्टमी, बसंत, होरी, रामनवमी, नृसिंह-जन्म, रथ-यात्रा आदि सभी प्रमुख उत्सवों के पद हैं। गाये जाने के कारण इन पदों को 'कीर्तन' कहा गया है।

उत्सव संबंधी पद वल्लभ संप्रदायी कवियों द्वारा प्रचुरता से रचे गये हैं। चैतन्य संप्रदाय में किशोरीदास जी ने इस प्रकार के पदों की सर्वाधिक मात्रा में रचना की है। इनके पदों में संगीतगत वैविध्य के साथ विषयगत वैविध्य भी है। लोक-गीतों की सी सरस एवं सरल शैली में रचना है।

मनोहरदास

सुप्रसिद्ध बंगाली महात्मा मनोहरदास जी ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि हुए हैं। मनोहर-दास जी की रचनाओं में प्राप्त उल्लेखानुसार ये चैतन्य महाप्रभु के पार्षद गोस्वामी गोपाल भट्ट जी की शिष्य परंपरा में रामशरण चट्टराज के शिष्य और ठाकुर राधारमण जी के सेवक थे।[२१३] इन्होंने अपने गुरु की प्रशंसा करते हुए अपना नाम 'मनोहरदास' गुरु-प्रदत्त बताया है।[२१४] 'भक्तमाल' के सुप्रसिद्ध टीकाकार प्रियादास जी मनोहरदास जी के शिष्य थे। प्रियादास जी ने भक्तमाल टीका में चैतन्य महाप्रभु के साथ मनोहरदास जी की भी वंदना की है और इन्हें ठाकुर श्री राधा-रमण जी का परम भक्त, वृंदावन के रसिक समाज में सर्वमान्य व कविताई-रसिकता के प्रेरणा स्रोत बताया है। प्रियादास जी ने स्वयं को मनोहरदास जी का दासानुदास कहकर अपनी रचना का समस्त श्रेय अपने इन्हीं गुरुदेव को दिया है।[२१५] प्रियादास जी जैसे सुप्रसिद्ध भक्त कवि द्वारा मनोहरदास जी का बहु-गुण-प्रशस्ति-गान इनके महत्व को सिद्ध करता है।

कवि की विभिन्न कृतियों में इनके विभिन्न नाम—मनोहरदास, मनोहरन, दास मनहरण, रसिक मनोहर, मनोहरराय—प्रयुक्त हुए हैं। अपनी समस्त रचनाओं में मनोहरदास ने गोपाल भट्ट गो० के सेव्य ठाकुर श्री राधारमण को अपना सर्वस्व मानकर इष्टदेव के रूप में चित्रित किया है। इनके शिष्य प्रियादास जी ने अपनी प्राय: समस्त कृतियों में उपर्युक्त संज्ञाओं का अपने गुरु के लिए प्रयोग किया है और इन्हें राधिकारमण से संबद्ध किया है। अत: इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इन विभिन्न नाम-छापों से युक्त रचनाएं इन्हीं मनोहरदास की हैं। इनके जन्म-काल का अनुमान इनके रचना-काल से किया जा सकता है। 'श्रीराधारमण रस सागर' की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि उसकी पूर्ति सं० १७५७ की श्रावण कृष्णा पञ्चमी को वृंदावन में हुई थी।[२१६] इनकी अन्य ब्रजभाषा कृति 'रसिक कर्णाभरण लीला' का रचनाकाल सं० १७५४ (वैसाख सुदी ५) है[२१७] तथा बंगला ग्रंथ

अनुरागव ली का रचना काल स० १७८४ की चैत शुक्ला दशमी है ... इस आधार पर इनका जन्म सवत् १७१० के लगभग अनुमानित होता है।

रचनाएं: बंगला भाषा मे रचित 'अनुरागवल्ली' नामक ग्रंथ के अतिरिक्त इन्होंने ब्रजभाषा मे अनेक रचनाए की है जिनमें बगला पदावली की-सी मधुरता एवं सरसता अभिव्यक्त हुई है। इनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. श्री राधारमण रस सागर—इस रचना में कुल ११३ छंद है जिनमें १०५ कवित्त, ६ छप्पय, १ त्रिपदी छंद और १ अरिल्ल है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति का उल्लेख नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट मे हुआ है जिसमे इसका रचना काल सं० १७५७ दिया हुआ है।[२१९] 'राधारमण रस सागर' की तीन हस्तलिखित प्रतियां वृंदावन शोध संस्थान मे मैंने देखी हैं, तीनों प्रतियों मे उपर्युक्त रचना-काल (सं० १७५७ की सावन बदि पचमी) ही दिया हुआ है।[२२०] इनमें से एक प्रति का लिपिकाल स० १८८६ है। इस रचना की अनेक प्रतिया अन्य स्थलो पर, विशेष रूप से राधारमणीय गोस्वामियों के पास, उपलब्ध होती हैं, जिससे इस रचना की प्रसिद्धि सिद्ध होती है। इस रचना का प्रकाशन बाबा कृष्णदास जी द्वारा (सं० २००८ में) हो चुका है। यह रचना माधुर्य भाव परक है। इसमें षट् ऋतुओं के अंतर्गत राधारमण जी की विभिन्न लीलाओ शृंगार, भोग, शयन, विहार, केलि-विलास आदि का अत्यंत सरस एव भावमय वर्णन किया गया है।

२. संप्रदाय बोधिनी—यह ११७ दोहा छंद मे रचित है। इसकी हस्तलिखित प्रति (जो बाबा कृष्णदास के संग्रह की है) कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय में उपलब्ध है जिसमे इसका लिपि काल स० १७७६ दिया हुआ है।[२२१] इसकी प्रकाशित प्रति में इसका लि० का० सं० १७०७ मुद्रण की त्रुटिवश छप गया है,[२२२] जिसके कारण मीतल जी ने इसे किसी अन्य कवि की रचना मान लिया है। 'सप्रदाय बोधिनी' की अन्य हस्तलिखित प्रति वृंदावन शोध संस्थान में मिली है जिसमे काल का उल्लेख नही है। इस रचना के प्रारंभ में कवि ने अपने गुरु राम-शरण चट्टराज का नाम दिया है। इसमे वैष्णव धर्म की चतुर्संप्रदाय-परंपरा का उल्लेख कर सबके मूल गुरु श्री नारायण को बताया है। अत. वे सब एक ही है केवल उनकी पद्धतियां पृथक् हैं। कृतिकार ने रूप गोस्वामी कृत 'लघु भागवतामृत', वृंदावन दास कृत 'चैतन्य भागवत', गोपाल गुरु कृत 'गुरु प्रणाली' तथा नाभादास जी कृत 'भक्तमाल' का उल्लेख किया है।

३. क्षणदा गीति चिंतामणि—यह मनोहरदास जी द्वारा संपादित काव्य-रचना है जिसमे ५० के लगभग प्राचीन कवियो के कुल २२३ पद संकलित है। इनमें १० पद मनोहरदास जी के है। यह बाबा कृष्णदास द्वारा सं० २०१७ मे प्रकाशित हुआ है। इसमें विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत बंगला-रचना 'क्षणदागीति चिंतामणि' की शैली एवं नाम का अनुगमन किया गया है। इस रचना मे क्षणदा (रात्रि) में राधा-गोविंद की शृंगारिक, नित्य विहार लीला का रस सिद्ध वर्णन है। महाप्रभु चैतन्य देव के

अभ्यर्थना में उनके सुंदर चित्र खीचे गए है। इसमे कवि की अतिशय भावुकता पद लालित्य एवं भाषा की प्रांजलता द्रष्टव्य है। इस रचना की एक हस्त० प्रति गो· छुट्टन जी भट्ट (वृंदावन) के सग्रह मे है एव दो प्रतिया वृंदावन शोध संस्थान मे, जिनमे रचनाकाल नही दिया है।

४. रसिक जीवनी : इस रचना की हस्तलिखित प्रति बाबा कृष्णदास जी के सग्रह मे है जिसका लिपिकाल सं० १८१६ है।[२२३] अब यह बाबा जी द्वारा ही स० २०१६ मे प्रकाशित हो चुकी है। यह भी एक संकलित ग्रथ है जिसमें ४० कवियों (अधिकांशतः चैतन्य संप्रदायी) की रचनाएं सम्मिलित हैं। स्वयं मनोहरदास जी द्वारा रचित २४ पद इसमें है। १४ पद अज्ञात है जो कदाचित मनोहरदास कृत ही हों क्योंकि वे उनकी रचना शैली से साम्य रखते है। इस रचना मे युगल राधा-कृष्ण के मिलन, अभिसार, मान, प्रणय, विरह, कुंज-विहार आदि मधुर लीलाओं के पद है। यह सरल शैली व विभिन्न रागो मे रचित है। इस रचना के प्रारंभिक दो पदों मे कवि ने चैतन्य महाप्रभु और रूप-सनातन की वंदना की है।

५. रसिक कर्णाभरण लीला : मनोहरदास जी की अब तक अज्ञात इस काव्य-रचना का हाल ही मे हमें पता लगा है। वृंदावन शोध संस्थान मे इसकी हस्तलिखित प्रति हमारे देखने में आई है। मनोहरदास जी की अब तक प्राप्त ब्रज-भाषा-रचनाओं मे यह रचना सर्वाधिक प्राचीन है। इस कृति के अन्त मे इसका रचना काल सं० १७५४ की वैशाख सुदी पंचमी दिया हुआ है।[२२४] यह प्रति अच्छी अवस्था मे है तथा इसकी लिपि स्पष्ट है। इसमें १६ खुले पत्र हैं जिनमे दोनों ओर लिखा है। इस रचना मे भी गुरु का नाम रामशरण चट्टराज उल्लिखित है। इसमे चैतन्य महाप्रभु एवं रूप सनातन आदि गोस्वामियों की वदना की गई है। यह एक लीला-काव्य है जिसमे प्रबधात्मकता है। कथा के रूप मे काव्य का प्रारभ किया गया है। कंस के उपद्रव एवं राक्षसों के भय से तंग आकर वृषभान एव नंद आदि का वृंदावन आगमन वर्णित है। वृंदावन के श्री सौंदर्य, राधा-कृष्ण की रूप-शोभा, मिलन की व्याकुलता, विरह-वेदना, सखियों के सघटन से मिलन-आयोजन तथा माधुर्य भाव परक विभिन्न लीलाओं का अत्यत भावपूर्ण चित्रण किया गया है। सस्कृत निष्ठ भाषा में पर्याप्त सरसता एवं मधुरता है।

इन रचनाओं के अतिरिक्त मनोहरदास जी की अब तक अज्ञात तीन लघु रचनाएं वृंदावन शोध संस्थान में प्राप्त हुई है। ये सभी रचनाए एक ही पोथी मे है और मूलचंद गोस्वामी द्वारा प्रदत्त है।[२२५] इनमें समय का उल्लेख नही है। इनका सक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है—

६. गौर गुणावली : इस काव्य रचना मे कुल १३ पृष्ठ एव २४ छंद हैं। इसमे गुरु-स्मरण के पश्चात्, चैतन्य महाप्रभु, रूप सनातन आदि गोस्वामियो की वदना की गयी है। 'राधारमण गोपाल गति मम जीवन धन प्राण' कहकर ठाकुर राधारमण जी के प्रति विशेष भक्ति प्रकट की है। मनोहरदास नाम इसमें कई स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है। इसकी रचना-शैली भी इनकी अन्य कृतियो से साम्य

रखती है। अतः इन सभी दृष्टियों से 'गौर गुणावली' इन्हीं मनोहरदास कृत सुनिश्चित होती है।[226] इस रचना में कवि ने गौरांग महाप्रभु के संपूर्ण जीवन-चरित्र का संक्षेप में वर्णन करते हुए तथा उनकी महिमा का गान करते हुए उनके प्रति अपनी भक्ति निवेदित की है। महाप्रभु-चरित्र के परिज्ञान की दृष्टि से तथा साप्रदायिक भावना के परिचायक रूप में इस रचना का अत्यंत महत्व है। इस चरित्र काव्य मे प्रबधात्मकता के तत्व विद्यमान है।

७. **वैष्णव संकीर्त्तन** : कुल ३ पृष्ठों में सपन्न इस लघु रचना में चैतन्य महाप्रभु, अद्वैत, नित्यानद आदि उनके पार्षदों तथा रूप-सनातनादि गोस्वामियों तथा दामोदराचार्य, कर्णपूर, कृष्णदास, श्रीधर पंडित आदि अनेक चैतन्य सप्रदायी आचार्य-विद्वानों के गुण सहित नामोल्लेख किये गये है। इस कृति के अंत में लिखा है—"प्रेम सकीर्त्तने नाचि-नाचावत दास मनोहर गाय ।। इति श्री वैष्णव संकीर्त्तन सपूर्ण ।।"

८. **प्रार्थना** . इसमें कुल ४ पृष्ठ है। राधा-कृष्ण, ललिता-विशाखा आदि सखियो, गुण-रूपआदि मजरियों, पूर्णमासी, वृंदावन, गोवर्द्धन आदि का स्मरण करते हुए उनकी महिमा का गान किया है तथा उनकी कृपा के लिए दीनतापूर्वक प्रार्थना की गयी है। काव्य की दृष्टि से रचना साधारण है।

मनोहरदास कृत स्फुट पद, विभिन्न पद-संग्रहो मे उपलब्ध होते है। 'समय प्रबध' (हस्तलिखित पोथी लि० का० सं० १८७७), पद कल्पतरु, श्री गौरांग पदावली व अन्य पद-संग्रहों में कुल मिलाकर इनके द्वारा रचित ५१ पद उपलब्ध हुए हैं।

सुबलश्याम

'चैतन्य चरितामृत' (कृष्णदास कविराज कृत बंगलाग्रंथ) के ब्रजभाषा अनुवादक के रूप मे सुबलश्याम का नाम सामने आता है। इनके जीवन के संबंध में अधिक ज्ञात नही होता। कवि के अनूदित काव्य ग्रंथ 'चैतन्य-चरितामृत' से इनका कुछ परिचय प्राप्त होता है। इस रचना के प्रत्येक परिच्छेद के अत में इन्होंने अपना नाम 'सुबलश्याम' दिया है,[227] तीन स्थलों पर 'बेनीकृष्ण' नाम भी प्रयुक्त किया है।[228] इससे ज्ञात होता है कि इनका मूल नाम बेनीकृष्ण था और सुबलश्याम उपनाम। इनके उपास्य देव ठाकुर गोपीनाथ जी थे और दीक्षा गुरु श्री यदुपति भट्ट थे।[229]

महाप्रभु व उनके अनुयायी महात्माओ का मगल-स्मरण करते हुए 'वृंदावन वासी गौर-कृष्ण के उपासी' भक्तो के प्रति आदर व्यक्त किया है। इसमें जगन्नाथ नामक भक्त का उल्लेख है, जिन्होंने उन्हे 'चैतन्य चरितामृत' का अनुवाद करने का निर्देश दिया।[230]

'चैतन्य चरितामृत' की हस्तलिखित प्रतियो में लिपि काल वि० सं० १८२८ तथा १८२९ है। ये प्रतियां बाबा कृष्णदास के संग्रह की हैं। इनके ४ फोटो-चित्र बाबा जी ने 'चैतन्य चरितामृत' के प्रकाशित संस्करण में दिये हैं। इनमें जो कवि

सुबलश्याम की गुरु परंपरा दी हुई है उसके अनुसार इनके गुरु यदुपति भट्ट नारायण भट्ट की छठी पीढ़ी में हुए थे। नारायण भट्ट और उनके पुत्र दामोदर भट्ट का जन्म-काल क्रमशः सं० १५८८ और १६१५ माना जाता है।[31] इन सबके आधार पर सुबलश्याम का अस्तित्व काल सं० १७२० से म० १७८० तक के लगभग अनुमानित होता है। इन्होंने अपनी रचना में ब्रजभाषा को निजभाषा कहा है, इससे जान पड़ता है कि ये ब्रजभाषा-भाषी थे।

रचनाएं : सुबलश्याम कृत 'चैतन्य चरितामृत' का ब्रजभाषा पद्यानुवाद ही इनकी काव्य-रचना के रूप में उपलब्ध होता है। कृष्णदास कविराज गोस्वामी कृत बंगला ग्रंथ 'चैतन्य चरितामृत' मे चैतन्य महाप्रभु के जीवन चरित्र एवं उनकी विविध लीलाओ तथा उपदेशों का अत्यंत विद्वत्तापूर्ण कथन किया गया है। बंगला-भाषा-भाषी चैतन्य-भक्तों मे यह ग्रंथ अत्यंत प्रसिद्ध एवं समादृत हुआ। इस रचना का ब्रजभाषा मे सरस अनुवाद प्रस्तुत कर सुबलश्याम ने इसे अ-बंगाली भक्त-जनों के लिए भी सुलभ कराकर उसका रसास्वादन कराया।

मूल बंगला-ग्रंथ मे आदि लीला, मध्य लीला और अंत लीला नामक तीन खंड है परंतु सुबलश्याम कृत 'चैतन्य चरितामृत' के पहले दो खंड ही उपलब्ध हुए है। इन्हे बाबा कृष्णदास ने सं० २००६ मे प्रकाशित करा दिया है। इस रचना मे अधिकतर दोहा छंद और कुछ कवित्तादि छंद व पद भी प्रयुक्त हुए है। अनुवाद की दृष्टि से यह सफल रचना है जिसमे मूल का भाव सौंदर्य विद्यमान है। इसके अतिरिक्त महाप्रभु-परिचय एवं साम्प्रदायिक सिद्धांतों की दृष्टि से भी इसका महत्व है। इसकी भाषा सरल ब्रजभाषा है। इस रचना से कवि का बंगला एवं ब्रजभाषा दोनो पर समान अधिकार ज्ञात होता है। इस कृति के आरंभ में कवि ने १५ कवित्तों में श्री चैतन्य महाप्रभु, श्रीधाम वृंदावन, राधाकृष्ण व सखियों, इष्टदेव गोपीनाथ, गुरु यदुपति भट्ट, गोपाल भट्ट, बालमुकुंद भट्ट, दामोदर भट्ट, नारायण भट्ट कृष्णदास ब्रह्मचारी, गदाधर, कृष्णदास कविराज, नित्यानंद, जगन्नाथ, श्यामचरण तथा अन्य चैतन्य सम्प्रदायी भक्तों का मंगल-स्मरण करते हुए उनकी महिमा का गान किया है।

प्रियादास

नाभा जी कृत 'भक्तमाल' के टीकाकार के रूप मे प्रियादास जी भक्ति एवं साहित्य जगत् में सुविख्यात हो गये है। अपनी स्वयं की रचनाओं से भी इनकी प्रसिद्धि बढी है। इन्होने अपनी सभी रचनाओं में चैतन्य महाप्रभु की वंदना के पश्चात अपने गुरु का भी मंगल-स्मरण किया है।[32] उससे ज्ञात होता है कि इनके गुरु श्रीराधारमण जी के परिकर मे मनोहरदास जी (मनहरण) थे। मनोहरदास जी चैतन्य सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध कवि थे। इनके विषय मे हम प्रस्तुत अध्याय में पीछे लिख चुके है। मनोहरदास जी का रचना काल स० १७५७ के आसपास है। प्रियादास जी के सुपौत्र वैष्णवदास रसजानि भी चैतन्य संप्रदाय के श्रेष्ठ कवि हुए है।[33] गुजराती

'भक्तमाल' के अनुसार प्रियादास जी का जन्म ब्राह्मण कुल मे सूरत के निकटवर्ती रामपुरा ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम वामदेव तथा माता का नाम गगाबाई था। ये छोटी उम्र मे ही विरक्त होकर वृन्दावन आ गये थे।[२३४]

प्रियादास जी का जन्म-समय निश्चित रूप से ज्ञात नही है किन्तु उनकी रचनाओ मे किये गये उल्लेख से इनके रचना-काल का बोध होता है। 'भक्ति रस बोधिनी टीका' की पूर्ति सं० १७६९ मे एवं 'रसिक मोहिनी' की पूर्ति स० १७९४ मे हुई थी।[२३५] 'अनन्य मोदिनी' की हस्तलिखित प्रति का लिपिकाल स० १८८३ है। इस आधार पर इनका उपस्थिति काल स० १७३० से सं० १८१५ तक लगभग अनुमानित किया जा सकता है। चैतन्य मत की दीक्षा लेने के पश्चात प्रियादास जी तीर्थाटन को चल दिये और प्रयाग, चित्रकूट आदि तीर्थ स्थानो की यात्रा करने के उपरात जयपुर आकर इन्होने कुछ समय गलताश्रम मे निवास किया। वहीं रहकर इन्हे 'भक्तमाल' टीका लिखने की प्रेरणा हुई।[२३६]

रचनाएं : प्रियादास जी कृत प्रमुख रचना 'भक्तमाल' टीका है जो 'भक्ति-रस बोधिनी' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त इनके द्वारा रचित चार लघु ब्रजभाषा रचनाए है—१. रसिकमोहिनी, २. अनन्य मोदिनी, ३. चाहबेली और ४. भक्त सुमिरनी। इन्हे बाबा कृष्णदास ने (सं० २००७ मे) 'प्रियादास जी की ग्रंथावली' नाम से एक पुस्तिका में प्रकाशित करा दिया है। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. भक्ति रस बोधिनी : यह नाभा जी कृत 'भक्तमाल' की ब्रजभाषा पद्य में सुविस्तृत टीका है जिसमें कुल ६३४ कवित्त है। प्रियादास जी की यह अमर कृति है जिसका भक्त समाज में बड़ा आदर है। आचार्य शुक्ल ने इस रचना का उद्देश्य भक्तजनों के प्रति जनता मे पूज्य बुद्धि का संचार करना बताया है।[२३७] इसमें अनेक महात्मा-भक्तों के चमत्कार पूर्ण माहात्म्य का प्रमुखता से वर्णन है, साथ ही अनेक ऐतिहासिक वृत्तों का भी समावेश है। इसमे वर्णित भक्तो मे से लगभग ४० भक्त चैतन्य संप्रदाय से संबधित हैं जिनका अपेक्षाकृत अधिक विस्तार से वर्णन किया गया है। काव्य की दृष्टि से भी यह सरस एवं भावपूर्ण रचना है। अनुप्रास एवं यमक का प्रयोग विशिष्ट रूप स किया गया है। भक्ति एवं उपासना के गूढ़ तत्वों का सरलता से बोध कराया गया है। इस काव्य के अंत में इसकी रचना-तिथि स० १७६९ की फाल्गुन कृ० ७ उल्लिखित है।

'भक्तिरस बोधिनी' की अनेक हस्तलिखित प्रतियां भारत-वर्ष के अनेक स्थलों पर उपलब्ध हो जाती है जिससे इसकी लोकप्रियता सिद्ध होती है। इस रचना की सर्वाधिक प्राचीन प्रति महाराजा संग्रहालय, जयपुर मे विद्यमान है। स० १७९९ में लिपिबद्ध इस प्रति मे कुल १३१ पत्र है। इसी संग्रहालय मे इसकी अन्य ९ प्रतियां भी हैं। जोधपुर, जयपुर व अलवर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों मे इसकी क्रमश १६ प्रतियां (इनमे से सात प्रतियां सं० १८२९ से १८६५ के मध्य लिपिबद्ध), ४ प्रतियां (एक प्रति का लि० का० सं० १८२६) व एक प्रति (लि० का स०

१८२५) उपलब्ध है।[238] वृंदावन शोध संस्थान में १३ प्रतियाँ हैं जिनमें सब प्राचीन प्रति सं० १८१० में कुभावती नगरी में भगवानदास वैष्णव द्वारा लिपिबद्ध हुई है।[239] इसमें कुल ६२८ छंद हैं। इस रचना की अन्य हस्त प्रतियाँ कृष्ण-जन्मभूमि सेवा संस्थान, मथुरा; महाराजा संग्रहालय जोधपुर (लि० का० सं० १८३५) एवं राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी में ४ प्रतियाँ (इनमें से एक प्रति का लि० का० सं० १८०७) सुरक्षित हैं। खोज रिपोर्ट (सन् १९१७, २०, २३, २६, २९ ३१) में इसकी १२ प्रतियों का विवरण है।

'भक्तिरस बोधिनी' का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

> गोपिन के अनुराग आगे आप हारे श्याम,
> जान्यो यह लाल रंग कैसे आवै तन में।
> ये तौ सब गौर तनी नखसिख बनी ठनी,
> खुल्यौ यौ सुरग अंग अंग रंगै बन मे॥
> श्यामताई माँझ सो ललाई हूँ समाई जो ही,
> ताते मेरे जान फिरि आई यहै मन में।
> 'जसुमति' सुतै सोई "शची सुतै" गौर भये,
> नये नये नेह चोज नाचै निज मन में॥[240]

२. **अनन्य मोदिनी** : इस रचना में ६६ दोहा और ६ कवित्त हैं जिनमें उपासना की अनन्यता का भावपूर्ण कथन हुआ है। इसमें श्री हरिराम व्यास कृत ११ पदों को उद्धृत कर उनसे स्व-उपासना सिद्धांत को पुष्ट किया गया है। इस कृति के आरंभ में कवि ने चैतन्य महाप्रभु, गुरु मनहरण, नित्यानंद, अद्वैत प्रभु व रूप, सनातन की वंदना की है।

'अनन्य मोदिनी' की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति मैंने महाराजा संग्रहालय, जयपुर में देखी है। यह प्रति इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कवि के जीवन-काल में लिपिबद्ध हुई है। इसका लिपिकाल इसकी पुष्पिका में संवत् १७८३ की कार्तिक शुक्ला १० उल्लिखित है।[241] अति सुंदर व स्पष्ट अक्षरों में यह प्रति श्वेताम्बर हेमराज द्वारा रूप नगर में लिपिबद्ध हुई है। इसकी अवस्था उत्तम है। इस कृति के अंतिम छंद में कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है। इसी रचना की एक अन्य हस्तलिखित प्रति (सं० १९८४ में लिपिबद्ध) बाबा कृष्णदास के संग्रह की है जो अब श्रीकृष्ण जन्म-भूमि सेवा संस्थान, मथुरा में उपलब्ध है। डॉ० किशोरीलाल गुप्त ने इस रचना का नाम 'अनिन्द्य मोदिनी' दिया है जबकि इसका नाम 'अनन्य मोदिनी' है जो इसकी प्राचीनतम उपलब्ध प्रति के अंतिम छंद से स्पष्ट है।[242]

३. **चाह वेली** : इसमें ५० अरिल्ल और १ कवित्त प्रयुक्त है। भक्त-कवि माधुरी कृत 'उत्कंठा माधुरी' के सदृश इस लघु रचना में भी इष्ट से मिलन के लिए प्रबल उत्कंठा व्यक्त हुई है। इसमें कवि ने अपने गुरु मनहरण, महाप्रभु चैतन्य और

नित्यानंद का मंगल-स्मरण करते हुए उनसे व राग-मार्ग के स्व-संप्रदायी अन्य आचार्यों से अभीष्ट लाभ की प्रार्थना की है। रसिक मुकुटमणि वृषभानु किशोरी से विनती करने के पश्चात् गोविंददेव, गोपीनाथ, राधारमण आदि चैतन्य संप्रदाय के उपास्य देव-विग्रहों, अष्ट सखियों, वृंदावन, यमुना आदि का स्मरण करते हुए प्रार्थना की गयी है। उपासनात्मक दृष्टि से इस रचना का अत्यधिक महत्व है। राधा-कृष्ण के रूप व प्रेम माधुर्य का सुंदर चित्रण हुआ है।[२४३] इस कृति में कवि का नामोल्लेख हुआ है।[२४४]

४. भक्त-सुमरिनी : इस रचना में 'भक्तमाल' और 'भक्ति रस बोधिनी' टीका में उल्लिखित भक्तों की नामावली है जिसे इनकी अनुक्रमणिका भी कहा जा सकता है। यह वैष्णवों के नित्य पाठ के लिए रची गयी है। इसमें कुल २३५ चौपाई है। 'भक्त सुमरिनी' की हस्तलिखित प्रतियां वृंदावन शोध संस्थान व कृष्ण जन्म-भूमि सेवा-संस्थान, मथुरा में उपलब्ध है। प्रथम प्रति की पुष्पिका में इसका लिपिकाल सं० १७७५ की जेठ बदि एकादशी उल्लिखित है।[२४५] दूसरी प्रति का लिपिकाल सं० १७७५ की कार्तिक बदि दसमी है। दोनों प्रतियों में २३० छंद हैं। इस रचना के प्रारंभ में प्रियादास ने महाप्रभु चैतन्य, इष्टदेव राधारमण व अपने गुरु श्री मनहरण (मनोहरदास) का स्मरण-वंदन किया है। अंत में कवि ने स्वयं के नाम का उल्लेख किया है।[२४६] महाराजा संग्रहालय, जयपुर में 'भक्त-सुमरिनी' की दो ह० प्रतियां (लि० का० सं० १७७८ व सं० १७९६) विद्यमान हैं।

५. रसिक मोहिनी : इसमें कुल १११ दोहे है। कृति के प्रारंभ में कवि ने चैतन्य महाप्रभु, गुरु मनोहरदास व इष्ट देव राधारमण जी की वंदना की है। तत्पश्चात् वृंदावन से आरंभ कर समस्त ब्रज मंडल की परिक्रमा का वर्णन किया गया है। इसमे ब्रज की महिमा गोलोक से भी अधिक बतायी गई है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति कृष्ण जन्मभूमि सेवा-संस्थान, मथुरा मे है। इस रचना के अन्त मे इसका रचना-काल सं० १७९४ की वैशाख सुदी तृतीया दिया गया है।[२४७] खोज-रिपोर्ट मे इस रचना का नाम 'रसिक मोदिनी' दिया हुआ है, जबकि हमने जो उपर्युक्त हस्तलिखित प्रति देखी है, उसमें 'रसिक मोहिनी' नाम लिखा है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट में इनकी उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य रचनाओं का उल्लेख भी मिलता है, वे हैं: पद रत्नावली (खो० रि० क्र० १९२०/१३५ डी०, १९४१/५१९ ख), पीपाजी की कथा (क्र० १९२९/२७३ सी), भक्ति प्रभा की सुलोचनी टीका (१९२०/१३५ सी), भागवत सुलोचना टीका (१९४१/१४१) प्रियादास संग्रह (१९२६/३६१ सी), संगीत रत्नाकर (१९२९/२७३ ई), संगीत माला (१९२९/२७३ एफ), संग्रह (१९२९/-२७३ जी)। अंतिम चारों रचनाएं ब्रजलीला से संबधित समान पदों के संकलन है। 'पद-रत्नावली' की एक हस्तप्रति (सं० १८७४ की) डॉ० नरेश बंसल के संग्रह में है जो अंतरंग परीक्षण से उनको प्रियादास जी की रचना लगती है। इसका पद

वि॰ ।।स स गक्त एव मुन्दर है। 'भागवत् सुलोचना टीका' की एक प्रति आर्य भ पुस्तकालय, काशी में सुरक्षित होने का उल्लेख भी किया गया है।[२४८] इसमें भाग के कुछ चुने हुए श्लोकों की टीका है। 'पीपाजी की कथा' 'भक्तिरसबोधि टीका' का एक अंश है।

वृंदावन चंद्र

वृंदावन चंद्र दास श्री राधा दामोदर के शिष्य एवं 'गोविन्द भाष्य' के रचनाका श्री बलदेव विद्याभूषण के गुरु-भ्राता थे।[२४९] कवि द्वारा रचित संस्कृत-ग्रंथों क भाष्य-रचनाओं—'श्रीकृष्णाष्टोत्तर शतनाम' स्तोत्र और 'गोपाल स्तवराज' मे कवि ने स्वयं को श्री राधा दामोदर का शिष्य बताया है।[२५०]

बलदेव विद्याभूषण का अस्तित्व काल १८वीं शती का पूर्वार्ध है और उनकी रचना 'गोविंद भाष्य' का रचनाकाल सं० १७७५ से सं० १८०० तक है।[२५१] अत बलदेव विद्याभूषण का समकालीन मानने पर वृंदावन चद्र का समय लगभग १७३५ वि०स० से १८०० वि० सं० तक अनुमानित किया जा सकता है। इसकी पुष्टि 'अष्टयाम' के अंतः साक्ष्य से भी होती है। इस ग्रंथ के प्रथम प्रकाश मे मंगला-चरण व गुरु सम्प्रदाय का कथन किया गया है। इसमें चैतन्य महाप्रभु का मगल स्तवन व सुप्रसिद्ध गौड़ीय-आचार्यों-भक्तों की वंदना की गई है। इसी के अन्तर्गत कवि ने प्रियादास जी के संबंध मे दो कवित्तों की रचना की है जिससे यह ध्वनित होता है कि प्रियादास जी इनके समय मे विद्यमान थे और इनके परम आदरणीय थे।[२५२] प्रियादास जी का काल हमने विगत पृष्ठों में सं० १७३५ से सं० १८२० तक के लगभग निर्धारित किया है। इस आधार पर भी वृंदावन चंद्र जी का समय उपर्युक्त ही ठीक प्रतीत होता है।

'अष्टयाम' के आधार पर कवि के जीवन-परिचय के सबंध में कुछ ज्ञात होता है। ये जाति के ब्राह्मण थे। गुरु परम्परा के कारण ऐसा जान पड़ता है कि इनका जन्म स्थान उत्कल अथवा गौड़ प्रदेश रहा होगा, जहा से ये कम उम्र में ही ब्रज में आकर निवास करने लगे होंगे। इनकी रचनाओं में प्राप्त ब्रजभाषा के परिष्कृत एवं ललित रूप से लगता है कि इन्होंने ब्रज भाषा एवं संस्कृति को पूर्णतया अपना लिया था।

रचनाएं : ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं के रूप मे वृंदावनचद्र जी की दो रचनाए मिलती है—'अष्टयाम' एवं 'गोपाल स्तवराज'।

१. **अष्टयाम :** यह इनकी प्रमुख एवं विशिष्ट कृति है। इसमें वृंदावनचंद्र नाम कई बार प्रयुक्त हुआ है। इस रचना का आधार मुख्यतः कृष्णदास कविराज गोस्वामी विरचित 'श्री गोविंद लीलामृत' नामक लीला काव्य है। रूप गोस्वामी कृत 'स्मरण मंगल' स्तोत्र तथा पुराणान्तर्गत अष्टयाम लीलात्मक अश भी इसकी रचना के आधार रहे हैं। इसका उल्लेख कवि ने 'अष्टयाम' की पुष्पिका मे किया है। यह ग्रन्थ बाबा कृष्णदास द्वारा (सं० २०१७ मे) प्रकाशित हो चुका

है। इसमें ४२२ दोहे, ३८४ कवित्त और ६६ सवैया छंद हैं। यह 'प्रकाश' नामक विविध परिच्छेदों में लिखा गया है। अष्टयाम की हस्तलिखित प्रति बाबा कृष्ण दास जी (कुसुम सरोवर, गोवर्द्धन) को स्व० गोस्वामी राधाचरण जी के पुस्तकालय से गो० अद्वैतचरण जी (वृंदावन) के द्वारा उपलब्ध हुई थी। श्री कृष्ण चैतन्य मठ (वृंदावन) के पास भी इसकी एक हस्त प्रति है जिसमें कुल २१८ पत्र हैं।

'अष्टयाम' लीला प्रधान काव्य है जिसमें राधा-कृष्ण की विविध लीलाओं का (अष्टकालीन) विस्तारपूर्वक सरस कथन हुआ है। प्रारंभ में मंगलाचरण, गुरु एवं संतों की वंदना के पश्चात् व्रज-वृंदावन की महिमा, और उनके विविध लीला-स्थलों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसमें बरसाना व अन्य वन, उपवन लता-कुंज आदि में कृष्ण-राधा-सखियों की लीलाओं का समावेश है। इसमें वृंदावन के प्राकृतिक सौंदर्य एवं प्रिया-प्रियतम की केलि-क्रीड़ा का सुन्दर चित्रण है। इसके पश्चात् राधा-मोहन की अष्टकालिक नित्य लीलाओं का वर्णन किया गया है। इस प्रकार इस रचना में नित्य विहार के चारों विधायक तत्वों--- राधा, कृष्ण, सखी वृंदावन—का आख्यान हुआ है। इसमें चैतन्य संप्रदाय की भावोपासना के अनुरूप माधुर्य भाव की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। संस्कृत निष्ठ पदावली एवं विविध अलंकारों के प्रयोग के साथ भाव-सौंदर्य भी अनुपम है।

२. गोपाल स्तवराज : गौतमीय तंत्र के 'गोपाल स्तवराज' का यह ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। इसकी हस्तलिखित प्रति बाबा कृष्णदास जी को गो० ब्रजभाषि-लाल जी (वृंदावन) के पुस्तकालय से उपलब्ध हुई थी। यह लघु रचना मनोहरदास जी कृत 'राधारमण रस सागर' के अंत में बाबा जी द्वारा प्रकाशित की गई है। यह एक स्तोत्र काव्य है जिसमें सूत्र शैली में कृष्ण एवं उनकी विविध लीलाओं का स्मरण किया गया है। इस रचना के अंत में कवि व कृति का नामो-ल्लेख हुआ है।[२५३]

वैष्णवदास 'रसजानि'

वैष्णवदास नाम के कई ब्रजभाषा कवि हुए हैं किंतु चैतन्य संप्रदाय के वैष्णवदास की पृथक्ता 'रसजानि' संज्ञा से ज्ञात होती है। वैष्णवदास इनका मूलनाम था 'रसजानि' उपनाम था। विद्वानों को इन दो नामों से दो पृथक् रचनाकार होने का भ्रम हुआ है।[२५४] 'भक्तमाल' के टिप्पणीकार वैष्णवदास चैतन्य संप्रदाय के इन वैष्णवदास से भिन्न हैं। अपनी रचनाओं में वैष्णवदास 'रसजानि' ने चैतन्य महा-प्रभु का मंगल स्मरण किया है। इनकी रचनाओं से इनका कुछ परिचय प्राप्त होता है। उसके अनुसार ये भक्तमाल के सुप्रसिद्ध टीकाकार प्रियादास जी के पौत्र एवं श्रीराधारमण जी के गोस्वामी हरिजीवन जी के शिष्य थे।[२५५] इनको 'रसजानि' नाम प्रियादास जी ने ही प्रदान किया था। उन्हीं की कृपा से इनको काव्य तत्व एवं भक्ति रस का बोध हुआ था। ये ब्राह्मण वंश में उत्पन्न हुए थे और इनके परिवार जन वृंदावन में निवास करते थे। स्वयं ये भी वृंदावन में ही निवास करते हुए

भक्ति भाव मग्न हो काव्य रचना में लीन रहते थे।

वैष्णवदास रसजानि के आविर्भाव काल का अनुमान इनकी रचनाओं में दिए गए रचना काल से किया जा सकता है। 'भागवत भाषा' का रचनाकाल १८०७ तथा 'गीत गोविन्द भाषा' का रचनाकाल सं० १८१४ उल्लिखित है। इसके अतिरिक्त रामशरण जी कृत 'रसडंगी' नामक रचना में, जिसका रचनाकाल सं० १८३३ है, उक्त समय तक वैष्णवदास जी की विद्यमानता का उल्लेख हुआ है। अत. इन सब आधारों पर इनका जन्म सं० १७७० और निधन सं० १८३५ के लगभग अनुमानित होता है।

रचनाएं : वैष्णवदास जी कृत ब्रजभाषा काव्य-रचनाए ये हैं—१. भक्तमाल माहात्मय, २. भागवत भाषा, ३. गीतगोविद भाषा, ४. भक्ति रत्नावली भाषा ५. भक्त उरवसी।

१. **भक्तमाल-माहात्म्य :** इस लघु रचना मे भक्तमाल के माहात्म्य का कथन हुआ है। इसके अंत में प्रियादास के पौत्र वैष्णवदास द्वारा 'भक्तमाल माहात्म्य' की रचना का उल्लेख है। यह इनकी प्रारंभिक कृति जान पड़ती है। प्रियादास जी द्वारा भक्तमाल-टीका के लिखे जाने के पश्चात् सं० १८०० के लगभग इसकी रचना हुई होगी। यह रूप कला जी कृत भक्तमाल टीका के अंत मे मुद्रित हुई है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति (लि० का० सं० १९०८) वृंदाबन शोध सस्थान में है।

२. **भागवत भाषा व भागवत माहात्म्य भाषा :** यह संपूर्ण भागवत महापुराण का सरल ब्रजभाषा में पद्यानुवाद है। दोहा-चौपाई छन्द मे लिखे गए इस विशद काव्य ग्रन्थ में १५ हजार के लगभग छंद प्रयुक्त है। मूलगत शुद्ध अनुवाद के कारण इस रचना की काफी प्रसिद्धि हो गयी थी। 'श्रीमद्भागवत भाषा' का प्रकाशन बाबा कृष्णदास ने (सं २०१० में) किया है। इसकी हस्तप्रतियां अनेक स्थलों पर उपलब्ध होती है। सं० १८२२ व सं० १८३१ मे लिपिबद्ध इसकी ह० प्रतियां बाबा कृष्णदास के संग्रह मे है। है। कृष्ण-जन्म भूमि सेवा संस्थान मथुरा के संग्रहालय मे इस रचना की (स० १८५८ में लिपिबद्ध) एक प्रति हमने देखी है जिसमें इसका रचनाकाल सं० १८०७ लिखा हुआ है।[२५७] इस रचना के साथ 'भागवत माहात्म्य भाषा' भी जुडी हुई है। इसमे कुल ५१० पत्रों मे पंचम स्कद से द्वादश स्कंध तक है। जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान मे इसकी ५ प्रतियां है जिनमें से सं० १८६१ में लिपिबद्ध एक प्रति मे कुल १०२१ पत्र हैं। एक प्रति सुरीर (मथुरा) में भी विद्यमान है।[२५८] नन्दकिशोर जी मुकुट वाले वृंदावन के पास एक प्रति है। बाबा कृष्णदास जी की हस्त प्रति से नकल की हुई एक प्रति मैंने वृंदावन शोध संस्थान में देखी है। इसके अतिरिक्त शोध संस्थान में 'भागवत माहात्म्य भाषा' के नाम से २ प्रतियां उपलब्ध है जो कि 'भागवत् भाषा' का ही एक अंश है। 'भागवत भाषा' वैष्णवदास जी की प्रशसनीय कृति है। वस्तुत: भागवत जैसे महान व विशद ग्रथ का सरल ब्रजभाषा मे अनुवाद कवि की विद्वत्ता

एवं अलौकिक रचनाशक्ति का परिचायक है। इस रचना का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

> बहुरि रासमण्डल के माँही। पिय सो मिलि तिय नृत्य कराही।
> तहाँ किंकिनी चूरी नूपुर। तिनही की बहु व्यापि रह्यौ सुर ॥
> तिय पिय मण्डल सोहत ऐसे। गौर नीलमणि माला जैसे।
> भुजहि कँपाय ठुमकि पग धरे। पवन पाय कुच पट फहरै ॥
> हँसत चलति कटि भृकुटि नचावत। कानन करनफूल छवि पावत।
> बेनी किंकिनि बाँधति गाढ़ी। गावति पियहि पसीजति ठाढ़ी ॥
> पिय के सग तिय सोहति ऐसे। मेघनि के सग बिजुरी जैसे ॥[२५९]

३. गीत गोविंद भाषा : विविध छंदो मे रचित यह रचना जयदेव कृत सुप्रसिद्ध संस्कृत के गीति-काव्य 'गीत गोविंद' का सरल एव ललित ब्रजभाषा काव्यानुवाद है। इसमे सूक्ष्मतम भावो की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है। इसका रचनाकाल सं० १८१४ है।[२६०] 'श्री गीत गोविन्द' के नाम से बाबा कृष्णदास जी ने इसका प्रकाशन करा दिया है। इसमे मुद्रण की भूल से इस रचना का लिपिकाल सं० १७७७ छप गया है। वस्तुत: यह सं० १८७७ है। इसकी एक ह० प्रति नन्द-किशोर जी मुकुटवाले (वृंदावन) के पास है जिसका लिपिकाल सं० १८७७ है। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर में भी इस रचना की ह० प्रति सुरक्षित है जिसमे कुल ४८ पत्र है। इस रचना का एक उदाहरण प्रस्तुत है

> प्रानन तें प्यारी सखी भारी भई बैरिन ते
> सीतल समीर आग जारत शरीर है ॥
> आनन्द अमन्द चन्द कन्द भयौ विषकौ सो
> फूल भये शूल तन धरत न धीर है।
> जबतें मुरारि मेरे हिये के मझार आय
> दई है दिखाई छाई तब ही ते पीर है।[२६१]

४. भक्ति रत्नावली भाषा : यह महाप्रभु चैतन्य देव के समकालीन विष्णुपुरी जी द्वारा संकलित भागवत के श्लोकों का संग्रह 'भक्ति रत्नावली' का ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। इसकी हस्तलिखित प्रति बड़ौदा विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान मे एव छतरपुर के राजकीय पुस्तकालय मे होने का उल्लेख हुआ है।[२६२] वृन्दावन के गोपालराय द्वारा सं० १८७५ मे लिपिबद्ध एक हस्त० प्रति बाबू ब्रजरत्नदास जी के संग्रह मे है।[२६३]

वैष्णवदास जी के नाम से 'भक्त उरबसी' नामक रचना भी बताई जाती है। यह रचना नाभा जी कृत 'भक्तमाल' एव प्रियादास जी कृत भक्तमाल-टीका पर टिप्पणी के रूप में रची हुई कही जाती है।[२६४] यह रचना हमें न तो उपलब्ध हो सकी है न ही प्रामाणिक रूप से इसके विषय मे कुछ ज्ञात हो सका है।

न रचनाओं में आंशिक वर्णनात्मक ओर कुछ स्फुट पद भी प्र
होते है

वृंदावन दास

ये पूर्वोक्त चैतन्य संप्रदायी कवि वृंदावन चंद्र से भिन्न भक्त कवि है। इनकी ब्र
भाषा काव्य-रचना 'प्रेम भक्ति चंद्रिका' में प्राप्त उल्लेख से यह ज्ञात होता है कि
वृंदावन दास जी चैतन्य महाप्रभु के प्रमुख सहकारी श्री अद्वैताचार्य की शिष्य
परंपरा में हुए थे। इनके उपास्य देव श्री राधा गोविंद जी थे। वृंदावन में यमुन
तट पर भ्रमर कुंज (वर्तमान में भ्रमर घाट) नामक स्थल पर निवास करते हुए
इन्होंने ग्रंथ-रचना की।[२१५] ब्रजभाषा में रचित 'प्रेमभक्ति चंद्रिका' की भाषा को
'निज भाषा' कहे जाने से ये ब्रजभाषा भाषी ज्ञात होते हैं। इनके रचनाकाल से
इनके अस्तित्वकाल का अनुमान लगाया जा सकता है। इनके द्वारा रचित 'प्रेम
भक्ति चंद्रिका' का रचनाकाल सं० १८१३ और 'विलाप कुसुमांजलि' का रचना-
काल स० १८१४ है।[२१६] इस आधार पर इनका जन्म सं० १७७० और देहावसान
स० १८४० के लगभग माना जा सकता है। इनकी रचनाओं में हरिवल्लभ की कृपा
एवं उनके द्वारा प्राप्त निर्देश का उल्लेख हुआ है।[२१७] हरिवल्लभ गो० विश्वनाथ
चक्रवर्ती का अन्य नाम था। अतः हो सकता है कि इन्होंने विश्वनाथ चक्रवर्ती से
दीक्षा ली हो।

रचनाएं : वृंदावनदास जी बंगला, ब्रजभाषा एव सस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे।
इनकी रचनाओं से यह सिद्ध होता है। बंगाली भक्तों के संपर्क एव गुरु कृपा से इन्हें
बगला का पर्याप्त ज्ञान हुआ। इनकी ब्रजभाषा-रचनाओं का परिचय इस प्रकार
है—

१. भक्त नामावली : यह देवकीनंदन कृत बंगला रचना 'वैष्णव वंदना' का
ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। 'भक्त नामावली' में स्वयं कवि ने इसका उल्लेख किया है
और यह भी बताया है कि हरिवल्लभ के प्रसाद-बल से ही वह इस रचना में समर्थ
हुआ है। इसमे कवि वृंदावनदास के नाम के साथ रचना-स्थल कुंज भ्रमर भी
उल्लिखित है।[२१८] 'वैष्णव वंदना' का चैतन्य संप्रदायी भक्त-जनों में नित्य पाठ के
रूप मे प्रमुख स्थान है। इसका ब्रजभाषा अनुवाद प्रस्तुत कर इसे ब्रजभाषा भाषी
भक्तो के लिए सुलभ कराने का महत्वपूर्ण कार्य वृंदावनदास जी ने संपन्न किया
है। 'भक्त नामावली' मे सांप्रदायिक अनेक भक्तों का नामोल्लेख करते हुए उनकी
वंदना की गयी है। यह रचना दोहा एव सोरठा छंद मे रचित है जिनकी कुल
सख्या १५६ है। इसका प्रकाशन बाबा कृष्णदास जी द्वारा सं० २००७ में किया जा
चुका है।

२. प्रेम भक्ति चंद्रिका : यह सुप्रसिद्ध गौडीय भक्त श्री नरोत्तमदास ठाकुर
कृत बंगला रचना 'प्रेमभक्ति चंद्रिका' का ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। नरोत्तमदास
जी द्वारा इस ग्रंथ में चैतन्य मत के भक्ति ग्रंथों का सार-तत्व संचित कर देने से यह

कृति गौडीय भक्त जनो मे विशिष्ट रूप से प्रिय रही है सका अ गल भक्ति भ से नि य पाठ किया जाता है पूर्वोक्त ग्रंथ क अनुव न य मग न ी ग ग । का ब्रजभाषा में अनुवाद प्रस्तुत कर वृंदावनदास जी ने इसे सर्वसुलभ कराने का सरा नीय कार्य किया है। सरस एवं सुंदर शैली मे अनूदित इस रचना मे मूल का सा सौंदर्य विद्यमान है। इसकी भाषा सरस एव प्रभावोत्पादक है। इसे बाबा दास जी ने (सं० २००७ मे) प्रकाशित कर दिया है। इस पुस्तिका के अंत मे इसका रचनाकाल सं० १८१३ की पौष शु० ५ दिया हुआ है। [६९] इसका रचना-स्थ यमुना के किनारे भ्रमरकुंज उल्लिखित है।

'प्रेम भक्ति चंद्रिका' से एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

> जल बिन मीन, दीन जलद बिन चातक,
> औ जैसै मधु बिन मधुप लै ठानियै।
> चंद बिन चकोर और पति बिन सती जैसे,
> ज्यो ही रंक चित्त पुनि वित्त हित मानियै॥
> छिन-छिन छीन अरु दीन दुख लीन तोऊ,
> एक प्रीति-रीति, नीति एक ही बखानियै।
> तैसी रति-मति टेब-भेव चाव-भाव तैसी,
> ऐसी गति प्रेमी की सु प्रेम बिन जानियै॥[२७०]

३. विलाप कुसुमांजलि : यह सुविख्यात गोस्वामी रघुनाथदास जी कृत सस्कृत रचना 'विलास कुसुमांजलि' का सरस ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। रघुनाथ गोस्वामी विरह के साक्षात् स्वरूप थे। उन्होंने इष्ट प्राप्ति हेतु विरह को अनिवार्य बताया है। उनकी इस रचना में भी उपास्य के विरह मे संतप्त कवि हृदय की वेदना काव्य के रूप में अभिव्यक्त हुई है। मूल ग्रंथ के अनुरूप ही वृंदावनदास जी की ब्रजभाषा अनुवाद रचना भी सरस, भावपूर्ण एवं सुंदर बन पड़ी है। इसकी पुष्पिका मे इसका रचना काल सं० १८१४ की पौष शुक्ला पचमी उल्लिखित है।[२७१] विलाप कुसुमांजलि का प्रकाशन भी बाबा कृष्णदास द्वारा (सं० २००७ मे) किया गया है। इसमे कुल १०९ दोहा, चौपाई छंद प्रयुक्त है। इस रचना से एक उदाहरण इस प्रकार है—

> तव चरण कमल की दासी। भरि विरह दवागिनि गासी॥
> अलि झुरसि परी तनु बेली। टुक सुधा दीठि लघु हेली॥
> हे देवि जिवावहु ताही। थिर थिती होय ब्रज माँही॥
> तव नूपुर की रुन-झुन लहरी। अमरित-रस सागर सम गहरी॥
> मम बधिरत्व दूरि कब करि है। हा कल्याणि! विकल चित्त भरि है॥[२७२]

वृंदावनदास जी द्वारा रचित उक्त तीन रचनाओ के अतिरिक्त इनकी नाम छाप से युक्त पद भी उपलब्ध होते है जिनमें से कुछ चैतन्य महाप्रभु की बधाई से सबधित है।[२७३] इनके कुछ पद 'गौरांग पदावली' में संकलित है।

हरिराम जौहरी 'रामहरि'

हरिराम जी का उपनाम 'रामहरि' था जो उनकी अधिकतर काव्य-रचनाओ मे प्रयुक्त हुआ है। ये मेरे पिता स्व० श्री विश्वेश्वरनाथ जी गुप्त (टाटीवाला) 'मधुर'[२७४] के पूर्वज थे और उनसे ५ पीढ़ी पूर्व हुए थे। ये बसल गोत्रीय अग्रवाल वैष्णव थे। इनके पिता का नाम लक्ष्मणदास था। इनके पूर्वज पंजाब प्रात के 'महिम' नामक स्थान के निवासी थे और जब सवाई जयसिह ने जयपुर बसाया तब यहां आकर बस गये, इसी से ये 'महमिया' कहलाने लगे।[२७५] उस समय से चला आ रहा जौहरी का काम परिवार मे आज भी विद्यमान है। हरिराम जी श्री राधा-रमण जी के उपासक श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी की शिष्य परंपरा मे हुए थे। इन्होने अपनी समस्त रचनाओं के आरंभ मे इष्टदेव श्री राधारमण जी और चैतन्य महा-प्रभु की वंदना की है।[२७६] अपने जीवन के आरंभिक काल मे ये जयपुर में रहे परतु बाद मे वृंदावन में निवास करने लगे थे।

कवि रामहरि का जन्म सं० १७७५ के लगभग और देहावसान सं० १८८० के लगभग अनुमानित है। इनकी रचनाएं सं० १८२० से १८३६ तक के मध्य रची हुई उपलब्ध हुई है। 'ध्यान-रहसि' का रचनाकाल स० १८२० है।[२७७] 'बुधि विलास' और 'प्रेम पत्री' का रचनाकाल क्रमशः सं० १८३२ व सं० १८३६ है। कवि का निकट संपर्क जयपुर के सेठ देवकीनंदनदास से था जो स्वयं 'रूप मजरी' नाम से काव्य-रचना किया करते थे और वंशी अलि जी के शिष्य थे। इनके अतिरिक्त रूप नगर के महात्मा हेमराज जोशी, वहीं के राजा नागरीदास तथा उनके दरबार के सुप्रसिद्ध कवि वृंद से ये अच्छी तरह परिचित थे और उनकी रचनाओ के प्रेमी थे। इनके समय के महान भक्त श्री लालजी भट्ट के सुपुत्र श्री गोवर्द्धन भट्ट ने रामहरि का बड़े आदर के साथ उल्लेख करते हुए इन्हें श्रीकृष्ण-राधा चरित्र मे अखंड अभिलाषा रखने वाले नित्यानंद प्रभु के पदारविंद-मकरंद के आस्वादन मे मत्त हृदय, विषयों मे अनासक्त भाव रखने वाले भक्त के रूप मे बताया है।[२७८] रामहरि जी की रचनाओ से विदित होता है कि ये संस्कृत और व्रजभाषा के परम विद्वान थे।

रचनाएं : सभा की खोज रिपोर्ट में रामहरि द्वारा रचित ६ रचनाओ का उल्लेख हुआ है।[२७९] उनके नाम है—१. रस पच्चीसी, २. बोध बावनी, ३. लघु शब्दावली, ४. लघु नामावली, ५. सतहंसी और ६. बुद्धि विलास। इनके अतिरिक्त दो रचनाएं—प्रेम पत्री और ध्यान रहसि—भी उपलब्ध होती हैं। इन सभी रचनाओं को बाबा कृष्णदास ने 'रामहरि ग्रंथावली' के नाम से सं० २००८ मे प्रकाशित किया है।

रामहरि जी कृत 'ध्यान रहसि' व स्फुट पदों की एक हस्तलिखित प्रति हमारे सग्रह में है। स्वयं कवि के द्वारा यह पोथी सं० १८२२ मे सवाई जयपुर मे लिपिबद्ध हुई है।[२८०] सुंदर अक्षरों में लिखित इस पोथी मे कुल २७६ पत्र है जिसमे कवि की

स्वय की रचना ध्यान रहसि व स्फुट पदो के अतिरिक्त अन्य कवियो के पद भी सकलित हैं। अन्य कवियो में सुंदरदास, व्यास, चन्द, रामचन्द, परमानंददास, केसोदास, नथमल, मीरा, नंददास, वृंद, तुलसी व नागरीदास के पद हैं जिनमें सर्वाधिक पद नागरीदास के है। रामहरि जी ने विभिन्न कवियों द्वारा रचित बारहमासा के पदों का सुंदर सकलन किया है। रामहरि जी की रचनाओं की एक हस्तलिखित प्रति कृष्ण जन्म-भूमि सेवा संस्थान, मथुरा के संग्रहालय में उपलब्ध है।

१. ध्यान रहसि : यह रामहरि जी की प्रारंभिक कृति है जिसकी पुष्पिका मे इसका रचनाकाल सं० १८२० दिया हुआ है। यह बारह-खड़ी के रूप में रचित ३७ छंदों की लघु रचना है। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

> द दा दीप दीवारी राधिका दीपत भौन मंझार।
> देख रीझ वर लाडलौ देत लड़ैती हार॥
> फ फा फबी वेजंती सोहनी फूलन उर पर रंग।
> फूल भरी इत भाँमनी फूलन आली संग॥[२८१]

२. बुद्धि विलास : यह कवि की उपलब्ध रचनाओं मे सबसे बड़ी है। इसमें कुल २५५ दोहे हैं जिनकी रचना साखी शैली पर है। इसमे कवि के स्वयं के दोहों के साथ अन्य कवियो के छद भी संकलित है। ये भक्ति, नीति, उपदेश, विरह आदि विषयों से संबंधित है। इस रचना की पूर्ति सं० १८३० की ज्येष्ठ शुक्ल ३ रविवार को हुई थी।[२८२] इस रचना से एक उदाहरण प्रस्तुत है—

> नैन लगे ते जान ही और न जानत कोइ।
> रामहरी ए नेहरा सुधि बुधि देवै खोइ॥[२८३]

३. सतहंसी : इस चमत्कार पूर्ण सुदर रचना मे कुल १०२ दोहे है। इसमें राधा-कृष्ण एवं सखियों के मध्य सवादों मे यमकालंकार के प्रचुर प्रयोग द्वारा चमत्कार उत्पन्न किया गया है। इसमे कही-कही रचना दुर्बोध हो गयी है किन्तु कवि की काव्यात्मक प्रतिभा का भी उत्कृष्ट परिचय देती है। यमकालंकार का प्रयोग करते हुए ही कवि ने अपने नाम का भी उल्लेख किया है।[२८४] इस कृति की रचना सं० १८३३ की माघ शु० ५ मगलवार को वृंदावन मे हुई थी, जैसा कि इसकी पुष्पिका मे उल्लिखित है। इस रचना का एक उदाहरण इस प्रकार है—

> जामिनि बीती जात है जाम न लावहु वार।
> जा मनि कों नित ढूढ़िये जा मन तास मंझार॥[२८५]

४. लघु नामावली : यह धनंजय कोश, अमरकोश, मेदनी कोश और नंद-दास जी कृत नामावली एवं अनेकार्थ मंजरी का आधार लेकर लिखी गयी कोश-रचना है जिसमें कुल १०२ दोहे है। इसमें कोश की भांति अनेक समानार्थी शब्दों का संकलन किया गया है।[२८६] इसकी रचना वृंदावन मे स० १८३४ की श्रावण

शु० तीज को हुई थी।[२८७]

५. लघु शब्दावली यह भी उपयुक्त रचना की भांति कोशात्मक रचना है जिसमें १०० दोहे हैं। इसकी पूर्ति सं० १८३४ की अश्विनी शुक्ला पूर्णमासी (शरद पूनौ) गुरुवार को होने का उल्लेख किया गया है।[२८८]

६. बोधबावनी : यह ५४ दोहों की उपदेशात्मक लघु रचना है। जैसा कि कवि ने स्वय इस कृति में कहा है, इसकी रचना अन्य कवियो के काव्य से प्रेरणा ग्रहण करके की गयी है। इसके अंत में लिखा हुआ है कि इसकी रचना सं० १८३५ की अगहन शुक्ला पूर्णमासी (बलदेव पून्यौ) को वृंदावन मे हुई थी। इस रचना से एक उदाहरण देखिये—

> बिना प्रेम हरि मिलत नहिं, महा कठिन यह प्रेम।
> रामहरि तजि जग विषै, भजौ कृष्ण करि नेम॥[२८९]

७. प्रेमपत्री : यह १० दोहों की प्रणय-पत्रिका है। गोपियो के पत्र रूप मे लिखित इस रचना में सरलता, भावमयता एव सरसता है। आकार में लघु होने पर भी यह मार्मिक व प्रभावपूर्ण रचना है। इनके अत मे इसकी रचना-तिथि स० १८३६ की वैशाख शु० ३ रविवार दी हुई है।

८. रस पचीसी : इसमे राधा-कृष्ण के अग-सौंदर्य, रूप-लावण्य का चित्रण है।[२९०] शृंगार-रस की इस रचना में नायिका के कुछ गुण भी वर्णित हैं। इसमे कुल २७ दोहे चौपाई प्रयुक्त है। रचना-काल का उल्लेख इसमे नही किया गया है।

ललित सखी

ललित सखी का यह नाम भक्तिपरक उपनाम था, इनका मूल नाम एवं यथार्थ काल अज्ञात है। ये श्री नारायण भट्ट जी की वंश परंपरा के अतर्गत नवम पीढ़ी मे होने वाले मुरलीधर जी भट्ट के शिष्य थे। इसका उल्लेख कवि ने अपनी रचनाओं मे किया है। इनकी कृति 'कुंवरि केलि' का रचनाकाल स० १८३६ दिया हुआ है, उससे इनका जन्म संवत् १८०० के लगभग अनुमानित किया जा सकता है। इन्होंने अपनी रचनाओ मे अपने उपनाम के साथ अपने गुरु का नाम भी दिया है, इसी से उनमे 'ललित सखी' के अतिरिक्त 'ललित सखी मुरलीधर' और कही-कही 'मुरलीधर' की छाप भी मिलती है।

रचनाएं : ललित सखी कृत दो ब्रजभाषा काव्य रचनाएं उपलब्ध होती है—१. कहानी रहसि और २. कुंवरि केलि। इन्हे बाबा कृष्णदास ने एक ही पुस्तिका मे (सं० २०१७) प्रकाशित कर दिया है। इन रचनाओं की हस्तलिखित प्रतिलिपि (बाबा कृष्णदास के संग्रह की) श्रीकृष्ण जन्मभूमि सेवा सस्थान, मथुरा में है।

१. कहानी रहसि : ५३ छंदो में रचित यह रागानुगा वात्सल्य की रचना है। इसमे बालिका लाडिली जी के आग्रह से उनकी माता द्वारा उन्हें कहानी सुनाने

का कथन हुआ है। इस रचना का भक्ति क्षेत्र में विशिष्ट महत्त्व है। रागानुगा भक्ति के साथ वात्सल्य भाव का अद्भुत समावेश हुआ है। इसके प्रारंभ में गुरु के रूप में श्री नारायण भट्ट जी एवं मुरलीधर जी की वंदना की गयी है। अंत में 'ललित सखी मुरलीधर' की छाप मिलती है।[२६१] इसकी भाषा सरल एवं सरस है। रचना-काल का उल्लेख इसमें नहीं किया गया है।

२. **कुंवरि-केलि** : इसमें कुल ११६ छंद है, जिनमें दोहा, कवित्त, सवैया, चौपाई आदि छंद प्रयुक्त हुए है। यह भी वात्सल्य भाव की रचना है। इसमें कीरति-कुवरि राधा की बाल-लीलाओं, सखियों के साथ विविध केलि-क्रीडाओं का सुंदर चित्रण हुआ है। इसके आरभ में भी गुरु-वंदना के रूप में श्री नारायण भट्ट जी एवं मुरलीधर के नामों का उल्लेख किया गया है। इसकी रचना-तिथि सं० १८२० में द्वितीय श्रावण कृ० ६ मंगलवार है।[२६२] काव्य एवं भक्ति दोनों दृष्टियों से यह उत्कृष्ट रचना है।

गोपाल राय

इनका मूलनाम गोपालराय एव उपनाम गुपाल कवि था। ये जाति के ब्रज भट्ट थे और वृंदावन के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम रघुनाथराय उपनाम प्रवीनराय था।[२६३] ये चैतन्य सम्प्रदाय के रामबक्श जी भट्ट के शिष्य थे।[२६४] पटियाला महाराज कर्णसिंह के छोटे भाई अजीतसिंह इनके प्रधान आश्रयदाता थे।[२६५] गोपाल कवि कृत 'दंपति वाक्य विलास' नामक रचना में रचनाकाल सं० १८८५ लिखा हुआ है[२६६] एवं 'श्री वृंदावन धामानुरागावली' में रचना काल सं० १९०० दिया हुआ है[२६७] जिससे इनका जन्म सं० १८५५ के लगभग और निधन सं० १९२० के लगभग अनुमानित किया जा सकता है। गोपाल कवि ने अपनी रचनाओं में इष्टदेव राधारमण जी और चैतन्य महाप्रभु की वंदना की है।

रचनाएं—गोपालराय उत्तम भक्त एवं श्रेष्ठ कवि थे। उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की है जिनके नाम खोज रिपोर्ट के अनुसार इस प्रकार है[२६८]- १. दंपति वाक्य विलास, २ रस सागर (रचनाकाल सं० १८८७), ३. वन यात्रा (र० का० सं० १८९७), ४. वृंदावन धामानुरागावली, ५. वृंदावन माहात्म्य (र० का० सं० १९०३), ६. वर्षोत्सव (र० का० सं० १९०३), ७ ध्वनि विलास (र० का० सं० १९०७), ८. दूषण विलास (प्रतिलिपिकाल सं० १९०७) ९. भूषण विलास, १०. भाव विलास, ११. रास पंचाध्यायी सटीक, १२. अस्फुट कवित्त, (रचनाकाल सं० १९११), १३. वैराग्य शती, १४. मान पचीसी। मीतल जी ने इनके अतिरिक्त गोपाल कवि कृत चार ग्रंथ और बताए हैं—[२६९] १५. ब्रज-यात्रा, १६. वंशीलीला, १७. गोपाल भट्ट चरित, और १८. भक्तमाल टीका। वंशीलीला हित संप्रदाय के अनुयायी किसी अन्य गोपाल कवि की रचना है।[२७०] इनकी रचनाओं से ज्ञात होता है कि गोपाल कवि काव्य शास्त्र के श्रेष्ठ विद्वान एवं ब्रज-वृंदावन के परम भक्त थे। काव्य के विविध अगों का वर्णन तो इन्होंने किया ही

है, ब्रज-महिमा एवं भक्ति संबंधी काव्य की रचना भी इन्होंने की है। शृंगार और भक्ति का अपूर्व सामंजस्य इनकी रचनाओं में मिलता है।

गोपाल कवि कृत सर्वाधिक महत्वपूर्ण एव प्रसिद्ध ग्रंथ 'श्री वृंदावन धामानुरागावली' है। इसमे ब्रज महिमा का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हुए उसके प्रति अनन्य भक्ति-भाव प्रदर्शित किया गया है। इसकी अनेक प्रतियां अनेक स्थलो पर उपलब्ध हो जाती हैं। इसकी एक पूर्ण प्रति, शुद्ध स्पष्ट एवं सुदर अक्षरो मे लिखी हुई, वृंदावन के गो० राधाचरण जी के पुस्तकालय मे विद्यमान है।[301] इस प्रति का विशेष महत्व इसलिए है कि यह स्वयं कवि के हाथ की लिखी हुई है। इसमें छोटी सांची के कुल ३०४ पृष्ठ हैं। यह ४० अध्यायो मे पूर्ण वृहद् ग्रंथ है। इस कृति के अन्त में इसका रचनाकाल एवं लिपिकाल स० १६०० दिया हुआ है।[302] इस ब्रजभाषा काव्य-ग्रथ मे वृंदावन की चक्रबेधी परिक्रमा का वर्णन करते हुए उसमें स्थित सभी दर्शनीय स्थलों—मंदिर, मठ, देवालय, देव-विग्रह, कुज-उत्सव सत-महात्मा, समाधि आदि का विश्वसनीय व्यक्तियो से सुना हुआ एवं स्वयं कवि द्वारा प्रत्यक्ष मे देखा हुआ विस्तृत वर्णन है। इससे तत्कालीन वृंदावन के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है जो वहां का इतिहास लिखने मे सहायक हो सकती है। इसकी शैली वर्णनात्मक, परिचयात्मक एवं सरल है।

अन्य काव्य-ग्रंथों मे 'दपति वाक्य विलास' १०४ पृष्ठो का बड़ा ग्रथ है। इस रचना के आरंभ मे कवि ने इष्टदेव राधारमण जी की वंदना करते हुए उनके रूप शृंगार का चित्रण किया है। इसमे परदेश के सुख-दुख, ब्याह, यात्रा, कथा, कीर्तन सवारी, बनिज, जाति, रोजगार आदि के प्रबंधो का वर्णन किया गया है। इसकी हस्तलिखित प्रति (लिपिकाल सं० १६३२) मैंने जोधपुर के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान मे देखी है जिसमे कुल ५२ खुले पत्र है। अन्तिम पत्र मे ग्रथ की विषय सूची लिखी हुई है। यह प्रति कृष्णगढ़ मे जयलाल द्वारा लिपिबद्ध है। 'दंपति वाक्य विलास' की रचना सं० १८८५ में अगहन मास की पूर्णिमा को हुई।[303] 'रस सागर' नायिका भेद एव रस शास्त्रीय रचना है। 'बनयात्रा' में वृंदावन की यात्रा करते हुए उसकी परिक्रमा एवं तीर्थो का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इस रचना के प्रारभ मे कवि ने महाप्रभु चैतन्य की वंदना की है।[304] 'वृंदावन माहात्म्य' मे पद्मपुराण के आधार पर ब्रज-वृंदावन की महिमा का गान किया गया है। 'ध्वनि विलास' एक ध्वनि काव्य एव 'भाव विलास' भाव सबंधी रचना है। 'दूषण विलास' में काव्य के दोषों का तथा 'भूषण विलास' मे ६७ पृष्ठों में अलकारों का निरूपण किया गया है। 'वर्षोत्सव' में वर्ष-भर के उत्सवों व त्यौहारों का वर्णन है। 'वैराग्य-शती' नामक रचना का विषय पटियाला नरेश नरेंद्र सिंह तथा उनके पुत्र युवराज रघुसिंह की मृत्यु से संबधित है अत: उसमे वैराग्य की अभिव्यक्ति हुई है। 'अस्फुट कवित्त' एक संग्रह है जिसमें देव, गिरिधर, प्रताप आदि कवियों की दुर्गा, गगा, यमुना, राम आदि से संबंधित रचनाएं हैं। गो० अद्वैतचरण जी (वृंदावन) के पास गोपाल कवि की एक रचना है जिसमे वृंदावन के संबंध में अनेक

गुसाइन के कवित्त सग्रहीत हैं

हरिदेव

कविवर हरिदेव जी वृंदावन-निवासी अग्रवाल वैश्य थे [illegible] कवि ग्वाल के सहपाठी थे। इनका जन्म सं० १८८२ में और निधन सं० १९१९ को ज्येष्ठ शु० ११ को हुआ था।[307] हरिदेव जी की रचना- 'रस चंद्रिका (प्रकाशित संस्करण) की भूमिका में इनका संक्षिप्त जीवन-परिचय दिया गया है, उससे ज्ञात होता है कि इनके पिता का नाम रतिराम जी था जो वृंदावन में पंसारी की दुकान करते थे। खोज रिपोर्ट में इनके गुरु का नाम रसिक गोविंद बताया गया है। वंश परंपरा से कवि का परिवार चैतन्य संप्रदाय का अनुयायी रहा। 'रस चंद्रिका' के प्रत्येक प्रसंग के अन्त में कवि हरिदेव ने स्वयं को "श्रीराधारमण पद अरविंद मकरंद पानानंदित अलिंद श्री रतिराम आत्मज" कहा है।[308] पिता के काव्य-प्रेमी होने के कारण इन्हें अपनी काव्य-शिक्षा का समुचित अवसर प्राप्त हुआ और आगे चलकर ये प्रतिभाशाली कवि एवं काव्य शास्त्र के श्रेष्ठ ज्ञाता हुए। इन्होंने गो० दयानिधि से काव्य की शिक्षा ली।

ऐसी प्रसिद्धि है कि हरिदेव जी अपनी बाल्यावस्था में ग्वाल कवि से अधिक प्रतिभाशाली एवं कुशाग्र बुद्धि थे। इसलिए इन दोनों के शिक्षा गुरु दयानिधि जी ग्वाल की अपेक्षा हरिदेव जी के प्रति अधिक स्नेह रखते थे। ग्वाल कवि के जीवन-वृत्त से पता चलता है कि एक बार गो० दयानिधि ने एक दोहा पढ़कर इन दोनों से उसका अर्थ लगाने को कहा। ग्वाल उसका अर्थ न कर सके परन्तु हरिदेव ने तत्काल उसका सही अर्थ कर दिया। इससे गुरु ने अत्यंत प्रसन्न होकर सभी शिष्यों के समक्ष हरिदेव की प्रशंसा की और ग्वाल की प्रतारणा। इससे ग्वाल अत्यंत दुःखी होकर गो० दयानिधि के पास से चले गये और फिर कभी काव्य-शिक्षा के लिए उनके पास लौटकर नहीं आये। बाद में उन्होंने खुशाल को अपना गुरु मान लिया और हरिदेव से भी अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की। ग्वाल ने जीविकोपार्जन के निमित्त काव्य-रचना की थी परंतु हरिदेव के लिए काव्य-सृजन अन्तः आनंद निमित्त होता था। हरिदेव यश-लिप्सा से दूर केवल भक्ति भावापन्न होकर वृंदावन में एकांतिक रूप से काव्य-रचना किया करते थे, अतः उन्हें उतनी प्रतिष्ठा नहीं मिल सकी। इसमें संदेह नहीं कि उनकी काव्य-रचनाएं उच्च कोटि की हैं जिनमें रीतिकालीन काव्य शास्त्रीय परिज्ञान एवं शैली की स्पष्ट अभिव्यक्ति देखने को मिलती है।

रचनाएं : हरिदेव जी कृत छः ग्रंथों का पता चलता है— १. रस चंद्रिका २. छंद पयोनिधि, ३. काव्य कुतूहल, ४. रामाश्वमेध, ५. वैद्यसुधा और ६. भूषण भक्ति विलास।[309] मिश्र बंधुओं ने 'नायिका लक्षण' नामक एक रचना का और उल्लेख किया है जो 'रस चन्द्रिका' का ही दूसरा नाम हो सकता है अथवा कोई स्वतंत्र रचना भी हो सकती है।

१. रस चंद्रिका : यह काव्यशास्त्रीय सुंदर एवं समर्थ रचना है जिसमें

नायिका भेद तथा रस भद का निरूपण किया गया है। इनके लक्षणो सहित सुदर उदाहरण दिए गये है। राधा-कृष्ण को लक्षित कर नायक-नायिका के भेदो-प्रभेदो, लक्षणो आदि का सुंदरता से प्रतिपादन कर लौकिक शृंगार को उदात्त एव उज्ज्वल रूप प्रदान किया गया है। इसकी एक हस्त प्रति वृंदावन के नंदकिशोर जी मुकुट वालों के पास विद्यमान है जिसमें अन्त का कुछ भाग नही है। इसमे कुल ४४५ छंद है। साहित्यिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। इस रचना को कृष्णदास बाबा ने सं०२०२२ में प्रकाशित किया है।

२ **छंद पयोनिधि :** पिंगल के आधार पर रचित इस रचना में छदो का शास्त्रीय वर्णन किया गया है। इस ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८९२ है।[309] इसकी हस्तलिखित प्रति वृंदावन शोध संस्थान व डॉ० बंसल के पास है। यह कृति स० १९६३ मे श्री वैंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई द्वारा सानुवाद प्रकाशित हो चुकी है। इसमें आठ तरंग है व कुल ५८४ छंद है जिनमे छन्द शास्त्र के विविध अगो का विस्तृत वर्णन हुआ है। इस ग्रन्थ की पुष्पिका मे कवि ने स्वय को इष्टदेव श्री राधारमण जी का भक्त व रतिराम का पुत्र बताया है।[310]

अन्य काव्य-रचनाओ में 'वैद्य सुधानिधि' वैद्यक विषय से सम्बन्धित है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति रास मंडल वृंदावन के बाबा काशीदास के संग्रह मे बताई गई है।[311] 'रामाश्वमेध' नामक रचना 'पद्म पुराण' के पाताल खण्ड का शेष वात्स्यायन सवाद का अनुवाद है। इसकी एक ह०प्रति नंदकिशोर जी मुकुट वालों (वृंदावन) के पास है जिसमे इसका रचनाकाल स० १९०९ दिया हुआ है। 'काव्य कुतूहल, एक अलकार ग्रंथ है जिसमे अलंकारों के लक्षण व उदाहरण दिए गए है। 'भूषण भक्ति विलास' भी बड़ा अलंकार ग्रंथ है जिसका रचना काल सं० १९१४ का मधुमास है।[312]

गो० कृष्ण चैतन्य 'निज कवि'

इनका मूल नाम कृष्ण चैतन्य एव काव्योपनाम 'निज कवि' था। रीतिकालीन अतिम चरण के कवियों मे इनका महत्वपूर्ण स्थान है किंतु जानकारी के अभाव मे ये अब तक हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रथों मे उपेक्षित रहे हैं। इनके जीवन परिचय के सबध मे इनकी रचनाओं से कुछ ज्ञात होता है। इनकी काव्य रचना 'उक्ति-जुक्ति रस कौमुदी' मे प्राप्त उल्लेख के अनुसार पता चलता है कि गो० कृष्ण चैतन्य वृंदावनस्थ राधारमणीय गोस्वामी श्री रास बिहारी लाल जी के सुपुत्र थे। ये पिता-पुत्र गौड़ ब्राह्मण व चैतन्य संप्रदाय के थे। कृष्ण चैतन्य को अपने बड़े भाई श्री राधा गोविंद से मंत्र-दीक्षा मिली थी। इनके इष्टदेव श्री राधारमण जी थे और आचार्य चैतन्य महाप्रभु।[313] बाबू ब्रजरत्नदास के पितामह बाबू बुलाकीदास से गो० रास बिहारी जी का विशेष परिचय था। बाबू ब्रजरत्नदास जी ने इनका परिचय प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि गो० कृष्ण चैतन्य संस्कृत व ब्रजभाषा के उच्चकोटि के विद्वान कवि व काव्य कला विशारद थे।[314]

बाबू ब्रजरत्नदास के अनुसार गो० कृष्ण चैतन्य के दौहित्र गो० किशोरीलाल जी का जन्म संवत् १९२२ वि० में हुआ था। राजा शिव प्रसाद का जन्म सं० १८८० में हुआ था जो गो० कृष्ण चैतन्य को अपना साहित्यिक गुरु मानते थे।[315] अतः इस आधार पर गोस्वामी जी का जन्म सं० १८७० वि० के लगभग अनुमानित किया जा सकता है।[316] भारतेंदु हरिश्चंद्र, गो० दामोदर किशोर, मन्नालाल 'द्विज' जैसे साहित्याचार्य इन्हें अपना साहित्यिक गुरु मानते थे। गो० श्रीनिवासदास 'श्याम' इनके शिष्य थे।[317] इनके मृत्यु काल का अनुमान भी इनकी रचनाओं से लगाया जा सकता है। इनकी रचनाओं की पाडुलिपि का काल सं० १९२२ से १९३० तक है। दिसंबर १८७८ ई० (सं० १९३६) की 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका' नामक पत्रिका में इनकी एक रचना—'श्री राधारमण जू की शृंगार' प्रकाशित हुई थी। इसकी हस्तलिखित प्रति का लिपिकाल सं० १९२२ है।[318] 'उक्ति-जुक्ति रस कौमुदी' का लिपिकाल सं० १९२८ है अतः कवि का रचनाकाल सं० १९०० से १९४० तथा मृत्युकाल सं० १९४० के लगभग अनुमानित होता है। भारतेंदु कालीन कवियों में परिगणित होते हुए भी ये उनसे पूर्ववर्ती रीतिकालीन परिपाटी के अंतिम समर्थ आचार्य कोटि के कवि थे।

रचनाएं : गो० कृष्ण चैतन्य श्रेष्ठ कवि एवं आचार्य दोनों थे। इन्होंने अनेक ब्रजभाषा काव्य-ग्रंथों की रचना की है जिनमे इनकी सबसे विशद एवं महत्व-पूर्ण कृति 'उक्ति जुक्ति रस कौमुदी' है।

१ उक्ति जुक्ति रस कौमुदी : यह कवि की विशिष्ट साहित्यिक महत्व की कृति है। इसकी हस्तलिखित प्रति (सं० १९२८ मे लिपिबद्ध) बाबू ब्रजरत्नदास के संग्रह मे है। इसका सुविस्तृत परिचय सर्वप्रथम उन्होंने ही बिहार राष्ट्रभाषा परि-षद की त्रैमासिक पत्रिका में प्रस्तुत किया था।[319] नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट में भी इस रचना का उल्लेख हुआ है जिसमे लिपिकाल सं० १९३० दिया हुआ है।[320] बाबू ब्रजरत्नदास जी के संग्रह मे उपलब्ध 'उक्ति जुक्ति रस कौमुदी' की हस्तलिखित प्रति मे कुल ४५४ पत्र है। इसकी लिपि सुंदर व स्पष्ट है। सोलह कलाओं में पूर्ण इस ग्रंथ मे कुल ५४७१ छंद व पद हैं जिनमें दोहे, सवैये तथा कवित्त अधिक है। यह एक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ है जिसमें प्रायः सभी काव्यांगों पर विस्तारपूर्वक सूक्ष्मता से प्रकाश डाला गया है। इनके लक्षण, उदाहरण आदि दिए गये है। इसमे अन्य कवि आचार्यों की रचनाओं से भी उदाहरण दिए गये है परन्तु लगभग पचास प्रतिशत रचना इनकी स्वयं की ही है। इस ग्रंथ की सोलह कलाओ एवं उनका विषय-परिचय संक्षेप में इस प्रकार है—

प्रथम कला का नाम 'ग्रंथारम्भ कैरवी' है जिसमें कुल ४१९ छंद हैं। इसमे प्रारंभ मे सर्वश्री कृष्ण चैतन्य महाप्रभु, नित्यानंद, अद्वैताचार्य, रूप आदि गोस्वामियों की वंदना की गई है। तदनंतर 'निज वंश' वर्णन, ग्रंथ का प्रयोजन एवं अनुक्रमणिका है। श्री राधारमण जी एवं गुरु वंदना के पश्चात रचना का आरंभ किया गया है इसमे यमुना अष्टोत्तरी गंगा अष्टोत्तरी आदि स

काव्य, नीति के दोहे, दोहे का निर्माण, भेद, गणों आदि की विवेचना की गई है। श्री कृष्ण जन्म बधाई, श्री राधिका जन्म मंगल, पालना, कर्णवेध, धनतेरस आदि संस्कारों-त्योंहारों का वर्णन है। दूसरी कला—'प्रेम सुधाकर शाला' (१००० छंद व पद) सबसे विशद है जिसमें प्रेम का स्वरूप पात्र, पंथ व भेदों का लक्षण एवं उदाहरण सहित विवेचन किया गया है। विरह की दशाओं का भेदोपभेद सहित निरूपण करते हुए उसके उदाहरण के रूप में 'उद्धव चरित्र' नामक काव्य प्रस्तुत किया गया है जो पूर्णत: कवि की स्वयं की कृति है। यह कवि की स्वतंत्र रचना भी मानी जा सकती है। यह एक प्रबन्धात्मक रचना है जिसमें कवि की प्रगाढ़ भक्ति भावना एवं अद्वितीय काव्य प्रतिभा प्रगट हुई है। विरह काव्य एवं संदेश काव्य परंपरा मे रचित इस कृति में पर्याप्त मौलिकता, चारुता, गंभीरता एवं मार्मिकता है। यह संभव हो सकता है कि बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' को अपने सुप्रसिद्ध काव्य 'उद्धव शतक' लिखने में इससे प्रेरणा मिली हो। 'उद्धव चरित्र' में उद्धव के ब्रज में जाने की कथा वर्णित है। श्री कृष्ण के कहने पर उद्धव का ब्रज मे जाना, राधा, गोपियों, नन्द-यशोदा एवं ब्रजवासियों की विरह-व्याकुल दशा देखना तथा उन्हें ज्ञान का उपदेश देना, गोपियों के वक्रोक्ति युक्त उपालभों-प्रत्युत्तरों से उद्धव का प्रभावित होना एवं प्रेम मे उन्मत्त उद्धव का मथुरा में लौटना—इन सबका अत्यंत मार्मिक चित्रण हुआ है। उद्धव के कहने पर कृष्ण ब्रज मे आकर ब्रजवासियो के दुःख का निवारण करते है एवं गोपियों के साथ महा-रास रचाते हैं। यह 'निज' कवि की साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रसात्मक कृति है।

इस ग्रंथ की तीसरी कला 'सौंदर्य चंद्रिका' (कुल छं० सं० ४१८) मे नायिका की नख-शिख रूप-शोभा का अनेकानेक उपमानों के द्वारा अत्यंत सुदर वर्णन किया गया है। 'नेत्र मंजूषा' नामक चतुर्थ कला में नायकों, नायिकाओं, सखा दूती आदि के नेत्र-सौंदर्य, कटाक्षों का केवल वर्णन किया गया है। इनके लक्षण एवं उदाहरण आगे ७.८ वी, कलाओं मे दिए गये है। पांचवी कला 'भावकुमुदाह्लादिनी' है जिसमें कुल २११ छंदो मे प्रत्येक रस के भाव, विभाव, अनुभाव, सात्विक, व्यभिचारी भाव, स्थाई भाव आदि की व्याख्या, लक्षण, भेदोपभेद एवं उदाहरण दिए गये हैं। इनमे पूर्ववर्ती कवियों की रचना के उद्धरण भी दिए गये है एवं स्वयं कवि कृत दोहे भी उदाहरण के रूप में हैं। अन्त में विशेष जानकारी की इच्छा हेतु 'भक्तिरसामृत सिंधु' नामक ग्रंथ द्रष्टव्य बताया गया है। 'नवरस चकोरिणी' (छ० ३८७) नामक छठी कला में शृंगार आदि सभी रसो के लक्षणों, भेदोपभेदों की विवेचना की गयी हैं। सातवी कला 'नायक इंदु प्रभा' (छंद ३४७) में नायको के भेदोपभेद तथा इनके सखाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है। आठवीं कला 'नायिका प्रकाश' है (कुल छं० सं० ८६८)। इसमें नायिका के भेदोपभेदो का लक्षण व उदाहरण सहित विवेचन हुआ है। इनमें हाव, भाव, भूषणादि के संबंध में भी बतलाया गया है। नवी कला 'सर्वदूतिका द्युति' (छं० सं० २७५) का संबध इक्कीस

प्रकार की दूतियो एव उनके कार्यों स है। दसवी कला का नाम सुरति किरणावली है (छ० १७६) इसमे काम-शास्त्र के आधार पर नायक व नायिका के भेद विभिन्न प्रकार की रीतियो के लक्षण तथा उदाहरण दिए है। 'षट्ऋतु मरीचिका नामक ग्यारहवी कला (छं० ३२७) मे बसंत ऋतु से आरभ करके क्रमश' अन्य ऋतुओं का वर्णन किया गया है। यह वर्णन सयोग एव वियोगपरक दोनो है। संयोग परक प्रकृति वर्णन मे पुष्प चयन, जल केलि आदि क्रीडाओं-लीलाओं का सरस चित्रण है। बारहवी कला से लेकर सोलहवी कला तक पाचो कलाओं का संबंध अलंकारों से होने के कारण इनका सम्मिलित नाम 'अलंकार क्षपा' है। उनके अलग-अलग नाम क्रमशः इस प्रकार है—दूषण-वर्णन, दूषणोल्लास, शब्दालकार, गुणालंकार तथा अर्थालंकार। इनमे विभिन्न प्रकार के दोष, उदाहरण, उनका समाधान, गुण व वृत्ति के भेद तथा अलकारों के विविध भेदो का लक्षण एव उदाहरण सहित विस्तृत कथन हुआ है। इस ग्रथ की सभी कलाओं मे प्राप्त काव्य शास्त्रीय विवेचन परंपरागत रूप से होते हुए भी मौलिकता से समन्वित है।

अन्य रचनाएं: उपर्युक्त ग्रंथ के अतिरिक्त निज कवि की अन्य अनेक छोटी छोटी रचनाए भी मिलती है। श्री हरिश्चद्र चंद्रिका[321] मे उनकी एक रचना श्री राधारमण जू कौ शृंगार' नाम से प्रकाशित हुई थी। इसमे राधारमण जी के रूप-सौदर्य एव शृगार का वर्णन हुआ है। इस रचना की हस्तलिखित प्रति कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान मथुरा के संग्रहालय मे है। बाबा कृष्णदास के सग्रह से प्राप्त उस प्रति का लिपिकाल सं० १९२२ है।[322] इसमे कुल ६ पत्र है। सन् १८७० की 'कवि वचन सुधा' मे 'सांझ वर्णन' नामक रचना का उल्लेख मिलता है जिसमें छ ऋतुओं की सध्या का दो-दो छप्पयों मे वर्णन है। इसी पत्रिका मे ही एक और रचना 'पावस ऋतु का वर्णन' प्रकाशित हुई है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे इनके अनेक स्फुट छद, समस्या पूर्तिया आदि भी छपती रही है।

ललित किशोरी

चैतन्य मतानुयायी भक्त-कवियों में ललित किशोरी जी अत्यंत प्रसिद्ध हुए है। ये और इनके भ्राता ललित माधुरी जी की जोड़ी उसी प्रकार से थी जिस प्रकार रूप-सनातन गोस्वामी की। ललित किशोरी और ललित माधुरी इनके काव्या-पनाम थे और मूलनाम क्रमशः शाह कुंदनलाल एव फुंदनलाल थे।[323] इन दोनों भाईयों में परस्पर अपार स्नेह था। इनके पूर्वज हांसी हिसार के निवासी थे और धनाढ्य थे। इनके पितामह विहारी लाल जौहरी थे। अवध के नवाब ने उन्हें शाह की उपाधि प्रदान की थी तभी से इनका परिवार शाह वश कहलाने लगा।[324] इनके पिता का नाम शाह गोविंदलाल था। वे अग्रवाल वैश्य थे।

'अभिलाष माधुरी' (ललित किशोरी जी कृत) की भूमिका में ललित किशोरी जी के पौत्र शाह गौर शरण गुप्त ने इनका जीवन परिचय प्रकाशित किया है उसमे दिए गये विवरण के अनुसार ललित किशोरी जी का जन्म सं० १८८२ की कार्तिक

और चैतन्य मत का प्रचार किया स० १९३२ मे इन्होने वृंदावन मे श्री षडभुज महाप्रभु जी का मंदिर स्थापित किया। स० १९३७ से आप निरंतर वृंदावन-वास करने लगे। उस समय ये विरक्त भाव से श्रीराधारमण जी की सेवा-पूजा, व कथा कीर्तन मे लगे रहते थे। इनका देहावसान ६३ वर्ष की आयु मे सं० १९४७ की मार्गशीर्ष कृ० १ को हुआ था। शाह ललित किशोरी जी एवं राधाचरण जी गोस्वामी ने अपने पदो मे इन्हे श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए इनके महान व्यक्तित्व का गुणगान किया है।

रचनाएं : 'गुण मंजरी' की नाम छाप से गल्लू जी के अनेक पद उपलब्ध होते है। ब्रजभाषा में रचित ये पद उत्तम कोटि के है। इनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाए ये है—१. श्रीराधारमण पद मंजरी, २ श्री प्रार्थना पद, ३. युगल छद्म, ४. रहस्य पद, ५. पदावशेष, ६. भागवत पद मुक्तावली।

'श्रीराधारमण पद मजरी' मे श्रीराधारमण जी के नित्य संकीर्तन एव वर्षोत्सव के पदों का संकलन है। यह रचना कवि के पौत्र श्री अद्वैतचरण जी गोस्वामी (वृंदावन) द्वारा प्रकाशित हो चुकी है। इसका द्वितीय सस्करण स० १९९२ मे निकला है। विभिन्न राग-रागनियो मे निबद्ध इन पदों मे श्रीराधा कृष्ण की नित्य लीलाओ का अत्यंत सरस एवं आकर्षक चित्रण हुआ है। विभिन्न उत्सवों पर गाये जाने वाले इनके पद अति प्रसिद्ध है। आज भी भक्त जन भाव विभोर होकर इनका गायन करते है। इस रचना मे कुल ७७ पद हैं। भक्ति-भाव एव काव्य—दोनों दृष्टियो से यह उत्कृष्ट रचना है। 'राधारमण उत्सव पद' नाम से उपलब्ध इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति वृंदावन शोध संस्थान में उपलब्ध है।

'श्री प्रार्थना पद' नरोत्तम दास ठाकुर की बगला भाषा में रचित 'प्रार्थना' नामक रचना का ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। श्री वृंदावन से चैतन्याब्द ४२५ मे इसका प्रकाशन हुआ है। 'रहस्य पद' एवं 'पदावशेष' लघु कृतियां हैं जिनका प्रकाशन एक ही पुस्तिका में है व श्री वृंदावन यंत्रालय द्वारा सं० १९४८ मे मुद्रण हुआ है। इसमे कुल १६ पृष्ठ है। 'भागवत पद मुक्तावली' मे कुल ४६५ पद है। इसका कुछ अश 'उराहनो लीला' के नाम से श्री अद्वैतचरण गोस्वामी ने सन् १९२४ में प्रकाशित किया है। इसमे कृष्ण की चपलताओ से तंग आकर गोपियो द्वारा यशोदा को उलाहना देने का प्रसंग वर्णित है।

ललित माधुरी

ललित किशोरी जी के लघु भ्राता ललित माधुरी जी, जिनका मूल नाम शाह कुंदन-लाल था, प्रसिद्ध भक्त कवि हुए हैं। ये अपने भाई के प्रति प्रगाढ स्नेह भाव रखते हुए उनके साथ ही वृंदावन आ गये थे। इनका जन्म सं० १८८५ की माघ शु० १४ को हुआ था [७३२] ये जीवन पर्यंत अपने अग्रज ललित किशोरी जी के सहचारी और अनुवर्ती बने रहे भारतेंदु जी ने इनको कलिकाल म नता के लक्ष्मण कहा है

प्रकार की दूतियो एव उनके कार्यो से है दसवी कला का नाम सुरति किरणावली है (छ० १७६) इसमे काम-शास्त्र के आधार पर नायक व नायिका के भेद, विभिन्न प्रकार की रीतियो के लक्षण तथा उदाहरण दिए है। 'षट्ऋतु मरीचिका' नामक ग्यारहवी कला (छं० ३२७) मे बसत ऋतु से आरंभ करके क्रमशः अन्य ऋतुओ का वर्णन किया गया है। यह वर्णन सयोग एव वियोगपरक दोनो है। सयोग परक प्रकृति वर्णन मे पुष्प चयन, जल केलि आदि क्रीडाओं-लीलाओ का सरस चित्रण है। बारहवी कला से लेकर सोलहवी कला तक पांचों कलाओ का सबंध अलंकारों से होने के कारण इनका सम्मिलित नाम 'अलंकार क्षपा' है। उनके अलग-अलग नाम क्रमशः इस प्रकार है—दूषण-वर्णन, दूषणोल्लास, शब्दालकार, गुणालंकार तथा अर्थालंकार। इनमें विभिन्न प्रकार के दोष, उदाहरण, उनका समाधान, गुण व वृत्ति के भेद तथा अलकारो के विविध भेदो का लक्षण एव उदाहरण सहित विस्तृत कथन हुआ है। इस ग्रथ की सभी कलाओ मे प्राप्त काव्य शास्त्रीय विवेचन परंपरागत रूप से होते हुए भी मौलिकता से समन्वित है।

अन्य रचनाएं: उपर्युक्त ग्रंथ के अतिरिक्त निज कवि की अन्य अनेक छोटी छोटी रचनाएं भी मिलती है। श्री हरिश्चद्र चद्रिका[321] मे इनकी एक रचना श्री राधारमण जू को श्रृंगार' नाम से प्रकाशित हुई थी। इसमें राधारमण जी के रूप-सौंदर्य एव श्रृगार का वर्णन हुआ है। इस रचना की हस्तलिखित प्रति कृष्ण जन्म भूमि सेवा सस्थान मथुरा के सग्रहालय मे है। बाबा कृष्णदास के संग्रह से प्राप्त उस प्रति का लिपिकाल स० १९२२ है।[322] इसमे कुल ६ पत्र है। सन् १८७० की 'कवि वचन सुधा' मे 'सांझ वर्णन' नामक रचना का उल्लेख मिलता है जिसमे छ ऋतुओं की सध्या का दो-दो छप्पयों मे वर्णन है। इसी पत्रिका मे ही एक और रचना 'पावस ऋतु का वर्णन' प्रकाशित हुई है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे इनके अनेक स्फुट छद, समस्या पूर्तियां आदि भी छपती रही है।

ललित किशोरी

चैतन्य मतानुयायी भक्त-कवियों मे ललित किशोरी जी अत्यत प्रसिद्ध हुए है। ये और इनके भ्राता ललित माधुरी जी की जोड़ी उसी प्रकार से थी जिस प्रकार रूप-सनातन गोस्वामी की। ललित किशोरी और ललित माधुरी इनके काव्या-पनाम थे और मूलनाम क्रमशः शाह कुदनलाल एव फुदनलाल थे।[323] इन दोनों भाईयों में परस्पर अपार स्नेह था। इनके पूर्वज हांसी हिसार के निवासी थे और धनाढ्य थे। इनके पितामह विहारी लाल जौहरी थे। अवध के नवाब ने उन्हें शाह की उपाधि प्रदान की थी तभी से इनका परिवार शाह वंश कहलाने लगा।[324] इनके पिता का नाम शाह गोविंदलाल था। वे अग्रवाल वैश्य थे।

'अभिलाष माधुरी' (ललित किशोरी जी कृत) की भूमिका मे ललित किशोरी जी के पौत्र शाह गौर शरण गुप्त ने इनका जीवन परिचय प्रकाशित किया है, उसमे दिए गये विवरण के अनुसार ललित किशोरी जी का जन्म स० १८८२ की कार्तिक

शु० २ को लखनऊ में हुआ था।[३३५] शैशव से ही इनमें भक्ति भावना विद्यमान थी जो इनके गुरु वृंदावन के श्रीराधारमण जी के गोस्वामी राधा गोविंद की कृपा से और अधिक सुदृढ हुई। इन्होंने अध्यवसाय पूर्वक अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। ये गान, वाद्य, नृत्य, नाट्य आदि ललित कलाओं के उत्कृष्ट ज्ञाता और रत्नों के अच्छे पारखी थे। इनमें जन्मजात काव्य प्रतिभा थी, इसी से इन्होंने उस समय ब्रजभाषा, उर्दू, खड़ी बोली मे अनेक कविताएं एवं शेर-गजल लिखे। सं० १९१३ मे ये वृंदावन आये और स्थायी रूप मे वही निवास करने लगे। यहा इन्होंने संगमरमर का विशाल एवं भव्य मंदिर बनवाया जिसका नाम 'ललित निकुंज' रखा। आजकल यह मंदिर 'शाह जी के मंदिर' के नाम से प्रसिद्ध है। ललित किशोरी जी की ब्रज-भक्ति इतनी अपूर्व एवं सुदृढ़ थी कि वे वृंदावन मे कभी जूता-चट्टी पहनकर नही घूमते थे, न कभी सवारी में बैठते थे। यहा तक कि ब्रजरज मे मलमूत्र का त्याग न करके आगरा से मिट्टी के पात्र मंगाकर उन्हें ब्रज के बाहर फिकवाते थे। ये कभी ब्रज के बाहर पग नही रखते थे।[३३६] इनकी ब्रजनिष्ठा की अनेकानेक कथाएं आज भी ब्रज मे श्रद्धापूर्वक सुनी एवं कही जाती है। ये एकात भक्त, महात्मा, साधक, विद्वान एव रसिक कवि थे। बड़े-बड़े प्रवीण गायकों एव रास के स्वरूपों को ये गान की शिक्षा देते थे। इनका निधन सं० १९३० की कार्तिक शु० २ को प्रिय भूमि वृंदावन मे हुआ था।[३३७]

रचनाएं : ललित किशोरी जी ने जहा ब्रजभाषा में श्रेष्ठ एव सरस पदो की रचना की है, वहा उर्दू फारसी मे भी श्रेष्ठ काव्य-रचना की है। इनकी रचनाओं का संकलन इनके अनुज ललित माधुरी जी ने किया था। इनकी कविताएं 'कवि वचन सुधा' और 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' मे प्रकाशित हुई थी। इनके दो ब्रजभाषा काव्य ग्रंथ है—'रस कलिका' और 'अभिलाष माधुरी'।

रस कलिका : यह बृहद् अप्रकाशित ग्रंथ है जिसकी हस्तलिखित प्रति कवि के पौत्र शाह गौरशरण जी गुप्त (शाह जी का मंदिर, वृंदावन) के पास सुरक्षित है। उसमे कुल ८६६ पत्र है। यह ग्रंथ २४ दलों में विभाजित किया गया है जिनमें कुल मिलाकर पदों की संख्या ८८७९ है। इस ग्रंथ में प्रत्येक दल के पश्चात् ललित माधुरी जी के 'शाह कुंदनलाल' नाम से सर्राफी लिपि मे हस्ताक्षर अंकित हैं। इसके अन्त मे उसका लिपिकाल सं० १९३९ वि० की माघ शु० ३ (११ फरवरी, सन् १८८३) तथा लिपिकार का नाम प० केशवदेव शर्मा दिया हुआ है। 'रस कलिका' का कुछ अश 'लघु रस कलिका' के नाम से लीथो में चैतन्य पुस्तकालय, गुलजार बाग द्वारा प्रकाशित हुआ है।[३३८] वृंदावन शोध संस्थान मे इसकी एक प्रति मैंने देखी है जो लीथो मे शिला यंत्रालय मथुरा द्वारा प्रकाशित हुई है, इसमे समय सं० १९३९ की माघ सुदी ३ दिया हुआ है।[३३९]

'रस कलिका' भक्ति एवं काव्य—दोनों दृष्टियो से श्रेष्ठ ग्रंथ है। माधुर्य भक्ति का भावपूर्ण विस्तार उसमे हुआ है। ग्रंथ के आरंभ में श्रीराधारमण देव, कृष्ण चैतन्य महाप्रभु गोपाल भट्ट आदि गोस्वामियों एवं गुरु श्रीराधा गोविंद की वंदना

करते हुए उनकी कृपा की आकांक्षा की गई है। इसके २४ दलों के 'माधुरी' नाम उनमें निरूपित लीला-प्रसंगों के आधार पर क्रमशः इस प्रकार दिए गये हैं— वृंदावन विलास माधुरी, निकुंज अलसान माधुरी, पूर्वमग विलास माधुरी, प्रात वन विलास माधुरी, जल केलि माधुरी, शृंगार माधुरी, पासा केलि माधुरी, राज-भोग माधुरी, मध्यान वन विलास माधुरी, फागु माधुरी, रस पान सयन माधुरी, उत्थापन विलास हिंडोल, पुष्प, दान केलि, उत्तर मग विलास, अभिसार, ब्यारु विलास, रास, साझ, मधुपान, कुंज विलास, निकुंज विहार, स्वप्न विलास। इसमें माधुर्य भावपरक विविध लीलाओं का अत्यंत सुंदर चित्रण हुआ है। प्राय हर 'माधुरी' का उत्कर्ष राधा-कृष्ण की सुरति लीला में हुआ है। इसमें पदों की रचना में विभिन्न राग-रागनियों का उल्लेख भी किया गया है। पदों के अतिरिक्त दोहा, चौपाई, झूलना, कुंडलिया, आदि छंदों का प्रयोग भी किया गया है। इसमें कुछ उर्दू, फारसी की गजलों का समावेश है।

अभिलाष माधुरी : यह प्रकाशित रचना है। इसका दूसरा संस्करण शाह गौर शरण गुप्त (शाह जी का मंदिर, वृंदावन) ने सं० १८८८ में वृंदावन से प्रकाशित किया है। इसमें 'विनय शृंगार शतक', 'जुगल विहार शतक', 'बारा-खड़ी, 'बारामासी, अष्टयाम उत्कंठा स्तवक के पश्चात् विनय-शृंगार, शिक्षा व सिद्धांत संबंधी ६५३ पद हैं। अभिलाष माधुरी माधुर्य भाव परक सरस काव्य-रचना है। इसमें हिंदी और फारसी में कुछ गजलें भी दी हुई हैं। इसकी एक हस्तलिखित प्रति प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर में विद्यमान है जिसमें कुल १२० पत्र हैं। इसी रचना का एक अंश 'विनय शतक' नाम से हस्तलिखित प्रति के रूप में वृंदावन शोध संस्थान में उपलब्ध है।[३३०] ललित किशोरी जी कृत कुछ चुने हुए पदों का एक संकलन 'दान लीला, नौका लीला और क्षीर नहर लीला' के नाम से भी प्रकाशित हुआ है। इनके पदों में भावों की सरसता एवं अनुभूति की प्रगाढ़ व्यंजना अनुपम है। विभिन्न भजन-कीर्तन मण्डलियों, समाजो, रासधारियों एवं भक्तों में इनके पद अति प्रचलित हैं।

गो० गल्लू जी 'गुण मंजरीदास'

गो० गल्लू जी कवि का मूल नाम एवं 'गुणमंजरीदास' उपनाम था। ये श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी के परिकर में वृंदावनस्थ श्री राधारमण जी के गोस्वामी दामोदर-दास की वंश परंपरा में गो० रमणदयाल के पुत्र थे। इनका जन्म सं० १८८४ की ज्येष्ठ कृ० ८ को वृंदावन में हुआ था। हिंदी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं भारतेंदु के सखा राधाचरण जी गोस्वामी इनके पुत्र थे।[३३१]

गल्लू जी राधा कृष्ण के अनन्य निष्ठावान भक्त एवं वैष्णव भक्ति के आचार-विधान के कट्टर पालक थे। ये धार्मिक ग्रंथों के ज्ञाता व मार्मिक वक्ता थे। काशी, फर्रुखाबाद लखनऊ आदि स्थानों पर भ्रमण करते हुए इन्होंने अनेक कथा-वार्ताएं कीं इन्होंने कई स्थानों पर अपने इष्टदेव श्री राधारमण जी के मंदिर बनवाए

और चैतन्य मत का प्रचार किया। सं० १९३२ में इन्होंने वृंदावन में श्री षड्भुज महाप्रभु जी का मंदिर स्थापित किया। सं० १९३७ से आप निरंतर वृंदावन-वास करने लगे। उस समय ये विरक्त भाव से श्रीराधारमण जी की सेवा-पूजा, व कथा-कीर्तन में लगे रहते थे। इनका देहावसान ६३ वर्ष की आयु में सं० १९४७ की मार्गशीर्ष कृ० १ को हुआ था। शाह ललित किशोरी जी एवं राधाचरण जी गोस्वामी ने अपने पदों में इन्हें श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए इनके महान् व्यक्तित्व का गुणगान किया है।

रचनाएं : 'गुण मंजरी' की नाम छाप से गल्लू जी के अनेक पद उपलब्ध होते हैं। ब्रजभाषा में रचित ये पद उत्तम कोटि के है। इनकी ब्रजभाषा काव्य-रचनाएं ये है—१. श्रीराधारमण पद मंजरी, २ श्री प्रार्थना पद, ३. युगल छद्म, ४. रहस्य पद, ५. पदावशेष, ६ भागवत पद मुक्तावली।

'श्रीराधारमण पद मंजरी' में श्रीराधारमण जी के नित्य संकीर्तन एवं वर्षोत्सव के पदों का संकलन है। यह रचना कवि के पौत्र श्री अद्वैतचरण जी गोस्वामी (वृंदावन) द्वारा प्रकाशित हो चुकी है। इसका द्वितीय संस्करण सं० १९९२ में निकला है। विभिन्न राग-रागनियों में निबद्ध इन पदों में श्रीराधा कृष्ण की नित्य लीलाओं का अत्यंत सरस एवं आकर्षक चित्रण हुआ है। विभिन्न उत्सवों पर गाये जाने वाले इनके पद अति प्रसिद्ध है। आज भी भक्त जन भाव विभोर होकर इनका गायन करते है। इस रचना में कुल ७७ पद हैं। भक्ति-भाव एवं काव्य—दोनों दृष्टियों से यह उत्कृष्ट रचना है। 'राधारमण उत्सव पद' नाम से उपलब्ध इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति वृंदावन शोध संस्थान में उपलब्ध है।

'श्री प्रार्थना पद' नरोत्तम दास ठाकुर की बंगला भाषा में रचित 'प्रार्थना' नामक रचना का ब्रजभाषा पद्यानुवाद है। श्री वृंदावन से चैतन्याब्द ४२५ में इसका प्रकाशन हुआ है। 'रहस्य पद' एवं 'पदावशेष' लघु कृतियां हैं जिनका प्रकाशन एक ही पुस्तिका में है व श्री वृंदावन यंत्रालय द्वारा सं० १९४८ में मुद्रण हुआ है। इसमें कुल १६ पृष्ठ है। 'भागवत पद मुक्तावली' में कुल ४६५ पद है। इसका कुछ अंश 'उराहनों लीला' के नाम से श्री अद्वैतचरण गोस्वामी ने सन् १९२४ में प्रकाशित किया है। इसमें कृष्ण की चपलताओं से तंग आकर गोपियों द्वारा यशोदा को उलाहना देने का प्रसंग वर्णित है।

ललित माधुरी

ललित किशोरी जी के लघु भ्राता ललित माधुरी जी, जिनका मूल नाम शाह कुंदन-लाल था, प्रसिद्ध भक्त कवि हुए हैं। ये अपने भाई के प्रति प्रगाढ़ स्नेह भाव रखते हुए उनके साथ ही वृंदावन आ गये थे। इनका जन्म सं० १८८५ की माघ शु० १४ को हुआ था।[332] ये जीवन पर्यंत अपने अग्रज ललित किशोरी जी के सहचारी और अनुवर्ती बने रहे भारतेंदु जी ने इनको कलिकाल में त्रेता के लक्ष्मण कहा है

ये अपने अग्रज के अनुरूप भगवद् भक्ति, विरक्ति, उपासना और काव्य-रचना में उत्कृष्ट संस्कारो से युक्त थे। इनका निधन सं० १९८२ की ज्येष्ठ शु० ५ को वृंदावन मे हुआ था।

रचनाएं : ललित माधुरी ने ब्रजभाषा मे श्रेष्ठ पदो की रचना की है। इनकी रचनाओं की कोई पृथक् पुस्तक उपलब्ध नही होती। ललित किशोरी जी की रचनाओं के संकलन में इनके पद भी सम्मिलित हुए है। इन्होंने ललित किशोरी जी की रचनाओ का आकलन एव प्रकाशन किया था। ऐसा कहा जाता है कि ललित किशोरी जी के देहावसान के पश्चात् ये जो कुछ भी लिखते थे ललित किशोरी के नाम से लिखते थे इसीलिए उन पदों मे अपने नाम की छाप न रखकर, अपने अग्रज की कृति के रूप में उन्हें प्रसिद्ध किया। यह उनकी सरल एव त्याग वृत्ति को प्रगट करता है। इनके द्वारा संकलित रचनाएं 'अभिलाष माधुरी' एव 'रस कलिका' मे इनके भी पद संगृहीत है जिनमे इनकी 'ललित माधुरी' नाम छाप मिलती है। ललित किशोरी जी के समान इनके पदों में भी पर्याप्त सरसता, मधुरता एव कलात्मकता है।

ललित लड़ैती

ललित लड़ैती जी का यह उपनाम है। इनका मूल नाम इंद्रभान था। इनके पिता मुंशी टिक्कन लाल अरोड़ानांझा जातीय कुलीन वैष्णव थे और पजाब मे सिंधु नदी के तटस्थ डेरागाजी खाँ नगर के निवासी थे। श्री श्यामलाल जी हकीम ने 'श्री भक्त भाव सग्रह' के आरंभ मे ललित लड़ैती का जीवन-परिचय प्रस्तुत किया है।[333] उनके अनुसार इनका जन्म सं० १९०४ मे एवं निधन स० १९८४ मे हुआ था। कवि की रचना 'श्री किशोरी करुणा कटाक्ष' का रचना-काल सं० १९५९ दिया हुआ है तथा 'दंपति विलास' का प्रथम संस्करण मथुरा से लीथो मे सं० १९५१ में मुद्रित हुआ, जिसके आधार पर भी इनका उपर्युक्त समय सिद्ध होता है।

बचपन से ही इनकी भगवद् भक्ति व सत्संग मे स्वाभाविक रुचि थी जो आगे चलकर गृहस्थाश्रम का पालन करते हुए भी परिपुष्ट होती रही। चैतन्य सम्प्रदाय के गोस्वामी श्यामदास जी के वंशज गो० बालमुकुंद जी इनके गुरु थे। सरकारी दफ्तर में नौकर होते हुए ये अपना अतिरिक्त समय भगवद्-चिंतन, शास्त्र अध्ययन, सत्संग, भक्ति-सेवा में व्यतीत करते थे। वृंदावन की अक्सर यात्रा करते-करते इनके अंतस् में प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण की लीलाओं की स्फूर्ति तीव्र होने लगी, और उसकी अभिव्यक्ति ये सरस पदो की रचना के रूप मे करने लगे। उत्कट भक्ति भाव के आवेश मे आकर ये अपनी सुधबुध विस्मृत कर उठते थे। अतत. एक दिन ये अपनी सरकारी नौकरी से त्याग पत्र देकर चले आये और भगवद्-भक्ति एव काव्य रचना में तल्लीन रहने लगे। ये सच्चे सत- वैरागी- भगवन्निष्ठ महात्मा- विद्वान महान भक्त एव श्रेष्ठ कवि थे इनके सदुपदेशों से प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियो

के मन में भगवद् भक्ति भाव जाग्रत हुआ और वे इनके शिष्य बन गये। श्री श्याम लाल जी हकीम (वृंदावन) के पिताजी इनके प्रमुख एवं निकटतम शिष्यों मे से थे। हकीम जी ने ललित लड़ैती जी के परिचय के साथ ही इनका एक चित्र भी प्रकाशित किया है।[338]

रचनाएं : पंजाबी होते हुए भी ललित लड़ैती ने ब्रजभाषा में उत्कृष्ट काव्य-रचना की है। इनके पदों मे ललित लड़ैती नाम छाप मिलती है। इनके दो काव्य-ग्रंथ—'दंपति विलास' और 'श्री किशोरी करुणा कटाक्ष' नाम से (लीथो म) प्रकाशित हो चुके है। श्री श्याम लाल जी हकीम (वृंदावन) के पास ये रचनाएं उपलब्ध है।

१. दंपति विलास : यह वृहत् काव्य ग्रंथ है जिसमे कुल ४९६ पृष्ठ है। विभिन्न राग रागनियों में निबद्ध यह राधा-कृष्ण विषयक लीला-काव्य है। लीथो मे यह दो बार छप चुका है। प्रथम संस्करण सं० १९५१ में मुंशी रामनारायण भार्गव के प्रबंध से वैकमी यंत्रालय, मथुरा से तथा दूसरा संस्करण सं० १९५९ मे श्रीमान गोकुल चंद्र जी के प्रबंध से डेरागाजी खां, मंत यंत्रालय से मुद्रित हुआ था। यह रचना पांच भागों में विभक्त है। प्रथम भाग मे मंगलाचरण, वृंदावन छवि, विनय, सिद्धांत, जन्मोत्सव बधाई, बाल लीला, धाम शोभा, जुगल शृंगार, लाडिली जी की शोभा, लाल जी की उत्थापन लीला, आंख मिचौनी, उराहनौ, माखन-चोरी, पनघट, मनिहारी, गोचारण, दधि दान, प्रथम स्नेह—नवल सखी की अनुराग लीला, वेणी-गूथन, मान-सम्भ्रम खंडिता, वंशी, चीर हरण, विपिन विलास, युगल विलास, विरहणी आदि राधा-कृष्ण सखियों की विविध सरस लीलाओं का चित्रण किया गया है। दूसरे भाग में बसंत, होली, छद्म, हिंडोला, सांझी और रास विषयक विविध ऋतुओं की लीलाओं का समावेश है। तीसरे भाग में नवल सखी की छद्म, गंधिन, छद्म शृंगार तथा योगी आदि छद्म लीलाएं हैं। चौथा भाग शयन लीलाओं से संबंधित है तथा पांचवें में चेतावनी, स्फुट पद एवं रसिकों की महिमा विषयक पद हैं।

इस रचना में कुछ स्थलों पर खड़ी बोली का भी प्रयोग किया गया है। वार्तिक के रूप में गद्य को भी स्थान मिला है परंतु वह विरल है। विविध राग-रागनियो में रचित पदों का आधिक्य है, बीच-बीच में दोहा, कुंडलिया और कवित्त छंद भी प्रयुक्त हुए हैं। इस कृति में माधुर्य-भक्ति की सरस एवं सुंदर अभिव्यक्ति हुई है।

२. श्री किशोरी करुणा कटाक्ष : यह रचना भी सुंदर लीला काव्य है। इसमे कुल २६८ पृष्ठ हैं। यह ग्रंथ सं० १९५९ मे श्रीमान पं० गोकुल चंद्र जी के प्रबंध से डेरागाजी खां, मंत यंत्रालय से लीथो में मुद्रित हुआ है। इस रचना में दो भाग है—पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध। पूर्वार्द्ध भाग में मंगलाचरण के रूप मे चैतन्य महाप्रभु, गुरु बालमुकुंद जी की वंदना करते हुए श्री राधा-कृष्ण के दर्शन की उत्कट अभि-लाषा प्रकट की गयी है अन्य वर्णित लीलाओं के विषय स प्रकार हैं वंदावन माखन चोरी लीला उराहनो लीला नवल सखी की दान लीला मान सम्भ्रम मान

नव पनिहारिन, श्याम विरहनी लीला, सखी अनुराग, नवल सखी स्नेह, अर्शी लीला, निकुंज हिंडोरा, झूलन, बसंत, सांवरी छद्म होरी लीला, मालिन-मनहारिन लीला, रासपंचाध्यायी लीला। उत्तरार्द्ध भाग में ये लीलाएं वर्णित हैं-- नित्य संकीर्तन के पद, (आरती), वर्षोत्सव, फुटकर पद, माधुर्य रस दोहावली। विभिन्न राग-रागनियों में रचित यह एक सुंदर एवं सरस ग्रंथ है जिसमें माधुर्य भाव परक विभिन्न लीलाओं के साथ नीति, उपदेश तथा भक्ति तत्व संबंधी पदों की रचना है। इसमें पदों का प्राचुर्य है एवं दोहों का प्रयोग भी किया गया है। बीच में कहीं-कहीं वार्तिक का भी विरल प्रयोग मिलता है। विभिन्न लीलाओं के वर्णन में जहां कथा तत्व मिलते हैं, वहां प्रबंधात्मकता है।

इन दो रचनाओं के अतिरिक्त इनकी एक और ब्रजभाषा काव्य-रचना— 'रास पंचाध्यायी' का उल्लेख श्री श्यामलाल जी हकीम ने किया है।[334] इसमें रास लीला से संबंधित पदों का समावेश है। ललित लड़ैती जी के पदों में पर्याप्त सरसता एवं गेयता होने के कारण भक्त जनों में ये अत्यंत प्रसिद्ध हुए हैं। विशेष रूप से रासमंडलियों में आज भी इनके पदों का प्रचलन है।

गो० शोभनलाल

श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी की शिष्य परंपरा में गो० शोभनलाल सुप्रसिद्ध कवि हुए हैं। इनका जन्म वि० सं० १९१२ में हुआ था।[335] इनके उपास्य देव वृंदावनस्थ श्री राधारमण जी थे। अपने गुरु श्री बलदेवलाल गोस्वामी विद्याभूषण से उन्होंने संस्कृत एवं श्री दंपति किशोर गो० से ब्रजभाषा साहित्य का अध्ययन किया। अपने प्रमुख सहयोगी श्री सार्वभौम मधुसूदन गो० एवं श्री राधाचरण गो० के सहयोग से इन्होंने सं० १९२८ में श्री माध्व गौड़ेश्वर वैष्णव समाज की स्थापना की, जिसका प्रमुख उद्देश्य प्रवचन एवं विभिन्न प्रकाशनों द्वारा इस संप्रदाय के सिद्धांतों का प्रचार करना था। ये भारतेंदु के समकालीन एवं कर्मठ सहयोगी थे। इन्होंने ब्रज-भाषा में अनेक भावपूर्ण पदों की रचना कर अपनी काव्य प्रतिभा का सुंदर परिचय प्रस्तुत किया है। गो० शोभनलाल जी के सुपौत्र श्री अतुल कृष्ण गोस्वामी (राधा-रमणीय गोस्वामी) चैतन्य संप्रदाय के विद्वान आचार्य व रस मर्मज्ञ प्रवक्ता हैं जिन्होंने खड़ी बोली हिंदी में अनेक रचनाएं की हैं। कुछ स्फुट पद ब्रजभाषा में भी हैं।

रचनाएं : श्री शोभन गोस्वामी द्वारा रचित पदों का संकलन 'श्री शोभन पदावली' के नाम से श्री अतुल कृष्ण जी गो० ने प्रकाशित करा दिया है। इसमें कवि की राधा कृष्ण विषयक विभिन्न लीलाओं से संबंधित रचनाओं का संग्रह है, ये हैं—राधा पद अष्टक, बसंत विलास, राधिकारमन जन्मोत्सव, ग्रीष्म, पावस, सरद, हेमंत, श्रीराधा रूप विवेचन, प्रथम प्रेम प्रतीति, नख शिख रूप वर्णन, समस्या पूर्ति, होली, शिशिर। राधा पद अष्टक का रचना काल सं० १९३४ की अगहन शु० ५ रविवार दिया हुआ है। इस रचना में कवित्त- सोरठा- दोहा- सवैया

आदि छंद प्रयुक्त हुए है। विभिन्न ऋतुओं में राधा-कृष्ण की संयोगपरक विभिन्न लीलाओं का अत्यत मनोहारी चित्रण कवि की लेखनी द्वारा हुआ है। विशेष रूप से नखशिख रूप वर्णन मे कवि की चित्तवृत्ति अधिक रमी है। इसकी भाषा शैली आलकारिक एवं सशक्त है। अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा, संदेह आदि अलंकारो का प्रचुरता एव सुदरता से प्रयोग किया गया है। रचना पर रीतिकालीन शैली का पर्याप्त प्रभाव है। इसमे भावो की विविधता एवं सरसता तो है ही, कलागत सौंदर्य भी अनुपम है।

बाकेपिया (बाकेबिहारीलाल)

बाकेबिहारीलाल जी सौख्यसेन का उपनाम बांकेपिया था। इनका जन्म सं० १९३२ के लगभग कायस्थ कुल मे हुआ था। ये लखनऊ निवासी थे। इनके पिता का नाम लाला कन्हैयालाल था। इन्होंने वृंदावन के राधारमणीय गोस्वामी श्री अनन्तलाल जी से चैतन्य मत की दीक्षा ली थी।[337] ये परम धार्मिक, रसिक भक्त एव श्रेष्ठ कवि-लेखक थे। अपनी रेलवे की नौकरी से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् इन्होंने अपना पूरा समय भक्ति-भाव एवं साहित्य रचना मे बिताया तथा अपना जीवन अत्यत निष्ठापूर्वक चैतन्य संप्रदाय के लिए अर्पित कर दिया था। ये सप्रदाय के भक्ति-तत्वो के ज्ञाता एवं सुलेखक थे। इनका देहावसान दीर्घायु मे हुआ था।

रचनाएं : बाकेबिहारी जी ने गद्य एवं पद्य मे अनेक छोटी-बडी एवं सुदर रचनाएं की थी, जिन्हें अपने व्यय से प्रकाशित कराकर भक्त-जनों में अमूल्य वितरित किया था। इनकी गद्यात्मक रचनाएं खड़ी बोली हिंदी मे है जिनमे सप्रदाय के भक्ति व दार्शनिक सिद्धांतो तथा आचार संबंधी तत्वो का सरल शैली मे विवेचन किया गया है। इनकी पद्यात्मक रचनाएं ब्रजभाषा मे है, जिनमे विविध लीलाओं का कथन किया गया है। ये सरस एव सुदर हैं। इन भक्त कवि की ब्रज-भाषा काव्य-रचनाओं का परिचय इस प्रकार है—

१. **प्रेम रस वाटिका :** यह सरस लीला-काव्य है। चार विटप (भागों) से विभाजित इस ग्रंथ में कुल २१० पृष्ठ है। इसकी रचना सं० १९७७ मे हुई थी।[338] यह लाला सतगुरु दयाल निगम द्वारा लखनऊ से सं० १९८८ में (द्वि० स०) प्रकाशित हुआ है। इसके प्रथम विटप—'श्री गौरांग विलास' में श्री गौराग महाप्रभु की लीलाओं का वर्णन किया गया है। महाप्रभु के मंगलाचरण, जन्म बधाई, जगाई-माधाई उद्धार आदि महान कार्य, महत् चरित्र, उनके जीवन की विविध महान घटनाएं, शिक्षाएं एव नाम संकीर्त्तन से संबधित पद सम्मिलित है। चैतान्य महाप्रभु के जीवन चरित्र के परिज्ञान की दृष्टि से यह भाग महत्वपूर्ण है। द्वितीय विटप में श्री रूप गोस्वामी कृत 'स्मरण मंगल स्तोत्र' के आधार पर अष्टयाम लीला संबंधी पदों की रचना की गयी है, इसी कारण इस विटप का नाम 'श्री रूप रसास्वादनी' रखा गया है। इसमें प्रिया-प्रियतम—राधा-कृष्ण की अष्टकालीन

लीलाओं का साप्रदायिक भावनानुसार, सरस एवं सुंदर वर्णन किया गया है।
तृतीय विटप—'वर्षोत्सव पदावली' में वर्षभर के उत्सवों संबंधी पद हैं। श्रीराधा रमण जन्मोत्सव, विविध ऋतुओं की लीलाएं, श्रीराधाष्टमी, पालना, दान-एकादशी, धन तेरस, गोपाष्टमी, अक्षय तृतीया आदि विभिन्न उत्सवों के सुंदर पदों की रचना इसमे की गयी है। चतुर्थ विटप 'भाव पुष्पावली' मे विभिन्न भावों के पद है। इनके विषय है—प्रेम, मान, विरह, पावस, शयन, छवि, शरणागत, श्री वृंदावन माहात्म्य, श्री ब्रजमाहात्म्य, मुक्ति स्वरूप, भगवत्भक्त महिमा, मनः शिक्षा, नाम माहात्म्य, सत्संग माहात्म्य, विनय आदि।

प्रेम रस वाटिका में जहा विविध लीलाओं मे पर्याप्त सरसता एवं रोचकता है, वहां भक्ति की महिमा एव सिद्धांत विवेचना भी हुई है। भक्ति एव काव्य-- दोनों दृष्टियों से यह श्रेष्ठ रचना है। भावों की उदात्तता, सरसता एवं शैली की सरलता द्रष्टव्य है। विविध राग-रागनियों मे रचित इस ग्रंथ मे पदों की प्रधानता है। पदों के अतिरिक्त दोहा, सोरठा, कुण्डलिया, आदि छदों का भी प्रयोग है। इसमें उर्दू मिश्रित भाषा मे कुछ गज़लों की भी रचना की गयी है।

२. भगवत् सेवा-विधि : ३४ पृष्ठो की इस कृति में भगवद्-सेवा संबंधी पद है। प्रारंभ में सेवा संबंधी सक्षिप्त विवेचन किया गया है, तत्पश्चात् श्रीराधा-कृष्ण के जागरण से लेकर शयन पर्यंत सेवा के पद दिये गये है। बीच-बीच में व्याख्या के रूप मे ब्रजभाषा गद्य का भी प्रयोग किया गया है। इसका रचनाकाल स० १९७८ दिया हुआ है।[339] इस रचना का प्रकाशन लाला रतनलाल जी वैश्य द्वारा लखनऊ मे सन् १९२३ ई० में हुआ है।

३. निकुंज माधुरी छद्म : इस लघु कृति (कुल पृष्ठ सं० १२) मे चैतन्य सप्रदाय की भावनानुसार सखी भाव से भावित चार सरस लीलाओं का कथन किया गया है, जिनके नाम है—१ निकुंज माधुरी छद्म, २. मणि मंदिर छद्म ३ प्रेम-परीक्षा छद्म, और ४. सलोनी नारि छद्म। चैतन्य सप्रदाय की छद्म लीलाओं मे विशिष्टता एव रोचकता है। इस रचना में भी राधा-कृष्ण की छद्म लीलाओं का सुंदर वर्णन है। इस रचना की पूर्ति सं० १९८१ में हुई थी जिसका प्रकाशन मुकुंद बिहारी लाल (लखनऊ) द्वारा हो चुका है।

४. ऋतु प्रमोद : इस रचना मे (कुल पृष्ठ सं० १३) विभिन्न ऋतुओं का वर्णन करते हुए, सखी भाव से भावित होकर (अनुचरी के रूप मे) राधा-कृष्ण की सेवा-लीला संबंधी पदों की रचना है। इसकी रचना सं० १९८२ में हुई थी।[341] इसका प्रकाशन बाबू मुकुंद बिहारीलाल, (लखनऊ) द्वारा सन् १९२५ में हुआ है।

५. विवेक मंजरी : यह रचना उपदेशपरक एवं ज्ञानप्रद है। इसमें मनुष्य के विविध दोषो, कुप्रवृत्तियों को बताते हुए अच्छे गुणों एवं सद् जीवन की ओर प्रेरित किया गया है। इसमें गुरु-भगवत् स्मरण, सत्संग, भजन-कीर्तन, हरि के नाम, रूप, धाम, लीला के प्रति प्रेम, दश अपराध, लोभ, मोह दंभ आदि दुर्गुण, परोपकार,

न्याय, क्षमा, धैर्य आदि गुण, तथा भगवद्-भक्ति की महिमा को बताया गया है इसमे कुल ५० पद है। काव्य की दृष्टि से यह साधारण रचना है परंतु ज्ञान तत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह बाबू मुकुंद बिहारीलाल (लखनऊ) द्वारा स० १९८५ मे प्रकाशित हुई है।

६. **प्रेमोद्दीपनी** : इस कृति मे (कुल पृष्ठ स० ३२) गोपी-प्रेमोद्दीपन के सरस छद है। इसकी रचना सं० १९९० मे हुई थी और इसी काल मे इसका प्रकाशन बाबू मुकुंद बिहारी लाल (लखनऊ) द्वारा हुआ है। इस रचना के आरंभ में राधा-कृष्ण के सम्मिलित रूपधारी श्री गौराग महाप्रभु का स्मरण-वदन किया गया है। गोपियो का कृष्ण के प्रति अनुराग एवं विरह दोनों वर्णित किया गया है। गोपियो के प्रेम मे प्रभावित वृंदावन की उल्लास मे युक्त प्रकृति का सुदर वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् राधा एव गोपियों की कृष्ण के विरह मे व्याकुल अवस्था का चित्रण हुआ है। नद-यशोदा के वात्सल्य भाव की एवं बाल कृष्ण की चपलताओ, बाल-भाव की सुदर व्यंजना हुई है। लघु होते हुए भी यह सुदर एव सरस रचना है। इसमे दोहा, सोरठा, कुडलिया आदि कुल ३३ छंद है।

७. **ब्रज माधुर्य दर्पण** : इस रचना में राधा-कृष्ण की लीलाभूमि—ब्रज के स्थलो का वर्णन करते हुए उसकी सुषमा एवं सौदर्य को बताया गया है। ब्रज की परिक्रमा करते हुए वृंदावन, यमुना, गोवर्द्धन, कुसुमसरोवर, विभिन्न कुड, मधुवन, मथुरा, ग्राम घाट मंदिरो एवं विभिन्न स्थलों का वर्णन किया गया है। ब्रज के स्थलों के ज्ञान की दृष्टि से उपयोगी रचना है। इसमें कुल ४०० चौपाइया, ३३ दोहे, ३१ सोरठा एव १ पद है। इसकी रचना सं० १९९४ में हुई थी[312] जिसका प्रकाशन बाबू मुकुंद बिहारी लाल (लखनऊ) के द्वारा हो चुका है।

८. **पथिक मराल** : इस रचना में कुल ५२ रोला छंद हैं। इसमें ललिता सखी मराल-दूत द्वारा श्री राधा की विरह-व्यथा का संदेश श्रीकृष्ण के पास भिजवाती है। राधा की विरह-व्याकुल अवस्था का मार्मिक चित्रण किया गया है। विरह की सभी दशाओं, समस्त अनुभावों का सुदर प्रकाशन है। लघु कृति होते हुए भी विरह-काव्य एवं सदेश काव्य (दूत-काव्य) परपरा मे महत्वपूर्ण है। इसका रचनाकाल स० १९९५ दिया हुआ है।[313] यह बाबू मुकुद बिहारीलाल (लखनऊ) द्वारा स० १९९५ मे प्रकाशित हुई है।

९. **मधुर मिलन** : राधा-कृष्ण के मिलन विषयक इस रचना मे कुल ६६ पद है। 'पथिक मराल' के समान इसकी समस्त रचना रोला छंद में हुई है। मराल दूत द्वारा राधा की विरह-दशा का संदेश सुनकर श्रीकृष्ण राधा के वियोग में व्याकुल होते है और मिलन हेतु ब्रज-धाम आते हैं। वहां ब्रजवासियों को विरह से व्याकुल देखकर प्रकट होते हैं। राधा-गोपियो की विरहाकुल अवस्था, मिलन-उत्कंठा एव पुनर्मिलन के आनंद की मार्मिक व्यजना हुई है। लघु रचना होते हुए भी भावों की सुदर अभिव्यंजना है। विभिन्न भावों-अनुभावों, व्यभिचारियो का सुंदर प्रकाशन हुआ है। समस्त रचना मे उत्प्रेक्षा अलंकार का विशिष्ट प्रयोग है। इस रचना

को पूर्ति सं० १९९६ में हुई थी[३५४] और प्रकाशन इसी काल में लखनऊ से हुआ है।

१०. श्री गौरांग शिक्षाष्टक : उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त बाकेपिया कृत 'स्मरण मंगल स्तोत्र'[३५५] (जो कि श्री रूप गोस्वामी की इसी नाम की कृति का ब्रजभाषा गद्य मे अनुवाद-ग्रथ है) के अत में कवि की एक और ब्रजभाषा काव्य रचना—'श्री गौराग शिक्षाष्टक' एव स्फुट पद सम्मिलित है। इनमे महाप्रभु की शिक्षाओं के आठ श्लोकों के भावानुवाद सरस ब्रजभाषा पदों के रूप मे प्रस्तुत किये गये हैं।

इस प्रकार चैतन्य सप्रदाय की उपलब्ध ब्रजभाषा काव्य-सामग्री के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि यह मात्रा में तो विपुल है ही, विषय, भाव एवं कला की दृष्टि से भी विविधात्मक एव महत्वपूर्ण है। प्रबंध एवं मुक्तक दोनों मे रचना हुई है। 'चैतन्य चरितामृत' का सुबलश्याम कृत ब्रजभाषा पद्यानुवाद चरित-ग्रथ (प्रबंध) के अभाव की पूर्ति करता है। इस संप्रदाय का काव्य कृष्ण-लीलापरक भी है और चैतन्य लीलापरक भी। 'उद्धव चरित्र' (गो० कृष्ण चैतन्य 'निज कवि' कृत) एवं 'पथिक मराल' (बाकेपिया कृत) की रचना द्वारा सदेश (दूत) काव्य-परपरा का निर्वाह हुआ है। 'उद्धव चरित्र' भ्रमरगीत परपरा मे भी महत्वपूर्ण काव्य-ग्रथ है। विविध विषयो से संबद्ध लीलापरक सरस पदावलियों के अतिरिक्त शास्त्रीय ग्रथों का प्रणयन इस सप्रदाय के कवियो ने किया है। 'रस कौमुदी' (कृष्ण चैतन्य कृत), 'रस चंद्रिका', 'छंद पयोनिधि' (हरिदेव कृत) आदि लक्षण ग्रथो मे रस, नायक-नायिका, दूती-भेद, अलकार व छद का शास्त्रीय निरूपण किया गया है। इसी प्रकार 'गोपाल स्तवराज' (वृदावन चद्र कृत); 'हनुमान जयति', 'नृसिंह जयति' 'जयति-सग्रह' (माधवदास जगन्नाथी कृत) जैसे स्तोत्र काव्य, 'भक्ति रस बोधिनी' (प्रियादास कृत) जैसे महात्माओं-भक्तों के परिचायक एव ऐतिहासिक वृत्तों से समन्वित ग्रथ तथा नीति-उपदेश, शिक्षापरक अनेकानेक रचनाएं उपलब्ध होती हैं। मौलिक ग्रथों के अतिरिक्त अनुवाद ग्रथ भी प्रचुर मात्रा मे रचित है, जिनका भी कम महत्व नही है क्योंकि अधिकतर अनुवाद-ग्रथ सांप्रदायिक सिद्धात-ग्रथों (सस्कृत एव बगला) के सरस अनुवाद है, जिनसे सप्रदाय के सिद्धातों का परिचय प्राप्त होता है। इस सप्रदाय में अपने इष्टदेव श्रीकृष्ण की लीलाभूमि की भाषा—ब्रजभाषा—मे ब्रज के अतिरिक्त दूर-दूर के विभिन्न प्रदेशों से आए भक्तों ने भी विपुल मात्रा मे सरस पदावलियों की रचना की है।[३५६]

संदर्भ

१ (स्व०) बाबा कृष्णदास, कुसुम सरोवर, (गोवर्द्धन) वृंदावन ।

२ चैतन्य मत और ब्रज-साहित्य—श्री प्रभुदयाल मीतल, पृ० १२९-३७८

३ चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० नरेश चन्द्र बंसल, पृ० २३०

४ ब्रज साहित्य का इतिहास—डॉ० सत्येंद्र, पृ० १७७-२०६

५ विशेष रूप से माधवदास जगन्नाथी, कवि माधुरी, वल्लभरसिक, भगवानदास, हरिराम व्यास की कृतियां उपलब्ध हुई है ।

६. कवियों के निवास-स्थानों, उनके वंशधरों व मंदिरों तथा चैतन्य सम्प्रदायी गोस्वामियों के निजी संग्रहालयों व अन्य पुस्तकालयों में उपलब्ध सामग्री ।

७ "जानराय श्री जगन्नाथ उदारा, नील सिखर गिरि करत विहारा,
भगति मुकति दाईक पीत के वागा, ताके चरन सरन सदा माधौदासा ।"

—जानराय लीला—माधवदास कृत, हस्तलिखित प्रति, (लि० का० सं० १७२४) प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर ।

८ (क) गौड़ीय वैष्णव अभिधान (बंगला में हरिदास कृत), पृ० १६१७

(ख) वृंदावन कथा (बंगला में पुलिन बिहारी दत्त कृत), एकादश परिच्छेद, पृ० १२६

(ग) बंगला भक्तमाल (लालदास कृत), पृ० २१८

(घ) चै० म० ब्र० सा०—मीतल, पृ० १३२

९. भक्त कवि व्यास जी (वासुदेव गोस्वामी) भूमिका (प्रभुदयाल मीतल) पृ० ३०

१०. श्री माधवदास सरन मैं आयौ ।
हौ अजान, ज्यौं नारद ध्रुव सा कृपा करी, संदेह भगायौ ।।

—भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पद सं० १८, पृ० १६८

११. भक्त कवि व्यास जी, भूमिका—मीतल

१२. (क) चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० नरेश चन्द्र बंसल, पृ० २३६ (ख) ब्रज साहित्य का इतिहास डॉ० सत्येंद्र, पृ० १७८ (ग) चैतन्य मत और ब्रज साहित्य—मीतल, पृ० १३२

१३ भक्ति रस बोधिनी टीका—प्रियादास, कवित्त सं० ३१५-३२५

१४ चै० म० ब्र० सा०, पृ० १३२

१५ 'सर्व वैष्णजन की आज्ञा पाय के गावै माधौदासा' नारायण लीला (ह० प्रति) माधवदास कृत, 'वैष्णव सगति पाय के मत भयौ प्रकासा । श्री जगन्नाथ की दासानुदास गावै माधौदासा'—रस लीला (ह० प्रति) माधवदास कृत ।

१६ भक्तमाल, छप्पय सं० ७०, पृ० ५२०

१७ वही ।

१८ महाराजा मानसिंह (द्वितीय) संग्रहालय, जयपुर, ग्र० सं० ३२६८
टिप्पणी : यह पोथी माधवदास जगन्नाथी की रचनाओं की अब तक प्राप्त पोथियों में सबसे प्राचीन प्रति है

१९. Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur—An Index to the Register of Manuscripts in the Pothikhana of Jaipur by Gopal Narayan Bahura—p. 32
२०. द्र० प्रस्तुत अध्याय में आगे—'माधुरीदास और उनकी रचनाएं'—'विहार माधुरी'
२१ माधवदास जी की रचनाओं की विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों के विवरण हेतु देखें—प्रस्तुत पुस्तक में परिशिष्ट 'हस्तलिखित ग्रंथों की विवरणात्मक तालिका' शीर्षक—'माधवदास कृति संग्रह'
२२. प्रा० वि० प्र० जोधपुर, ग्र० सं० १२३८० (११, २७) व १२५५३ (२, ६)
२३. माधवदास जी की वाणी, प्र० कृष्णदास बाबा, भूमिका
२४. खोज रिपोर्ट क्रमशः १९०९/१७७ ए व १९४१/१९६
२५. राजस्थान रिपोर्ट क्रमशः भाग १ सं० ५८, भाग १ सं० ६२ व भाग ३, पृ० ६५
२६. माधवदास की वाणी, प्र० कृष्ण दास बाबा, भूमिका
२७ विवरण हेतु द्र० परिशिष्ट में 'हस्तलिखित ग्रंथों की विवरणात्मक तालिका'
२८. माधवदास जी की वाणी (प्रकाशित), भूमिका
२९. महाराजा संग्रहालय (पुस्तक प्रकाश), जोधपुर, ग्रं० सं० १०८
३०. साम्प्रदायिक भावना के अनुरूप इन सभी तथ्यों से इनके चैतन्य सम्प्रदायी कवि होने की मान्यता दृढ़ होती है।
३१. 'सूरदास और भ्रमर गीत सार' की भूमिका—पं० रामचंद्र शुक्ल
३२. 'माधवदास जगन्नाथी और उनकी कृतियां', शीर्षक लेख—श्री नरेश चंद्र बंसल, सम्मेलन पत्रिका, भाग ५४, सं० २
३३. नारायण लीला—ह० प्रति, लि० का० सं० १९१६, श्री कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्रं० सं० ३६००३१
३४. राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी (जोधपुर), ग्र० सं० १०८९ (५)
३५. "या लीला है कहत सुनत कछु बनि नहिं आवत,
पढ़ै गुणै चित लाय बास वृंदावन पावै।
कुंज कुंज लीला करी जहां जहां धरि पाय,
उन कुंजन की झलक पै माधोदास बलि जाय
तुम्हारै ही राज है ॥१८॥"
—ग्वालिनी झगरौ, ह० प्रति०, अंतिम पत्र, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी
३६. महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० सं० २४०८ (१५) व ३०८९; विवरण हेतु द्र० परिशिष्ट में हस्तलिखित ग्रंथों की तालिका।
३७ "अब नील सैल सुन्दर बसत सेई माधवदास की त्रास हर।
कलि कृष्ण प्रगट रूप धर श्री जगन्नाथ बहु भोग कर॥"
—जय जय (आरती संग्रह)—अंतिम पत्र, (ह० प्रति) ग्र० सं० २४०८ (१५)
३८ दास माधौ प्रभू श्री जगन्नाथ भजि। प्रगट वह रूप नीलगिरि विहारी।
× × ×
सोई प्रगट प्रभु अब नीलगिरि पर। उभै बाहु विसाल भुज वर।
जगन्नाथ समरथ वपुधर। नमित माधवदास
—जय जय व ययति ह० प्र० ग्र० सं० ३०८९ पत्र सं० ५ व २६

३६ महाराजा जयपुर ग्रं० सं० २१५६ (२१ १४०३ व ३११२ ४)

४० जति ब्रह्म शिव सनकादिक तिथि गुण गन कथा ।
भक्त प्रह्लाद हित जगत करता ॥
नीलगिरि श्री जगन्नाथ दास माधौ सरणि सुख करता ॥५॥

—नृसिंह जयंति, (ह० प्र०) छं० सं० ५, पत्र सं० ६४—महाराजा संग्रहालय जयपुर, ग्र० सं० २१५६

४१ माधवदास जी के अप्रकाशित अनेक पदों का संकलन हमने किया है किंतु स्थानाभाव के कारण प्रस्तुत पुस्तक में उन्हें प्रकाशित नहीं किया जा सका है।

४२ पद संग्रह, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर, ग्र० सं० १२ (३६)

४३ शोध पीठ, कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्रं० सं० ३५६०२४, गु० लि० का० सं० १८१५

४४ माधवदास जगन्नाथी के स्फुट पदों की इन हस्तलिखित प्रतियों के विवरण हेतु द्र० परिशिष्ट में हस्तलिखित ग्रंथों की तालिका—माधवदास कृति संग्रह, स्फुट पद, पद-संग्रह व जगन्नाथ के पद ।

४५ स्फुट पद—माधवदास जगन्नाथी, हस्तलिखित प्रति—(गुटका लि० का० सं० १७४१) प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर, ग्र० सं० १२/३६

४६ (क) खोज रिपोर्ट (ह० प्रतियां—लि० का० क्रमशः १७५८ और सं० १७६४) ०४/२७५; २२/६० (ख) चौ० सं० ब्र० सा०—मीतल, पृ० १३६ (ग) चौ० सं० हि० दे०—बसल, पृ० २४२

४७ मदालसा आख्यान, ह० प्रति०, पत्र सं० १५६, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, ग्र० सं० ४६७० (११)

४८ प्रा० वि० प्र०, जोधपुर, ग्र० सं० १२४५६, पत्र सं० ३१

४९ राधामाधव मंदिर, वृंदावन ।

५० भक्तमाल-छप्पय सं० १६७ (ह० लि०) प्रो० भगवान सिंह सूर्यवंशी के पास उपलब्ध, म० स० विश्वविद्यालय, बड़ौदा पुरातत्व विभाग ।

५१ (क) भीषम रामराय परताप । क्षेम गुसाईं मेट्यो ताप ।
(ख) रामराय कामादिक टारे । श्री भगवत मुदित अति प्यारे ।

—भक्त सुमरिनी, पत्र सं० ११ (ह० प्रति, लि० का० सं० १७७५), कृ० ज० भू० सं०, मथुरा ।

(ग) ए० द्र० भक्ति रस बोधिनी, छं० सं० १६७ (ह० प्रति, लि० का० सं० १८१०), वृ० शो० सं०, वृंदावन ।

५२ यमुना वल्लभ जी गोस्वामी के पिता प्रियतमलाल जी कृत 'श्री रसिकाचार्य चरितावली'

५३ चौ० सं० ब्र० सा०—मीतल, पृ० १४५

५४ चौ० सं० हि० दे०—बंसल, पृ० २४६

५५ सरोज सर्वेक्षण—डॉ० किशोरीलाल गुप्त, पृ० ५२२

५६ बंदौं श्री गुरु गौर पद, जगमग जोति अभंग ।
मिल अनग मजरि सहित, एक श्याम दी रग ॥

—गीत गोविंद भाषा—मंगलाचरण एवं द्र० आदि वाणी पद सं० १, ४७, ५४

५७ माहि श्री नित्यानद मिले
हृदय सरोवर तरल तरंगित गलुदित रीव गौ प्रा जि जिनि ।
—आदि वाणी, पद स० ८८ एव द्र० आदि वाणी पद स० ८१

५८ चै० म० ब्र० सा०, पृ० १६६

५९ हिंदी अनुशीलन, धीरेंद्र वर्मा, विशेषाक, स० २०१७, पृ० ४०८

६०. सेवा प्रणालिका, गो० राधिकानाथ (बारह वैष्णवन की वार्ता)

६१ मगल जय श्री गौर किशोर ।
मगल श्री वृदावन भूषन राधाभाव रसिक रसबोर ॥
मगल नवद्वीप पडितवर जगन्नाथ आनद विभोर ।
श्री नित्यानद अद्वैत गदाधर श्रीवासादि चतुर चितचोर ।
श्री रामराय जग धधे त्यागे मगल भयौ लख्यौ इन ओर ॥
—आदिवाणी—मगलाचरण

६२. 'रामराय और उनके द्वादश शिष्य' (लेख)—नरेशचद्र बसल, सम्मेलन पत्रिका, वर्ष ४७, स० ३ व शोध-प्रबंध चै० स० हि० दे० पृ० २४३-२५०

६३ गीत गोविंद भाषा, सर्ग १२, पृ० ३६

६४ संवत् सोलह सौ बाईसा, रितु बसंत सरसाई ।
माधव मास राधिका माधव, की जह लीला गाई ।
—गीत गोविंद भाषा की पुष्पिका, पृ० ३६

६५ हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का चौदहवां त्रै० वा० विवरण स० डॉ० बड़थ्वाल, स० ११२, पृ० ४४-४५

६६. गौराग भूषण मजावली, पृ० ४ व १६

६७ 'चैतन्य सप्रदाय की हिंदी कविता' (लेख)—कु० चद्रप्रकाश, त्रिपथगा, नवबर, १९५६ पृ० १२१

६८. चैतन्य मत और ब्रज साहित्य, पृ० २१८

६९. गौर पारषद नमो रहे प्रेम बस मन्न सदा ही ।
नमो श्री गुरुदेव सनातन रूप दोउ भाई ।
—गौरांग भूषण मजावली, प्रार्थना, पृ० १६ एव द्र० इसी रचना मे पृ० स० ४, २१, ३३ व ३४

७०. 'श्रृंगार मजावली' की हस्तलिखित प्रति, बाबा बशीदास का सग्रह, सदर्भ - हस्तलिखित हिंदी ग्रथो का चौदहवा त्रैवार्षिक विवरण, २९/११२ ए, पृ० २६६

७१. चै० स० हि० दे०, पृ० २५३

७२ त्रिपथगा—अगस्त, १९५४ मे प्रकाशित लेख ।

७३. हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का चौदहवा त्रैवार्षिक विवरण, २९/११२ ए, पृ० २६६

७४ भक्तमाल (रूपकला सस्करण), पृ० ७४५-४६

७५. भक्ति रस बोधिनी, छ० स० ४९९-५०२

७६. पद प्रसग माला, नागरीदास ग्रंथावली, द्वितीय खड, पृ० ३९२-३९४

७७ भक्ति रस बोधिनी टीका, छं० सं० ४९८-५००

७८ हिंदी साहित्य का इतिहास—रामचंद्र शुक्ल, पृ० १८१

७९ मिश्र बंधु विनोद प्रथम खंड, पृ० ३४१

८० चै० स० हि० दे० डॉ० बंसल, पृ० २६२, चै० म० ब्र० सा०, मीतल, पृ० १५०

८१ सूरदास मदनमोहन भए भगत, छोडि पतिसाही।
तिनकौ दरवाजो समाधि इक राजत है तरु ठाहीं॥

— गोपाल कवि कृत वृंदावन धामानुरागावली की हस्त० प्रति, राधारमण मंदिर, वृंदावन।

८२ जिन विभिन्न हस्तलिखित पद संग्रहों में हमें सूरदास मदनमोहन के पद उपलब्ध हुए हैं वे हैं—'राग प्रबंध' (लि० का० सं० १८७७), कृ० ज० से० स० मथुरा, ग्र० सं० ३५८०५१; सूरदास मदनमोहन के पद, वृ० शो० सं०, ग्र० सं० ५६०१; रसिक जीवनी, कृ० ज० से० स०, मथुरा, ग्र० सं० ३६००३३

८३ सूरदास मदनमोहन—जीवनी और पदावली (अग्रवाल प्रेस, मथुरा)

८४ कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव, पृ० ६१७-६२२

८५ हिंदी साहित्य का इतिहास, सं० डॉ० नगेंद्र, पृ० २२६-२२७

८६ हिंदी साहित्य का इतिहास—आचार्य शुक्ल, पृ० १८२-१८३, हिंदी साहित्य—डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० २००, ब्रज माधुरी सार—वियोगी हरि, पृ० ७५

८७ वृंदावनस्थ अठखंभा मुहल्ला में (मदनमोहन जी का मंदिर) गदाधर भट्ट के वंशजों के अनुसार भी यही सिद्ध होता है।

८८ 'योगपीठ' (गदाधर भट्ट कृत रचना) की एक हस्तलिखित प्रति के प्रारंभ में लिपिकार वंशीदास ने गदाधर भट्ट को रघुनाथ भट्ट का कृपा पात्र बताया है—"श्री श्री गौर नित्यानंदौ, जयतो श्री श्री नित्य निकुंजेश्वरे-श्वरीभ्यां नमः। श्री महाप्रभु श्री कृष्ण चैतन्य जू के परम प्रिय शिष्य अनन्य रसिक चूडामनि श्री श्री रघुनाथ भट्ट तत् कृपा पात्र श्री रसिक अनन्य नृपति श्री श्री गदाधर भट्ट जू कृत वानी लिख्यते तत्र श्री योगपीठ लिख्यते। चौपाई। श्री गोविंद पदारविंद सीसा सिर नाऊं श्री वृंदावन विपिन मौलि वैभव कछु गाऊं॥१॥"

— योगपीठ (ह० प्रति), प्रारम्भिक अंश, वृ० शो० सं०, वृंदावन, ग्र० सं० ६८५७

८९ क्रमशः भक्तमाल (रूपकला सं०) पृ० ७८६, भक्तिरस बोधिनी टीका—छप्पय सं० ५२२-५२०, भक्त नामावली (ह० लि०) पृ० २२, नागरीदास ग्रंथावली—द्वितीय खंड, पद प्रसंग माला, पृ० ३८१, श्री भगवत रसिक देव की वाणी, पृ० ५८

९० यह श्लोक 'गदाधर भट्ट की वाणी' की भूमिका पृ० २ पर दिया हुआ है।

९१ चै० म० ब्र० सा०, मीतल पृ० ३८ व १५७, ब्रज के धर्म सम्प्रदायों का इतिहास—मीतल, पृ० २१७

९२ ब्रज के धर्म-सम्प्रदायों का इतिहास—प्रभुदयाल मीतल, पृ० २१७

९३ [illegible] वैभव, भाग १, पृ० २११

९४ मिश्र बंधु विनोद, प्रथम खंड, पृ० २५२ व द्वितीय खंड, पृ० ५१६

९५ चै० म० हि० दे०, पृ० २७०

९६ वल्लभ रसिक की वाणी - भूमिका, पृ० १ तथा श्री गोवर्द्धन भट्ट ग्रंथावली में दिया

५७ मोहि श्री नित्यानंद मिले
हृदय सरोवर तरल तरंगित सगुंधित रवि सो पंकज खिले।
—आदि वाणी, पद स० ८८ एवं द्र० आदि वाणी पद स० ८९

५८ चैं० म० ब्र० सा०, पृ० १६८

५९. हिंदी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा, विशेषांक, सं० २०१७, पृ० ८०८

६०. सेवा प्रणालिका, गो० राधिकानाथ (बारह वैष्णवन की वार्ता)

६१ मगल जय श्री गौर किशोर।
मगल श्री वृंदावन भूपन राधाभाव रसिक रसबोर॥
मगल नवद्वीप पतितवर जगन्नाथ आनद विभोर।
श्री नित्यानद अद्वैत गदाधर श्रीवासादि चतुर चितचोर।
श्री रामराय जग बधे त्यागें मगल भयौ लग्यौ इन ओर॥
—आदिवाणी—मगलाचरण

६२ 'रामराय और उनके द्वादश शिष्य' (लेख)—नरेशचंद्र बसल, सम्मेलन पत्रिका, वर्ष ४७, स० ३ व शोध-प्रबध चै० स० हि० दे० पृ० २४३-२५०

६३. गीत गोविंद भाषा, सर्ग १२, पृ० ३६

६४. सवत् सोलह सौ बाईसा, रितु बसंत सरसाई।
माधव मास राधिका माधव, की अह लीला गाई।
—गीत गोविंद भाषा की पुष्पिका, पृ० ३६

६५ हस्तलिखित हिंदी ग्रंथो का चौदहवां त्रै० वा० विवरण स० डॉ० बड़थ्वाल, सं० ११२, पृ० ४४-४५

६६ गौरांग भूषण मंत्रावली, पृ० ४ व १९

६७ 'चैतन्य संप्रदाय की हिंदी कविता' (लेख)—कु० चद्रप्रकाश, त्रिपथगा, सितबर, १९५६ पृ० १२१

६८. चैतन्य मत और ब्रज साहित्य, पृ० २१८

६९. गौर पारषद नमो रहे प्रेम बस मत्त सदा ही।
नमो श्री गुरुदेव सनातन रूप दोउ भाई।
—गौराग भूषण मंत्रावली, प्रार्थना, पृ० १९ एवं द्र० इसी रचना मे पृ० स० ४, २१, ३३ व ३४

७०. 'शृंगार मंत्रावली' की हस्तलिखित प्रति, बाबा वंशीदास का संग्रह, संदर्भ—हस्तलिखित हिंदी ग्रथो का चौदहवां त्रैवार्षिक विवरण, २९/११२ ए, पृ० २६६

७१. चै० स० हि० दे०, पृ० २५३

७२. त्रिपथगा—अगस्त, १९५४ मे प्रकाशित लेख।

७३. हस्तलिखित हिंदी ग्रथो का चौदहवा त्रैवार्षिक विवरण, २९/११२ ए, पृ० २६६

७४ भक्तमाल (रूपकला सस्करण), पृ० ७४५-४६

७५. भक्ति रस बोधिनी, छ० स० ४९९-५०२

७६. पद प्रसग माला, नागरीदास ग्रंथावली, द्वितीय खड, पृ० ३९२-३९४

७७ भक्ति रस बोधिनी टीका, छ० सं० ४९८-५००

कृपा बस बस

९७. "श्री वृंदावन जोग पीठ गोविंद निवासा ।

तहां गदाधर चरण रज सेवा को आसा ।।४७।।

इति श्री वृंदावन रहस्य गदाधर जी कृत संपूर्ण मिती कार्तिक बदी १ मंगलवार ।। श्री राधा कुंड मध्ये ।। श्री मदनमोहन जी काज मै । सं० १८१७ ।।"

—योग पीठ (वृंदावन रहस्य)—ह० प्रति, अन्तिम छंद व पुष्पिका, प्रा० वि० प्र०, जयपुर ।

९८. स्फुट पद—गदाधर भट्ट, प्रा० वि० प्र०, जयपुर, ग्र० सं० ४८ (१), व प्रा० वि० प्र०, जोधपुर, ग्रं० सं० १५६१३ (७)

९९. हिंदी साहित्य का इतिहास—रामचंद्र शुक्ल, पृ० १७७

१००. ब्रज माधुरी सार, पृ० ७६

१०१. कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव, पृ० ६१६

१०२. भक्तमाल, वार्तिक तिलक, पृ० ६०४

१०३. भक्त कवि व्यास जी—वासुदेव गोस्वामी, पृ० ३९

१०४. भक्तमाल, पृ० ६०४

१०५. 'जो हो सत्य मुकुल को जायो'—भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० २६४

१०६. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५२

१०७. "लिखा सा यथा—

श्रीकृष्णो भगवान् ब्रह्मा नारदो बादरायण ।
श्री मध्व पद्मनाभश्च नृहरिर्माधवश्च स ।।५।।
अक्षोभ्यो जयतीर्थश्च ज्ञानसिन्धुर्दयानिधि. ।
विद्यानिधिश्च राजेन्द्रो जयधर्म्ममुनिस्तत ।।६।।
पुरुषोत्तम ब्रह्मण्यो व्यासतीर्थश्च तस्य हि ।
लक्ष्मीपतिस्तत. श्रीमान् माधवेन्द्र यतीश्वर ।।७।।
ईश्वरस्तस्य माधवश्च राधाकृष्णप्रियोऽभवत् ।
तस्याद् करुणापात्रं हरिरामाभिधोऽभवामिति ।।८।।

—इति श्री गुरुप्रणालिकोद्देश. ।"

नवरत्न, हस्तलिखित प्रति, बाबा कृष्णदास जी का संग्रह, संदर्भ चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २७९

१०८. नवरत्न, पृ० ३

१०९. श्री गौड़ीय वैष्णव अभिधान (बंगला), पृ० १४१७

११०. बंगला भक्तमाल, पृ० २१४

१११. वृंदावन कथा, एकादश परिच्छेद (बंगला), पृ० १३९

११२. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ७६

११३. "श्री माधव दास सरन मैं आयौ ।

हौ अजान ज्यौं नारद ध्रुव सौ, कृपा करी संदेह भगायौ ।।"

—भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० १९४

११४. भक्त कवि व्यास जी, भूमिका (मीतल जी) पृ० ङ

११५ भक्त कवि व्यास जी, पृ० ७० व भूमिका

११६ भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५८-६०

११७. राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य, पृ० ३५६-३५७

११८ राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य, पृ० ३५७, (फुट नोट)

११९ ये हस्तलिखित प्रतियां इस प्रकार है—(१) व्यास पद संग्रह (लि० का० सं० १७५८), श्रीकृष्ण जन्मभूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्र० ३६००७०; (२) व्यास के पद (लि० का० सं० १७४१), प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र० १५६१३ (७); (३) व्यास का पद (सं० १७१५) प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर, ग्र० ३४ (६२) एवं ग्र० ७४ (८१), (४) व्यास जू की वाणी, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर, ग्र० ४७२७ (२), ६२, (५) अनन्य मोदिनी (प्रियादास कृत) मे उद्धृत व्यास के ११ पद (लि० का० सं० १७८३) महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० २४३७, (६) समय प्रबंध (पद संग्रह) लि० का० सं० १८७७, कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्र० ३५८०५१, (७) हरिराम जौहरी की रचनाएं, (लि० का० सं० १८२२) इसमे उद्धृत व्यास जी के दो पद, निज संग्रह, (८) पद संग्रह (लि० का० १६वीं श०), महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० १८६८

१२० प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर मे उपलब्ध व्यास जू की वाणी, ग्र० ४७२७ (२) ६२ व अन्य प्रतियों मे भी यही पाठ मिलता है।

१२१ अनन्यमोदिनी (लि० का० सं० १७८३) प्रियादासकृत, पत्र सं० ६, महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० २४३७

१२२. व्यास के पद (लि० का० सं० १७४१), प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र० १५६१३ (७)

१२३. श्री हितहरिवंश गोस्वामी : सम्प्रदाय और साहित्य, पृ० ३६६

१२४ श्री वासुदेव गोस्वामी ने भी ऐतिहासिक तथ्यों के विरुद्ध 'रसिक अनन्यमाल' की कुछ असंगतियों का उल्लेख किया है। दे० भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५६, ५७, ६१ व ७१

१२५. डॉ० बमल ने विभिन्न प्रमाणों व तर्कों के आधार पर रसिक अनन्यमाल की अप्रामाणिकता सिद्ध की है। विस्तार के लिए देखें—'चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन' (डॉ० बमल) — भगवत मुदित' व 'हरिराम व्यास' तथा 'भगवत मुदित : चैतन्य सम्प्रदाय के कवि' शीर्षक डॉ० बमल का लेख, सतवाणी नवम्बर, १९६१, अंक ६, पृ० सं० ३-८

१२६ भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० १६२-१६५

१२७ वही, पृ० ४० ।

१२८ राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य, पृ० ३६३

१२९ रूप गोस्वामी कृत 'निकुंज विलास स्तव', प्रबोधानंद सरस्वती कृत 'वृंदावन शतक', 'संगीत माधव' व 'आश्चर्य रास प्रबंध'।

१३० द्रष्टव्य है कि डॉ० स्नातक व्यास जी के काव्य में व्रज रस और निकुंज रस दोनों की [illegible] स्तर पर [illegible] भावना यहां भी प्रगट करते है कि ऐसा प्रतीत होता है कि [illegible] [illegible] उपासना-पद्धति को स्वीकार करने से पहले

हुआ वन वटा

९७. "श्री वृंदावन जोग पीठ गोविंद निवासा।
तहां गदाधर चरण रज सेवा की आसा ॥५७॥
इति श्री वृंदावन रहस्य गदाधर जी कृत संपूर्ण मिती कार्तिक बदी १ शनिश्चर ॥
श्री राधा कुंड मध्ये ॥ श्री मदनमोहन जी कृपा में । सं० १८१७ ॥"
—योग पीठ (वृंदावन रहस्य)—ह० प्रति, अंतिम छंद व पुष्पिका
प्रा० वि० प्र०, जयपुर।

९८. स्फुट पद—गदाधर भट्ट, प्रा० वि० प्र०, जयपुर, ग्र० सं० ४४ (१), व प्रा० वि० प्र० जोधपुर, ग्र० सं० १५६१३ (७)

९९. हिंदी साहित्य का इतिहास—रामचंद्र शुक्ल, पृ० १७७

१०० ब्रज माधुरी सार, पृ० ७६

१०१. कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव, पृ० ६१६

१०२. भक्तमाल, वार्तिक तिलक, पृ० ६०४

१०३. भक्त कवि व्यास जी—वासुदेव गोस्वामी, पृ० ३९

१०४. भक्तमाल, पृ० ६०४

१०५ 'जौ हौं सत्य सुकुल कौ जायौ'—भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० २६४

१०६. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५२

१०७ "निजा सा यथा—
श्रीकृष्णो भगवान् ब्रह्मा नारदो बादरायण।
श्री मध्व पद्मनाभश्च नृहरिमाधवश्च स ॥५॥
अक्षोभ्यो जयतीर्थश्च ज्ञानसिन्धुर्दयानिधि।
विद्यानिधिश्च राजेन्द्रो जयधर्ममुनिस्तत ॥६॥
पुरुषोत्तम ब्रह्मण्यो व्यासतीर्थश्च तस्य हि।
लक्ष्मीपतिस्तत श्रीमान् माधवेन्द्र यतीश्वर ॥७॥
ईश्वरस्तस्य माध्वश्च राधाकृष्णप्रियोऽभवत्।
तस्याहु करुणापात्र हरिरामाभिधोऽभवामिति ॥८॥
—इति श्री गुरुप्रणालिकोद्देश ।"

नवरत्न, हस्तलिखित प्रति, बाबा कृष्णदास जी का संग्रह, संदर्भ चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २७९

१०८. नवरत्न, पृ० ३

१०९. श्री गौड़ीय वैष्णव अभिधान (बंगला), पृ० १४१७

११०. बंगला भक्तमाल, पृ० २१४

१११. वृंदावन कथा, एकादश परिच्छेद (बंगला), पृ० १३९

११२. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ७६

११३. "श्री माधव दास सरन मैं आयौ।
हौं अजान ज्यौं नारद ध्रुव सौ, कृपा करी सदेह भगायौ॥"
—भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० १९४

११४ भक्त कवि व्यास जी, भूमिका (मीतल जी) पृ० ड

११५ भक्त कवि व्यास जी, पृ० ७० व भूमिका

११६ भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५८-६०

११७ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य, पृ० ३५६-३५७

११८ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य, पृ० ३५७, (फुट नोट)

११९. ये हस्तलिखित प्रतियां इस प्रकार हैं—(१) व्यास पद संग्रह (लि० का० सं० १७५८), श्रीकृष्ण जन्मभूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्र० ३६००७०, (२) व्यास के पद (लि० का० सं० १७४१), प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र० १५६१३ (७); (३) व्यास का पद (सं० १७१५) प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर, ग्र० ३४ (६२) एवं ग्र० ७४ (८१); (४) व्यास जू की बाणी, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर, ग्र० ४७२७ (२), ६२, (५) अनन्य मोदिनी (प्रियादास कृत) में उद्धृत व्यास के ११ पद (लि० का० सं० १८८३) महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० २४३७, (६) समय प्रबंध (पद संग्रह) लि० का० सं० १८७७, कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा, ग्र० ३५८०७१, (७) हरिराम [illegible] की रचनाएं, (लि० का० सं० १८२२) इसमें उद्धृत व्यास जी के दो पद, निज संग्रह, (८) पद संग्रह (लि० का० १९वीं श०), महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० १८८८

१२० प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, अलवर में उपलब्ध व्यास जू की बाणी, ग्र० ४७२७ (२) ६२ व अन्य प्रतियों में भी यही पाठ मिलता है।

१२१ अनन्यमोदिनी (लि० का० सं० १८८३) प्रियादासकृत, पत्र सं० ६, महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्र० २४३७

१२२. व्यास के पद (लि० का० सं० १७४१), प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र० १५६१३ (७)

१२३ श्री हितहरिवंश गोस्वामी : सम्प्रदाय और साहित्य, पृ० ३९९

१२४ श्री वासुदेव गोस्वामी ने भी ऐतिहासिक तथ्यों के विरुद्ध 'रसिक अनन्यमाल' की कुछ असंगतियों का उल्लेख किया है। दे० भक्त कवि व्यास जी, पृ० ५६, ५७, ६१ व ७१

१२५. डा० [illegible] ने विभिन्न प्रमाणों व तर्कों के आधार पर रसिक अनन्यमाल की अप्रामाणिकता सिद्ध की है। विस्तार के लिए देखें—'चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को [illegible] देन' (डा० [illegible]) [illegible] मुद्रित' व 'हरिराम व्यास' तथा '[illegible] मुद्रित [illegible] सम्प्रदाय के कवि' शीर्षक डॉ० [illegible] का लेख, [illegible] [illegible], [illegible], [illegible], पृ० [illegible]

१२६ भक्त कवि व्यास जी, बाणी, पृ० [illegible]

१२७ वही, पृ० [illegible]

१२८ राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य, पृ० [illegible]

१२९ रूप गोस्वामी कृत 'निकुंज विलास स्तव', प्रबोधानन्द सरस्वती कृत 'वृंदावन शतक', '[illegible]' व '[illegible] राग प्रबंध'।

१३० स्पष्ट है कि [illegible] व्यास जी के काव्य में व्रज रस और निकुंज रस दोनों की [illegible] भावनाएं भी प्रगट [illegible] कि ऐसा प्रतीत होता है [illegible] सिद्धांत [illegible] स्वीकार करने से पहले

ग्न रस और ब्रज-लीला का गान किया था।"—राधावल्लभ-संप्रदाय सिद्धांत और साहित्य, पृ० २३६

१३१. भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पृ० २२६, २७१, ३४१, १८४ तथा ३६०, ३८१, ४०७

१३२ वही, पृ० ६८

१३३ सरोज सर्वेक्षण—डॉ० किशोरीलाल गुप्त, पृ० ४६४

१३४. हिंदी साहित्य का इतिहास (शुक्ल), पृ० १८६, हिंदी साहित्य (डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी), पृ० १९५-१९६ व २००, हिंदी भाषा और साहित्य, (डॉ० श्याम सुन्दरदास), पृ० ३२८, सुकवि सरोज (गौरीशंकर द्विवेदी), पृ० ५४, ब्रजमाधुरी सार (वियोगी हरि), पृ० ११५, Mathura District Memoir (F.S. Grouse), p. 199

१३५. भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पद सं० १३६, पृ० २२६

१३६. वही, पृ० १४, पृ० १९४

१३७. चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २८०

१३८. भक्त कवि व्यास जी, वाणी, पद सं० २६, १२२, २८५, ३००, ५९४ व रास पंचाध्यायी—पद सं० ३०

१३९. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ६३

१४०. भक्त कवि व्यास जी—भूमिका (मीतल) पृ० ग

१४१. भक्त कवि व्यास जी, वासुदेव गोस्वामी, पृ० ७३, व राधावल्लभ संप्रदाय : सिद्धांत और साहित्य—डॉ० स्नातक, पृ० ३६४

१४२. हितहरिवंश गोस्वामी : संप्रदाय और साहित्य, ललिताचरण गोस्वामी, पृ० ३९१

१४३. भक्त कवि व्यास जी, पृ० ४०, ८४। The Modern Vernacular Literature of Hindustan p. 28. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा, पृ० ६९६

१४४. चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २८८

१४५. राधावल्लभ संप्रदाय : सिद्धांत और साहित्य—डॉ० स्नातक, पृ० ३६५

१४६. भक्तमाल टीका—प्रियादास, कवित्त सं० ३६०-३६३

१४७. भक्त कवि व्यास जी—वासुदेव गोस्वामी, पृ० १०४

१४८. चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २९१

१४९. चै० सं० हि० दे० (बंसल), पृ० २९२-२९३, डॉ० सत्येंद्र (ब्रज साहित्य का इतिहास, पृ० १८१) तथा मीतल जी (चै० सं० ब्र० सा०, पृ० १६१) ने भी इनका जन्म सं० १५७२ के बाद का अनुमानित किया है।

१५०. गौर बरन की रति दई, दई दास गति मोय।
बलिहारी ता बधु की, जा सम कोऊ न होय॥

× × ×

रामराय दादा करुना करि, दीनौ मोहि अनोखौ दान।
श्री प्रभु चंद्र गोपाल लाडली लाल भये रस एक प्रधान।"

—चंद्रगोपाल कृत 'चंद्र चौरासी' (हस्तलिखित प्रति)

१५१. 'चंद्र चौरासी' की पुष्पिका

१५२ वृंदावन शोध संस्थान क्रमांक ४२०२ व ७६२८

१५३ 'आदि वाणी' और 'गीत गोविंद भाषा' की भूमिकाएं—यमुनावल्लभ गोस्वामी एवं खोज रिपोर्ट १६३८, पृ० ५

१५४ अगर चंद नाहटा, वर्धन वशालि हृय, परिषद पत्रिका, वर्ष २, अंक ३, पृ० ५२

१५५ भक्तमाल (रूपकला संस्करण—तृतीय सं०) छं० सं० ११७, पृ० ७२८ तथा छं० सं० १८८, पृ० ६०४

१५६ भक्ति रस बोधिनी, कवित्त सं० ६२१

१५७ चैतन्य सम्प्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन—डॉ० बंसल, पृ० २६६-३००

१५८ दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता, तृतीय खंड, पृ० ३६६-३७२

१५६ विगत पृष्ठों में रामराय जी के संबंध में लिखते हुए हम यह सिद्ध कर चुके हैं कि रामराय जी सदैव चैतन्य सम्प्रदायी भक्त कवि थे।

१६० द्र० परिशिष्ट को चित्रावली में 'भगवानदास' के पद (ह० प्रति) की पुष्पिका का चित्र।

१६१. खोज रिपोर्ट—अठारहवां त्रैवार्षिक विवरण, प्रथम भाग, सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, सं० १६७, पृ० १०६

१६२ प्रेम भगति जब ऊपजे जाने कृष्ण सरूप।
दुविधा मन ते दूरि सरगुन रवि निर्गुन धूप॥
जाकों भावें यह कथा सोई पुरुष पुरान।
रामराय के हेत जानकें कहे 'दास भगवान'॥
—प्रेम पदारथ—भगवानदास कृत

१६३ खो० रि० १६४४/२५२ (क) (ख)

१६४ चै० स० व्र० सा०—मीतल, पृ० १७५ तथा व्रज साहित्य का इतिहास—डॉ० सत्येंद्र, पृ० १८२

१६५. गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय का समय निर्घंट, श्री गौरांग (त्रैमासिक) स० व्रज रत्नदास, वर्ष २ अंक २, सं० २०१८ और वृंदावन शोध संस्थान के पट्टों के आधार पर संदर्भ, चै० स० हि० दे०—डॉ० बंसल

१६६. इन रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियां कृष्ण जन्म भूमि सेवा संस्थान, मथुरा में उपलब्ध हैं।

१६७. श्री जीव जीवन मेरौ, उन ही कौ मैं हू चेरौ,
जाके राधा-दामोदर वृंदावन गाजैं है।
कृष्णदास व्रजवास रचत नाम-विलास,
'गौर नाम रस चंपू' जामैं रस भ्राजैं है।।"
—गौर नाम रस चंपू, ह० प्रति, प्रारंभिक पत्र

१६८ श्री जुत कृष्ण कृष्ण चैतन्य, सहित सनातन रूप सुधन्य॥
श्री गोपाल भट्ट रघुनाथ, वृज प्रिय पद रज धर निज माथ॥१॥
श्री जुत जीव गुसाईं ध्याऊं, नित वंदन कर कृपा मनाऊं॥
रची प्रभु मन सिंधा चार, करूं तासु भाषा सुख सार॥२॥
—लघु गोपाल चंपू भाषा, हस्तलिखित प्रति, (लि० का० सं० १७४७) प्रारंभिक पत्र, कृ० ज० से० सं०, मथुरा

१६९. गौर नाम रस चपू (प्रकाशित मस्कर) रमिता

१७० प्रस्तुत विषय से संबधित कृष्ण म... के उदाहरण यथा ब्रजभाषा-काव्य की समालोचना के अंतर्गत यथास्थान दिये गये है।

१७१. द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में दिया गया 'वृंदावन सत' की हस्तलिखित प्रति का चित्र।

१७२. प्रथम कृपा परिमोद मोद जिहि मन कौ दीनौ।
श्री गुरु हरिदास दयामय आपन कीनौ।।
श्री माधौ मुदित प्रसन्न हम जिन रति-रस पायौ।
तिनकौ हौं निज दास रहौं रस तिनतें पायौ।।
इष्ट चंद्र गोविंद अरु श्री राधा जीवन प्राण धन।
हित संगी रसी भजन सु कहत सुनत कल्याण घन।।
× × ×
मम माता दाता भजन श्री वृंदावन वास।
सो ए श्री गोविंद जू माधौ मुदित हुलास।।

—वृंदावन सत पत्र सं० २८-२५, हस्तलिखित प्रति (लि० का० सं० १७८६) प्रा० वि० प०, जोधपुर (वि० 'वृंदावन सत' की अन्य दो हस्तलिखित प्रतियों में भी उपर्युक्त उल्लेख इसी प्रकार मिलता है इन प्रतियों के विवरण हेतु देखें—परिशिष्ट में हस्तलिखित ग्रंथों की तालिका)

१७३. भक्तमाल, छं० सं० १९८

१७४. भक्तिरसबोधिनी टीका, कवित्त सं० ६२६-६२९

१७५. भक्ति सुमिरनी, छं० सं० २२९

१७६. मिश्रबंधु विनोद, भाग २, सं० ३६९, पृ० ४५५, भागवत संप्रदाय—बलदेव उपाध्याय, पृ० ४२२, खोज रिपोर्ट ०/९/२३ सी, सरोज सर्वेक्षण—डा० किशोरीलाल गुप्त, पृ० ५१६

१७७ अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय—डॉ० दीनदयालु गुप्त, भाग १, पृ० ६८

१७८ चै० सं० हि० दे०—डॉ० बंसल, पृ० ३२५, चै० सं० ब्र० सा०—मीतल, पृ० २०७

१७९ रसिक अनन्यमाल की अप्रामाणिकता अन्य विद्वानों ने भी सिद्ध की है। विस्तृत जानकारी हेतु देखें (क) चै० सं० हि० दे०—डॉ० बंसल, पृ० ३३१ तथा 'भगवत मुदित: चैतन्य संप्रदाय के कवि' शीर्षक लेख—डॉ० बंसल, सतवाणी, नवबर, १९६१, अंक ६, पृ० ३-८ (ख) भक्त कवि व्यास जी—वासुदेव गोस्वामी, पृ० ४६-४७, ६१ व ७१

१८० संवत दस सै सात सै, अरु सात बरस है जानि।
चैत्र मास में चतुरवर, भाषा कीयौ बखानि।।

—वृंदावन सत—हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका
(द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में दिया गया इसका चित्र)

१८१ प्रियादास कृत 'भक्तिरसबोधिनी टीका' का रचनाकाल सं० १७६९ है।
(द्र० प्रस्तुत अध्याय के अगले पृष्ठों में 'प्रियादास और उनकी रचनाएं')

१८२. श्री वृंदावन सत मत कियौ वार्ता मोद प्रबोध।
भागवत सों भाषा करी साखा मन की सोध।।

—वृंदावन सत (ह० प्रति), पत्र सं० १, दोहा सं० ४

१८३ च म व मा मोतन प० २१२

१८४ भगवत मुदित के कुछ पद हमें इन हस्तलिखित ग्रंथों में उपलब्ध हुए हैं—'रसिक जीवनी (मनोहरदास कृत) ह० प्रति, कृ० ज० से० स०, मथुरा, ग्र० ३५६०२३; भक्तमाल टिप्पणी—ह० प्रति, कृ० ज० से० स०, मथुरा, ग्रं० २६२००४; गो० चुट्टन भट्ट जी की समाज पोथी (लि० का० १७५२)

१८५ 'रसिक जीवनी' में सकलित पद—ह० प्रति, छ० स० ६४, पत्र स० ११, कृ० ज० से० स०, मथुरा, ग्र० ३५६०२३

१८६ (क) "इति श्री मानलीला माधुरी दास कृत सपूर्णम्"—मानलीला की पुष्पिका, ह० प्रति (स० १८८६ में लिपिबद्ध गुटका), कृ० ज० सं० स०, मथुरा, ग्र० ३५६०५२

(ख) "श्री वृदावन माधुरी जन माधुरी के प्रान।
छटी छार निनकी परी जब रत जानें आन ॥२५३॥
—वंशीवट लीला अतिम पत्र—ह० प्रति—लि० का० स० १८३७
वृ० शो० स०, वृदावन। द्र० परिशिष्ट में इसका चित्र

१८७ गुजराती और व्रजभाषा-कृष्ण काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डॉ० जगदीश गुप्त, पृ० ६२

१८८ विहार माधुरी की हस्तलिखित प्रति (लि० का० स० १७११) महाराजा संग्रहालय, जयपुर। द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में इस रचना की पुष्पिका का चित्र।

१८९ 'माधुरी वाणी' (प्रकाशित सस्करण) की भूमिका, पृ० १

१९० व्रज भक्ति विलास, पचम अध्याय, पृ० १२५

१९१ (क) सवत सोलह सौ असी, मास अधिक हिय धार।
केलि माधुरी छवि लिखी, श्रावण वदि बुधवार ॥१२६॥
— माधुरी वाणी (प्रकाशित सस्करण)—केलिमाधुरी, प्रति [illegible] तथा 'केलि माधुरी' की ह० प्रति (वृ० शो० स०, वृदावन, ग्र० स० ८४१६ग)

(ख) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का सक्षिप्त विवरण, प्रथम खड, पृ० ४१५

१९२ काकरोली विद्या विभाग, बंध स० ७४, सदर्भ—गुजराती और व्रजभाषा कृष्ण काव्य का तुलनात्मक अध्ययन डॉ० जगदीश गुप्त, पृ० ६२

१९३. (क) [illegible] ।
सदा सनातन [illegible] वृदावन [illegible] ॥१॥
— [illegible] माधुरी, ह० प्रति, [illegible] पत्र, वृ० शो० स०, वृंदावन

(ख) श्री [illegible] प्रकास।
सदा सनातन [illegible] विलास ॥
— [illegible] माधुरी, ह० प्रति, [illegible] पत्र, कृ० ज० से० सं०, मथुरा

१९४ [illegible] (ग)

१९५ [illegible]

१९६ कृ० ज० से० स०, मथुरा, ग्र० स० २६०० [illegible]

१९७ द्र० परिशिष्ट में '[illegible] माधुरी' की पुष्पिका का चित्र

१९८ [illegible] (ग)

१६८ द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में [illegible]

२०० Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur—An Index to the Register of Manuscripts in the Pothikhana of Jaipur by Gopal Narayan Bahura—p. 321

२०१. सभी ह० प्रतियों के विवरण हेतु देखें परिशिष्ट में [illegible]।

२०२ वल्लभ रसिक की वाणी (प्रकाशित संस्करण), [illegible]

२०३ प्रेमपत्तनम्—ह० प्रति, महाराजा संग्रहालय, जयपुर, [illegible] (१)

२०४ प्रेमपत्तनम् (प्रकाशित संस्करण) भूमिका, पृ० [illegible]

२०५ चै० म० ब्र० सा०—मीतल, पृ० २२३ व चै० म० [illegible] —[illegible], पृ० ३४३

२०६. मिश्र बंधु विनोद, द्वितीय खंड, पृ० ६६४

२०७ खोज रिपोर्ट—वल्लभ रसिक की मांझ (कुल २६ छंद) [illegible] (१६००/२३); माझी (१६०६/३२६), वल्लभ रसिक बाई मी (१६२३/[illegible]), [illegible] आठ अठारह पैंडे (१०८+२ छंद) —१६१२/१४ बी, १६४४/२३४, [illegible] (२३ छंद) १६१२/१४ बी; वल्लभ रसिक की वाणी (कुल [illegible]) [illegible], हिंडोर, सनेही विनोद व प्रेम चंद्रिका—१६२६/[illegible]

२०८. विवरण हेतु दे० परिशिष्ट में ह० ग्र० की तालिका

२०९. द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में इस पोथी के दो चित्र

२१०. किशोरीदास जी की वाणी, भूमिका, छुट्टन जी भट्ट, वृन्दावन [illegible] इसकी हस्तप्रति सुरक्षित है।

२११. चै० स० हि० दे०, पृ० ३५७

२१२. किशोरीदास जी की वाणी, भूमिका

२१३ (क) प्रथम प्रणाम गुरु श्री रामशरण नाम,
चहुराज चरण-सरोज मन भायौ है।
कृपा करि दीन दीक्षा शिक्षा परिचर्या निज,
राधिकारमण वृंदावन दरसायौ है॥
सद्गुन समुद्र दयासिंधु प्रेम पारावार,
सील सदाचार कौ कवित्त जग छायौ है।
ता दिन सफल जन्म भयौ है अनाथ बंधु,
मनोहर नाम राखि मोहि अपनायौ है॥१॥

× × ×

मनोहर करै आस वास नित निकट मैं,
रहैं श्री गोपाल भट्ट परिकर मैं॥११२॥

—राधारमण रस सागर (ह० प्रति) छंद० स० १ व ११२, वृ० शो० सं०, वृंदावन, ग्रं० सं० ६८३६

टि० राधारमण रस सागर की उपलब्ध समस्त प्रतियों में उपर्युक्त उल्लेख मिलता है।

(ख) चट्टराज-कुल-कमल रवि छवि कवि परम उदार
राम शरण गुरु चरण वर, मनोहर प्राण अधार ।।१।।
—सम्प्रदाय बोधिनी, (ह० प्रति लि० का० सं० १७७६), दोहा स० १, कृ० ज० से० सं०, मथुरा

(ग) मनोहरदास कृत 'रसिक कर्णाभरण लीला' (ह० प्र०, पत्र स० १) के अनुसार भी इनके गुरु का नाम यही है ।

(घ) मुरारीलाल अधिकारी ने 'वैष्णव दिग्दर्शिनी' (पृ० १२६) नामक बंगला ग्रंथ मे मनोहरदास जी की जो गुरु परंपरा दी है वह राधारमण रस सागर के अनुसार ही है ।

२१४. राधारमण रस सागर छद स० १

२१५ भक्तिरस बोधिनी टीका क० ६३०-६३२

२१६ श्री राधारमण रस सागर, प्र० बाबा कृष्णदास, छ० सं० ११३, पृ० ३८ एव इस रचना की ह० प्रतिया ।

२१७ रसिक कर्णाभरण लीला, ह० प्रति का अंतिम पत्र, दे० परिशिष्ट मे इसका चित्र ।

२१८. बगाक्षर मे प्रकाशित इस रचना (अनुराग वल्ली) मे श्री निवासाचार्य का चरित वर्णित है जो मनोहरदास की गुरु परम्परा में रहे हैं । इसकी ह० प्रतिया वृंदावन शोध सस्थान मे उपलब्ध है ।

२१९. खोज रिपोर्ट, १९१२/१०९ व १९४१/१८६

२२०. द्र० परिशिष्ट मे 'राधारमण रस सागर' की ह० प्रति की पुष्पिका का चित्र ।

२२१ "इति श्री स्वामी मनोहर राय विरचिता सप्रदाय चतुष्य वर्णन—
मयी सप्रदाय बोधिनी सपूर्ण मिति शुक्रवार एकादसि, सपूर्ण ।। संवत् १७७६।।"
—सप्रदाय बोधिनी— ह० प्रति की पुष्पिका कृ० ज० से० सं०, मथुरा, ग्र० स० ३५६०२५

२२२ सप्रदाय बोधिनी, प्रकाशक—बाबा कृष्णदास, स० २०१६

२२३ बाबा कृष्णदास को यह प्रति राधादामोदर मदिर वृंदावन से उपलब्ध हुई थी । यह प्रति अब कृष्ण जन्म भूमि सेवा सस्थान मथुरा मे सुरक्षित है । इसकी पुष्पिका मे लिखा है "इति श्री रस पद्धति रसिक जीवन नाम संपूर्ण दोहा ।। संवत् १८१६ मिति काति वदी १ श्री वृंदावन मध्ये लिखित व्यास ग्रणदराम । व्यास भवानीदास पठनार्थं ।"

२२४. द्र० परिशिष्ट मे रसिक कर्णाभरण लीला की ह० प्रति की पुष्पिका का चित्र ।

२२५ वृंदावन शो० स०, ग्र० सं० ४४८७

२२६ गौरगुणावली की हस्तलिखित प्रति के आरंभिक व अंतिम अश इस प्रकार है—
आरभ— ।। श्री राधा गोविंद देवो जयति ।। अथ गौर गुणावली लिख्यते ।।
दोहा ।। श्री गुरु रास्न चरण सरसीरुह चाह करुना मकरंद ।।
शुद्ध राग रस रीति प्रीति में जै जै आनंद कद ।।१।।
जुगल रूप चैतन्य घन वृंदाविपिन विहार ।
सतत सनातन सुहृद मिलि विलसत रस विस्तार ।।२।।
रसिक जुगल चैतन्य तन वृंदावन रस सार ।
रूप सनातन सुहृद मिलि विलसत नित्य विहार ।।३।।

प्रेम सनातन सो प्रबल ... ... समान
राधारमण गोपाल गति मम जीवन धन प्राण ॥८॥

× × ×

अंत—तामैं मनोहर नाम नराधम। साधु अपराधी नाहिन जा सम।
तातैं बिनती करत लजाऊं॥ पाछे अनतहि ठौर न पाऊं॥
पाऊं न आश्रय जाऊं जित नित पतिन को अगो करें॥
एक तुम बिन पतिन पावन सरन अशरन दय हरैं॥
जानि निज परिवार नातौ मानि विनय दया करौ॥
तुम नाम गुण लावण्य लीला सदा रसन हृदै स्फुरौ॥२४॥
इति श्री गौर गुणावली सपूर्ण॥

२२७. श्री जु रूप रघुनाथ के चरणन की जिहि आस।
चरितामृत चैतन्य को कहै कृष्ण कौ दास॥
रूप सनातन जगत हित सुबल स्याम पद आस।
चरितामृत प्रभु कौ लिखै ब्रजभाषाहि प्रकास॥
—श्री चैतन्य चरितामृत—सुबलश्याम, मध्यलीला, परिच्छेद १०, अंतिम छंद, पृ० ६१

२२८. ताकौ ब्रजभाषा करि कीनौ यथा बुद्धि अनुवाद।
रूप सनातन पद रज सिर धरि 'वेनी कृष्ण' प्रसाद॥
—श्री चैतन्य चरितामृत, आदि लीला, परिच्छेद १३ पृ० ६८ एवं द्र० मध्य लीला, परिच्छेद २१, पृ० १९६, मध्यलीला, परिच्छेद २५, पृ० २३०

२२९. वंशी वट तट मद मत्त गोपी गण साथ, सोई गोपीनाथ प्यारो सपदा हमारी है॥

× × ×

जिन्हौ निज मंत्र दियौ तुच्छ जीव स्वच्छ कियौ,
लियौ अपनाइ तेई चाहौ सो सहाय हैं।
जिनकी कृपा तें गौर कृष्ण गण नातो भयो,
वेई कृष्ण महाप्रभु चरित कहाय है।
जिनकी कृपा ते धाम वृंदावन वास लह्यौ,
वेई निज शक्ति बल पंगु कौ नचाय है।
मन हूं को दुर्लभ जे सुलभ ते करी जिन्हो,
तेइ श्री यदुपति जू सिर पै सहाय है॥
—श्री चैतन्य चरितामृत, आदि लीला, परिच्छेद १, कवित्त सं० ३,४

२३०. चै० च० कवित्त सं० ९, १०, पृ० २

२३१ चै० म० ब्र० सा०—मीतल, पृ० २५८, चै० स० हि० दे०—बसल, पृ० ३६६

२३२. (क) 'प्रियादास जी की ग्रंथावली' में (प्रकाशित)—रसिक मोहिनी—दो० १, अनन्य मोदिनी – दो० १. चाहवेली—छ० १. भक्ति सुमिरनी—छंद १

(ख) श्री चतन्य मा॰रण मजि श्री नित्यानद सग
श्री अद्वत प्रभु-पारषद। जस श्रगी श्रग ॥१॥
रसिक शिरोमणि बिग्यवर। श्री मन रूप अनूप।
सदा सनातन धरि हियै। दोऊ एक स्वरूप ॥२॥

—अनन्य मोदिनी, ह० प्रति (लि० का० स० १७८३), प्रारभिक पत्र, महाराजा सग्रहालय जयपुर, ग्र० स० २४३७

(ग) भक्ति रस बोधिनी—ह० प्रति, छ० सं० १

२३३. द्र० प्रस्तुत अध्याय में वैष्णवदास रसजानि'।

२३४. 'भक्तमाल के टीकाकार श्री प्रियादास जी'—'भक्तभारत' में प्रकाशित लेख, सदर्भ चै० म० ब्र० सा०, पृ० २४२

२३५ (क) सवत प्रसिद्ध दस सात सत्त उनहत्तर,
फाल्गुन ही मास वदी सप्तमी बिताय कै।
नारायण दास सुख रास भक्तमाल लैके,
प्रियादास दास उर बसौ रहौ छाय कै।

—भक्तिरस बोधिनी टीका, क० स० ६२७, ह० प्रति, (लि० का० स० १८१०), वृ० शो० स०, वृदावन

(ख) रसिक मोहिनी, दो० स० १०४

२३६ प्रियादास जी की ग्रथावली, भूमिका, पृ० १

२३७ हिंदी साहित्य का इतिहास—आ० शुक्ल, पृ० १४७

२३८. सभी ह० प्रतियों के विवरण हेतु देखे परिशिष्ट मे ह० ग्रथो की विवरणात्मक तालिका।

२३९ द्र० चित्रावली में 'भक्ति रस बोधिनी' की इस ह० प्रति का चित्र।

२४० भक्ति रस बोधिनी टीका, छ० स० ३३०

२४१ द्र० परिशिष्ट मे 'अनन्य मोदिनी' की हस्त प्रति की पुस्तिका का चित्र।

२४२ वही।

२४३ हा हा अति अलबेली नागरि, हा वृषभानु दुलारी।
हा हा प्रेम मयी रस मूरति, हा हा श्री गिरधारी ॥
हा हा मृदुपंकज दल मोहन, चित्रित जावक रग।
हा हा नखमनि चंद्र चद्रिका, नाना उठत तरग ॥

—चाह वेली (प्रियादास जी की ग्रंथावली), पृ० स० २७, छ० स० १४,१५

२४४ यह तौ चाह बेलि उपजाई, प्रियादास लगि आस।
समय कटाक्ष भये फल लागे, सफल करहु बनवास ॥

—चाहवेली, पृ० स० ३०, छ० स० ४८

२४५ द्र० परिशिष्ट मे इस रचना की पुष्पिका का चित्र।

२४६ प्रात पढ़ै भगतन के नाम। तौ उर झलकै स्यामा स्याम।

भक्त सुमरिनी सुमरन कर । प्रियादास तिन पद रज धर ।

—भक्त सुमरिनी (ह० प्रति) अंतिम छंद

२४७ संवत दस मैं सात सै, नब्बै औ बढ़ि च्यार ।

तिथि द्वितिया बैसाख सुदि, प्रगट्यौ सत मनि-हार ।।१०४।।

—रसिक मोहिनी (ह० प्रति)

२४८ चै० स० हि० दे०—बंसल, पृ० ३७६

२४९ अष्टयाम—वृंदावन चंद्र कृत (प्रकाशित संस्करण,) भूमिका

२५०. (क) श्री राधादामोदर शिष्यो वृंदावनाभिधो विप्र ।

अष्टोत्तरशतनाम्नि व्यधात सता प्रीतये भाष्यम् ।।

—श्रीकृष्णाष्टोत्तर शतनाम—ग्रंथ रत्नत्रयम् में प्रकाशित प्र० बाबा कृष्णदास—पृ० २६

(ख) श्रीराधादामोदर शिष्यो वृंदावनाभिधो विप्र ।

गोपाल स्तवराजो भाष्यं व्यतनोत्सता प्रीत्यै ।।

—गोपालस्तवराज (ग्रंथ रत्नत्रयम् में प्रकाशित—पृ० २४)

२५१. चै० म० व्र० सा०—मीतल, पृ० २८६

२५२. अष्टयाम, छं० सं० १७-१८, पृ० ३

२५३. गोपाल स्तवराज करी भाषा जु जथा मति ।

श्री 'वृंदावनचंद्र' दास लै रची रुचिर अति ।।

—गोपालस्तवराज (राधारमण रस सागर के अंत में प्रकाशित—पृ० ३९-४१)

२५४. 'मिश्र बंधु विनोद' एवं नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट में वैष्णवदास एवं रसजानि नामक दो पृथक् कवियों का उल्लेख हुआ है, जबकि वस्तुतः दोनों एक ही कवि हैं ।

२५५. (क) रसिक भूप हरि रूप गुन श्री चैतन्य सरूप ।

हृदै कूप अनुरूप रस उछल्यौ चहुं अनूप ।।१।।

श्री प्रियादास रस रासि कौ पौत्र वैष्णवदास ।

ताहि कौ रसजानि कैं कीनौ नाम प्रकास ।।२।।

श्री हरि जीवन गुरु-कृपा पाय सोई रसजानि ।

श्री भागवत महात्मा की भाषा करी बखानि ।।३।।

—भागवत् माहात्म्य भाषा, ह० प्रति, (लि० का० सं० १८५८) प्रारंभिक पत्र, छं० सं० १-३, कृ० जं० शे० सं०, मथुरा

(ख) भक्तमाल माहात्म्य, भक्तमाल (प्रकाशित रूप० सं०) पृ० ६६४ एवं भक्तमाल माहात्म्य की ह० प्रति, अंतिम पत्र, वृं० शो० सं०, वृंदावन, ग्रं० सं० ६००७

(ग) गीत गोविंद भाषा, पृ० ३८, ३९

२५६. (क) भागवत भाषा (प्रकाशित संस्करण) द्वादश स्कंध, पृ० १४४ व भागवत भाषा, ह० प्रति (लि० का० सं० १८५८) द्वादश स्कंध की पुष्पिका, कृ० जं० शे० सं०, मथुरा ।

(ख) गीत गोविंद भाषा (ह० प्रति)—अंतिम पत्र ।

२५७ संवत अष्टादस सत गात ... वदी ... मंगल गात ३४
"इति ... सागर ... परमहंस संहिताया ... द्वादश स्कंध भाषा रस जानि कृते त्रयोदशोऽध्याय द्वादश पूर्ण। संवत : १८५८ : मिती सावन वदी : १३ : शुक्रवार चरनदास श्री महजोबाई जी की कृपा। सनेही पै कृपा करी : दसखत : कृष्ण सनेही के।"

—भागवत भाषा (ह० प्रति) द्वादश स्कंध की पुष्पिका, वृ० शो० सं० म०, मथुरा

२५८ पं० गंगाप्रसाद (हैनराम पुस्तकालय) के पास इसके ४, ७, और ११ स्कंध की प्रति सं० १८३६ की तथा ८-६ स्कंध की प्रति सं० १८३५ की है। संदर्भ, चैं० सं० हि० दें०—बसन्त पृ० ३८६

२५९ श्रीमद्भागवत भाषा, दशम स्कंध, तैंतीसवाँ अध्याय, पृ० सं० ११२

२६० (क) जानि अष्टादश शत आन चौदह अधिक सही।
संवत गन्य प्रमान मगसिर मास गही।
जयति गीत गोविंद, गावहु रसिक ग्रही।

—गीत गोविंद भाषा

—खो० रि० ४१/२५८, पृ० ७५४

(ख) 'परिषद पत्रिका' में प्रकाशित श्री वेदप्रकाश गर्ग का लेख, 'रसजानि वैष्णवदास'—संदर्भ—चैं० सं० अ० सा०—सीतल, पृ० २७५

२६१ गीत गोविंद (भाषा), सत्यम गर्ग, पृ० सं० २४

२६२ चैं० सं० हि० दें०—बसन्त, पृ० ३९०

२६३ श्री गौराग, वर्ष २, अंक ४, पृ० १२

२६४ चैं० सं० अ० सा०—सीतल पृ० २६६

२६५ कलि प्रगटायौ कृष्ण जिन, सीतापति सम ईस।
जयति जयति अद्वैत प्रभु, दे पद रज मम सीस॥

× × ×

भ्रमर कुंज रस पुंज मधि, भानु सुता के कूल।
नव राधा गोविंद जहँ, जुग जुग जीवनि मूल॥

—प्रेम भक्ति चंद्रिका (भाषा), वृंदावनदास, दोहा सं० ४ व २५७

२६६ प्रेम भक्ति चन्द्रिका (भाषा), पृ० २३, एवं विलाप कुसुमांजलि (भाषा), पृ० १६

२६७. (क) प्रेम चंद्रिका भारी। ग्रंथ जु मंगलकारी॥

× × ×

गुनि वृंदावनवासी। हरि वल्लभ सुख रासी॥
बढ़ी अमित अभिलाषा। ऐ पै सुगमन भाषा॥
तब निदेश सुखकारी। निज भाषा हित भारी॥

—प्रेम भक्ति चन्द्रिका (भाषा), पृ० ३

(ख) भक्त नामावली, दो० सं० १५-१६, १५५-१५६

२६८ वही।

२६९ अधिक त्रयोदस जानि, संवत सतदस आठ-महि।
पूरण ग्रंथ सु मानि, पूस विदित सित पंचमी॥

—प्रेम भक्ति चन्द्रिका (भाषा), पृ० २३

२७० प्रेम भक्ति चन्द्रिका छं सं १३७

२७१ संवत सत दस आठ अरु, वरष चतुर्दश आनि।
पूस सरस सित पंचमी, पूरन ग्रंथ बखानि ।।१०१।।
—विलाप कुसुमांजलि (भाषा), पृ० १६

२७२ विलाप कुसुमांजलि (भाषा), छं० सं० १०, १२, पृ० २

२७३ वृंदावनदास कृत १५ पंक्तियों का एक पद (चैतन्य महाप्रभु की बधाई का) चै० म० ब्र० सा० (मीतल) में पृ० २८३ पर दिया हुआ है।

२७४ स्व० श्री विश्वेश्वरनाथ जी गुप्त (लेखिका के पिता) ने 'मधुप' उपनाम से ब्रजभाषा में सुंदर पदों की रचना की है। इनकी रचनाओं के दो संकलन 'गोपाल पद मंजरी' व 'गौर गोपाल पद मंजरी' के नाम से माध्व गौड़ेश्वर मंडल, जयपुर द्वारा प्रकाशित हुए हैं।

२७५. रामहरि जी के हस्ताक्षर में लिपिबद्ध पोथी में उनके जौहरी और महमिया होने का उल्लेख इस प्रकार हुआ है—"पोथी हरीराम जोहरी मेमिया की छै बाचै पढै जिनै जै गोपाल छै ।।"—रामहरि जी की रचनाओं की हस्तलिखित प्रति (लि० का० सं० १८२२) पत्र सं० १७६ की पुष्पिका—निज संग्रह।

२७६ शिर धरि राधारमन पद भट्ट गोपाल मल्हार।
कोश धनंजय आदि औ कल्कक नाम कहार ।।१।
प्रथम मंगलाचरण में सुमिरों शची कुमार।
अशुभ हरन सब शुभकरन प्रणऊं बारबार ।।३।।
—लघुनामावली (रामहरि ग्रंथावली), दो० १, ३, पृ० ३५

२७७ संवत अष्टदस बीस है सावन भावन मान।
कृष्णपक्ष दिन सप्तमी, मंगल मंगल जान ।।
—ध्यान रहसि (ह० प्रति—निज संग्रह), दो० सं० ३६, पत्र सं० २३५। द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में इसका चित्र।

२७८ गोवर्द्धन भट्ट ग्रंथावली, पृ० ७८, श्लोक १०

२७९ खोज रिपोर्ट २६/२८३, ए-एफ व ४१/५५४

२८० द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में रामहरि जी की रचनाओं की हस्तलिखित प्रति के चित्र।

२८१ ध्यान रहसि, दो० १९, २३

२८२ अब्द आठ दस तीस हैं, जेठ सुदी रवि तीज।
मन रोचक यहि ग्रंथ पढ़ि, प्रेम भक्ति रस भीज ।।
—बुद्धि विलास (रामहरि ग्रंथावली), दो० २५४, पृ० २०

२८३ बुद्धि विलास (रामहरि ग्रंथावली), दो० २७, पृ० ३

२८४. हरीराम है जोहरी जो हर परख प्रवीन।
तिह प्रेरे जौं हरि करी जौं हर भरी नवीन ।।
—सतहसी (रामहरि ग्रंथावली), दो० ९९, पृ० २८

२८५. सतहसी, दो० ५४, पृ० २५

२८६ कोमल व नतन नाम

रुज मृदु पशल कोमल रु नूतन सम्रत नव्य।

नव नवीन प्रत्यग्र पुनि अग्रम लागम भव्य॥

—लघु नामावली (रामहरि ग्रथावली), दो० ६२, पृ० ४२

२८७ लघुनामावली, दो० १०२, पृ० ४७

२८८ लघुशब्दावली (रामहरि ग्रथावली), दो० ६८, पृ० ५८

२८९ बोध बावनी (रामहरि ग्रथावली), दो० १७, पृ ३०

२९० जीभ कसौटी स्वाद की, स्रवन कसौटी बैन।

बास कसौटी नासिका, रूप कसौटी नैन॥

मृग मराल कोकिल मयक, बारिज केहरि मीन।

कदली दाड़यौ कीर छबि, लई राधिके छीन॥

—रस पचीसी (रामहरि ग्रथावली), छं० २, ५; पृ० ३३

२९१ श्री नारायण भट्ट कृपा करि कही जी।

रहसि-कहानी रीझि हिये नित रही जी॥

रहौ हियरा बैठि मेरै, कहौ जग विस्तारि कै।

प्रभु तुम ही रिझवार सुदर, लीला कहौ विचारि कै॥

श्री गुरु मुरलीधर दया करिकै, देहु मोहि उपदेस।

गुन है अगम अपार तुम्हरौ, कैसें होहु प्रवेस॥

× × ×

कहूगी कहानी कुवरि मगल सुजस की नीकी।

सुपने मे मोकू भयौ आगम सुहायौ है।

× × ×

'ललित सखी मुरलीधर' हित सैथा कहे।

स्रवन सुनत बेटी सबनु, सुख पायौ है॥

—कहानी रहसि, आरंभिक अश

२९२. सवत दस सै आठ मै, और छत्तीस बिचारि।

यह प्रबध पूरन भयौ, रतनागर की पारि॥

सावन पिछलौ जानियै, कृष्ण पक्ष सुभ बार।

मगल मोद बढावनौ, कुवरि-केलि सुख-सार॥

पूरन षष्टी तिथि कू भई, हिय आनंद सुजस सू छाई।

'ललित सखी' हिय सुख सरसानी, कुवरि-केलि यह गाई बानी॥

—कुवरि केलि, छं० ११७-११६, पृ० ३४

२९३. गोपाल राय कृत 'दंपति वाक्य विलास' नामक रचना के प्रारभ मे कवि-वश वर्णन है। इस रचना के प्रारभिक व अतिम पत्र में कवि ने अपने नाम गोपालराय तथा पिता प्रवीनराय के नाम का उल्लेख किया है। (द्र० प्रस्तुत पुस्तक के परिशिष्ट की चित्रावली में दिये गये 'दपति वाक्य विलास' की हस्तलिखित प्रति (लि० का० स० १९३२) के दो चित्र)

२९४ सरोज सर्वेक्षण पृ० २४२

२९५ डा० गोपालराय ने 'समपच.ध्य.यी (ह्राद.) न.म. ग्रन्थ (_I म० ,२६) स्वय इस बात का उल्लेख किया है कि यह ग्रंथ उन्होंने राजा [illegible] के लिए लिखा है।

—'दिग्विजय भूषण' कवि परिचय, पृ० २७, (संदर्भ—खोज रिपोर्ट १९१२/६२)

२९६ पिय प्यारी मिलि परसपर कहि गुन दोष प्रकास।
यातैं नाम धरयौ सुकवि दंपति वाक्य विलास ॥११॥
अठारह सै पिच्चासिया पूर्यो अगहन मास।
दंपति वाक्य विलास को तब कीनौं परगास ॥१२॥

—दंपति वाक्य विलास की हस्तलिखित प्रति, आरंभिक पत्र।

२९७. वृंदावन धामानुरागावली (ह० प्रति) की पुष्पिका, (गो० राधाचरण जी का पुस्तकालय, वृंदावन)

२९८ खोज रिपोर्ट १९१२/६२ ए-जे, १९०९/९७ ए बी, १९१२/५२ [illegible], १९२३/११६ ए बी।

२९९ वै० म० ब्र० सा०, पृ० ३१३

३०० सरोज सर्वेक्षण, पृ० २४३

३०१ यह प्रति गो० राधाचरण जी के पौत्र श्री अद्वैतचरण जी गो० (राधारमण महाप्रभु जी का मंदिर, वृंदावन) के पास मैंने देखी है। यह अच्छी अवस्था में सुंदर प्रति है। 'वृंदावन धामानुरागावली' की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ वृंदावन शोध संस्थान (क्रमांक ४१७४ ब, ५३०९ व १४२२८ बी) में उपलब्ध हैं जिनमें से प्रथम प्रति सं० १९३७ में वैष्णव सेवादास द्वारा लिपिबद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त इसकी एक खंडित प्रति बाबू ब्रजरत्नदास के संग्रह में भी है जिसका प्रकाशन उन्होंने 'श्री गौरांग' पत्रिका में करा दिया है।

३०२. 'इति श्री वृंदावन धामानुरागावली—बन के ठाकुर वर्णन नाम चालीसोऽध्याय ॥४०॥ समाप्त। सं० १९०० मिती पूस बदी १० शनिवार। लिखी गुपालदास।' ग्रंथ का अंतिम अंश। (द्र० चित्रावली में इसका चित्र)

३०३ दंपति वाक्य विलास, आरंभिक पत्र (द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में इसका चित्र)।

३०४ श्री आचारज महाप्रभुन कौ बंदहु बारम्बार।
जिनकी शिक्षा मंत्रहि सुनि नर नारि भये भवपार ॥

—वनमाला, आरंभ; (संदर्भ—सरोज सर्वेक्षण, पृ० २४३ पर उद्धृत)

३०५. रस चंद्रिका, प्र० बाबा कृष्णदास, भूमिका।

३०६ खोज रिपोर्ट १९१७/७२

३०७. रस चंद्रिका, हस्तलिखित प्रति एवं प्रकाशित सस्करण; टि० यही उल्लेख कवि कृत 'छंद पयोनिधि' नामक रचना की पुष्पिका में भी मिलता है।

३०८. रस चंद्रिका, भूमिका।

३०९ धरौ नैन निधि सिद्धि ससि संवत सुखद उदार।
माघ शुक्ल तिथि पंचमी रविनंदन सुभवार ॥

—छंद पयोनिधि, अंतिम छंद

३१० इति श्री र धिव रमण प रविन्द मकर प न नदित श्रलिद श्री रतिराम अ मज छद पय [ा न म प्र वि ा ने टसोनरग ८
—सदभ खाज रिपाट १६४७/४३३

३११ चै० म० ब्र० मा०—मीतल, पृ० ३१८

३१२ खोज रिपोर्ट १६१७/७२ बी एव १६३२/७६ बी तथा सरोज सर्वेक्षण स० ६६३/८०३

३१३ राधारमन गु उष्ट मम ग्राचारज चइतन्य ।
ज्ञाति द्विजन्मा गौडिया मध्य मग्रदा जन्य ॥
राम बिहारी जू पिता परम भागवत धाम ।
श्री राधा गोविद मम बडे भ्रात को नाम ॥
ए मेरे है मत्र गुरु श्री राधा गोविद ।
बार बार बदऊ सदा चरण कमल अरविंद ॥
—उक्ति जुक्ति रस कौमुदी, हस्तलिखित प्रति, पत्र १, २, छद ३-६ एवं गोलहवी कला की पुष्पिका ।

३१४ रसवती, नवबर १६६१, ४५वा अक, पृ० १८ पर प्रकाशित लेख ।

३१५ वही ।

३१६ डॉ० नगेश बसल, बाबू व्रजरत्नदास, भगवान दीन तिवारी आदि विद्वानो का भी यही मत है । श्री प्रभुदयाल मीतल ने इनका जन्म स० १८८० निर्धारित किया है ।

३१७ भारतेंदु मडल, प्रथम सस्करण, पृ० ११२ ।

३१८. श्री राधारमण जू को श्रृगार, ह० प्रति, क्रु० ज० से० स०, मथुरा ।

३१९. परिषद पत्रिका, वर्ष २, ग्रक ३ ।

३२०. खो० रि० २३/२१७ के अनुसार इसकी एक प्रति प० दीनदयाल गोपालपुर डॉ० बिस्वा (सीतापुर) के पास बताई जाती है ।

३२१ ख० ६, स० ६, दिसबर, सन् १६७८ ई० ।

३२२ "इति श्री गोस्वामी कृष्ण चैतन्य देवोपनाम निज कवि विरचित श्रीमद्राधारमण प्रथम शृगाराष्टक सपूर्णम् ॥ सवत् १६२२ ॥"—राधारमण जू को शृगार की पुष्पिका (हस्तलिखित प्रति क्रु० ज० से० स०, मथुरा)

३२३ शाह जी का मदिर, वृदावन मे फर्श पर जडे हुए इन कवि बधुग्रो के चित्र में इनके मूल नाम शाह कुदनलाल व फुदनलाल खुदे हुए है । (दे० परिशिष्ट में इनके चित्र)

३२४ अग्रवाल जाति का इतिहास, भाग १, पृ० सं० ४३३-३६ ।

३२५. अभिलाप माधुरी (ललित किशोरी कृत), भूमिका प्र० शाह गौर शरण गुप्त, वृदावन ।

३२६ अभिलाप माधुरी, भूमिका ।

३२७. वही ।

३२८. निज सग्रह—इस प्रति में प्रारभ व अंत के कुछ पृष्ठ नही है ।

३२९. वृदावन शोध सस्थान, क्रमाक ६१३

३३०. वृ० शो० स०, क्रमाक २५०६—इसमे लिपिकाल स० १६१५ की श्रावण ३० गुरुवार दिया हुआ है ।

२९४ सरोज सर्वेक्षण पृ० २४२

२९५ डॉ० गोपालराय ने [illegible] २६ स्वय इस बात का उल्लेख किया है कि यह ग्रंथ उन्होंने राजा [illegible] के लिए लिखा है।

—'दिग्विजय भूषण' कवि परिचय, पृ० २ , (सदर्भ —खोज रिपोर्ट १९१२/६२)

२९६ पिय प्यारी मिलि परसपर काटि पुन दोष प्रकास।
थातै नाम धरयौ सुकवि दपति वाक्य विलास ॥११॥
अठारह सै पिच्चासिया पूर्यो अगहन मास।
दपति वाक्य विलास को तब कीनौ परगास ॥१२॥

—दंपति वाक्य विलास की हस्तलिखित प्रति, प्रारंभिक पत्र।

२९७ वृंदावन धामानुरागावली (ह० प्रति) की पुष्पिका, (गो० राधाचरण जी का पुस्तकालय, वृंदावन)

२९८ खोज रिपोर्ट १९१२/६२ ए-जे, १९०६/६७ ए बी, १९१७/६४ ए, १९२२/११६ ए बी।

२९९ चै० म० ब्र० सा०, पृ० ३१३

३०० सरोज सर्वेक्षण, पृ० २४३

३०१ यह प्रति गो० राधाचरण जी के पौत्र श्री अद्वैतचरण जी गो० (राधारमण महाप्रभु जी का मंदिर, वृंदावन) के पास मैंने देखी है। यह अच्छी अवस्था में सुंदर प्रति है। 'वृंदावन धामानुरागावली' की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ वृंदावन शोध संस्थान (क्रमांक ४१७४ ब, ५३०६ व १४२२८ बी) में उपलब्ध हैं जिनमें से प्रथम प्रति सं० १९३७ में वैष्णव सेवादास द्वारा लिपिबद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त इसकी एक खंडित प्रति बाबू ब्रजरत्नदास के संग्रह में भी है जिसका प्रकाशन उन्होंने 'श्री गौरांग' पत्रिका में करा दिया है।

३०२ 'इति श्री वृंदावन धामानुरागावली—बन के ठाकुर वर्णन नाम चालीसोध्याय ॥४०॥ समाप्त। सं० १९०० मिती पूस वदी १० शनिवार। लिखी गुपालदास।' ग्रंथ का अंतिम अंश। (द्र० चित्रावली में इसका चित्र)

३०३ दंपति वाक्य विलास, आरंभिक पत्र (द्र० परिशिष्ट की चित्रावली में इसका चित्र)।

३०४ श्री आचारज महाप्रभुन कौ बदहु बारबार।
जिनकी शिक्षा मंत्रहिं सुनि नर नारि भये भवपार॥

—वनयात्रा, आरंभ; (सदर्भ—सरोज सर्वेक्षण, पृ० २४३ पर उद्धृत)

३०५. रस चंद्रिका, प्र० बाबा कृष्णदास, भूमिका।

३०६ खोज रिपोर्ट १९१७/७२

३०७ रस चंद्रिका, हस्तलिखित प्रति एवं प्रकाशित संस्करण; डॉ० यही उल्लेख कवि कृत 'छंद पयोनिधि' नामक रचना की पुष्पिका में भी मिलता है।

३०८ रस चंद्रिका, भूमिका।

३०९. धरी नैन निधि सिद्धि ससि संवत सुखद उदार।
माघ शुक्ल तिथि पंचमी रविनंदन सुखवार॥

—छंद पयोनिधि, अंतिम छंद

३३१ गो० गल्लू जी के पौत्र श्री अद्वैतचरण गो० (षड्भुज महाप्रभु का मंदिर, वृंदावन) द्वारा दिये गये विवरण के अनुसार इनका जीवन परिचय दिया गया है।

३३२ अभिलाष माधुरी – ललित किशोरी कृत, भूमिका में ललित माधुरी का जीवन परिचय दिया हुआ है।

३३३ श्री भक्त भाव संग्रह—प्रकाशक श्याम लाल हकीम, वृंदावन, पृ० १-२२

३३४ वही।

३३५ वही पृ० ७

३३६ शोभन गो० के सुपौत्र श्री अतुल कृष्ण जी गो० द्वारा प्रकाशित 'शोभन पदावली' की भूमिका।

३३७. कवि की रचनाओं में दिये गये उल्लेखानुसार 'प्रेमरस-वाटिका'—प्रथम विटप व द्वितीय विटप के अंत में, 'पथिक मराल', पृ० ११, 'विवेक मंजरी', पृ० ११ तथा अन्य रचनाओं के मुख पृष्ठ पर। (टि० बांकेपिया की रचनाओं की सूची, कुछ रचनाएं व कवि के विषय में जानकारी हमें इनके गुरु स्व० श्री अनन्तलाल जी गोस्वामी (राधा-रमण घेरा, वृंदावन) के संग्रह में उपलब्ध सामग्री में तथा गोस्वामी जी के परिवार-जनों से प्राप्त हुई है।)

३३८ प्रेम रस वाटिका, पृ० २१०

३३९. भगवत् सेवा विधि, पृ० ३२

३४०. निकुंज माधुरी छद्म, पृ० ११

३४१ ऋतु प्रमोद, पृ० १३

३४२. ब्रज माधुर्य दर्पण, पृ० २६

३४३ पथिक मराल, पृ० ११

३४४ मधुर मिलन, पृ० १७

३४५. स्मरण मंगल स्तोत्र—बांकेपिया, प्र० श्री० मुकुंद बिहारी, लखनऊ, सं० १९९४

३४६. माधवदास जगन्नाथी (जगन्नाथ पुरी), गदाधर भट्ट (आंध्र प्रदेश), हरिराम व्यास (बुंदेलखंड), मनोहरदास (बंगाल), ललित किशोरी, ललित माधुरी व बांके बिहारी (लखनऊ), ललित लडैती (पंजाब), भगवानदास (आमेर, जयपुर), रामहरि (जयपुर, राज०) आदि।

तीसरा अध्याय

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भक्ति-तत्त्व एवं दर्शन

भक्ति तत्त्व

वैष्णव चिन्तनधारा का मूल स्वर भक्ति-भावना रहा है। कृष्ण-भक्ति की भाव-भूमि पर कृष्ण-भक्ति साहित्य विकसित हुआ। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवि प्रमुख रूप से भक्त हैं, काव्य के माध्यम से इन्होंने अपनी भक्ति निवेदित की है। अतः इस सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य का मुख्य विषय कृष्ण-भक्ति एवं भक्ति परक विभिन्न लीलाएं हैं। चैतन्य महाप्रभु को साक्षात् ईश्वर माना गया है अतः राधा-कृष्ण के अतिरिक्त चैतन्य-भक्ति काव्य की भी रचना की गयी है संस्कृत एवं बंगला में सम्प्रदाय के भक्ति-सिद्धांतों का विस्तृत एवं शास्त्रीय विवेचन उपलब्ध होता है अतः ब्रजभाषा कवियों ने भक्ति की महत्ता, उपादेयता एवं प्रशंसा करते हुए भी भक्ति के सिद्धान्त पक्ष की ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया है। इन कवियों का मुख्य स्वर अपने आराध्य की लीलाओं के गायन मे अधिक रहा है; तथापि इन लीला-पदों मे कवियों की भक्ति संबंधी मान्यताएं यत्र-तत्र अभिव्यक्त हुई है।

चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में निरूपित भक्ति प्रेमाभक्ति है। भक्ति के तीन प्रमुख भेदों—साधन भक्ति, भाव भक्ति एवं प्रेम भक्ति में सर्वप्रमुख स्थान प्रेम भक्ति को दिया गया है। साधन एवं भाव भक्ति का महत्त्व वहीं तक स्वीकार किया गया है, जहां उनके द्वारा प्रेम भक्ति परिपुष्ट होकर अधिक सुदृढ होती है। इसी रूप में कवियों ने प्रेमाभक्ति के साधनों का उल्लेख किया है।

भक्ति का स्वरूप एवं महिमा

भगवद्-प्रीति ही भगवद्-भक्ति है। भगवान से प्रीति किसी भी प्रकार से की

जा सकती है। यह प्रीति उतनी ही अनन्य एवं प्रगाढ़ होती है जैसी पतंग की दीपक से, चातक की घन से एवं चकोर की चंद्रमा से होती है----

जा विधि प्रीति करौ हिय भावन ।
ज्यौं पतग दीपक चातक घन हंस मानसर पावन ।।
चित चकोर शशि हरिन मधुर रव सु वशीभूत रिझावन ।
श्री रामराय प्रभु पनिहारी घट ज्यों कीजै हिय चावन ।।[1]

प्रेमाभक्ति का आदर्श वृजागनाए है जिनके अनन्य प्रेम के वशीभूत होकर कृष्ण उनके संकेतो पर नाचते है। प्रेमाभक्ति का उल्लेख कवि माधुरी जी ने 'मान माधुरी' की फलश्रुति मे किया है---

मान माधुरी जो सुने, होय सुबुद्धि प्रकाम।
प्रेम भक्ति पावै विमल, अरु वृंदावन वास ।।[2]

अगले दोहे में कवि ने इसी अर्थ मे रागमार्ग का व्यवहार किया है जिससे ज्ञात होता है कि उनकी प्रेम भक्ति वस्तुतः रागात्मिका भक्ति का ही दूसरा नाम है---

मान माधुरी जो पढै सुनै सरस चित लाय।
रागमार्ग चित रहै राधा कृष्ण सहाय ।।[3]

प्रेमाभक्ति के चार प्रमुख अंग कहे गये है---नाम, रूप, धाम और लीला। भक्त कवि ललित किशोरी जी के अनुसार रसिक शिरोमणि राधा-कृष्ण के नाम, उनके धाम---वृंदावन, उनके रूप एवं लीला से प्रीति ही रसिक-मार्गियों की रीति है---

नाम धाम लीला अली जुगुल रूप सों प्रीति ।
गैये रस शृंगार को यह रसिकन की रीति ।।[4]

कृष्ण-भक्त को प्रति श्वास से कृष्ण का नाम जपना चाहिए। नाम और नमी का अटूट संबंध है। नाम से नामी मिलता है, बिना नाम के कोई भी नामी को नही पा सकता। राधा-कृष्ण के नाम से अपावन भी पावन हो जाते हैं।[5] नाम के अतिरिक्त राधा-कृष्ण के युगल-स्वरूप का ध्यान करते हुए उनकी रूप-माधुरी का आस्वादन करना चाहिए तथा राधा-कृष्ण की सरस लीलाओं का श्रवण-मनन करना चाहिए। बाँकेपिया जी ने प्रेमाभक्ति के इन चार अंगो का उल्लेख किया है। जिनका पालन करने पर प्रेम-भक्ति रस प्रवाहित होता है।[6] यह प्रीति रस सिंधु अत्यंत गंभीर एवं अथाह है जिसमें सासारिक बंधन टूट जाते हैं। इसकी थाह प्रिया-प्रियतम के चरणो का आश्रय पाकर ही पाई जा सकती है।[7] गौरगण दास ने प्रेम-मार्ग का विधि-विधान अन्य प्रकार से बताया है---

सदा रहै एकांत जुगल मे ध्यान लगावै।
गुरु वैष्णव देखि भूमि झुकि सीस नवावै।।
आस त्रास करि दूर भागवत हित करि गावै।
मधुकर वृत्ति करै नेम व्रत रीति निभावै।।[8]

चैतन्य महाप्रभु की प्रेमाभक्ति की अतिशय भावुकता के गुण से प्रभावित होकर ललित लड़ैती जी ने निम्न दोहे मे प्रेम का प्रमुख लक्षण अश्रु प्रवाहित विह्वल दशा को बताया है—

गद-गद सुर असुवन चलें प्रेम यही पहचान।
ललित लड़ैती प्रेम भट मेट देत कुलकान।।[9]

भक्त-कवियों ने भक्ति की अतिशय महिमा का वर्णन किया है। इनके अनुसार भगवान को प्राप्त करने के लिए भक्ति का मार्ग सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। योग, ज्ञान, जप, तप, वैराग्य सब साधना के लिए कठिन होते है, परंतु भक्ति वह सुगम मार्ग है जिसके द्वारा भगवान की शरण में जाने पर कलियुग के सब दुःखो से परित्राण होता है एव भव-सागर से पार हो जाते है।[10] इसीलिए भक्त-कवि किशोरीदास चैतन्य महाप्रभु की भक्ति का उपदेश देते है—

श्री चैतन्य पद पंकज भजो रे।
योग यज्ञ, जप-तप जितो तीरथ करम कठिन सब ही परिहरो रे।
कठिन कलिकाल मे शरण गहि कै अबै भव दुख सागर सबै ही तरो रे।
किशोरीदास महाप्रभु भजि ब्रज-वृंदावन सब ही सुख लहो रे।[11]

भगवद्-भक्ति इतनी सहज है कि भजन-साधन, व्रत-नियम आदि कुछ भी नहीं होने पर भी एकमात्र प्रभु के आश्रित रहने पर भक्त निर्भय रहता है—

हमारे श्री चैतन्य आधार।
दूजो नाहि और या जग मे प्रभु सम परम उदार।
भजन भाव व्रत नियम बनत नाहि ना कछु सत्य विचार।
निर्भय रहत सदा बांकेपिय चरण कमल उर धारि।।[12]

प्रेम-भक्ति पर सर्वाधिक बल देते हुए कवि रामहरि ने कहा है कि प्रेम-भक्ति योग की अपेक्षा अधिक फलदायक है—

प्रेम भक्ति को एक फल, कोटि बरष को जोग।
प्रेम भक्ति संजोग है, जोग प्रेम बिन रोग।।[13]

भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए बांकेपिया जी का कथन है कि भक्ति के बिना भगवान दुर्लभ हैं। अनन्य भक्ति के द्वारा ही कृष्ण को पाया जा सकता है। भक्ति से अनुराग बढ़ता है जो कृष्ण के प्रेम का आस्वादन कराता है।

इसका आस्वादन जो कर लेता है वह अपनी दशा भुलाकर उन्मत्त की भांति सर्वत्र कृष्ण को ही देखता है, कृष्ण ही बोलता है, उसे कृष्ण के अतिरिक्त अन्य कुछ अच्छा नही लगता।[14] प्रेमावतार महाप्रभु की यही भाव-विभोर अवस्था सुप्रसिद्ध है।

प्रेमाभक्ति के उपास्य देव

चैतन्य सम्प्रदाय के भक्त-कवियों के उपास्य देव राधा-कृष्ण है। ये उपास्य युगल मधुर रस के सागर है। इष्ट देव राधा-कृष्ण के अतिरिक्त चैतन्य महाप्रभु की उपासना भी की गयी है।

माधुर्य मण्डित राधा-कृष्ण की छवि अनुपम है। यह अनुपम छवि भक्त के दु:ख-दर्द का हरण करती है। सूरदास मदनमोहन ने इस युगल-कांति का विभिन्न उपमाओं से अत्यंत सुदर वर्णन किया है—

मोहनलाल के सग ललना ज्यौं सोहै,
जैसे तरुण तमाल के ढिग फूल सौनों जरद कौ।
बदन कांति अनूप भांति नहि समात, नीलाम्बर-
गगन मे जैसौ प्रगट्यौ है ससि सरद कौ।
मुक्ता आभूषण प्रतिबिम्बित, अग-अग,
चूनौ मिलि रग दूनौ होत जैसे हरद कौ।
'सूरदास मदनमोहन' दोउन की छवि बढी,
निरखि आनन मिटत दु:ख मन दरद कौ॥[15]

राधा और कृष्ण भक्तो के सर्वस्व है, इनके इष्ट-अभीष्ट, सपूर्ण आशा ये ही है। राधा-कृष्ण के प्रति इनकी एकनिष्ठ भक्ति-भावना है। भक्त कवि इनकी मधुर छवि के दर्शन की उत्कट अभिलाषा रखते है—

अब तौ दरस दीजिये प्यारे।
श्रीराधा ब्रजचद विहारी सुदर रूप उज्यारे॥
गौर स्याम माधुरी निसि दिन निरखौं नैन हमारे।
किशोरीदास लखि नैन सिराऊ दपति छवि मतवारे॥[16]

राधा और कृष्ण के सम्मिलित स्वरूप के रूप मे गौरांग—चैतन्य महाप्रभु की आराधना की जाती है। सच्चिदानद-स्वरूप रसिकावतार श्री चैतन्य महाप्रभु भक्त-कवियो के उपास्य देव है—

जै जै श्री चैतन्य मगलनिधि गाइयै।
सच्चिदानद स्वरूप रसिक सुख दाइयै॥
प्रेम अवधि ललित लीला अधिकाइये।
ऐसे गौर किशोर सदा उर ध्याइये॥

[illegible]
भज [illegible] नाम, बदन विविध नाच नचावै ॥
पतित पावन विरद जाको वेद भागवत गावै।
किशोरीदास समनजिनि जै जै श्री चैतन्य गाइये ॥[१७]

आनन्द-मंगल निधि शचीनन्दन चैतन्य महाप्रभु की उपासना करते हुए निम्न पद में उनके प्रति अनन्य कोमल भाव प्रकट किया गया है—

हम तो श्री चैतन्य उपासी।
आनंद मंगल निधि शचीनंदन सदा सेऊं सुखरासी।
इनके चरन शरन आवै जो पावै ब्रज-वृंदावन वासी।
किशोरीदास इन तजि औरै भजै ते नर नरक निवासी।[१८]

चैतन्य संप्रदाय के बंगला कवियों ने महाप्रभु चैतन्य के अनेक चरित्र-सूत्रों का जिस भाव तन्मयता, सरसता एवं प्रचुर परिमाण में कथन किया है, वैसा विस्तृत वर्णन ब्रजभाषा काव्य में परिलक्षित नहीं होता, तथापि अनेक ब्रजभाषा कवियों ने महाप्रभु-चरित्र का स्वतन्त्र आख्यान किया है। बांकेपिया ने 'प्रेमरस वाटिका' में एवं मनोहरदास ने 'गौरगुणावली' में चैतन्य महाप्रभु के जीवन की आदि से अंत तक क्रमानुसार प्रमुख लीलाओं का अनेक पदों में निरूपण किया है। गुणमंजरीदास ने अनेक पदों में, कृष्णचरण ने 'चैतन्य चरितामृत कणिका' में बांकेपिया ने अपनी अनेक लघु कृतियों में, मनोहरदास कृत स्फुट पदों, कृष्णदास कृत 'गौरनामरस चम्पू' गौरगणदास कृत 'गौरांगभूषण मंजावली' व वृंदावन चंद्र कृत 'अष्टयाम' में तथा प्रियादास, किशोरीदास, माधुरी आदि कवियों ने चैतन्य महाप्रभु के महान चरित्र पर प्रकाश डाला है। इस प्रकार, महाप्रभु के प्रति श्रद्धा-समन्वित प्रणतिपूर्ण स्तुतियां तो मिलती ही है, उनका लीलानुसारी वर्णन भी किया गया है। चंद्र गोपाल जी ने गौड़ीय भक्तों की भांति श्री गौरांग महाप्रभु की सेवा पदावली — 'गौरांग अष्टयाम' की रचना की है।

महाप्रभु के महान व्यक्तित्व, विद्वत्ता, कठोर संन्यास, पतितों का उद्धार, कृपालुता और प्रेम प्रदान का प्रशंसापूर्ण वर्णन इन भक्त-कवियों ने किया है।[१९] उनके मंगलमय तेजस्वी रूप, निज परिकर वृंद के साथ नृत्योल्लासकारी माधुर्य और लोक-कल्याण का उल्लेख किया गया है।[२०] राधा भाव एवं गौर वर्ण धारण करने वाले महाप्रभु चैतन्य के अवतार का कारण लीला रसास्वादन, पतितों उद्धारण, हरिनाम द्वारा प्रेम-रस का विस्तार बताया गया है।[२१] गौरांग के प्रेम-मग्न स्वरूप ने कवियों को सर्वाधिक आकृष्ट किया है। संकीर्तन करते हुए महाप्रभु की परम भाव विभोर विह्वल दशा का एक चित्र देखिए—

गोपी अनुराग सुहाग रग सौं पग श्याम
लग्यो अरुणाई श्यामता सा गौर गात है।
तपत कनक वर्ण करें निज संकीर्तन,
अग झकोरत महा प्रेम झर लात है।
कज मुख कंज गात भाव सुधा झर्यो जात,
भक्त भ्रमर पान करत ह्वै शात है।
× × ×
कभी कृष्ण कृष्ण अरु कभी राधा राधा बोलैं।
कभी क्षीन पीन कभी महाराग जी मे है।[22]

प्रियादास जी ने बगला मे रचित चैतन्य चरित-काव्यो का आधार लकर चैतन्य महाप्रभु की विरह दशा तथा उनके चतुर्भुज व षड्भुज अवतार रूपो का उल्लेख किया है।[23]

वृंदावन महिमा

चैतन्य सम्प्रदाय मे वृंदावन धाम की विशेष रूप से मान्यता होने के कारण ब्रजभाषा कवियों ने वृंदावन विषयक पर्याप्त पदो की रचना की है। लगभग सभी कवियो ने वृंदावन की महिमा का गान किया है। इस प्रसंग पर कुछ स्वतत्र रचनाए भी उपलब्ध होती है। माधुरी कवि कृत 'वृंदावन माधुरी', ललित किशोरी के 'वृंदावन शतक' (अभिलाष माधुरी मे) वृंदावन विलास माधुरी, ('रस कलिका' में) एवं राधिकानाथ कृत 'महावाणी' मे स्वतत्र रूप से वृ दावन का सरस एवं सुदर चित्रण हुआ है।

इष्ट देव राधा-कृष्ण की लीला-भूमि होने के कारण ब्रज-वृ दावन का विशिष्ट महत्त्व प्रतिपादित हुआ है। वह वृ दा बिपिन अत्यंत धन्य माना गया है, जहा लालित्य, माधुर्य, रूप-सौंदर्य के सपद् राधा-कृष्ण का नित्य मिलन एव अभिसार होता है, वहां उनकी मधुर केलि-क्रीड़ा का उज्ज्वल रस सदैव प्रवाहित होता है तथा सखिया तन-मन से उनकी सेवा में तत्पर रहती है। उस वृंदावन की शोभा अनुपम है—

पात पात द्रुम डार सौं, उपजै मनसिज रूप।
बेलि बेलि सों केलि रस, वृ दावन विपिन अनूप॥[24]

वृंदावन की रूप माधुरी असीम है। उस पर स्वय राधा-कृष्ण इतने रीझे हुए है कि अहर्निश उसका पान करते हुए भी तृप्त नही हो रहे है। वह अद्भुत रूप-माधुर्य अवर्णनीय है—

वृ दावन धाम तापै रीझै श्यामा श्याम,
बसि रहे आठो याम तऊ नैंक न अघात हैं॥
एक एक पात लखि अंगन समात किहू,
छवि सरसात त्यों त्यों अति सरसात है॥

कंज फल नमि न भ्रमति विशाल नैन,
युगल मुतनु शोभा सिंधु उझलात है।
अद्भुत स्वरूप भूमि माधुरी बखाने कौन,
मौन भये दोऊ रूप सीमा हू सिहात है।।[25]

कवि वृंदावन चंद्र ने वृंदावन की दिव्य शोभा का चित्रण करते हुए वृंदावन के चार दिव्य सरोवरों—रूप सरोवर, ज्ञान सरोवर, प्रेम सरोवर और मान सरोवर—का सुंदर वर्णन किया है। यह कवि की मौलिक सूझ व प्रतिभा का परिचायक है। भक्त-कवि के अनुसार इन चारों सरोवरों में मानसी-स्नान (सखी-रूप में भावना) करने पर ही भक्त को युगल राधा कृष्ण के निकट जाने योग्य रूप प्राप्त होता है।[26]

वृंदावन की महिमा बैकुंठ से भी अधिक बतायी गयी है जहां अष्ट सिद्धि एवं नव निधियां पथ को बुहारती हैं।[27] मनुष्य शरीर प्राप्त करके भी यदि वृंदावन वास नहीं मिले तो जीवन व्यर्थ है। यही नहीं, भक्त मुक्ति की कामना नहीं करते अपितु सदा वृंदावन वास करते हुए प्रिया-प्रियतम के मधुर रस में लिप्त रहने की प्रबल आकांक्षा करते हैं।[28] भक्त कवि अपनी समस्त इंद्रियों को वृंदावन में ही अनुरक्त रखना चाहते हैं ताकि कृष्ण-राधा का सान्निध्य मिलता रहे। ललित किशोर जी का तो यह अटल नियम है कि वे व्रज की सीमा से बाहर पैर कभी नहीं रखेंगे—

रसिकन के यह नेम हैं, प्राणहुं जो कढ़ि जाय।
वृंदावन की सीम सौं बाहिर धरैं न पाय।।

वृंदावन की रज की भी महिमा अनंत है। उसके स्पर्श मात्र से ही समस्त दुःख दूर हो जाते हैं। इसकी रेणु को तजकर जो अन्य स्थानों पर डोलते रहते हैं वे दुःख ही पाते हैं।[30] ऐसे महिमामय वृंदावन के ध्यान में भक्त इतना मग्न रहता है कि उसका नाम सुनने मात्र से ही हृदय में भाव का स्फुरण होने लगता है और वह बावरा-सा निशदिन 'श्रीबन' 'श्रीबन' पुकारता रहता है और स्वप्न में भी श्रीबन का ही दर्शन करता रहता है।[31] कवि पशु-पक्षी यहां तक कि पत्थर-घास बनकर—किसी भी रूप में—वृंदावन-वास की ही प्रबल आकांक्षा रखता है—

पशू पखेरू होहु कछु, पाहन पानी घास।
मांगो अंचर पसारि नित, वृंदावन को बास।[32]

गोपी तत्त्व—सखी-मंजरी

राधा-कृष्ण के मधुर लीला रस के परिपोषण व आस्वादन में गोपी-सखी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैसा कि चैतन्य संप्रदाय के सिद्धांत विवेचन के प्रसंग में

बताया जा चुका है कि इस संप्रदाय की सेवा-उपासना संबंधी मान्यतानुसार गोपियों के दोनों प्रकारों—सखी व मंजरी द्वारा लीला-विस्तार साधित होता है किंतु राधा-कृष्ण की अंतरंग सेवा में सखियों की अपेक्षा मंजरियों का अधिकार अधिक है। मंजरियों में विशुद्ध सेवा-वासना है। राधा-कृष्ण के केलि-स्थल में निःसकोच प्रवेश कर उनकी गोपनीय सेवा द्वारा लीला-रस के आस्वादन में वे परम कृतार्थता का अनुभव करती है। साधक गण अपनी साधना के क्रमशः उत्कर्ष द्वारा सिद्ध देह प्राप्त करके मंजरी पद तक पहुंचने में समर्थ होते है। मंजरी भाव की साधना उच्चतर मानसी साधना मानी गयी है। चैतन्य सप्रदाय में इस मानसी साधना की अतिशय महत्ता है जिसमें राधा-गोविंद की अत. वृंदावन की मधुर लीला का अष्टयाम चिंतन किसी मंजरी के आनुगत्य में किया जाता है।[33] चैतन्य महाप्रभु के पार्षद—भक्तों—रूप—सनातन आदि गोस्वामियों को मंजरी रूप में माना गया है। मंजरी भाव की यह उपासना चैतन्य सप्रदाय की मौलिक विशिष्टता है।

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में सांप्रदायिक भावना के अनुरूप सखी भाव और मंजरी भाव की साधना को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है इस भावोपासना को अपनाकर इन ब्रजभाषा कवियों ने ललित सखी, माधुरी, नील सखी, दक्ष सखी, ललित किशोरी, ललित माधुरी, गुण मंजरी, ललित लडैती, आदि उपनामों से काव्य-रचनाएं की हैं। प्रायः सभी कवियों ने राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं का सरस चित्रण किया है। जिसमें सखी भाव की प्रमुखता है। सखियां राधा-कृष्ण के मिलन हेतु प्रयत्नशील रहती है वहीं उनके मधुर-रस-विस्तार में भी पर्याप्त रूप से योगदान करती है। राधा-किंकरी के रूप में मंजरियां राधा-माधव की सेवा-परिचर्या तत्सुखी भाव से करती है इनमें स्व-सुख-वासना नहीं है। सेवा- परिचर्या करते हुए निकुंज केलि रस के दर्शन द्वारा उसका आस्वादन तथा चिंतन करना ही मंजरियों का परम कर्तव्य है, यही उनका मूल उपास्य भाव है। वस्तुतः लीला-विस्तार सखित्व का वि ेष लक्षण है। चूंकि सखी व मंजरी दोनों से यह लीला-विस्तार साधित होता है अतः सामान्य रूप से दोनों को ही सखी कहा गया है। राधा-कृष्ण के अंतरंग केलि-लीला-रस में सहायक मंजरी-सहचरियां विभिन्न प्रकार की सेवाओं में तत्पर रहती हैं—

> मंजरी गण मिल सेवा कीन्ही।
> फूलन माल अतर सीतल जल बीरी पान सुगंधित दीन्ही।
> बहुरि सम्हारी किशलय शय्या सखियन प्रिया-प्रियतम रुचि चीन्ही।
> वांकेपिय रति सुख बाढन को करत यतन सहचरी प्रवीनी॥[34]

राधा कृष्ण की मधुर लीलाओं की संपन्नता में योग देने के अतिरिक्त उन केलि-लीलाओं के दर्शन से परम आनंद का आस्वादन करना भी सखियों के जीवन की अभीष्ट सिद्धि है।[35] वह लीला-दर्शन सखियों के लिए सुख का अपार स्रोत है जिसे पाकर भी वे तृप्त नहीं होती—

सख कौ अगार चारु नवल सिगार अति
सौरभ विविध रति केलि सुखदास है।
सरस प्रसून सेज रस अति शोभा मानो,
निरखि निरखि अलीगन ना अघात है।[36]

इस प्रकार के अनेक उदाहरण आलोच्य काव्य मे उपलब्ध है जिनमे मधुर लीला-रस की परिपुष्टि व आस्वादन में सखियों के सहयोग व प्रमुख स्थान का परिचय प्राप्त होता है। सखी भावोपन्न मधुर लीलाओ का विवेचन हम इसी अध्याय मे आगे अष्टकालिक नित्य सेवा के प्रसग मे एव 'भाव-चित्रण' नामक अध्याय मे करेंगे।

कवि वृंदावन चंद्र ने 'अष्टयाम' मे अष्ट सखियों—ललिता, विशाखा, चपकलता, चित्रा, तुगविद्या, इदुलेखा, रगदेवी, सुदेवी और प्रत्येक के आठ-आठ भेदों तथा स्वरूपों पर प्रकाश डाला है। ये सखिया राधा-कृष्ण के अनुपम रूप-दर्शन हेतु दर्पण-स्वरूप हैं।[37]

साधक गण अपनी साधना द्वारा सिद्ध देह प्राप्त कर सखी के पद तक पहुचने मे समर्थ होते है। उन सखी-रूपा गुरु की कृपा व भाव से ही निकुज-लीला-रस का आस्वादन संभव है।[38] अत: यह कुजमहल का प्रमुख सोपान है—

छठें सहचरी रूप सिद्ध वपु पाय बिना श्रम,
अग खवासी लसी परात्पर वसी सरस तम।
साते निभृत निकुज जुगल बिन चैन न पावैं,
शुक्र रूपा सखि कृपा भाव जाही तन आवैं।
रामराय भगवान सखी को सात बताई;
कुज महल सोपान दया चैतन्य गुसांई।।[39]

चैतन्य सप्रदाय मे चैतन्य महाप्रभु की श्रीराधा-कृष्ण का सम्मिलित अवतार माना गया है। रस-स्वरूप श्रीकृष्ण ने अपनी ही अद्भुत माधुरी का राधानुभूत रूप मे आस्वादन करने के लिए राधा भाव से भावित होकर चैतन्य महाप्रभु के रूप मे अवतार धारण किया। चैतन्य की गंभीरा मदिर की एकातिक लीला महाभाव-स्वरूपा श्रीराधा की दिव्योन्माद और मादन महाभाव की लीला है। इस लीला को अत्यंत गोपनीय व अनिर्वचनीय कहा गया है जिसमे बुद्धि का प्रवेश नही है।[40] सखियों के आनुगत्य में इस अंतरंग लीला के आनद का अनुभावन किया जा सकता है। चैतन्य देव के अतरंग भक्तों की लीला रसाधिकारिणी सखियों के रूप मे उद्भावना की गयी है। ब्रजभाषा काव्य मे भी इससे संबंधित पदों की रचना की गयी है। ब्रजभाषा कवियों ने चैतन्य महाप्रभु के अंतरंग पार्षदो व भक्तों को सखी-रूपा गुरु मानकर उनके आनुगत्य मे लीला-रस आस्वादन की कामना की है। उदाहरणार्थ कवि माधुरी, वृंदावन दास व गुणमंजरी ने सांप्रदायिक मान्यतानुसार रूप गोस्वामी को रूप मंजरी के रूप में एवं रामराय ने नित्यानंद को अनंग मंजरी

के रूप मे उल्लिखित किया है।[61] निम्न पद मे चैतन्य की मधुर लीलाओं के अंतर्गत राधा के रूप मे गदाधर पंडित एवं सहचरी-रूप मे उनके अंतरंग पार्षदों —स्वरूप दामोदर व रामानंद का चित्रण किया गया है—

> जुगलवर क्रीड़त जमुना तीर।
> श्री गौरांग गदाधर मिलि मिलि, सुदरधीर-समीर।
> ललिता श्री स्वरूप दामोदर, लाड़ भरे गभीर।
> गलबाही दै चलत महासुख, परछाईं लखि तीर।
> रामानद विसाखा बपु सो, खेल खिलावन बीर।
> श्री प्रभुचंद्र भीर भौरन की बोलत कोकिल कीर।।[62]

इस प्रकार चैतन्य महाप्रभु की मधुर रस लीलाओं में उनके अंतरंग भक्तों को को सहचरियों के रूप मे भाग लेते हुए चित्रित करना इस सम्प्रदाय के कवियों के माधुर्य वर्णन की विशेषता है। इसका विवेचन आगे 'भाव-चित्रण' नामक अध्याय में किया जायेगा।

भक्ति के साधन

भक्ति चाहे किसी भी प्रकार की हो, केवल अपने पुरुषार्थ से प्राप्त नही की जा सकती। कुछ ऐसे आवश्यक तत्त्व है जिनके बिना भक्ति की अनुभूति नही होती। गौड़ीय गोस्वामियों द्वारा वर्णित साधन भक्ति के ६४ अंगों का उल्लेख सुबलश्याम कृत 'चैतन्य चरितामृत' (ब्रजभाषा पद्यानुवाद) में हुआ है।[63] इनमे गुरु पादाश्रय आदि दस अंग विधि-रूप और सेवा-नामापराध आदि दस अंग निषेध-रूप कहे गये है। ये भक्ति के द्वार स्वरूप है। शेष अंग, जिनमे नवधा भक्ति के साधनों का भी समावेश है, भक्ति के उत्कर्षक है। महाप्रभु चैतन्य के अनुसार साधन भक्ति के ये पाच अंग सर्वश्रेष्ठ है—

> नाम कीरतन साधु-सग श्रवण भागवत तास।
> श्रद्धा करि सेवन जु श्रीमूरति मथुरा बास।
> सब साधनि मधि श्रेष्ठ है एई पाचौ अंग।
> उपजावै हरि प्रेम इन पांचन कौ कछु संग।।[64]

सांप्रदायिक मान्यतानुसार ब्रजभाषा कवियों ने साधन-भक्ति के इन पांच अगों को प्रमुख स्थान दिया है। इनमे भी सर्वप्रमुख है—हरिनाम-संकीर्तन। आलोच्य काव्य मे भक्ति के जिन साधन-तत्त्वों का विशेष महत्त्व बताया है वे इस प्रकार है—

१. भगवत्कृपा किंवा अनुग्रह : भक्ति परम पुरुषार्थ है परंतु यह अकेले भक्त के वश की बात नही है, क्योंकि भक्ति अपने प्रयत्नो से उस प्रकार साध्य नही है जिस प्रकार ज्ञान। भक्ति भाव की प्राप्ति के लिए अपने से महत्तर किसी शक्ति की कृपा, संरक्षण एवं सहायता पर निर्भर करना होता है। अतएव भक्ति-मार्ग

का मूलमत्र है   भगवान की कृपा या अनुग्रह।

रूप गोस्वामी ने भगवत्कृपा या अनुग्रह को भगवद्-प्रसाद कहा है जिसक प्रारभ भगवान के सगदान से होता है।[४५] इसी प्रकार ब्रजभाषा कवियो ने भी उस अनुग्रह से भगवद्-प्राप्ति को सुलभ बताया है। श्रीकृष्ण की कृपा अहेतुकी होती है क्योंकि उनकी कृपा उनके प्रेम का ही रूप है। प्रेम के वशीभूत होकर वे भक्तों पर कृपा करते हैं। भक्त द्वारा अन्य साधनों के अभाव में भी केवल कृष्ण की कृपा से ही उनकी भक्ति प्राप्त हो जाती है। उनकी कृपा सर्वशक्तिमती होकर भक्ति के लिए उपयुक्त भूमि बनाती है और वही बीजारोपण करके उसे पल्लवित-पुष्पित करने के पश्चात् फलवती करती है। अतएव भक्त अपनी सीमित शक्ति के मद स्रोत मे अन्य साधनों को गति न देकर श्रीकृष्ण अनुग्रह के वेगवान प्रवाह का आवाहन करता है—

हे प्रभु वेग अनुग्रह कीजै।
श्री गुरुदेव की आन मानिके, अब मोहिं निज चरनन मे लीजै
बीतो जगत वृथा मानुप तन विरह ताप मे दिन प्रति छीजै
बांकेपिया युगल छवि निरखौ श्री वृंदावन बसवौ दीजै।[४६]

भगवद्-प्राप्ति के अनेक मार्ग—साधन है परंतु उनमे सर्वोत्तम साधन भगवत्कृपा ही है। भगवान की कृपा से काम, क्रोध, लोभ, मोह की बेडियो से मुक्ति मिलती है। प्रभु की करुणा के बिना जीव अपने दभ के कारण सत्सग भी नही करता।[४७]

प्रभु का रूप-सुधारस-सिंधु अथाह है। उसमे प्रवेश होना सहज नहीं है। प्रभु की कृपा के द्वारा ही उसको प्राप्त किया जा सकता है।[४८] इसलिए युगल रूप-रस के लिए चातक के सदृश तृषित भक्त कवि बांकेपिया अत्यंत व्याकुल होकर घनश्याम कहलाने वाले कृष्ण से सुकृपा-वृष्टि की प्रार्थना करते है—

अब मोहिं अपने निकट बुलावौ।
श्री वृंदावन यमुना के तट कुंजन माहिं बसावौ ॥
करौ सुकृपा वृष्टि निज जन पर तुम घनश्याम कहावौ।
चातक लोचन तृपित भये अति युगल रूप-रस प्यावौ ॥
धीर समीर पुलिन वंशीवट कुंज केलि दरसावौ।
बांकेपिया श्रीराधा रमण प्रभु यह मम आस पुरावौ ॥[४९]

भक्त-कवियो ने भक्ति की प्राप्ति के लिए अत्यंत दीनतापूर्वक कृष्ण-राधा एव चैतन्य की कृपा का आवाहन किया है।

२. गुरु-आश्रय : भक्ति-साधना के मार्ग मे अनेकानेक शंकाओं एव समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनका निराकरण अमूर्त-रूप ईश्वर को गुरु मानकर नही हो पाता अतएव ईश्वर से तादात्मय प्राप्त किसी सिद्ध पुरुप का आश्रय अनिवार्य हो जाता है। गुरु की महत्ता इसी रूप मे अधिकाधिक हो जाती है कि वह भक्त को भगवान से मिलाने के लिए प्रमुख साधन होता है। भगवद्-भक्ति

में प्रविष्ट होने के पूर्व वैष्णव का गुरु से दीक्षा-मंत्र लेना अनिवार्य माना जाता है क्योंकि मंत्र द्वारा संप्रदाय में दीक्षित हुए बिना भगवद्-उपासना व्यर्थ हो जाती है और सेवा-पूजादि में भी अधिकार नहीं होता। चैतन्य संप्रदाय में गोपाल मंत्र को महत्त्वपूर्ण माना गया है। और उसमें भी अष्टादशाक्षरी मंत्र को सर्वश्रेष्ठ बताया गया है।[५०] इस मंत्र द्वारा कृष्ण के मधुर प्रेम रस की प्राप्ति होती है। यह मंत्र स्वयसिद्ध है और साक्षात रस ब्रह्म कृष्ण का स्वरूप है। महाप्रभु ने उपासना के अंतर्गत कामबीज काम गायत्री की भी महत्ता बतायी है।[५१] चैतन्य संप्रदायी भक्त गोपाल मंत्र के साथ श्री गुरुमुख काम गायत्री को भी ग्रहण करते हैं। मंत्र-दीक्षा की इतनी महिमा है कि बुद्धिवादी निमाई पंडित (चैतन्य) भी गुरु-मंत्र की दीक्षा लेकर घोर तार्किक से प्रेमी हो गये थे। सांप्रदायिक ब्रजभाषा कवियों ने चैतन्य को महान गुरु (इष्टदेव) मानते हुए भी दीक्षा-गुरु के रूप में चैतन्य संप्रदाय के किसी सिद्ध एवं रसिक भक्त से मंत्र लिया और अपने काव्य में गुरु की महिमा का गान किया है। काव्य के प्रारंभ में गुरु की वंदना करते हुए उनकी महत्ता एवं प्रशंसा भाव संबंधी पदों की रचना की गयी है।

भगवत्कृपा द्वारा भक्ति प्राप्त होती है, परंतु वह कृपा अति सुगम नहीं है, उसको सहज बनाने के लिए गुरु का आश्रय लेना होता है—

> सोउ (भगवद्) कृपा अति सुगम नहिं ताकौ कौन उपाय।
> चरन सरन गोपाल भट्ट सहजहिं बन्यो बनाय।।[५२]

ललित किशोरी कृष्ण-भक्ति रस को अगम, अतुल, अथाह एवं अनुपम बताते हुए कहते हैं कि बिना किसी योग्य पुरुष के इसके प्रवाह में बहा नहीं जा सकता।[५३] वह योग्य पुरुष गुरु ही होता है। गुरु के चरणों के प्रताप से भक्त के हृदय का अंधकार दूर होता है और वे कुंज में विचरण करते युगल रूपी श्रीराधा-कृष्ण की मधुर छवि का दर्शन करते हैं—

> श्री गुरु चरण प्रताप ते, गयो उरनि अंधियार।
> कुंज धरनि विहरत लखौं, जुगल रूप घनसार।।[५४]

गुरु की महिमा अतिशय है। व्यास जी कहते हैं कि हरि हीरा हैं और गुरु जौहरी हैं। जिनके नाम स्मरण से समस्त दुःख दूर होते हैं व तन-मन आनंद से परिपूर्ण हो जाते हैं।[५५] गुरु द्वारा भगवद्-भक्ति के उपदेश से प्रभु के चरणों में अचल अनुराग उत्पन्न होता है। गुरु इतने कृपालु हैं कि कैसा भी अधम, खल, कामी एवं कुटिल जीव हो, जो कोई-भी उनकी शरण में जाता है उसको वे अपना लेते हैं। बिना गुरु-कृपा के जीव इस भवसागर से तर नहीं सकता।[५६] गुरु भगवद्मय होने से भगवद्रूप होता है, अतः भगवत्प्राप्ति में समर्थ होता है। गौरगणदास जी ने गुरु का स्वरूप-वर्णन ईश्वर के समान अत्यंत भव्य, भावमय एवं सुंदर शैली में किया है—

अलकावलि कोमल रुचिर रची ज्यों सौरभ वस मधुकर बृंद सुहाये।
शशिखंड प्रदीप्त इव भाल मनोहर भृकुटि छबि लखि धनु खंड लजाये।
श्रवनन मग श्रुति रूप बसैं अरविंद छटा दल नैन चुराये।
कीरकी नासा हरन करी सुढार कपोल चिबुक मन भाये।[५७]

मधुर भक्ति साधना में गुरु का राधा-कृष्ण के चिन्मय मधुर रस मे सिद्ध होना परमावश्यक है। सखी भाव से उस रस की सिद्धि होती है। परम रसिक गुरु को सखी-रूप मे माना गया है। वृंदावन चंद्र दास ने उनका स्वरूप वर्णन इस प्रकार किया है—

सखी को सरूप अनूप है सुदर श्रीगुरु वे मन के मन मे है।
गौर औ स्याम मिले घन दामिनी बरषत रूप खिलें तन में है।
केकी के कंठ विभाकर की नर्त होत लहालह ज्यो जल मैं हैं।
ऐसो सरूप धरै उर मे छिन पावत प्रेम भलै पल मैं है।[५८]

राधा की प्रिय सखि रूपा गुरु के आनुगत्य मे भक्त राधा-कृष्ण के मधुर लीला रस के आस्वादन मे समर्थ होता है। साम्प्रदायिक कवियो ने चैतन्य महाप्रभु के अतरग भक्तों — श्री रूप सनातन आदि गोस्वामियो को लीला-रसाधिकारिणी सखियों-मजरियो के रूप में गुरु माना है। और उनके प्रति अतिशय श्रद्धा-भाव अभिव्यक्त किया है।[५९]

३. **आत्म-समर्पण :** (शरणागति) : भक्ति की प्राप्ति के लिए भक्त का अहकार शून्य होकर पूर्ण-रूपेण भगवान के प्रति समर्पित होना आवश्यक है। भक्त ज्ञानी अथवा तपी नही हैं जो अपने अध्यवसाय एवं तप से माया के बंधनों एवं मन के विकारों से मुक्ति पा जाये। भक्त अपनी त्रुटियों को दीनता से अनुभव करता है एव जो कुछ जैसा है वैसा ही भगवान के प्रति उद्घाटित कर देता है। यही भगवान के प्रति उसका आत्मसमर्पण किंवा शरणागति है जो प्रेमाभक्ति की प्रधान भूमिका है।

श्री जीव गोस्वामी ने 'भक्ति संदर्भ' में ज्ञानी तथा भक्त के समर्पण-संकल्प का अंतर बताते हुए कहा है कि ज्ञानेक्षु साधक अपनी देहेंद्रियों को कर्म का कर्त्ता एव भोक्ता मानता है जबकि भक्त अपने कर्मो को कृष्ण की शक्ति मानकर उन्हे कृष्ण को अर्पण करता है।[६०] इसी भावना से प्रेरित होकर चैतन्य संप्रदाय के कवियो ने अपने कवि-कर्म-काव्य को कृष्णार्पण किया है। उन्होंने दैन्य भाव से अभिभूत होकर जिन पदो की रचना की है, उनमे भगवान के प्रति शरणागति अभिव्यक्त हुई है।

मोह-पाश मे बधा हुआ, स्वार्थ का दास एवं अपनी ही करनी पर त्रसित होता हुआ भक्त मन की मलिनता के नाश के लिए अन्य कोई साधन नही अपना पाता, उसे तो एकमात्र भगवान की ही आस है—

मोहि तुम्हारी आस। जिनि करहु न निरास ।।
मन मेरो बध्यो मोहपास। स्वारथ पर सौधो कैसो दास।
मोहि अपनी करनी के त्रास। निसि बीतति भरि-भरि लेत स्वांस।
रचि-रचि कहिये बातें पचास। मन की मलिनता को कहु न नास।
जो चितवै नेकु श्री निवास। गदाधर मिटहिं दोष दुःख अनायास।[61]

भगवान को छोड़कर भक्त अन्य किसी की शरण मे नही जाना चाहता। वह पूर्णरूपेण भगवान के प्रति आत्म-समर्पण कर देता है। भक्त कवि के एकमात्र आश्रय हरि है एव इसी मे वे सतोष-लाभ करते है—

मेरे गति तू ही अनेक तोष पाऊ।
चरण-कमल नखमनी ऊपर विषय मुख बहाऊं।।
घर-घर जो डोलौ हरि तो तुमहि लजाऊ।
तुम्हरो कहाइ कहौ, कौन को कहाऊं।।
तुमसों प्रभु छाड़ि काहि दीनन को धाऊं।
सीस तुमहि नाइकै, अब कौन को नवाऊ।
कंचन उर हारि छाड़ि, काच क्यों बनाऊ।।[62]

भगवान के प्रति पूर्ण आत्म-समर्पण तब ही होता है जब भक्त अपने मान-अपमान का विचार त्यागकर जो कुछ जैसा है वैसा ही भगवान को समर्पित कर देता है। श्री राधा-माधव के चरणों का स्मरण ऐसा अटल धन है जिसके लिए दर-दर अन्यत्र कही भटकने की आवश्यकता नही है, एकमात्र प्रभु के आश्रित होकर ही इसे पाया जा सकता है।[63] भक्त-कवि किशोरीदास जी की अगाध आशा, सुख-साधन, इष्ट-अभीष्ट यहां तक कि सर्वस्व श्री राधा है—

मेरे सर्बसु धन श्री राधा।
काहू के काहू की आसा मेरै राधा आस अगाधा।।
इष्ट अभीष्ट राधा ही मेरै निरखि होत सुख साधा।
किशोरीदास नाम राधा कौ दूरि करत है बाधा।।[64]

राधा-कृष्ण के अतिरिक्त इष्टदेव चैतन्य महाप्रभु के प्रति शरणागति से संबधित पदों की भी रचना की गयी है—

हमारी शची सुवन लौ दौर।
प्रभु तज जाऊ कौन के द्वारे सूझत अंत न ठौर।।
श्रीकृष्ण चैतन्य कमल पद सो मेरे शिर मौर।
बांकेपिय के गौर हरी प्रभू दूजो देव न और।।[65]

४. **नाम** : मध्य युग के सगुण-निर्गुण सभी संप्रदायों मे नाम का विशेष महत्त्व रहा है परंतु कीर्तन के रूप में इसे जैसी मधुरता चैतन्य महाप्रभु न प्रदान की उससे नाम साधना मे विशेष भाव का सचार हुआ और उसका रूप

रसमय हो गया। महाप्रभु ने प्रेम-रस-वितरण के लिए हरे कृष्ण नाम—महामंत्र के अनुष्ठान का विधान किया। ईश्वर की स्वरूप उपासना के साथ-साथ नाम-उपासना का भी प्रचलन रहा है। आलोच्य काव्य में नाम का महत्त्व बताने वाले अनेक पद उपलब्ध होते हैं।

नामी से भी बड़ा नाम को बताया गया है क्योंकि नाम तुरंत नामी की पहचान करा देता है।[६६] भक्त कवि गदाधर भट्ट हरिनाम को हरि से भी अधिक महत्त्व देते हुए कहते है कि अजामिल जैसे पापियो का भी सुत के मिस प्रभु का नाम लेने से उद्धार हो गया, इसलिए व्यर्थ की बकवाद को त्यागकर हरि का नाम लेना चाहिए—

> है हरि ते हरिनाम बड़े रो, ताको मूढ़ करत कत झेरो।
> प्रगट दरस मुचकुंदहि दीन्हों, ताहू आयुसु मो तम केरो।
> सुत हित नाम अजामिल लीनो, या भव मे न कियो फिरि फेरो।
> पर अपवाद स्वाद जिय राच्यौ, वृथा करत बकवाद घनेरो।
> ताको दसयों अस गदाधर, हरि हरि कहत जाय कहा तेरो।[६७]

प्रभु का नाम-स्मरण उनकी कृपा-शक्ति का निरंतर आवाहन है। यह सबसे सबल एवं सहज-सुलभ साधन है। खाते-पीते, सोते-जागते, किसी भी अवस्था मे, किसी भी स्थान पर दैनिक क्रियाकलापों मे संलग्न रहते हुए भगवान का नाम लिया जा सकता है। ज्ञान, ध्यान, जप, तप, तीरथ-व्रत, योग-संयम आदि दुःसाध्य साधनों के बिना ही केवल नाम-स्मरण से लोभ-मोह आदि दुष्प्रवृत्तियों का नाश होता है एवं समभाव जाग्रत होता है। इस कलियुग-रूपी भयकर सर्प के विष की विषम ज्वाला मे जलते हुओ के लिए नाम-जप एक ऐसा सहज मंत्र है जो पापो से छुटकारा दिलाता है।[६८]

राधा-कृष्ण युगल का नाम इस भव-सागर में डूबते हुओं के लिए पतवार के सदृश उबारने वाला है। नाम की महत्ता इतनी अधिक बतायी गयी है कि केवल एक बार भगवान का नाम प्रीतिपूर्वक ले लेने से ही करोड़ो जन्मों के पाप तुरत भस्म हो जाते है।[६९] इसीलिए अन्य सब साधनों को त्यागकर एकमात्र नाम की आराधना के लिए कहा गया है—

> राधा नाम को आराध।
> साधन अन्य त्यागि कैं मनुवां याही को दृढ साध।
> मिलिहैं ललित किशोरी नागर शोभा सिंधु अगाध।
> फलिहै सकल मनोरथ ह्वै है श्रीवनवास अबाध॥[७०]

भक्त कवि ललित किशोरी जी राधा नाम से इतने अभिभूत हैं कि वे अपने अग और अंतस (चित्त) दोनों को राधा-नाम से विभूषित करना चाहते हैं—

> राधा-नाम सों चित रांच।
> राधा नाम रेख सुचि रुचि सों अंतस कागद खांच।

राधा नाम अक आभूषण भूषित कर अग नाच।
राधा नाम लिखी पाटुलिया ललित किशोरी बांच।[71]

सांप्रदायिक मान्यतानुसार गौर तत्त्व, कृष्ण तत्त्व एवं राधा तत्त्व मे भेद नहीं है। अत: राधा-कृष्ण के समान ही चैतन्य के नाम की महिमा का गान किया गया है। चैतन्य महाप्रभु का नाम उनके भक्तों के लिए महारस निर्य्यासकारी एवं आकर्षक है। किशोरीदास जी कहते है कि चैतन्य नाम रसिक-जनो की अनन्य गति एवं समस्त मत्रो का सार है जिसके उच्चारण से राधा-कृष्ण रीझकर हृदय मे निवास करते है—

जै जै श्री चैतन्य मनोहर नाम।
नैक उच्चारत होत है पूरन काम।।
ये ही अनन्य गति रसिकनि को विश्राम।
सकल मंत्र को सार परम सुख धाम।।
सुख धाम शीतल कलप तरुवर मेटत माया धाम।
अभिराम अति रसना रटत हैं जे नर आठौं याम।।
बसत ताके उर निरतर रीझि स्यामा स्याम।
किशोरीदास सुदृष्ट जै जै श्री चैतन्य मनोहर नाम।।[72]

भगवद् नाम के लिए पात्रता-अपात्रता का कोई विचार नही है। तभी तो चैतन्य महाप्रभु ने पात्र-अपात्र का विचार किये बिना ही कृष्ण-नाम वितरित किया था।[73] कृष्ण नाम की परम सार्थकता इस बात मे है कि वह कृष्ण के प्रति आकर्षण उत्पन्न करके उनके प्रति अनुराग को उद्‌बुध करता है। भगवद्-साक्षात्कार से पूर्व केवल नाम के प्रभाव से ही भक्त का चित्त भगवद्-प्रेम मे मग्न होने लगता है। इसलिए भगवद्-भक्ति के लिए भगवन्नाम का अत्यंत महत्त्व है। राधा-कृष्ण व चैतन्य महाप्रभु की लीलानुसारी अनेक चारित्रिक विशेषताओं के अनुरूप उनके विभिन्न नामों की महिमा का स्तवन कवियो ने किया है।

५. सत्संग : बीज-रूप भगवद् विषयक रति के अकुरण के लिए जितनी आवश्यक भगवत्कृपा है, उसके पल्लवन के लिए उतनी ही सत्संग की आवश्यकता है। भक्ति की साधना मे ऐसे व्यक्तियों का सग सहायक होता है जो माया के बधनों से मुक्त होकर भक्ति-मार्ग मे प्रविष्ट हो चुके है। रस-मार्ग के पथिको के लिए रसिक जनों का सग आवश्यक है। कृष्ण प्राप्ति के लिए कृष्ण-भक्त रसिक जनो का आश्रय ग्रहण करना चाहिए—

दीखत अंत नाहिं कहुं ठौर।
श्री राधिका रमण पद पकज सोइ मेरे शिर मौर।।
कै रसिकन कों करौ आसरो जे कृपालु नहिं थोर।
बाकेपिय गुरुदेव कृपा ते मिलहैं नंद किशोर।।[74]

हरि भक्त की सत्सम्मति से सब दोष दूर हो जाते हैं जिस प्रकार पारस के स्पर्श से लोहा अपना कुरूप त्यागकर कंचन हो जाता है, उसी प्रकार हरि-भक्त के संग से अवगुण भी गुण हो जाते हैं। सत्संग से पापों का नाश होकर भवसागर से मुक्ति होती है।[७५]

हरि भक्त साधु के लक्षण भी कहे गये है। बाकेपिया ने कृष्ण के आश्रित, सत्य-प्रतिज्ञ, दयालु, क्षमावान, परोपकारी, त्यागी, शोक आदि विकारो से रहित, अमानी आदि साधु के तीस लक्षण बताये है।[७६] ये लक्षण 'चैतन्य चरितामृत' मे वर्णित लक्षणों के अनुरूप है।

नवधा भक्ति : भक्ति के अन्य साधन-अंगों मे परंपरा से मान्य नवधा भक्ति के साधनों का समावेश है। नवधा भक्ति के नौ सुप्रसिद्ध अग है—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, बदन, दास्य, सख्य तथा आत्मनिवेदन। इनमें दास्य तथा सख्य को कृष्ण भक्ति रस के अंतर्गत समाविष्ट कर लिया गया है। आत्मनिवेदन से भक्ति आरभ होती है। श्रवण, कीर्तन आदि अंगो द्वारा भक्ति की भूमिका निर्मित होती है।

१. श्रवण : भगवान के नाम, चरित्र और गुणादि के सुनने को श्रवण कहते है।[७७] चैतन्य संप्रदाय मे नाम-श्रवण का अधिक महत्त्व है। भक्ति भाव से सुना गया भगवन्नाम चित्त-शुद्धि करने में समर्थ होता है। 'भक्ति सदर्भ' में जीव गोस्वामी ने कहा है कि जिस प्रकार निर्मल दर्पण में ही रूप उतरता है, उसी प्रकार निर्मल चित्त में भगवद्-रूप के उदय होने की योग्यता आ पाती है और नाम, रूप एव गुण सहित भगवान तथा उनके परिकर की स्फूर्ति होने पर हृदय में लीला-स्फुरण की सम्यक् योग्यता आती है।[७८] कृष्ण-नाम के श्रवण द्वारा चैतन्य महाप्रभु की, उस स्फुरण की अनुभूति से, अत्यंत भाव-विभोर दशा हो जाती थी—

> गृह गृह डोलै हरि हरि बोलै, कृष्ण नाम को दान लहैं।
> श्री मुख सो उपदेश करहिं पुनि पर मुख सों सोइ श्रवण करैं।
> कृष्ण नाम ध्वनि सुन पर मुख पुलकित तन ह्वै अश्रु झरैं।
> प्रेम सहित गहि गहि उर लावै गद्गद ह्वै निज अंक भरै।।[७९]

भगवद्-कथा के श्रवण से चित्त के विकार धुलते है। धर्मानुष्ठान आदि कर्म दुष्कर होते है परंतु भगवान की कथा मे चित्त सहज ही रम जाता है। भगवान के चरित्र एवं गुणों की कथा का श्रवण समस्त पापों का संहार करके पापियों का उद्धार करता है। यह मंगलकारी एवं प्रेम भक्ति रस प्रदाता है। इसके श्रवण से परम पद का लाभ मिलता है एवं इसके बिना जीवन व्यर्थ गंवा दिया जाता है।[८०]

२. कीर्तन : भगवान के नाम, रूप, गुण एव लीला का गायन कीर्तन कहलाता है।[८१] कीर्तन तत्त्व चैतन्य सम्प्रदाय की साधना का प्राण है। नाम-संकीर्तन को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। चैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन मे जो उत्कट भाव-आवेश एवं उच्छ्वास था, उससे कीर्तन को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान मिला।

महाप्रभु ने 'शिक्षाष्टक' में सर्वप्रथम श्रीकृष्ण-संकीर्तन का गुणगान किया है। हरि-भक्ति के प्रचार का सबसे सुगम साधन कीर्तन को माना गया है। कीर्तन को लोक-प्रिय बनाने मे चैतन्य संप्रदाय का सर्वाधिक योगदान है। सांप्रदायिक ब्रजभाषा कवि चैतन्य देव के सकीर्तनानंद स्वरूप से प्रभावित हुए है और उन्होने अपने पदो मे संकीर्तन करते महाप्रभु की उस भाव-दशा का चित्रण किया है, साथ ही अपने काव्य में कीर्तन का महत्त्व भी प्रतिपादित किया है। 'शिक्षाष्टक' मे चैतन्य महाप्रभु द्वारा वर्णित सकीर्तन-माहात्म्य को कवि वांकेपिया ने ब्रजभाषा मे निरूपित करते हुए कहा है कि कृष्ण-कीर्तन समस्त पापो का नाश करके चित्त को निर्मल बनाता है तथा संसार के दुःखो को दूर कर आनद का विस्तार करता है अतएव कीर्तन जीवन का आधार एवं सारतत्त्व है—

> कृष्ण-कीर्तन सार जगत मे।
> चित्तदर्पण मलनाशक भव, दावाग्नि निवारणहार जगत मे।
> मंगलदाई कुमुदचंद्रिका, वाटनहार उदार जगत मे।।
> जीवन विद्या-वधू करत, आनंद सिंधु विस्तार जगत मे।
> पूर्णसुधा को स्वाद वांकेपिय, सर्वआत्म आधार जगत मे।।[८२]

कलियुग का एकमात्र धर्म नामसंकीर्तन है। ईश्वर को प्राप्त करने का यह सबसे सुगम व सहज मार्ग है। माधवदास जी ने कीर्तन का महत्त्व इस प्रकार प्रति-पादित किया है—

> हरि कीरतन विना भव समुद्र को नाही निसतारा।
> जिह्वा पाइ नर सरीर जे हरि कीरतन न करही।
> श्री बैकुंठ नसेनि पाइ मूरख खिसि परही।।[८३]

३. **स्मरणभक्त** : के हृदय मे भक्ति भाव को सुदृढ करने के लिए भगवान के स्मरण का अत्यधिक महत्त्व है। इष्ट का नाम-जप स्मरण का एक रूप है। नाम के अतिरिक्त ईश्वर के गुण एवं चरित आदि के महात्म्य का भी स्मरण किया जाता है। चैतन्य संप्रदाय के भक्त-कवियों ने प्रभु के नाम-जप को महत्त्व दिया है।

भगवान का स्मरण करने से उनके प्रति प्रेम-अनुराग उत्पन्न होकर भक्ति-भाव विकसित होता है। इसीलिए रागमार्ग के अनुयायी सदा राधारमण का ध्यान करते हैं—

> सुमिर मन राधारमण सुखदाई।
> करत भावना जिनकी निस दिन राग मार्ग अनुयाई।
> जिनके पद पकज सुमिरण तें होत भक्ति अधिकाई।
> प्रेम अनुराग बढ़त वाकेपिय गुण चरित्र नित गाई।।[८४]

नाम-स्मरण से दुखो का नाश होकर सुख एवं आनंद उत्पन्न होता है एव जगत के कर्म-बंधनों से छुटकारा मिलता है।[८५] जो व्यक्ति भगवान का स्मरण

एवं ध्यान करते हैं उन सौभाग्यशाली व्यक्तियों के यश का वर्णन सुरमुनि भी करते हैं। वे ही जीवन का वास्तविक फल-लाभ भी प्राप्त करते हैं। स्मरण-ध्यान से विमुख होने पर व्यर्थ के सांसारिक भ्रम-जाल में पड़े रहना होता है।[८४]

रसिक शिरोमणि कृष्ण के सुंदर रूप का मन में स्मरण एवं चिंतन करने से सर्व दुःख दूर हो जाते हैं—

> सुमिरहु वर नागर वर सुंदर गोपाललाल।
> सब दुःख मिटि जैहै वे चितन लोचन विशाल॥
> रसिक रूप भूपरासि गुन निधान जान राय,
> गदाधर प्रभु युवतीजन मन मानस मराल।[८७]

कृष्ण के सुंदर रूप के चिंतन का तो प्रभाव होता ही है, उनके मधुर गुणों का स्मरण करके भी गदाधर भट्ट का हृदय गद्‌गद हो जाता है—

> अहो गोपाल कृपालय प्यारे।
> सुमिरत हियौ भर्‌यौई आवत गुनगन मधुर तिहारे।[८८]

४. पाद-सेवन : पाद-सेवन से अभिप्राय श्री चरणों की सेवा मात्र से ही नहीं है, अपितु दैन्य सहित प्रभु की सेवा को पाद-सेवन कहा गया है। भगवान का चरण-सेवन भक्ति-प्रदायक है। हरि के पावन पद-रज के स्पर्श से अधम जन भी सम्मान प्राप्त करते है।[८९]

भगवान के चरणों की प्रभुता अत्यधिक है। जिन चरणों का स्पर्श करने मात्र से देवनदी गंगा त्रिपुरारि शिव के श्री मस्तक पर सुशोभित हो गयी और गौतम नारी अहिल्या का उद्धार हो गया, उनके चरणों की सेवा क्या नहीं कर सकती? हरि के चरणों की महिमा वेद-पुराण सभी गाते हैं। वही चरण-कमल ब्रज-जनों के प्राणाधार है।[९०] ललित किशोरी जी कहते है कि परब्रह्म कृष्ण स्वयं जिन प्रिया राधा की चरण-धूलि को झाड़ते हैं उस महिमामयी चरण-धूलि को छोड़कर योग, तप आदि अन्य साधनों की आशा क्यों करते हो—

> पद रज तजि किम आस करत हो जोग जग्य तप साधा की।
> सुमिरत होत सुख व आनंद अति जर न रहत दुःख बाधा की।
> ललित किशोरी शरण सदा रहु शोभा सिंधु अगाधा की।
> परब्रह्म गावत जाकौ जग झारत चरण रेणु राधा की।[९१]

चैतन्य-भक्त रसिक जनों के लिए चैतन्य-चरणधूलि की सेवा प्रेम रस मे निमग्न करने वाली है—

> रे भज शचीनंदन चैतन्य।
> दृढ़ विश्वास प्रेमरस मज्जित बस श्री वृंदारण्य।
> सेव चरन तल धूलिउभय रस रसिकन रास अनन्य।
> ललित माधुरी रूप छकी नित डोल मोद संपन्य॥[९२]

५. **अर्चन** : धूप, दीप, पुष्प, नैवेद्य आदि उपचारो से भगवान का पूजन अर्चन कहलाता है। अर्चन भगवान के प्रति श्रद्धा, निकटता तथा आत्मसमर्पण का प्रतीक है। इसके द्वारा भगवान के प्रति भक्ति-भाव जगाने का प्रयत्न किया जात है। भक्ति के चित्त की एकाग्रता भी अर्चन के बाह्य साधनो द्वारा बनी रहती है चैतन्य संप्रदाय का ब्रजभाषा काव्य लीला-प्रधान है। विभिन्न लीलाओ के अंत मे सखियों द्वारा कृष्ण-राधा की आरती किये जाने के प्रसंग मे अर्चन संबधी पद उपलब्ध होते है।

गदाधर भट्ट ने निम्न पद मे सांग रूपक के द्वारा वर्षाऋतु के उपकरणो को आरती के साधन बनाकर मेघ द्वारा हरि की आरती किये जाने का अत्यंत सुंदर चित्रण किया है—

हरि की नवघन करत आरती।
गर्जनि मद शंख ध्वनि सुनियति दादुर वेद भारती।
पचरग पाट बाति सुर धनु की दामिनी दीप उज्यारती।
जल कन कुसुम जाल बरषावत बग-गण चमरानि ढारती।
घंटा ताल झांझि झालरि पिक चातक केकी स्वान।
तातें भयो गदाधर प्रभु के श्यामल अंग समान।।[६३]

६. **वंदन** : वंदन का साधारण अर्थ अपने से महत्तर किसी सत्ता का गुणगान करना है। यह गुणगान मौखिक स्तुति के रूप मे ही नही होता अपितु प्रभु की वदना द्वारा भक्त अपने हृदय मे उनके रूप, गुण एवं कृतित्व का बोध कर उनकी महिमा का उद्बोधन करता है।[६४] भगवान के माहात्म्य-ज्ञान द्वारा भगवान के प्रति पूज्य भाव का उदय होकर भक्ति सुदृढ़ होती है।

आराध्य के प्रति नमन वंदन-भक्ति है।[६५] नमन का अर्थ बाह्य रूप से दंडवत् करने से ही नहीं, अपितु अंतस् में समर्पण एवं आराधना का भाव भी होना चाहिए। राधा की वंदना करते हुए गदाधर भट्ट ने हरि के हेतु उनके गुणो का सुंदर वर्णन किया है :

जयति श्री राधिके सकल सुख साधिके,
तरुनि-मनि नित्य नवतन किसोरी।
कृष्ण-तनु नील-घन रूप की चातकी,
कृष्ण-मुख-हिम किरन की चकोरी।।
कृष्ण-दृग-भृंग-विश्राम हित पद्मिनी,
कृष्ण दृग मृगज बन्धन सुडोरी।
कृष्ण-अनुराग-मकरंद की मधुकरी,
कृष्ण-गुन-गान रस-सिंधु बोरी।।
एक अद्भुत अलौकिक रीत मैं लखी,
मनसि स्यामल रंग अंग गोरी।[६६]

राधा-कृष्ण के अतिरिक्त चैतन्य सम्प्रदाय मे चैतन्य महाप्रभु की भी आराधना की जाती है। अतएव सांप्रदायिक कवियो ने अपने काव्य मे महाप्रभु की भी वंदना गायी है। रामराय जी के निम्न पद मे मगलाचरण के रूप में गौर-किशोर चैतन्य की वंदना है—

मंगल जय श्री गौर किशोर।
मंगल श्रीवृंदावन भूषण राधाभाव रसिक रस बोर।
मंगल नवद्वीप पंडितवर जगन्नाथ आनंद बिभोर।
मंगल प्रघटे मात शचीसुत पूरन चद्र प्रेमानिधि घोर॥
मंगल महाभाव भावित तन रूप सनातन हिये हिलोर।
मंगल कृष्ण-नाम वितरत है पात्र अपात्र विचार न थोर।
श्रीरामराय जग धंधे त्यागे मगल भयौ लग्यौ इन ओर॥[९७]

७. दास्य : अपने समस्त कर्मों का भगवान को अर्पण कर देना और सर्वथा उनके किंकिर के रूप मे भाव दास्य कहा जाता है।[९८] नम्रतापूर्वक प्रभु की सेवा दास्य भक्ति है। प्रभु के दास के रूप मे अहं का नाश होकर एकमात्र सेव्य का प्रभुत्व स्थापित होता है। दैन्य भक्ति का मूलाधार है। इसलिए दास्य भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। आलोच्य काव्य की मूल भावना माधुर्य भक्ति-परक रही है, फिर भी भक्त कवियों ने जहां अत्यंत दीन होकर भगवान के दास के रूप में उनके प्रति आत्म-समर्पण किया है, वहां दास्य भक्ति अभिव्यक्त हुई है। निम्न पद मे भक्त-कवि बाकेपिया ने अपने को कृष्ण का बिना मोल का चाकर बताते हुए कृष्ण से अपने चरणों में आश्रय देने की प्रार्थना की है—

हौ प्रभु बिना मोल को चेरौ।
महा कुटिल मति मद मूढ़ जड़ याकों करौ निबैरौ।
तव चरणन को करौ आसरो आनि उपाय न मेरौ।
बांकेपिय प्रभु मोहि राखिये भलो-बुरो हौ तेरौ।[९९]

८. सख्य : दास्य मे भगवान और भक्त के बीच जो संकोच तथा दूरी होती है, सख्य में वह तिरोहित होने लगती है। सख्य में संकोच की सीमा के पार भगवान से सबंध अधिक घनिष्ठ होता है। माहात्म्य-ज्ञान होते हुए भी यहां स्नेह का समावेश रहता है। भगवान केवल सेव्य ही न रहकर भक्त के मार्गदर्शक भी बनते है। चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे सख्य को अधिक विस्तार नही मिल पाया है। इससे सबंधित कुछ पदों की ही रचना की गयी है। 'भक्ति के विविध भाव' एवं 'रस' के अंतर्गत आगे इसकी चर्चा की गयी है।

९. आत्म निवेदन : उपरोक्त श्रवण, कीर्तन आदि आठ प्रकार के साधनों द्वारा जब भक्त के हृदय मे भगवान के स्वरूप का उदय होता है, तब उनके प्रति आत्मसमर्पण के भाव से अभिभूत होकर भक्त अपना सब कुछ भगवान के आगे

निवन्ति कर देता है तब उसे भगवान के अतिरिक्त अ य कुछ अच्छा न लगता—

श्री राधामाधव बिना अन्य न भावत चेत।
नमू अनन्या के सुभग पद पंकज रस हेत।।[100]

आत्म निवेदन मे भक्त भला बुरा कैसा भी हो, अपना सब कुछ भगवान क निवेदित कर देता है अर्थात वह पूर्ण रूप से भगवान का आश्रय ग्रहण कर लेत है।[101]

इस समर्पण के अननर भक्त को भगवान की सेवा का अधिकार मिल जात है। नवधा-भक्ति भक्त की चेतना को समर्पण के भाव तक विकसित करती है, उसके उपरात भगवान की सेवा द्वारा भक्त भगवान का सान्निध्य प्राप्त करता है।

भक्ति और सदाचार

जीव का परम धर्म है कृष्ण-भक्ति। इस भक्ति के साधन-रूप में सदाचार के पालन का भी महत्त्व है। सत्कर्मो से ही भक्ति की प्राप्ति होती है। भक्ति-शास्त्रों के द्वारा अनुमोदित सभी सत्-आचरण चैतन्य संप्रदाय की साधना मे स्वीकृत है। वैष्णव के अनेक गुणों का उल्लेख 'चैतन्य चरितामृत' में किया गया है।[102] ब्रज-भाषा कवियो ने भी भक्त के लिए सदाचार के पालन का महत्त्व बताते हुए भक्तों के गुणों पर प्रकाश डाला है। कवि बांकेपिया ने कृष्ण के आश्रित, सत्यप्रतिज्ञ, दयालु, क्षमावान, परोपकारी, त्यागी, अमानी आदि वैष्णव भक्त के गुण बताये हैं।[103] वैष्णव का विशेष आचरण है—असत्संग का त्याग अर्थात् श्रीकृष्णविमुख असाधु का संग न करना।[104] जीव मात्र के प्रति प्रेम भक्त का सर्वप्रमुख गुण है। इसी के साथ चैतन्य महाप्रभु ने दीनता, नम्रता, अभिमानशून्यता, सहिष्णुता और समता आदि गुणों पर विशेष बल दिया है। गौडीय भक्तों के ये आवश्यक गुण है। 'शिक्षाष्टक' में महाप्रभु द्वारा बताये गये वैष्णव के इन सर्वप्रमुख गुणों[105] का उल्लेख ब्रजभाषा कवि बांकेपिया ने निम्न पद में इस प्रकार किया है—

तृण हू तें लघु निज को जानै।
सहनशीलता होय वृक्ष सम, मान अपमान हृदय नहि आनै।
परजन को नित दया भाव सो, करि आदर बहु विधि सनमानै।।
बांकेपिय हरिभजन करै नित, लीला गुणन चरित्र बखानै।।[106]

साधु शिरोमणि रूप-सनातन गोस्वामी की स्तुति करते हुए भक्त कवि व्यास ने भी उपर्युक्त गुणों पर प्रकाश डाला है—

साधु-सिरोमनि रूप-सनातन।
जिनकी भक्ति एक रस निबही, प्रीत कृष्न-राधा तन।।

× × ×

सब तजि कुंज-केलि भज अहनिसि, अति अनुराग सदा तन।
तृन हू तें नीचे, तर हू तें सहकर, अमानी, मान सुहात न।
असि-धारा व्रत ओर निबाह्यौ, तन-मन कृष्ण-कथा तन ।।[107]

व्यास जी ने अनेक साखियों मे सदाचार के पालन का उपदेश देते हुए प्रेम भाव, मन की एकाग्रता, दृढ़ विश्वास, दैन्य, अभिमानशून्यता, कुसंग-त्याग, कपट से घृणा आदि पर बल दिया है। रामहरि जी ने परोपकार, वाणी की मधुरता, शील स्वभाव और दया आदि अनेक गुणों को अपनाने की प्रेरणा देते हुए कहा है कि बिना दया के विद्या, ज्ञान, संपत्ति आदि धूल के समान तुच्छ है।[105]

सेवा (अष्टकालिक नित्य-लीला)

नवधा भक्ति के साथ ही साथ कृष्ण भक्ति संप्रदायों में एक विशिष्ट पूजा प्रणाली का विधान है जिसे अष्टप्रहर सेवा कहा जाता है। नवधा भक्ति की अपेक्षा सेवा अधिक क्रियात्मक एवं भावात्मक है। यह इष्टदेव के नाम एवं स्वरूप (श्री-विग्रह) दोनों की होती है परतु नाम-सेवा बहुत कुछ अमूर्त्त होने के कारण उतनी प्रचलित नही हो पायी जितनी स्वरूप-सेवा। कृष्ण भक्ति सप्रदायों मे राधा-कृष्ण के विग्रहो को मात्र मूर्त्ति न समझकर साक्षात् उनके स्वरूप की अभिव्यक्ति समझकर सेवा-पूजा की गयी है। सभी कृष्ण-भक्ति सप्रदायो में अष्टप्रहर सेवा प्रचलित है। किंतु विभिन्न संप्रदायो की विशिष्ट मान्यतानुसार इनके अष्टप्रहर सेवा-विधान में भी सूक्ष्म अंतर है। वल्लभ संप्रदाय मे बाल एवं पौगण्ड के भाव की प्रधानता है और उसी के अनुरूप सेवा-प्रणाली का विधान है। उसमे राजभोग से पूर्व ग्वाल की प्रथा है। चैतन्य संप्रदाय, निंबार्क सप्रदाय एवं राधावल्लभ संप्रदाय मे शृंगार रस के अनुरूप सेवा-विधान है, किंतु इन संप्रदायो की सेवा-उपासना विधि मे सूक्ष्म अतर है।

चैतन्य संप्रदाय की अष्टप्रहर सेवा प्रणाली मे परकीया भाव होने से रोचकता है। इस संप्रदाय मे राधा-कृष्ण के समान चैतन्य प्रभु की सेवा-पूजा की जाती है अत: महाप्रभु की अष्टकालीन नित्य सेवा संबधी पदो की रचना की गयी है। ब्रज-भाषा कवि चंद्रगोपाल ने 'गौरांग अष्टयाम' में राधा-कृष्ण के मीलित विग्रह के रूप में चैतन्य देव की अष्टयाम सेवा का निरूपण किया है।

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे सामान्यत: अष्टप्रहर सेवा का वर्णन साम्प्रदायिक परंपरागत रूप में मान्य सेवा-प्रणाली के अनुसार किया गया है, परतु अन्य संप्रदायों (वल्लभ, राधावल्लभ, निंबार्क आदि संप्रदाय) के सेवा-विधान का कुछ प्रभाव भी परिलक्षित होता है। नित्य सेवा के वर्णन मे प्रमुख रूप से रूप गोस्वामी कृत 'स्मरण मंगल स्तोत्र' को आधार बनाया गया है। 'स्मरण मंगल स्तोत्र' (संस्कृत) के ब्रजभाषा मे काव्यानुवाद भी प्रस्तुत किये गये है[109] जिनमे गुणमजरी कृत स्मरण मगल भाषा प्रमुख है सेवा सुधा' (
कृत व अष्टयाम' व दावन चद्र कृत सेवा पर रचित पृथक

रचनाएं हैं अभिलाष माधुरी व रस कलिका (ललित किशोरी) प्रेम र. वाटिका (बाकप्रिया) व लभ रसिक की वाणी श्री किशोरी करुणा कटाक्ष (ललित लडैती) श्री राधा रमण पद मजरी (गुण मजरी) आदि काव्य-रचनाओं में भा नि य सेवा सबधी पद उपलब्ध होते हैं। इनमें राधा-कृष्ण की अष्टकालीन लीलाओं का सरस कथन किया गया है जिनका आधार 'स्मरण मगल स्तोत्र' के अतिरिक्त कृष्णदास कविराज कृत 'गोविंद लीलामृत'[११०] प्रमुख रूप से रहा है। 'कृष्णाह्निक कौमुदी' (कवि कर्णपूर कृत) एवं 'कृष्ण भावनामृत' (विश्वनाथ चक्रवर्ती) आदि सांप्रदायिक ग्रंथों का भी इन पर प्रभाव है।

सांप्रदायिक परंपरा के अनुसार अष्टकालीन नित्य सेवा का विभाजन इस प्रकार किया गया है—१. निशांत लीला, २. प्रात. लीला, ३. पूर्वाह्न लीला, ४. मध्याह्न लीला, ५. अपराह्न लीला, ६. साय लीला, ७. प्रदोष लीला, ८. नैश लीला।[१११] ब्रजभाषा काव्य में अष्टकालीन सेवा के अतर्गत निम्नलिखित लीलाओं का समावेश है—

१. निशांत लीला . रात्रि जागरण एवं रतिरंग के अतिरेक से राधा-कृष्ण आलस्य में भरे सोये रहते हैं। कृष्ण यशोदा की सत्ता से एवं परकीया राधा अपनी सास जटिला के अस्तित्व से पूर्णतया अनभिज्ञ हैं। वृंदादेवी की आज्ञा पाकर पक्षी-गण चहकने लगे और सखियां 'जटिला' नाम लेकर पुकारने लगीं, जिससे भयभीत होकर राधा की निद्रा भंग हो। पक्षियों के मधुर कलरव से राधा-कृष्ण की नींद खुली।[११२] सखियां राधा-कृष्ण को जगाती हुई कहती हैं—

राजिव लोचन पलक उघारौ।
प्रफुलित समै विकास भानु दुति उडगति गगन निहारौ।
सिथलित अलक विलोकि परस्पर मधुप उनीदे वारौ।
ललित किशोरी त्रिथित अलिगन कज्जल रेख संवारौ ॥[११३]

अनुराग एव आलस मे भरे वे उठते हैं परंतु अलग नहीं होना चाहते। रसालय से भरे राधा-कृष्ण निकुंज मे निकलते हैं। सखियां उनके मुखारविंद के दर्शन करती हैं और उनकी सेवा में तत्पर होती हैं। रात्रि के सुरति-रंग के अनुराग एवं आलस से भरे अस्त-व्यस्त राधा-कृष्ण की छवि का अत्यंत सुंदर चित्रण किया गया है—

भोर आवन की छवि नीकी लागै।
नव निकुंज ते निकस सशकित सुरति रंग पागे अनुरागे।
लटक मुकट तामै फूलन की लर न्यारी ठौर ठौर प्यारी पद अंक बिराजै।
कंकण को चिह्न पीठ बिन गुण माल उर अधर दशन छत बनि रहे ताजै।
अंजन मलिन युति नयन अनियारे दोउ पीक लीक गलित कपोलन पै राजै।
अटपटे बैन मुख अंग बिपरीत पट जावक चरण माहिं अति छवि छाजै।
लटपटी पाग जमुहात मरगजी गात बांकेपिय रस बस निश कहूं जागे ॥[११४]

निकुंज से निकलकर राधा-कृष्ण बिछुड़ते हुए अत्यंत व्याकुल होकर अपने

अपने गृह की ओर प्रस्थान करते हैं।

२. प्रात: लीला : प्रात: काल होने के पूर्व ही राधा-कृष्ण अपने-अपने भवन मे आकर शैय्या पर सो जाते है। गो-दोहन का समय जानकर माता यशोदा कृष्ण को जगाती है। द्वार पर सखा गण एकत्रित हो जाते है। माता यशोदा के वचन सुनकर कृष्ण तुरंत उठ जाते है और गोप-वधुएं कृष्ण के दर्शन करती हैं। सखाओ के साथ कृष्ण गो-दोहन के लिए गोशाला मे प्रवेश करते है।

उधर राधिकालय मे जटिला अपनी वधू राधा को जगाती हैं। वधू राधा के शरीर पर कृष्ण का पीत पट देखकर सशंकित जटिला क्रोधित होती है। उनके क्रोध से सभी सखियां कठपुतली-वत् जड़ हो जाती है किंतु विशाखा के चातुर्य-बल से राधा को ओट में करके झटपट नीलांबर धारण करवा दिया जाता है और तब उस छल-चातुर्य के आगे सास जटिला को भी लज्जित होकर चुपचाप वहा से जाना पडता है।[११५] इस प्रसग मे मधुर हास-परिहास की सृष्टि हुई है।

राधा के जागने पर सखियां उनकी सेवा में लग जाती है। वे राधा के स्नान आदि का प्रबंध व उनका श्रृंगार करती है। गोशाला से वापस आकर कृष्ण स्नान कर, वेश-भूषा आदि धारण करते हैं। प्रात: काल की लीला मे दत मजन, स्नान, श्रृगार, भोग से संबधित पदों की रचना की गयी है। विविध प्रकार के सुगंधित उबटनों से स्नान कराकर सखियां राधा-रमण का सुदर श्रृगार करती है—

> श्री राधारमण करत स्नान।
> विविध सुगंधि लगाय उबटनौ कीनो सखि सुखमान।
> मधुर श्री जमुना जल की झारी ढालत रुचि को जान।।
> अंग अंगोछ धीर गुणमंजरी सिंगारत पट आन।।[११६]

तत्पश्चात् राधाकृष्ण विविध प्रकार के व्यजनो का भोजन आनंदपूर्वक करते है।

गौरांग चैतन्य की प्रात: लीला संबंधी पदो की रचना भी कवियो ने की है। चद्रगोपाल के निम्न पद मे गौरचंद्र के प्रात: स्नान का निरूपण इस प्रकार हुआ है—

> करहु हे गौरचंद्र स्नान।
> शीतल जल निर्मल सौ सुदर सरबस कृपा निधान।
> अतर गुलाब आब सो सुखकर परम रम्य सुरमान।।
> श्री नित्यानंद महाप्रभु सङ्ग मिल मुदित प्रेम धीमान।।
> श्री प्रभु चंद्रगोपाल शची सुत निज जन जीवन प्रान।।[११७]

कवि बाकेपिया ने बालक चैतन्य के श्रृगार का सुदर चित्रण किया है।[११८]

३. पूर्वाह्न लीला : वन-गमन के लिए कृष्ण समुचित वेशभूषा धारण करते हैं। वन के लिए जाते हुए गोप-वेश मे उनकी शोभा का सुंदर चित्रण किया गया है—

करि शृंगार पहिर आभरण गो चारण हित बन कीनो गमन ।
करि स्नान गोदुहन पाछे कियो कलेवा नंद नंदन ।।
पीत बसन फेंटा कटि कछनी मणिन जटित कुडल श्रवणन ।
पहुंची कड़े जड़ाऊ कर मे शोभित बाजू बद भुजन ।।
मोर मुकट की लटक अनोखी लगि रहै कहुं कहुं जामे सुमन ।
कुचति अलक छूट रही कटलौ नूपुर लसत अंबुज चर्णन ।।

× × × ×

बगल लकुटिया हाथ मुरलिया पाछे सखा आगे गोधन ।।
बांकेपिय प्रभु की यह बानिक बसी रहै निन मो नयनन ।।[११६]

माता यशोदा कृष्ण को सखाओं के साथ वन जाने के लिए विदा करती है। राधा सूर्य-पूजा के मिस प्रियतम कृष्ण से वन में मिलने का प्रयत्न करती है।[१२०] वन में सखाओं के साथ आकर कृष्ण राधा से मिलने की उत्कठा लिए हुए राधा-कुड पर आते हैं। कृष्ण-आगमन का समाचार लेने के लिए राधा अपनी दूती को राधा-कुंड पर भेजती है और दूती के द्वारा कृष्ण-आगमन की सूचना पाकर राधा प्रियतम से मिलन की 'हुलास भरी हास' लिए राधा-कुड की ओर चल पडती है।[१२१]

४. मध्याह्न लीला : वन में राधा-कृष्ण का मिलन होने पर दोनो निकुज मे जाकर हर्षित होते हैं। मध्याह्न लीला मे वन-विहार, वन की शोभा एवं निकुज-क्रीडाओं का समावेश है। इसके अतर्गत षट्ऋतु वर्णन एवं उनसे सबधित विभिन्न लीलाओ का वर्णन किया गया है। मध्याह्न लीला के अंतर्गत आने वाली राधा-कृष्ण की विविध लीलाओं का निरूपण चैतन्य सप्रदाय के अधिकाश ब्रजभाषा कवियों ने किया है। चंद्रगोपाल, बांकेपिया, गौरगणदास आदि कुछ कवियो ने चैतन्य की विहार लीलाओ का भी चित्रण किया है। वस्तुत: आलोच्य समस्त कवियों के काव्य का मुख्य विषय माधुर्य भावपरक विभिन्न लीलाओ का रहा है। विभिन्न लीलाओं के वर्णन में पर्याप्त मधुरता एवं सरसता है जिनका विस्तृत विवेचन आगे माधुर्य भक्ति भाव के प्रकरण मे विभिन्न लीलाओ के प्रसग में किया जायेगा।

५. अपराह्न लीला : वन-क्रीड़ा मे दिवस बिताकर अपराह्न मे कृष्ण गौओ को मुरली की ध्वनि से बुलाते है और उनको एकत्रित कर सखाओ के साथ घर की ओर लौटते है। गोधन के संग वन से घर आते हुए उनकी शोभा का वर्णन किया गया है—

गोधन संग बनतें गृह आवत।
गोधन खुरन धूलि अंग मंडित मुख तें मुरली मधुर बजावत।
ग्वाल बाल संग लीन्हे मंद मद कोमल पग धावत
बांकेपिय प्रभु ऊंचे स्वर सो धौरी धूमर गग बुलावत [१२२]

वन से लौटते हुए श्रीकृष्ण का ब्रजवासी नर-नारी अपने-अपने घरों से दर्शन करते हैं। श्रीकृष्ण के लौटने का समय जानकर सखियां राधा का शृंगार करती है। राधा दर्शन की अत्यंत उत्कंठा लिए हुए अटारी पर चढ़कर कृष्ण की राह देखती है और उनके दर्शन कर प्रमुदित होती है। कृष्ण के घर आने पर माता यशोदा अत्यंत आतुर होकर उनकी वन की कुशल-मंगल पूछती है और उनकी आरती उतारती है। वन जनित श्रम दूर करने के लिए सखियां कृष्ण की सेवा मे तत्पर होती है।[१२३]

६. सांय लीला : संध्या समय कृष्ण गोशाला जाकर गो-दोहन करते है। गोशाला से लौटकर स्नानादि के पश्चात् शालिग्राम-नारायण की आरती का दर्शन होता है। तब रात्रि के भोजन की व्यवस्था होती है। सखिया विभिन्न प्रकार की भोजन-सामग्री, जो कृष्ण के लिए राधा ने भेजी हैं, लेकर आती है। यशोदा अत्यत प्रसन्न होकर कृष्ण को परोसती है और कृष्ण रुचि से उनको ग्रहण करते है। राधा द्वारा भेजे गये व्यंजन उन्हे अत्यंत रुचिकार लगते है।[१२४] सखियां कृष्ण की शोभा को देखकर प्रफुल्लित होती हैं और भोजन के पश्चात् कंचन की झारी से उनका आचमन कराती हैं। कृष्ण का प्रसाद सखियां आनद से पाती हैं। संध्या-समय सखिया राधा-कृष्ण की सेवा करती हुई आरती उतारती हैं—

> करत आरती नव ब्रज गोरी ।।
> बैठे नवल कुज भुज मेरे श्याम राधिका सुदर जोरी।
> सध्या समय मधुप गुंजारत उड़त धाय पद पंकज ओरी।
> ललित लड़ैती चमर ढुरावत भंमर विडारत गोप किशोरी ।।[१२५]

७. प्रदोष लीला . कृष्ण नद-सभा में आते है और बड़ों को सम्मानपूर्वक प्रणाम करते हैं। वहा से वापस आने पर माता यशोदा उन्हे शयन के लिए भेजती है। वहा राधा द्वारा भेजी गयी एक सखी के बुलाने पर कृष्ण निकुंज में आते है। राधा अभिसार के लिए उचित वेश एवं शृंगार धारण कर वन में आती है एव निकुंज में प्रियतम कृष्ण से मिलती है। यहां पर कृष्ण-राधा की परस्पर प्रेम-चेष्टाओं एवं सखियो द्वारा उसका आनंद लेने का वर्णन किया गया है।[१२६]

८. नैश लीला : इस लीला में रात्रि-लीला एव शयन-लीला आती है। रात्रि के समय सखियों के साथ राधा-कृष्ण विविध रास-विलास करते हैं। रास-विलास मे नृत्य-गान, विविध वाद्य संगीत आदि के मधुर स्वरों मे अतुल प्रेम-रस प्रवाहित होता है।

रास-विलास के पश्चात् राधा-कृष्ण का निकुंज मे एकांत मिलन होता है। यहा विविध केलि-क्रीड़ाए होती हैं। उनके शयन के लिए सखियां सेवा मे जुट जाती है। पुष्प शैया तैयार की जाती है—

> मजरी गण मिल सेवा कीन्ही ।
> फूलन माल अतर सीतल जल बीरी पान सुगधित दीन्हीं ।।

बहुरि सम्हारी किशलय शय्या सखियन प्रिय प्रियतम रुचि चीन्ही ।
झांकेपिय रति सुख बाढ़न कौं करत यतन सहचरी प्रवीनी ।।[१२७]

सुमन शैया पर राधा-कृष्ण शयन करते हैं और विविध प्रकार की रति-क्रीड़ाओं में मग्न होते हैं। विविध सेवाओं मे रत सहचरिगण रध्रो मे से झांककर उस अपूर्व विलास का सुख प्राप्त कर हर्षित होती हैं।[१२८]

राधिका भाव में निमग्न गौरांग चैतन्य की शयन लीला का चित्रण इस प्रकार किया गया है—

श्री राधिका भाव मत्त गौरांग ।।
शयन करत अति मुदित लोल छवि कर पुनीत जन वग ।
अनुपम रूप निरखि कै लाजत दूर रहत जू अनंग ।
उपमा कहत न आवै कबहुक प्रीति पराग उमग ।
श्रीप्रभु चन्द्र गोपाल सैन मन चैत रैन श्री अंग ।।[१२९]

इस प्रकार चैतन्य संप्रदाय की अष्टप्रहर सेवा प्रणाली मे लीलाओं की विविधता एवं रोचकता विद्यमान है। सखियों की चाटु लीलाएं अपना विशेष महत्त्व रखती हैं।

दर्शन

गौड़ीय आचार्य-गोस्वामियो द्वारा निर्धारित भक्ति-सिद्धात एवं दार्शनिक विचार सांप्रदायिक ब्रजभाषा कवियों की भक्ति के विधान बने, अतः इन कवियों ने पृथक् रूप से सिद्धांत-निरूपण की आवश्यकता अनुभव नही की। इस सप्रदाय के ब्रज-भाषा काव्य में दार्शनिक सिद्धांतों की स्वतंत्र रूप से विस्तृत विवेचना नही की गयी है, फिर भी भक्ति भाव मे दर्शन की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। पूर्व विवेचित भक्ति-सिद्धांतों मे आलोच्य कवियो की भक्ति-दर्शन संबंधी कुछ मान्यताओं का प्रसंगवश उल्लेख हो गया है, यहां ब्रजभाषा काव्य में निरूपित ब्रह्म, जीव, जगत आदि से संबंधित दार्शनिक विचारों की विवेचना की जा रही है।

चैतन्य सप्रदाय मे राधा-कृष्ण की युगलोपासना को महत्त्व प्रदान किया गया है और महाप्रभु चैतन्य को इन युगल के संयुक्त विग्रह (सम्मिलित) के रूप में माना जाता है। इस युगल-स्वरूप उपासना मे 'अचिंत्य भेदाभेद' संबंध निहित है। सांप्रदायिक ब्रजभाषा काव्य में इस दार्शनिक मत की अभिव्यक्ति हुई है। 'अचित्य भेदाभेद' का उल्लेख गौरगणदास जी ने इस प्रकार किया है—

भेदाभेद जाको कहै सोई अचिंताभेद।
गौर रूप निर्देश करि यहि प्रतिपाद्यो वेद।
योग हीन पूरन नहीं करै तौ लक्षन होय।
चिताचित लखाइयै पूरनतम है सोय ।।

ध्येय ध्यान युत धारना मध्य लख जो ईस।
चिताचित विलासि सो पूरनतम जगदीस।[130]

परब्रह्म श्रीकृष्ण : ब्रजभाषा कवियों के इष्ट देव पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण हैं जिनके सगुण और निर्गुण दोनो रूप है। श्री कृष्ण ही परम तत्त्व, परब्रह्म है। इनमें तीनों लोक एवं चौदह भुवन समाविष्ट हैं।[131] सच्चिदानंद स्वरूप कृष्ण सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, विभु, अविनाशी तथा सर्वव्यापी हैं जो भक्तों के कारण सगुण रूप मे अवतार धारण करते है—

अज अविनाशी एक रस व्यापक सब संसार।
ललित लड़ैती भक्त हित धरै सगुण अवतार।।[132]

श्रीकृष्ण समस्त जगत के नियामक है। जगत की सृष्टि, लीला और विनाश के कारण वही हैं, वे सर्वात्मा है।[133] श्रीकृष्ण के निर्गुण रूप को स्वीकार करते हुए भी चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने सगुण रूपधारी, लीलावतारी कृष्ण की आराधना को अपना प्रमुख ध्येय माना है। कृष्ण चैतन्य 'निज कवि' के अनुसार श्रीकृष्ण मायिक प्राकृत गुण-त्रय-सत्व, रज और तम से रहित होने के कारण निर्गुण है और अपनी स्वरूप शक्ति के प्राकृत गुणों से सहित होने के कारण सगुण माने जाते है।[134] मूल रूप में वे अनादि, अनंत व विकारहीन हैं। ऐसे निर्गुण-सगुण ब्रह्म श्रीकृष्ण लीला हेतु ससार मे अवतार धारण करते हैं। ब्रह्म लोक मे, ईश्वर रूप मे, वे ऐश्वर्य से परिपूर्ण होते है परंतु ब्रज मे आकर वे 'विहारी' हो जाते है, अतः ऐश्वर्य को त्यागकर माधुर्य मडित हो जाते है।[135] श्रीकृष्ण को लीलावतारी कहा गया है। वे नित्यधाम-गोलोक में अपने परिकरों के साथ नित्य लीला-विहार करते है, उन लीलाओ को 'अप्रकट लीला' कहा जाता है। वृंदावन मे की जाने वाली लीलाओं को 'प्रकट लीला' कहा जाता है। ये सभी लीलाएं दिव्यातिदिव्य रस से युक्त है।

राधा : आलोच्य कवियों ने राधा के स्वरूप पर स्वतत्र रूप मे विचार नही किया है परतु उनके द्वारा की गयी राधा की वंदना-स्तुतियो मे कुछ ऐसे संकेत मिल जाते हैं जिनसे राधा के स्वरूप का बोध होता है। श्रीराधा परब्रह्म श्रीकृष्ण की शक्तिरूपा हैं। शक्ति शक्तिमान से पृथक् नहीं रह सकती, अतः शक्तिमान श्रीकृष्ण के साथ शक्ति स्वरूपा राधा सदा उसी प्रकार विद्यमान रहती है जैसे सागर के साथ उसकी तरग, चंद्रमा के साथ चंद्रिका तथा सूर्य के साथ प्रभा—

वह लीलाधर है नित ही तुम लीलावती हरि के संग सेवी।
वे परिपूरन देव सदा अरु आप सदा परिपूरन देवी।

× × ×

सागर के संग ही तरंग अनुरूप हौ।
हरि चन्द्र मडल सुचन्द्रिका सरिसु आपु,
वे तो रविमंडल है राधे प्रभा धूप ही।[136]

परम दिव्य प्रभा राधा आनंद रूप कृष्ण की आह्लादिनी शक्ति हैं जो कृष्ण के हृदय मे स्थित प्रेम-रस-निधि से प्रगट हुई है।[137] ये महाभाव स्वरूपा है। श्रीकृष्ण का स्वरूप एवं प्रभाव विद्यमान होने से राधा अंतरंगा शक्ति कही गयी है। इसी अतरंगा शक्ति के विस्तार से लीला पुरुषोत्तम कृष्ण अंतरंग लीला-विलास के द्वारा अपने स्वरूपगत अनिर्वचनीय आनंद की अनुभूति करते है।[138] चैतन्य संप्रदाय मे शक्ति और शक्तिमान मे 'अचित्य भेदाभेद' संबंध माना गया है अर्थात् पूर्णशक्तिमान श्रीकृष्ण एवं उनकी पराशक्ति राधा में परस्पर भेद भी है और अभेद भी। इस भेदाभेद को साम्प्रदायिक ब्रजभाषा कवियों ने भी माना है और अपने काव्य मे इसे अभिव्यक्ति प्रदान की है। भक्त कवियों की दृष्टि से तात्विक रूप से राधा-कृष्ण स्वरूपत. एक है, लीला-रसास्वादन के लिए ही ये दो पृथक् विग्रह धारण किये हुए हैं। राधा और कृष्ण, धूप और छांह, बादल और बिजली, नयन और दृष्टि के समान भिन्न प्रतीत होते हुए भी अभिन्न है—

माई री राधा-वल्लभ वल्लभ राधा, वे इनमें उनमे वे वसत।
घाम छांह इत घन-दामिनी, उत कसौटी लीक ज्यौं लसत।।
दृष्टि-नैन ज्यौं, स्वांस-बैन त्यौं; ऐन-मैन ज्यौं गसत।
'सूरदास मदनमोहन' पिय प्यारी, मै देखे सन्मुख हंसत।।[139]

इस भेदाभेद संबध को कवियों ने अन्य उदाहरणो—सागर और तरंग चद्र और चंद्रिका, सूर्य और किरण तथा दूध और उसके श्वेत रंग के द्वारा स्पष्ट किया है।[140]

चैतन्य महाप्रभु : राधाकृष्ण के सम्मिलित अवतार है—श्री चैतन्य महाप्रभु। ब्रजभाषा कवियों ने अपने संप्रदाय की इस मान्यता का विशेष रूप मे ध्यान रखा है और अधिकांश कवियो ने अपने काव्य मे महाप्रभु के इस संयुक्त (मीलित) रूप की वंदना की है। चैतन्य संप्रदाय की इस दृढ़ मान्यता का भी आलोच्य काव्य में प्रतिपादन हुआ है कि राधा के महाभावपरक प्रेमानद का आस्वादन करने हेतु श्रीकृष्ण स्वयं चैतन्य महाप्रभु के रूप मे अवतरित हुए है जिन्होने राधा भाव व कांति को धारण किया है[141]—

प्रेम प्रदायक कमलपद, श्री गुरु के उरधारि।
गौर चन्द सुमिरण करौ, श्यामा श्याम अवतार।
श्यामा श्याम अवतार धर्यो इक गौर रूप ह्वै।
प्रकटे नन्द कुमार, भाव श्री राधा को लै।
प्रेमास्वादन हितु जो करी लीला रस नायक।
गाऊं गोपी विरह सोई यह प्रेम प्रदायक।।

श्याम तेजमय गौर तन, गौर तेजमय श्याम।
श्याम गौर दोउ एक रस कृष्ण राधिका नाम ॥[142]

'तत्त्व सदर्भ' मे जीव गोस्वामी ने एक श्लोक मे जो यह कथन किया है कि राधा भाव-द्युति-युक्त कृष्ण ही गौर हरि हैं जो अंतःकृष्ण और बहिर्गौर थे[143]— इस मान्यता का पूर्ण प्रभाव कवि माधुरी के निम्न दोहे मे देखा जा सकता है—

गौर नाम अरु गौर तनु, अन्तर कृष्ण स्वरूप।
गौर सावरे दुहुन को, प्रगट एक ही रूप ॥[144]

इस प्रकार कृष्ण राधा और चैतन्य मे तत्त्वगत भेद नहीं है, मात्र रूप का अतर है। अतः यहां भी भेदाभेद संबध सिद्ध होता है।

जीव, माया : जीव को परब्रह्म श्रीकृष्ण की तटस्था शक्ति कहा गया है। अपने विशुद्ध रूप में जीव चेतन स्वरूप, भगवान का चिदंश है। भगवान की ओर उन्मुख होने पर वह उनकी भक्ति मे लगा रहता है परंतु माया का प्रसाद होने पर वह माया-जनित जगत के प्रपचों में फंस जाता है और अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाता है।[145] 'निज' कवि ने माया को त्रिगुणात्मिका—सत्त्व, रज, तम से युक्त—कहा है।[146] इस माया से आच्छादित हो जाने के कारण जीव अहं भाव से परिपूर्ण होकर सासारिक मिथ्या आकर्षणों एवं इद्रिय भोग लिप्सा मे लिप्त हो जाता है। माया के तीनो गुण से युक्त जीव के सामने से परमात्मा का स्वरूप उसी प्रकार अदृश्य हो जाता है। जिस प्रकार बादलों के आवरण से सूर्य दिखायी नहीं देता, इसीलिए वह दुःख पाता है—

घटापट ओट जैसे दृग ते न दीखे रवि,
त्यौ ही परमातमा न सूझै गुन ओट है।
त्रिगुन मे मन लागे होत अति बंधन जू,
दुख मांहि ताहि ते जगत लोट-पोट है।[147]

रामराय जी माया को छलना बताते हुए कहते है कि माया जीव को विविध प्रकार के भ्रमों मे फंसाकर छलती है। वह स्वप्न की भांति भुलावे में डालकर झूठे खेल खिलाती है।[148] मृगतृष्णा की भांति सांसारिक मिथ्या रूप, शोभा एव आकर्षणों में फंसकर जीव कभी शांति प्राप्त नही करता और विवशता में व्याकुल होकर अनेक दुख पाता है।[149] माया के प्रभाव से ही जीव कर्मों के कठिन बंधन मे बधकर, मोह के पास मे जकड़कर जीवन-मृत्यु के चक्र में फंस जाता है। माया का यह प्रभाव तभी समाप्त हो सकता है जब भगवान की कृपा हो—

माया मिली जो जीव तें, मन में बढ़यो हुलास।
कठिन ग्रंथ बंधन कठिन, लगी मोह की पाश ॥
लगी मोह की पाश, कहो यह कैसे छूटे।
भगवत् कृपा जो होय, तबहिं यह माया टूटे ॥

पचतत्त्व की रची ताहि मानत निज काया
बांकेपिय है प्रबल यही भगवत् की माया ।।[१४०]

मायाबद्ध जीव की मुक्ति के लिए कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि ने मन के निरोध को अत्यंत आवश्यक बताया है। 'निरोध' से उनका तात्पर्य विषयासक्ति के परित्याग से है।[१४१] जब जीव सासारिक विषयो से अपने मन की वृत्ति को हटाकर परमात्मा मे केंद्रित कर लेता है तब माया के पास से मुक्त होकर भगवद्-उन्मुख हो जाता है और परम पद को प्राप्त करता है—

जगत के जन जे विसुद्ध चित्त करि बुद्धि,
छनहू मरन समै हरि मैं लगामें हैं।
सब कर्म बंधन ते होई निर्मुक्त जीव,
रवि सौं प्रकाश धारि पर्मपद पावै है।[१४२]

जगत : जीव की ही भांति जगत को परब्रह्म श्रीकृष्ण से उद्भूत माना गया है। सांख्य दर्शन मे प्रकृति को जगत् की सृष्टि का कारण बताया गया है परंतु चैतन्य दर्शन में इसके विपरीत यह मान्यता है कि जड प्रकृति जगत् का उत्पादन एवं निमित्त दोनों कारण नही हो सकती, परम पुरुष श्रीकृष्ण ही जगत् रूप मे अभिव्यक्त होते है अत: वे ही जगत् के कारण है। सांप्रदायिक ब्रजभाषा कवियो ने इसे स्वीकार करते हुए अपनी रचनाओं में श्रीकृष्ण को ही समस्त जगत् का सर्जक, नियामक, पालक एवं विनाशक बताया है। जो कुछ भी इस जगत में है, श्रीकृष्ण से पृथक् नही है, उनके बिना किसी वस्तु का अस्तित्व नही है। समस्त संसार श्रीकृष्ण का ही प्रकाश, रूप एवं अभिव्यक्ति है—

ईश्वर को ईश्वर है वा बिनु कछू न कहू।
नैन श्रौन गत गता गति हूं ते करिको ।।
जो कुछ चुक्यो है होइ होइ रह्यो होईगो जो।
कहा बड़ो छोटो कहा जंगमि थावरि को ।।
उन विन वस्तु एकहू न कहिवे को जोग,
सब ही सरूप परमार्थ रूपी हरि को ।।[१४३]

ससार के समस्त पदार्थों में श्रीकृष्ण व्याप्त हैं। वे स्वयं ही जगत के उपादान कारण हैं और स्वयं मे से ही अपने-आपको विश्व रूप में रचते हैं, पालते है और समेट भी लेते हैं—

अहो गोपिका छनहू मैं न तुमते जुदो,
सबको उपादान कारन तो मैं ही हूं।
ताही मो ते तुम रंच दूर नहीं हौ जू प्यारी,
पटतर पेखो जहां तहां देखो तही हूं ।।

जैसे नभ पौन अग्नि जल मही देहिन मैं
तैसे मन प्रान बुद्धि इन्द्री गुन ग्रही हूं।
आपु मे ही आपु करि आपु उपजाऊ रूप
आपु पारूं आपु मारूं मो विन न कहीं हूं।।[१५४]

ब्रह्म में अनभिव्यक्त रूप से सदा विद्यमान रहते हुए भी प्रगट में जगत को नश्वर एवं सांसारिक वस्तुओं को मिथ्या बताया गया है।

श्रीकृष्ण जब प्राकृत जगत धाम मे अवतरित होते हैं तो उनके साथ उनके नित्य परिकर तथा श्रीधाम भी अवतीर्ण होता है। अतः चैतन्य दर्शन मे नित्य विहारी चिदानंद धन श्रीकृष्ण के धाम—वृंदावन को चिन्मय एवं नित्य कहा गया है। वह प्राकृत जगत् की भांति जड़ नही अपितु चेतन है। ब्रजभाषा कवियों ने भी वृंदावन का वर्णन करते हुए उसे दिव्य एव नित्य बताया है। यह वृंदावन कोई सामान्य वन नहीं है अपितु कोई दिव्य धाम है जहां कृष्ण निवास करते है अतः कृष्ण स्वरूप है—

ब्रज वृंदावन तें नही, आनि दिव्य कोउ धाम।
कृष्ण रूप सम जानिए, तिनको धाम अभिराम।।[१५५]

उस वृंदावन मे ललित, माधुर्य एवं सौदर्य के संपद राधा-कृष्ण नित्य विहार करते है, उनका नित्य मिलन एव अभिसार होता है तथा सखियां तन, मन से उनकी सेवा में सदा तत्पर रहती हैं। वहां मधुर केलि-क्रीड़ा का उज्ज्वल एवं अद्भुत रस सदा प्रवाहित होता है।[१५६]

संदर्भ

१ आदि वाणी—रामराय, पद सं० ९२
२. माधुरी वाणी—'मान माधुरी', पृ० ८३
३ वही।
४. अभिलाष माधुरी—ललित किशोरी, शिक्षा के पद, पद सं० २३९
५. नाम तें नामी मिलै, बिन नाम के नामी को पाइ सकैं नहिं कोई।।
—प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, चतुर्थ विटप, पद सं० १५३
६. वही, पद स० १५३
७. आदि वाणी—रामराय, पद स० ९१
८ गौरांग भूषण मञ्जावली. छं० १३, पृ० ३४
९. श्री किशोरी करुणा कटाक्ष—ललित लड़ैती, 'प्रेम लक्षण', दो० १९०
१०. किशोरी करुणा कटाक्ष—'चेतावनी के दोहे', दो० स० १०६, २५०
११. किशोरीदास की वाणी, पृ० ४
१२ प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, प्रथम विटप, पद २३

१३ बोध बावनी (रामहरि ग्रंथावली) दो० ३३ प० १

१४. प्र० र० बा०, चतुर्थ विटप, पद १५३

१५ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद स० ६७

१६ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ८

१७. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० १

१८. वही, पृ० ६

१६ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० १, २, प्रे० र० वा०—बाकेपिया—प्रथम विटप, पद २, ३, ११ से २०, माधुरी वाणी, पृ० १, २

२० गौराग भूषण मञ्जावली—गौरगणदास, पृ० ५, ६, ७, १०, ३१, गुणमंजरी स्फुट पद, मनोहरदास—स्फुट पद।

२१. (क) गौर चद्र नवद्वीप चद्र लोक चद्र अरु,

राधा भाव चद्र धारि कृष्ण चद्र राजे है।

प्रेम सुधा बरषण करिबे को चद्र महा,

पारषद तारा मास दिव्य चद्र गाजे है।

जग तम नाशिबे को अद्भुत चद्र सदा,

सुरधुनी तट भूमि नृत्यन मे भ्राजे है।

कोटि कोटि अजामिल तारिबे को व्रत जाको,

धारि के सुन्यासि वेश श्री क्षेत्र बिराजे है ॥

—अष्टयाम (वृंदावन चद्र कृत), छं० स० ३

(ख) एवं द्र० किशोरी० वाणी०, पृ० २, प्रे० र० बा० (बाकेपिया) वि० १, पद १, ७

२२ गौरनामरस वपु—कृष्णदास, पृ० ३, ४

२३. भक्ति रस बोधिनी टीका, कवित्त ३३१

२४. अभिलाष माधुरी—'वृंदावन शतक प्रथम'—ललित किशोरी, दो० स० ५०

२५. अनन्य मोदिनी (प्रियादास जी की ग्रथावली), पृ० २२, २३

२६ वृंदावन कै चारि दिस चारि सरोवर दिव्य।

जिनके दरसन परस तैं मजन तैं ह्वै भव्य ॥

रूप ज्ञान प्रेम हि कहत मानसरोवर देखि।

रूप मिलै ज्ञानैं मिलै प्रेम मान लैं पेखि ॥

रूप सरोवर रूप सौ रूपै ही कर देत।

भाल हसन चितवन भरी अवलोकनि सर हेत ॥

× × ×

चार सरोवर न्हाइ कै सखी भइ छबि रूप।

पिय प्यारी के निकट ही लायक भयौ सरूप ॥

—अष्टयाम (वृंदावन चद्र कृत), छ० स० ३०३, ३०४ व ३५६

२७. आदि वाणी—रामराय, पद स० ३

२८ किशोरी करुणा कटाक्ष—ललित लड़ैती, दो० सं० ७, १०; पृ० २३७ तथा किशोरी दास जी की वाणी, पृ० ६

२६ वृंदावन शतक प्रथम (अभिलाप माधुरी), दो० ४२

३० वृंदावन की रेणु सज डोलत औरन देश।
खोवत मानुष तन रतन पावै अत क्लेश॥
—कि० क० क० (ललित लड़ैती), दो० ७, १०. पृ० २३७

३१ वृंदावन शतक प्रथम (अभिलाप माधुरी)—ललित किशोरी, दो० ४६

३२ वही, दो० २४

३३ आदि वाणी, सप्त सोपान—रामराय, पद १२, पृ० ६

३४ प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, वि० २, पृ० ६३। एव द्र० (क) स्मरण मगल—गुण मजरी, पृ० १६, १७ तथा (ख) अष्टयाम—वृंदावनचंद्र, छ० स० ६०८-६१२

३५ दोऊ माते लगनि लगे रग मगे गात।
× × ×
यह सुख निरखत हरषत परस्त्रत।
वल्लभ रसिक सखि नैन सिरात॥
—वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ६७, ६८

३६. शोभन पदावली, पृ० २५, छ० ५०, ५२; एव द्र० स्मरण मंगल—गुणमंजरी, पृ० १७

३७ अष्टयाम, सखी स्वरूप वर्णन, पृ० स० ३४-४०

३८ रूप न सिमटै दृष्टि सौ चतत भावना पाय।
सखी रूप गुरु ध्यान तैं मिलैं जुगल हँसि चाय॥
ऊपर साधिक रूप है भीतर सिद्ध सरूप।
ऐसोइ जो गुरु मिलैं तउ पावै रस रूप॥
—अष्टयाम—वृंदावनचंद्र, छं० सं० ३५६

३६. आदि वाणी, उत्तरार्द्ध, (सप्त सोपान)—रामराय, पद सं० १२, पृ० स० ६, ७ एवं द्र० चन्द्र चौरासी (चन्द्र गोपाल) ह० प्र०, पत्र स० ५, पद सं० १५

४०. प्रभुर गभीर लीला न पारिबूझिते।
बुद्धि प्रवेश नाहि ताते न पारिर्वाणिते।
—चैतन्य चरितामृत, अन्त्यलीला

४१. माधुरी वाणी, अष्टयाम—वृंदावनदास, छ० सं० ६१२; स्मरण मगल भाषा—गुण मजरी; आदि वाणी—रामराय, पद सं० १, ४७, ५४ व गीत गोविंद भाषा—रामराय, मगलाचरण।

४२. चंद्र चौरासी—चन्द्र गोपाल कृत, द० चै० म० ब्र० सा० (मीतल) पृ० १६३ पर उद्धृत पद

४३. चैतन्य चरितामृत (ब्रजभाषा पद्यानुवाद)—सुबलश्याम, मध्यलीला, परिच्छेद २२

४४. वही, पृ० २०२

४५. भक्ति रसामृत सिंधु, १/४/४

४६. प्रेम रस वाटिका, वि० ४, पद ८४

४७ कब हरि कृपा करिहौ सुरति मेरी
और न कउ काटन कौं माह बरी।
× × ×
दम के आरभ ही सतसंगति हेरी।
करैं क्यों गदाधर बिनु करुना तेरी ।।
—गदाधर भट्ट की वाणी, पद २

४८ सुधा सिंधु सिंगार को, अमिबो सरल न होय।
गौर चन्द्र पद कृपा बिन मिसु खेल सम गोय।
—रस कलिका (ललित किशोरी) प्रथम दल—वृंदावन बिलास माधुरी, दो० ३

४९. प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद ७६

५०. हरि भक्ति विलास (गोपाल भट्ट गोस्वामी), प्रथम विलास, श्लोक १४

५१. चै० च० २/८/१०९, ११० व २/२१/१०८—११८

५२. रस कलिका (ललित किशोरी), प्रथम दल, वृंदावन विलास माधुरी, दो० ४

५३. रस सिंगार अनूप है, अगम अतोल अथाह।
बिना पोषिता पुरुष के, थिरै नहि ये प्रवाह ।।
—रस कलिका, प्रथम दल—वृंदावन बिलास माधुरी, दोहा ८

५४ वल्लभ रसिक की वाणी, दोहा १, पृ० ७१

५५ भक्त कवि व्यास जी, वाणी, साखी सं० १, पृ० सं० ४०२

५६. जयति श्री गुरु धरौ।
ध्यान उर सदा जिन कृपा करि भक्त उपदेश दीन्हो।
अचल अनुराग दृढ़ ज्ञान ऐसो दयो श्रीराधारमण पद कमल चीन्हो।
कैसो ही अधम खल जीव कामी कुटिल शरण जो गयो तेहि राखि लीन्हो।
बाकेपिय तरै नहिं जीव बिना गुरुकृपा चतुर मुख द्वार विध विदित कीन्हो।
—प्रे० र० वा०, वि० ३, पद ८

५७. गौरांग भूषण मञ्जावली—गौरगणदास, सवैया ३, पृ० १

५८. अष्टयाम—वृंदावनचंद्र दास, पृ० ३४

५९. वृंदावन धामानुरागावली—गोपाल कवि; अष्टयाम—वृंदावनचंद्र दास, छ० ६, ६१२; चंद्र चौरासी—चंद्रगोपाल; गौराग भूषण मञ्जावली—गौरगणदास पृ० ३४; माधुरी वाणी।

६०. भक्ति सदर्भ—जीव गोस्वामी, पृ० २८०

६१. गदाधर भट्ट की वाणी, पद २६

६२ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद १

६३. श्री राधा माधव पद सुमिर।
अब मन चाहै तो दर-दर न फिर।
मान अपमान मन नहि करहु थिर।
श्री रामराय ब्रज बसहु सुचिर थिर ।।
—आदि वाणी—रामराय, पद ८१

६४ किशोरी० व० प० ७

६५ प्रे० र० वा०, वि० १, पद २८

६६ विवेक मजरी, बाकेपिया, छ० सं० ७

६७ गदाधर भट्ट की वाणी, पद १५

६८ गदाधर भट्ट की वाणी, पद १७

६९ एक बेर राधारमण कहैं प्रीति सो जोय।
पातन कोटिन जन्म को भस्म तुरत ही होय ॥
—प्रेम रस वाटिका—बाकेपिया, वि० ३, पद १

तुलनीय—कृष्णेति मगल नाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते।
भस्मी भवन्ति राजेन्द्र। महापातककोट्य ॥
—विष्णु धर्म भ० र० सि०, पृ० ५६

७० अभिलाष माधुरी, (ललित किशोरी) विनय के पद, पद २०७

७१ वही, पद २०२

७२ किशोरी० वाणी, पृ० १-२

७३. मगल कृष्ण नाम वितरत है, पात्र-अपात्र विचार न थोर।
—आदि वाणी—रामराय, पृ० १

७४. प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद ७४

७५ तज कुसंग मिल हरिभक्तन सो सत्य सग सब दोष मिटावै।
अवगुण गुण ह्वै जात तुरत ही जब हरि भक्तन को सग पावै।
जैसे लोह परसि पारस को तजि कुरूप कचन ह्वै जावै।।

× × ×

सतसग करि हरिभक्तन को हरिचरणन में प्रीति लगावै।
सब जीवन मे हरि को देखे तब पूरण हरि भक्त कहावै ।।

× × ×

अकथ अगाध सन्त की महिमा बाकेपिय कौन विध गावै।
जिन हरि भक्तन के वश ह्वै के पूरण ब्रह्म देह धरि आवै ।।
—प्रेम रस वाटिका, वि० ४, पद ६३

७६. प्रे० र० वा०, वि० ४, पद १५६

७७ श्रवण नामचरितगुणादीनां श्रुतिभवेत् ॥
—भक्ति रसामृत सिधु, १।२।५०

७८. भक्ति सदर्भ, पृ० ३२६

७९. प्रेम रस वाटिका, वि० १, छ० २

८०. अघ संहारिनि अधम उधारिनि,
कलिकाल तारिनी, मधु मथन गुन कथा।
मगल विधायिनी प्रेम रस दायिनी,
भक्ति अनपायिनी होइ जिय सर्वथा ।।

मथि वद गथि ग्रंथ कथि व्यासादि
अजहुं आधुनिक तन कहत है मति जथा।
परमपद सोपान करि गदाधर पान,
आन आलाप तें जात जीवन वृथा॥
—गदाधर भट्ट की वाणी, पद

८१. भक्ति रसामृत सिंधु, १।२।४८
८२. श्री स्मरण मंगल स्तोत्र—बांकेपिया, पृ० १२
८३. माधवदास जी की वाणी, 'जनम करम लीला', पृ० १६
८४. प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद १
८५. सुमिरन करौं श्री शचीनंदन कौं।
नाम लेत ही आनंद उपजै, सुखकारी और दुख कदन कौं॥

× × ×

सुमिरत ही शचीनंदन कौं करम फंद छुटि जाइये।
—किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ४

८६. प्रे० र० वा०, बांकेपिया, पृ० ५४, ५५
८७. गदाधर भट्ट की वाणी, पद २५
८८. गदाधर भट्ट की वाणी, पद २७
८९. तिनके मुख कमल दरस पावन पद रेनु परस,
अधम जन गदाधर से पावैं सनमान॥
—ग० भ० वा०, पद १०

९०. प्रेम रस वाटिका, पद १, पृ० १; पद १६२, पृ० १६५
९१. अभिलाष माधुरी, पद २१६, पृ० १५८
९२. अभिलाष माधुरी, ललित माधुरी का पद, पद सं० २४४
९३ गदाधर भट्ट की वाणी, पद ७३
९४. जय महाराज व्रजराज कुल तिलक,
गोविंद गोपीजनानंद राधारमन।
नंद नृप-गेहिनी गर्भ आकर रतन,
सिष्ट कष्टद धृष्ट दुष्ट दानव दमन॥
बल दलन गर्व पर्वत विदारन,
ब्रज भक्त इच्छा दच्छं गिरिराज धरधीर।
कोटि कंदर्पदर्पापहर लावन्य धन्य,
वृंदावन्य भूषन मधुर।
—गदाधर भट्ट की वाणी, पद १२

९५. नमो नमो जय श्री गोविंद।
आनंद मय ब्रज सरस सरोवर, प्रगटित बिमल नील अरविंद।
—गदाधर भट्ट की वाणी, पद २८

९६ वही प० २६

९७. आदि वाणी, मंगलाचरण, पृ० १

९८ 'दास्य कर्मार्पण तस्य कैंकर्य्यमपि सर्वथा ।।'

—भ० र० सि०, १।२।५२

९९. प्रेम रस वाटिका, पद १३२, पृ० १७५

१०० आदि वाणी, रामराय, दोहा ७

१०१ तव चरणन को करौं आसरो आनि उपाय न मेरो।
बांकेपिय प्रभु मोहि राखिये भलो बुरो हौं तेरो ।।

—प्रे० र० वा०, बांकेपिया, पद १३२, पृ० १७५

१०२ चै० च० २/२२/४५-४७

१०३ प्रेम रस वाटिका, वि० ४, पद १५६

१०४. असत संग को त्यागिबो यहै भक्त आचार।
स्त्री संगी इक असत अरु कृष्ण अभक्त विचार ।।

—चैतन्य चरितामृत (व्रजभाषा), सुबलश्याम, मध्यलीला,
२२वां परिच्छेद, पृ० सं० २००

१०५ तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीय: सदा हरि: ।।

—शिक्षाष्टक श्लोक स० ३

१०६ श्री स्मरण मंगल स्तोत्र—श्री गौरांग शिक्षाष्टक, (व्रजभाषा मे बांकेपिया कृत), पृ० १२, प० ३

१०७ भ० व्यासजी, वाणी, पृ० १९८, प० २७

१०८ ए नर बुरो न कीजिये, काहू को चित लाइ।
रामहरी बोलै भलो राखै सील सुभाइ ।।
संपति विद्या ज्ञान गुन, प्रभुता नृप सुख पूर।
रामहरी चीन्हे नही दया न मन सब धूर।।

—बुद्धि विलास (रामहरि ग्रंथावली), दो० २१३, २१६

१०९ (क) स्मरण मंगल भाषा—दामोदरदास कृत, ह० प्रति (लि० का० स० १८८६), कृ० ज० से० सं०, मथुरा, ग्र० स० ३५६०५२। यह रचना बाबा कृष्णदास द्वारा सं० २००९ में प्रकाशित हुई है।

(ख) स्मरण मंगल भाषा—मधुसूदन गोस्वामी कृत, प्र० बाबा कृष्णदास, गोवर्द्धन।

११०. कृष्णदास कविराज कृत 'गोविंद लीलामृत' (संस्कृत ग्रंथ) का ब्रजभाषा में काव्यानुवाद चैतन्य संप्रदाय के एक कवि शीतलदास जी (उपनाम 'प्रेमसखी') ने किया है जिसका प्रकाशन बाबा कृष्णदास ने स० २०२० में किया है। इन कवि के विषय में पर्याप्त जानकारी नही होने के कारण हमने इन्हें परिशिष्ट में अन्य कवियों की सूची के अंतर्गत सम्मिलित किया है।

१११. स्मरण मंगल स्तोत्र—रूप गोस्वामी एवं गोविंद लीलामृत—कृष्णराज कविराज।

११२. स्मरण मंगल, गुण मंजरी, पृ० ४

११३ रस कलिका ललित किशोरी, दल २, पद ३

११४. प्रेम रस वाटिका, बांकेपिया, पद ३, पृ० २८; एव द्र० अष्टायाम—वृ दावनच पृ० ४२

११५. वधू अंग पट पीत हीं देखा। हांय ससक वक्र मुख पेखा।
बूझि बिसाखा सों यह बात। पीताम्बर कैसे वधू गात?
× × ×
जटिला बचन सुनी सब काना। कठपुतली-वत् भई अजाना।
तब हीं बिसाखा आगे छाई। दारी झटपट बदलत भई।
पुनि जटिला सो बोलि बानी। तुम्हरी दृष्टि क्षीन भई जानी।
कहा पीत पट राधा गात। तुम बिचार बिन भाषत बात।
तब लख नीलाम्बर लज गई। चुप ह्वै निज गृह जान भई।
सखी चतुर तब हंसत भई सब। श्री राधा बाहर आई तब।
—स्मरण मगल, गुणमजरी, पृ० ६

११६. श्री राधारमण पद मजरी गुणमजरी, पृ० ४

११७ चन्द्रगोपाल कृत पद (भक्तभाव संग्रह मे सकलित), प० ६७, पृ० ७०

११८. प्रेम रस वाटिका, प० ६, १०, पृ० ६, ७

११९ प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, पद १०, पृ० २७; एव द्र० अष्टयाम—वृ दावनचंद्र, पृ० ५३

१२०. वन विहरन प्रीतम मिलन सूरज पूजा व्याज।
किये सिंगार सुप्रेम सौ रिझवन मोहन आज।।
चलन कौन विधि महल सौ बाहर आवन देखि।
दीप मालिका सी मनौ रूप द्रपन अवरेखि।।
—अष्टयाम, वृ दावनचद्र, पृ० ५१

१२१. वही, पृ० ५१

१२२. प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद ४२; एव द्र० अष्टयाम—वृंदावनचंद्र, छ० ८११-८१७

१२३. अष्टयाम—वृ दावनचंद्र, छ० ८१७-८२८ एव स्मरण मंगल—गुण मंजरी, पृ० १२

१२४ प्रे० र० वा०, वि० २, पद ४७

१२५. श्री किशोरी करुणा कटाक्ष, 'नित्य संकीर्तन के पद', ललित लडैती, पद स० ७

१२६. स्मरण मगल—गुण मंजरी, पृ० १४, १५, प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद ४८

१२७. प्रेम रस वाटिका, वि० २, पद ६३

१२८. चरन चापत नाना चाहे सौं रस मजरी जुग सोभा देखि गुन मजरी लोभात है।
उत्सव मंजरी बीता बजावत सरसात रति मंजरी जु ललि बलैया को जात है।
लवग मजरी प्रिया प्रीतम के अग परि बदन बचाति मिठी मिठी कहि बात है।
काव्य कला मे निपुन श्री रूप मजरी जू है कला बरसावै सोभा कहि नहि जात है।।
इहि विधि सेवा करैं अपनी स्वामिनी जानि।
ललितादिक सब सखिन सग निज निज भाग्य जु मानि।।

लता छिद्रनि सौं देखैं नाना युगल विलास।
पौढ़ि रहैं सब जाय कैं मन में बहु हुलास।।
—अष्टयाम—वृंदावनचंद्र, छं० सं० ६१२, ६१३, पृ० ६१

१२९. चंद्रगोपाल कृत पद (गौरांग पदावली में संकलित, पद ६२, पृ० २८)

१३०. गौरांग भूषण मंजावली, पृ० १६

१३१. कृष्ण-पाद-नख मणि प्रभा, ब्रह्म ज्योति दर्शात।
तीन लोक चौदह भुवन, कण कण माहिं समात।।
—पथिक मराल—बाकेपिया, छं० १५, पृ० ४

१३२. किशोरी करुणा कटाक्ष 'चेतावनी'—ललित लड़ैती, दोहा ८५

१३३ उद्धव चरित्र—गो० कृष्ण चैतन्य 'निज कवि', पृ० २०७

१३४. माया के सतोगुन रजोगुन तमोगुन जे,
भक्त हेत निर्गुण है गुन में पुहत् है।
—उद्धव चरित, पृ० ६५ व ६६

१३५ पथिक मराल, छं० १५, पृ० ४

१३६. उद्धव चरित्र—कृष्ण चैतन्य 'निज कवि', पृ० १४८

१३७. 'कृष्ण हृदय रस निधि सो प्रघटी आनद की आल्हादिनि गाई।'
—आदि वाणी, रामराय, पद ७६ तथा द्र० पद ५६

१३८. विवेक मंजरी—बाकेपिया, पृ० ३

१३९. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद २६

१४०. उद्धव चरित्र—'निज कवि', पृ० १५१ व ४६७

१४१. किशोरी० वाणी, पृ० १, २, अष्टयाम, पृ० १, प्रेमरस-वाटिका—वि० १ दोहा सं० २, गौरांग भूषण मंजावली, पृ० ४, गौर गुणावली (ह० प्रति), मनोहरदास, पत्र सं० २

१४२ प्रेमोद्दीपनी, बाकेपिया, प्रारंभिक पद, पृ० १

१४३. "अन्त. कृष्ण बहिर्गौर दर्शितागादिवैभवम्।
कलौ संकीर्त्तनाद्यैः स्म· कृष्णचैतन्यमाश्रिता।।"—तत्त्व संदर्भ, श्लोक सं० २

१४४ माधुरी वाणी—'उत्कंठा माधुरी', दोहा सं० २, पृ० १

१४५ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ७ तथा उद्धव चरित्र, पृ० २०८

१४६ उद्धव चरित्र, पृ० ४१६

१४७ उद्धव चरित्र, पृ० ४२०

१४८ आदि वाणी, पद ८७

१४९ यह शोभा संसार की मृगतृष्णा की भांति।
ललित लड़ैती देख जल कबूं न पावैं शांति।
—किशोरी करुणा कटाक्ष, 'चेतावनी', ललित लड़ैती, दो० १४२
तथा द्र० आदि वाणी, रामराय, पद ७६

१५० विवेक मंजरी, बाकेपिया, छं० १४, पृ० ४

१५१ उद्धव चरित्र, पृ० २०९, २१०

१५२ वही पृ० ६३

१५३. वही, पृ० ६५

१५४. उद्धव चरित्र, पृ० २०७

१५५ विवेक मजरी, पृ० ३, एव द्रष्टव्य—

व्रज नाम व्यापक सुव्यापि प्रेय ब्रह्म जैसे सत् चित आनद माया त्रिगुन सो न्यारो है,
जाके बन उपबन ग्राम नदी पर्वत सु हरि रूप रचै हरि खेलै खेल प्यारो है।
रत्नमय भूमि कहै अमृत मै जल जाको मारुत सुगधन सो भरयौ हरियारो है,
ब्रह्मा सिव नारद मुनिन्द्र कहै वेद चारयो खेद मिटि जाइ जाके सुमरे उजियारो है॥

—अष्टयाम, वृंदावनचद्र, पृ० ३

१५६ रस कलिका, दल १—'वृंदावन विलास माधुरी', ललित किशोरी, छ० २०

चौथा अध्याय

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भाव-चित्रण

कृष्ण-भक्त कवियों की भक्ति विभिन्न भावों से ओत-प्रोत रही है। उनके काव्य में मानव-मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रवृत्तियों की अभिव्यंजना हुई है। भगवान से प्रीति किसी भी प्रकार से की जा सकती है। भगवद्-प्रीति के ये चार प्रमुख भाव हैं—दास्य, वात्सल्य, सख्य एवं माधुर्य भाव। इन्हें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ माना गया है।[1] चैतन्य संप्रदाय के आचार्य-गोस्वामियों का अनुसरण करते हुए ब्रजभाषी कवि भी माधुर्योपासक भक्त-कवि हैं। चैतन्य प्रवर्तित माधुर्य-भक्ति की अभिव्यंजना इनकी रचनाओं में उपलब्ध है। इन कवियों का मन अपने इष्ट की मधुर लीलाओं-क्रीडाओं के कथन-गायन में अधिक रमा है। अतः इनकी काव्य-रचनाओं में भी मधुर भाव संपन्न विभिन्न लीलाओं का सरस वर्णन अधिक मिलता है, अन्य भाव-वात्सल्य, दास्य एवं सख्य के लिए अपेक्षाकृत कम अवकाश रहा है, किंतु उसमें भी सुंदर चित्रण हुआ है।

माधुर्य भाव

लोक पक्ष एवं काव्य शास्त्र में, जिसे शृंगार कहा जाता है, आध्यात्मिक धरातल पर भक्ति-शास्त्र की दृष्टि से वही माधुर्य भाव कहलाता है। लौकिक स्त्री-पुरुष के प्रेम में निहित विशिष्ट आकर्षण को भक्तों ने ईश्वर के साथ स्थापित कर, लौकिक प्रेम को अलौकिकता एवं उदारता प्रदान की है। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में ईश्वरोन्मुख इस प्रेम भाव अर्थात् मधुर भाव को सर्वोपरि स्थान मिला है। माधुर्य मंडित राधा-कृष्ण के रूप-सौंदर्य एवं उनकी मधुर लीलाओं से संबद्ध सरस पदावलियों की रचना की गयी है।

माधुर्योपासक इन भक्त कवियों ने अपने उपास्य-युगल राधा-कृष्ण की रूप-माधुरी का अत्यंत मनोरम चित्रण किया है। राधा-कृष्ण के अतिरिक्त इन्होंने अपने उपास्य-देव चैतन्य महाप्रभु के रूप-सौंदर्य को भी काव्य में अभिव्यक्ति प्रदान की है।

युगल छवि

राधा-कृष्ण मधुर रस के सागर है। इनकी अपूर्व रूप-माधुरी के रसास्वादन के लिए भक्तजन सदैव लालायित रहते है। तत्वतः राधा-कृष्ण एक हैं, लीला-रस के आस्वादन हेतु एवं रसिक भक्त-जनों को उसका आस्वादन कराने के लिए ही वे दो भिन्न स्वरूप-विग्रह धारण किये हुए हैं।[२]

राधा और कृष्ण का रूप-सौंदर्य वैसे ही अनुपम है, फिर दोनो का रूप परस्पर सयुक्त होकर तो उनकी छवि द्विगुणित हो जाती है। उस युगल-छवि के दर्शन द्वारा भक्त-जनों के हृदय का दुख-दर्द दूर हो जाता है—

> मोहन लाल के सग ललना ज्यौ सोहै,
> जैसे तरुण तमाल के ढिग फूल सौनो जरद कौ।
> बदन काति अनूप भाति नहि समात, नीलाम्बर—
> गगन मे जैसौ प्रगट्यौ है ससि सरद कौ।।
> मुक्ता आभूषण प्रतिबिम्बित, अंग-अंग,
> चूनौ मिलि रग दूनौ होत जैसे हरद कौ।
> 'सूरदास मदनमोहन' दोउन की छवि बढ़ी,
> निरखि आनन मिटत दुख मन दरद कौ।।[३]

दपत्ति राधा-कृष्ण की छवि अत्यंत मनोरम है। उनके अंग-प्रत्यगों से अनुपम द्युति प्रकाशित हो रही है जो दिनकर की कांति से भी दीप्त है। वह द्युति ऐसी प्रतीत होती है—मानो जल मे दीपों की पंक्तियां प्रतिबिबित हो रही हों। राधा-कृष्ण दोनों के रोम-रोम से माधुर्य की सरस धारा उमगकर प्रवाहित हो रही है।[४]

युगल कृष्ण-राधा के रूप-सौंदर्य की उपमा रवि-शशि से देते हुए, कुंज रूपी नभ में रवि-शशि के साथ उदय द्वारा इस अद्भुत कौतुक का सृजन ललित किशोरी जी ने निम्न पद मे अत्यंत मनोहर रूप से किया है—

> अद्भुत कौतुक आज भयौ री।
> विलसत मेलि कपोल मुदित मन सेज सिंधु मंह चद चकोरी।
> मृदु मुसक्यान पान अधरामृत छलकत छवी सावरी गोरी।
> ललित किशोरी उदै अनुपम कुज गगन रवि ससि की जोरी।[५]

इस सुंदर युगल-रूप की सरस माधुरी का पान भला कौन नही करना चाहेगा?

रसिक भक्त-जन तो सदैव इस रूप-माधुर्य के रसार्णव में आकंठ निमग्न रहने की अभिलाषा करते हैं। तभी तो भक्त-कवि वल्लभ रसिक के रूप-पिपासु नेत्र केवल युगल-रूप से ही नाता जोड़कर, मस्त होकर इतराते रहते हैं—

हम तो जुगल रूप रस माते नातें ही के माने।
देही नाते नेक न मानें ह्याते है अलसानें।
श्याम सनेही हिये सुहाते नातें तिन सों ठानैं।
वल्लभ रसिक फिरे इतरातें चितराते उमदाने।[६]

श्रीकृष्ण का रूप-माधुर्य

श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं का गान करने वाले सभी भक्त-कवि उनके माधुर्य-मंडित रूप-सौंदर्य से अत्यधिक मुग्ध हुए हैं। अतः इन कवियों ने कृष्ण की विभिन्न लीलाओं के साथ ही साथ उनकी प्रतिक्षण अभिनव, आकर्षक एवं मनोहर छवि का सुंदर अंकन किया है। इस सरस अंकन में कवि-हृदय जनित सुंदर कल्पनाओं की उद्भावना हुई है।

कृष्ण का कैशोर्य रूप भक्त-कवियों के लिए विशिष्ट रूप से आकर्षक रहा है। अपने इस आकर्षण को काव्य में अभिव्यक्ति प्रदान कर कभी तो ये स्वयं उनके रूप-वर्णन द्वारा मुग्ध हो लेते हैं और कभी रूपासक्त गोपियों की मनोदशा को चित्रित करके आनंद की अनुभूति करते हैं।

रसिक शिरोमणि कृष्ण आनंद, रूप-माधुर्य एवं गुणों के निधान हैं। वे रूप, गुण, शील और सुघरता की अवधि हैं—

रूप अवधि गुन अवधि अवधि सील सुघराई।
विधिना इन उपजाई जियों कैसे कै माई॥[७]

श्रीकृष्ण का अंग-प्रत्यंग माधुर्य की तरंगों से सुशोभित है। उनका पीत-वर्ण, वस्त्र एवं आभूषणों से सुसज्जित रूप अत्यंत आकर्षक है। उस छवि को निरखकर पलकें भी अपनी स्वाभाविक गति को भूल जाती हैं। उनकी कुंडल-छवि के समक्ष सूर्य-प्रभा भी निंदित होती है एवं उनकी मस्त चाल से हाथी का गर्व भी चूर हो जाता है।[८]

कृष्ण के रूप के प्रति अत्यधिक आसक्त एक गोपी उस सौंदर्यानुभूति को कह पाने में असमर्थ है, उसे तो केवल उसका हृदय ही अनुभव कर सकता है—

उर वनमाल पीतांबर कटि सोहै,
सुरंग लटपटे पेचन चीरा।
स्याम गात किये चंदन खौर और,
ठाढ़े पौर पग पामरी कर मुख बीरा॥

गज मोतिन लर वर है ग्रीवा सीमा रची
मानो रूप की, ता मधि जगमगात द्युति हीरा।
'सूरदास मदनमोहन' मोही निरखि, बिबस—
भई, हौ ही जानौ कै जानै मो जियरा ॥[9]

कृष्ण का रूप-सौदर्य अनेकानेक सुदर प्रतिमानों की कल्पना द्वारा सरस रूप मे वर्णित किया गया है। उनके मोहक रूप की शोभा राधा एव गोपियो के हृदय मे आकर्षण उत्पन्न कर आनद का संचार करती है। कृष्ण के मुख रूपी कमल सरोवर मे कलहसिका वशी सुशोभित है। पवन के स्पर्श से इधर-उधर विकीर्ण होते अलकों की शोभा, भक्त कवि गदाधर भट्ट को, ऐसी प्रतीत होती है—मानो अलिगणो मे रस-पान करते-करते कलह-सी मच गयी हो। उनके ललित लोल-कपोलों पर मकराकार कुडलों की छवि कुशल नट द्वारा नचायी जा रही युगल शिशु-सौदामिनी के समान लक्षित होती है। काली भृकुटियो के मध्य भाल पर कुमकुम-बिंदु की काति ऐसी है मानो श्याम वर्ण मेघ-रेखाओ के ऊपर अभी-अभी चंद्रमा उदित हुआ हो। ऐसी अमित रूप-राशि के सौदर्य से भक्त कवि इतने विमुग्ध है कि उनका मन सदा उसके माधुर्य-रस के पान मे ही निमग्न रहता है।[10]

कृष्ण के अग-प्रत्यगो की उपमा मस्त हाथी के विभिन्न अवयवों से देते हुए, निम्न पद मे कवि ने, उनकी रूप शोभा का सुदर वर्णन सागरूपक द्वारा किया है—

मद गजराज कीसी चाल।
बार भुजदंड सुड की सोभा हरि लीनी नदलाल।
चूरन कच कुचित अनंग अकुस ले लटकत भाल।
चौर चारु अवतंस मचरी मद कन श्रम जल जाल ॥
गंध अंध आवत अलिघेरे गुजत मंजु मराल।
मोर पंख फरहरत बात बस जनु ढलकति है ढाल ॥
घनन घनन घंटिका रटित कटि सुदर सुखद सुताल।
खनन खनन नूपुर शृंखल से बाजत लजत मराल ॥
युवती हृदै सरस सरसी मै खेले है चिरकाल।[11]

× × ×

नख-शिख-रूप चित्रण : कृष्ण के रूप-माधुर्य के अंतर्गत उनके नख-शिख-रूप सौदर्य का चित्रण भी कवियों ने किया है जिनमें ललित किशोरी एवं ललित माधुरी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

ललित किशोरी कृत 'रस-कलिका' मे जहा कृष्ण की विभिन्न मधुर-लीलाओं का अत्यंत सरस एवं विस्तृत निरूपण हुआ है, वही प्राय: प्रत्येक लीला मे उनके रूप-सौदर्य संबधी अनेकानेक सुदर पदो की रचना भी की गयी है। इन्ही के अतर्गत कृष्ण के नख-शिख रूप-सौंदर्य का चित्रण किया गया है। 'रस-कलिका' मे ही

ललित माधुरी के भी पद सम्मिलित है जिनमे कृष्ण के नख-शिख सौदर्य सबंधी पद प्राप्त होते है। इस सबंध मे ललित माधुरी कृत एक सुदर एवं लंबे पद के कुछ अश यहां द्रष्टव्य हैं—

निरखौ वर श्याम सुन्दर अनुपम सुघराई।
नीलक मनि निकर सहस श्यामला सुहाई।
अलकें अलबेलि भान लटकि मुकुट राजैं।
निकट निकट भृकुटि विकट पेच पाग छाजैं।
श्रवन कुडल झलक मलक कपुलन लौं हलकैं।
मानहुं ससि बृंद बिंब जमुना मे झलकैं।
भृकुटि धनुष निमख बान अखिया अनियारी।
कुटिल कोर पैनी मनु बूदी की कटारी।
दशनावलि मुक्ताहल उडगन की पांती।
मधुर मधुर अधर अरुन बिंवाफल भाती।
× × ×
पीत वसन फुहरन लखि दामिनी लजाई।
किकनि झनकार सुनत हसी सकुचाई।
× × ×
ललित माधुरी है चंद चौथि को कन्हाई।
चितवत चितवत कलक कुल को लगि जाई।[12]

राधा का रूप-माधुर्य

रसिक शिरोमणि कृष्ण, राधा के जिस अतुल रूप-सौदर्य से अत्यधिक मुग्ध है, वह रूप भक्त-कवियो के लिए चरम आराध्य है व उनके मन को भी मोहित करता रहा है और इसीलिए इनकी चित्तवृत्ति कृष्ण के रूप-वर्णन से भी अधिक उनकी प्राण-वल्लभा राधा के रूप-माधुर्य का चित्रण करने मे रमी है। प्रायः सभी कवियों ने राधा के रूप-सौदर्य सबधी पदों की रचना की है।

रूप, गुण आदि सभी दृष्टियों से सर्वांग सुदरी राधा के अनुपम रूप की समता रति, शचि, कमला आदि देव-पत्नियां भी नही कर सकती। उनके रूप की द्युति वैसे ही अनुपम है फिर प्रियतम कृष्ण के साथ मिलकर तो वह और भी अधिक प्रदीप्त हो जाती है—

कुज की महीपति किशोरी पति संग मिलि
दीपनि की दीपति सों मानो जु दीवारी हैं।
दीपनि की दीपति हूं दीप दीप दीपतिन
दीपति के पारहूं अपार दुति धारी हैं।

वल्लभ रसिक सरसुती पति सतीपति
सचीपति गोपति के चखचौंध पारी है।
जाकी एक दीपति सो दीपनि में,
दीपति सिरीपति बिकुंठ हू की लीपति उज्यारी है ।।[13]

राधा के रूप लावण्य से अन्य तो रीझ ही जाते है परतु दर्पण मे अपने ही रूप का प्रतिबिंब निहारकर वह स्वय भी विभोर हो उठती है। सूरदास मदनमोहन के निम्न पद मे रूप-विमुग्धा राधा का भावपूर्ण चित्रण हुआ है—

स्याम जू अपनो रूप देख-देख रीझि-
रीझि नेकहू दर्पन दूरि न करत।
अपनी छवि जु निहारति, तन-मन को वारत—
प्रेम विवस भई पायन परत ।।
कबहू स्याम की सकुचि मानि जिय यह—
अनुमानत, यासौं जो प्रीति करत इति उर डरत ।।
'सूरदास मदनमोहन' पाछै दुरि—
देखत दृष्टि न इत उत टरत ।।[14]

राधा का रूप तो सुंदर है ही, स्वभाव एवं गुण की दृष्टि से भी वह सौंदर्य अनुपम है। निम्न पद मे गदाधर भट्ट ने कृष्ण-हेतु राधा के गुणों का वर्णन करते हुए उनके स्वभाव एवं रूप का सुंदर चित्रण किया है—

जयति श्री राधिके सकल सुख साधिके,
तरुनि-मनि नित्य नवतन किसोरी।
कृष्ण तनु नील-घन रूप की चातकी,
कृष्ण-मुख हिम-किरन की चकोरी।
कृष्ण-दृग भृंग विश्राम हित पद्मिनी,
कृष्ण-दृग मृगज बन्धन सुडोरी।
कृष्ण-अनुराग मकरंद की मधुकरी,
कृष्ण-गुन गान रस-सिंधु बोरी।[15]

राधा के अद्भुत रूप की रीति भी अद्भुत कही गयी है। कृष्ण के स्यामल रंग मे रगकर भी राधा गौर वर्ण की है। यह आश्चर्य न कही सुना गया है और न देखा गया कि चौसठ कला मे प्रवीण होते हुए भी राधिका भोली है।[16]

अपने रूप के समान राधा का प्रेम भी अनुपम एवं अगाध है। उनके अंग-प्रत्यंग से मानो प्रेम की वर्षा होती है। वह रसिक-शिरोमणि कृष्ण के अपार प्रेम-रस-निधि से निकली हुई आह्लादमयी राधा आनद, प्रेम एवं सुख-प्रदायिनी है।[17]

राधा का रूप-माधुर्य कृष्ण को अत्यधिक मोहित कर देता है वे उसकी छवि के जाल मे भौरे के सदृश फस जाते हैं और उसकी रूप-माधुरी का पान करके

अत्यंत आनंदित होते हैं। उस अति अनुपम गुण, रूप माधुर्य पर वे अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देते है।[15] वल्लभ रसिक के निम्न पद मे राधा की अंग-छवि विस्मय-विमुग्ध कृष्ण रात और दिन का भेद भी भूल जाते हैं—

> उरज उतंग अति भरति भरे से अंग,
> अधर सुरंग सो रंगी सी मति जाति है।
> ऊंची गुही वैंणी सों तननि भौंह भाइ भरी,
> आइ भरी छवि हंसि लसि इतराति हैं।
> वल्लभ रसिक दोऊ सनमुख मुख सनें,
> चकित थकित कित द्योस कितराति है।
> नैननि सिहानि ललचानि मुसक्यानि,
> तरसानि सरसानि आनि आनि दरसाति हैं।[19]

नख-शिख रूप-सौंदर्य : राधा का रूप वर्णन करते हुए कवियों ने उनके नख-शिख रूप सौंदर्य का निरूपण भी किया है। इस संबंध मे ललित किशोरी, ललित माधुरी, शोभन गोस्वामी, गदाधर भट्ट, सूरदास मदनमोहन व हरिराम व्यास के पद विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय हे।[20] शोभन गोस्वामी ने रीतिकालीन कवियो के समान अलकृत शैली का प्रयोग करते हुए विभिन्न उपमाओं द्वारा राधा के नख-शिख रूप का विस्तृत एव अत्यत सुदर वर्णन किया है। राधा के रूप-चित्रण मे व्यास जी की शैली भी इसी प्रकार श्रृंगार पद्धति पर अलकृत है।

नख-शिख वर्णन में राधा के सभी अगों-प्रत्यंगों का सुदरता से चित्रण किया गया है। सिर का सौंदर्य-निरूपण करते हुए वैंनी, जूड़ी, माग, केश, पाटी, लट, मुख के अंतर्गत भाल, भृकुटि, बरूनी, नेत्र, तिल, नेत्र-तारा—इसी प्रकार सभी अगो एव उनके प्रत्यंगो का वर्णन मिलता है। यहा तक कि मुख के साथ हास्य, नेत्र के साथ कटाक्ष आदि विभिन्न भाव-भंगिमाओं की भी व्यंजना की गयी है। विस्तार-भय से उन सभी का विस्तृत विवेचन करना यहां सभव नही है, सक्षेप में इनकी सौंदर्यानुभूति पर प्रकाश डाला जा रहा है।

नख-शिख वर्णन के अंतर्गत नेत्रों के सौंदर्य ने सभी कवियों को सबसे अधिक आकर्षित किया है, इसीलिए सर्वाधिक पद नेत्र-सौंदर्य पर रखे गये है। नेत्र-सौंदर्य के परंपरागत उपमान-मृग, मीन, खजन आदि राधा के नेत्र-सौंदर्य के समक्ष पराजित हो गये हैं। राधा क कजरारे, अनियारे, मतवारे, अरुनारे एवं दुलारे-प्यारे नेत्रो की शोभा का सुंदर अंकन शोभन गोस्वामी ने प्रस्तुत पद में किया है—

> वारे कजरारे काम कारी सौ सुधारे प्यारे,
> अति अनियारे तेग वरछी की धार सौ।
> पड़े वाल कारे तिनें देख चौंक वारे भारे।
> अति ही दुलारे प्राण प्यारे के विचार सौ।

मद मतवारे झूम रहे अरुनारे मोह
लायक हू सारे खिले फूल जो अनार सा।
कहा मृग मीन कारे खजन विचारे हारे,
शोभन भये हैं नैन ऐसे दिन चार सों ॥[21]

राधा के नेत्रो के तीक्ष्ण कटाक्ष की काम-वार से कृष्ण का हृदय बिंध जाता है और वे उन पर न्योछावर हो जाते है। अजन-रंजित मद-मस्त, चारु-चचल, सलोने नेत्रो की शोभा रूपी सुधा का पान करते-करते श्यामसुदर अघाते नही हैं।

व्यास जी ने अनेक पदों मे नेत्रों की सुदरता, चंचलता, व विशालता के वर्णन के साथ नेत्रो के आकर्षण और मोहक प्रभाव की भी सुदर व्यजना की है। राधा के मुख-सौंदर्य के निरूपण में उनका मृदुहास दंतछवि कपोल-आभा, गौरवर्ण की उज्ज्वल काति को भी व्यक्त किया गया है।[22] इनमे विभिन्न उपमाओ, रूपको और उत्प्रेक्षाओं के शृंखलाबद्ध प्रयोग द्वारा सौंदर्य के अतर्गत चमत्कार की सृष्टि की गयी है। सांगरूपक द्वारा निम्न पद मे राधा के चचल क्रीड़ाशील नेत्रो का सुदर चित्र द्रष्टव्य है—

नैन खग उड़िबे को अकुलात।
उरजन डर बिछुरे दुख मानत, पल पिंजरा न समात ॥
घूघट विटप छाह बिनु बिहरत, रविकर-कुलहि डरात।
रूप अनूप चुनौ, चुनि निकट, अधर सर देखि सिरात ॥
धीर न धरत, पीर कहि सकत न, काम बधिक की घात।
'व्यास' स्वामिनी सुनि करुना हंसि, पिय के उर लपटात ॥[23]

कवि व्यास ने एक पद मे केवल उपमानो के उल्लेख द्वारा राधा के नख-शिख रूप सौदर्य को चित्रित किया है।[24]

राधा के नेत्रो का वर्णन करते हुए शोभन गोस्वामी ने नेत्र-तारे, कटाक्ष, नेत्र-तिल वरुनी का भी सुंदर चित्रण किया है। इन्होने राधा के सभी अंग-प्रत्यंगों का वर्णन विभिन्न उत्प्रेक्षाओं के प्रयोग द्वारा अत्यत मनोरम रूप से किया है। चिबुक के रूप-सौदर्य को अभिव्यक्त करने वाला पद द्रष्टव्य है—

कैधौं चारु चंद्रक में नीलम प्रकाश कैधौ,
छवि हू की रास मे बिलास रतिपति को।
कैधौं अरबिंद मे सुहात है मलिंद कैधौं,
सविता सुता की बिंदु इंदु मे लसति है।
शोभन भनत कैधौं कंचन की भूमि माझ,
कैधौं असित बरण मन हरन सजत है।
कैधौ ये जमुना ही मे भयो तम संकुरित,
अंकुरित कैधौ तिल चिबुक दीपति है।[25]

राधा के केश-सौंदर्य-निरूपण में भी कवि ने अनेकानेक सुदर उपमाएं प्रयुक्त की है। मृदुल मृणाल के तार के समान, शिरीष एवं शिदार के समान कोमल केश है। जघा तक लबे काले लहराते केशों का सौंदर्य नाग को भी लज्जित करता हे। सुदर नेत्रो के ऊपर लवंग लता-सी सुंदर भृकुटियां ऐसी प्रतीत होती है—मानो कमल के विकास का आभास पाकर मधुपो की पक्तियां मद-मस्त होकर शोभित हो रही हो। वरुनियों की सुषमा का वर्णन करते हुए अनेक सुंदर, मृदुल एव नवीन उपमानो का सार्थक प्रयोग हुआ है—

> कैधौं रूप सरकी सु कोमल मृदुल दूब,
> खूब छवि देत हेत प्रेम सौ मुरसी।
> कैधौं नेह अंबुधि के युगल किनार माझ,
> कोमल सिवार तार बाड सजी वरसी।
> सोभन अनत कैधौं पंकज सु कोरक मे,
> अजन किनार कैधौ शोभा आप दरसी।
> कैधौं पिकवैनी के अनीले युग लोचनन,
> वरुनी लम्ति नित भान मोद करसी॥[26]

नेत्र-तारे की उपमा नेत्र-छवि-रूपी रस सरोवर में घूमते दो मधुप एवं तैरती मीन युगल से दी गयी है। नासिका हेममय गिरि की कदरा के समान सुदर है। मुख के अंतर्गत दंत-पक्ति ऐसी शोभित है—मानो अरविंद में जड़ी हुई सुदर कुद की कली है अथवा चद्रमा मे उड़गन की पंक्ति शोभित हो रही हो। कंचन-भूमि एव कदली के पात के सदृश पीठ है, कचन लता-सी सुंदर मृणाल-नाल के समान राधा की भुजाएं है। उदर एवं नाभि की उपमा क्रमशः पीपल के पत्ते एवं गिरि के अंतर्गत बने हुए अपार गह्वर से दी गयी है। जंघा का रूप ऐसा प्रतीत होता है -मानो अनुपम रूप-मंदिर के ये सुंदर थंभ है जिनके मूल स्थान के रूप मे नितब शोभित है। नितब की आकृति रथ-चक्र के सदृश है। इसी प्रकार राधा के सभी अग-प्रत्यगो की अनेकानेक सुंदर एवं सार्थक उपमाए शोभन गोस्वामी ने प्रयुक्त की हैं।[27]

राधा के नख-शिख सौंदर्य संबंधी एक लबे पद की रचना गदाधर भट्ट ने की है जिसके कुछ अंश यहा प्रस्तुत हैं—

> लाडिली गिरधरन प्रिया पिय नैंननि आनंद देति री।
> × × × ×
> कनक दंड केसरि को टीको लटकति लट भलि भांति री।
> मानहु सुभग सुहाग भाग की विजै धुजा फहराति री॥
> × × × ×
> हसन लसन अधरन अरुनाई अति छवि बढ़ी अपार री।
> मनहु रसाल मृदुल पल्लव पर बगरायो घनसार री

रचि अवतस रसाल मजरी फबी कपोल सुजात री।
मानहु मैन मूर बैठ्यौ करि हरि मन मृग की घात री ॥
× × × ×
अरुण चरण पंकज नख दीपति जावक चित्र विचित्र री।
फूली सांझ माझ मानौ जे झलकत विमल नक्षत्र री ॥[28]

सूरदास मदनमोहन ने भी एक लंबे पद में राधा के नख-शिख रूप-सौंदर्य को सरसता से अभिव्यक्त किया है।[29]

चैतन्य महाप्रभु का रूप-सौंदर्य

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में इष्ट-देव चैतन्य महाप्रभु की रूप-माधुरी का सरस चित्रण हुआ है। आनंद, प्रेम एवं केलि रसिक गौर हरि-चैतन्य के रूप लावण्य की छवि का अंकन गौरगणदास के निम्न पद में सुंदरता से हुआ है—

प्रेम पान छक छकन मत्त वपु लोक व्यक्त कोई गौर हरी।
चपला गति चंद्र से अभी झर लावन्य छवी कोई गौर हरी ॥
रस सिंधु सरस ज्यों मीन रमै त्यौं केलि रसिक कोई गौर हरी।
आनंद तरंग बस उमग उमग नव भाव वृद्धि कोई गौर हरी ॥[30]

गौरगणदास ने अपनी रचना में 'मांझ' का प्रयोग किया है जिसमें संस्कृत निष्ठ भाषा की क्लिष्टता होते हुए भी सरसता विद्यमान है। ऐसे ही कुछ 'माझ' में इन्होंने गौरांग महाप्रभु के रूप एवं शृंगार का चित्रण किया है।

गौराग चैतन्य के प्रेम-मग्न रूप-सौंदर्य ने कवियों को सर्वाधिक आकृष्ट किया है।[31] उनका मधुर प्रेम-विभोर रूप स्वर्णिम आभा व अद्भुत शोभा से युक्त है—

गोपि अनुराग सुहाग रंग सों पगे श्याम,
लग्यो अरुणाई श्यामता सों गौर गात है।
तपत कनक वर्ण करे निज संकीर्तन,
अग झकोरत महा प्रेम झरलात है।
कंज मुख कंज गात भाव सुधा झर्यो जात,
भक्त-भ्रमण पान करत ह्वै शांत है।
ब्रज सरोवर अरु नदिया सागर माझ,
कोटि चंद्रमा सों भ्राजैं राजैं राधाकात है।[32]

होली खेलते हुए गौर-गोपाल-चैतन्य की नख-शिख छवि का निरूपण गदाधर भट्ट ने एक लंबे पद में किया है। उसके कुछ अंश प्रस्तुत हैं—

खेलत फाग रंग रह्यो सजनी नागर गौर गोपाल।
जूट लटक छदक चटकारे शिर घुंघरारे बार ॥
ता पर माल मालती मधुकर मधुकरि करत गुजार।
अलकन झलक तिलक ललकत चमकत श्रुति कुडल युगगंड ॥

अमल कमल लोहित लोयन घन बरखत धार अखंड
भौह नटन नासिका निकाई बंधु अधर सुरंग ।।
× × ×
कटि केहरि पहिरे पट झीनों पटुका बांधि अमेठ।
चंदन चरचि ओढि उपरैना दरसत सरस अंगेठ ।।
× × ×
चलि पैंजनि ध्वनि सुनि सज्जित अति लज्जित चटक मराल।
कबहु चपल गति चलत ललित अति मत्तगयंद की चाल ।।[23]

इस मधुर छवि को निरखकर कवि का चित्त आनंदातिरेक से अत्यंत पुलकित हो जाता है।

राधा-कृष्ण एवं चैतन्य के रूप माधुर्य के चित्रण द्वारा चैतन्य संप्रदाय के कवियों ने इनके प्रति अपनी मधुर-भक्ति निवेदित की है। रूप माधुर्य के चित्रण में जहां एक ओर इन कवियों का सौंदर्य-बोध प्रकट होता है वहीं अनेक सुंदर उपमानों के प्रयोग द्वारा इन्होंने अपने हृदय की सरसता व काव्यकुशलता का भी परिचय दिया है।

माधुर्य भाव

माधुर्य भक्ति के अंतर्गत अनेकानेक सूक्ष्म भावों की व्यंजना चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में हुई है। माधुर्य भाव का प्रकाशन राधा एवं गोपियों—दोनों के प्रसंग में हुआ है किंतु प्रमुखता राधा की है। गोपियों का मनोभाव कृष्ण से परिचय के पश्चात् प्रकट होने लगता है परंतु राधा का प्रेम इससे भी गहनतर एवं गूढ है, उसका पार पाना सरल नहीं है। राधा का प्रेम महाभावपरक है अतः राधा-प्रेम को प्रधानता मिली है। राधा-कृष्ण की मधुर प्रेम-लीलाओं में गोपियां सखी भाव से सेवा कार्य करती है।

प्रेमोदय

रस-शास्त्र की दृष्टि से प्रेम का आविर्भाव नायक के गुण-श्रवण, स्वप्नचित्र या साक्षात् रूप-दर्शन से होता है। अन्य संप्रदायों के ब्रजभाषा काव्य की भांति चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भी प्रेम किसी विशिष्ट परिपाटी में बंधकर नहीं चला है। घर के भीतर-बाहर, पनघट, हाट-बाट कहीं पर भी और किसी भी अवस्था में गोपियों की अनायास कृष्ण से भेंट हो जाती है और वे उन पर न्यौछावर हो जाती है। इनके प्रेम का विकास प्रकृति के सुरम्य वातावरण में होता है। बाल्यावस्था में साथ-साथ हंसते-खेलते हुए जो प्रेम-आकर्षण अंकुरित होता है वह यौवन-काल में पूर्ण प्रस्फुटित होकर उनके प्रणय संबंध को दृढ बनाता है तब माखन-चोर कृष्ण गोपियों के चित-चोर बन जाते हैं

कृष्ण का सुंदर [illegible] रूप [illegible] है और [illegible] तभी उन प्रिय की चितवन में कुछ 'टोना' अनुभव करती है, तब उसका क्या हाल होगा ?—

> बड़ी-बड़ी अंखियन सांवरो ढोटा अति लोनौ।
> अब ही तें मन्मथ-मन मोह्यौ लागी अजहू होनौ॥
> कहा री कहौ अंग-अंग की बानिक, नखसिख रूप सु टौनौ।
> 'सूरदास मदनमोहन' पिय की चितवन में कछु टौनौ॥[34]

कृष्ण द्वारा गोपियों के घरों में जाकर माखन चोरी करने एवं विभिन्न चपल-क्रीड़ाएं करने के प्रसंग में गोपियों के मन में उनके प्रति प्रेम-आकर्षण उत्पन्न होता है। प्रीति-वश वे कृष्ण से मिलने के बहाने यशोदा के पास उनकी शिकायतें लेकर पहुंचती हैं तथा उनके भोले किन्तु वाक्चातुर्यपूर्ण उत्तरों को सुन-सुनकर अत्यंत आनंदित होती हैं।[35] इस प्रकार दूध-दही की चोरी करते-करते कृष्ण उनका मन भी चुरा लेते हैं।

राधा से कृष्ण का मिलन अचानक ब्रज की गलियों में आते-जाते हो जाता है। दोनों के नैन से नैन मिलते हैं और वे ठगे-से रह जाते हैं। नेह के फंदे में उनके मन ऐसे उलझते हैं कि सुलझते ही नहीं हैं। दोनों की आत्म-विस्मृत दशा का सुंदर चित्रण ललित किशोरी ने निम्न पद में किया है—

> श्यामा बीनत फूलन जितही तितही ह्वै निकस्यौ बनमाली।
> नैनन सौं नैन मिले भई सैन रहे गहि डारन वृक्ष तमाली।
> भवन गवन सुधि भूलि किशोरी परे रस फंदन नेह की जाली।
> यकटक नैन निहारी रहे दुउ मन उरझ्यौ सुरझत न आली॥[36]

अब तो जब भी कृष्ण की राधा से भेंट होती है, राधा सकुचाकर पलटना चाहती है तो कृष्ण मार्ग रोककर खड़े हो जाते हैं। लज्जा एवं संकोचवश राधा कुछ भी नहीं बोल पाती।[37] नटनागर कृष्ण की अनुपम छवि एवं सुंदर हाव-भाव राधा का मन मोह लेते हैं और वह अपनी प्रतिक्रिया सखियों के आगे व्यक्त करती है —

> अटकी मूरति नागर नट की, एरी यह मेरे मन।
> सैन सैन नैननि हंसि मटकनि लटकनि मोर मुकुट की॥
> कुंतल कुंडल चिलक तिलक केसरि बेसरि ढरि लटकी।
> अंग अंग आभरन हरनि मन मनमथ गति उद भटकी॥
> चटक चटग पग धरनि धरनि पर छुट चटकीले पटकी।
> पान भरे आनन तानन लै तिय मति गति अति हट की॥
> तितही चख चलि जुरत जितै हित चितवनि चित में खटकी।
> लखि लख आनंद चोट सहित मति वल्लभ रसिक सुभट की॥[38]

रूप-ठगोरी एक सखी कृष्ण के प्रति अपने को व्यक्त करती हुई

कहती है कि कोई एक सुदर सावरा इधर से आता-जाता है। वह घुघराले केश वाला, मनोहर वेश धारण किये, माधुर्य की मूर्ति मनमोहन है। ज्यों-ज्यो नेत्र उसको देखते है, त्यों-त्यों मन अधिक ललचाता है। उसको देखे बिना मुझे चैन नही मिलता।[३६]

एक ही जाति के होने के कारण दूध दुहने के समय खरिक मे गोपियो की कृष्ण से भेंट हो जाती है। वहां उनका सुदर रूप उनको आकर्षित करता है। एक गोपी की इस विमुग्ध दशा का सुदर चित्रण सूरदास मदनमोहन ने प्रस्तुत पद मे किया है—

हौं न जैहौं री खिरक दुहावन कौ,
मेरौ मन मोहैगौ नद कौ सावरौ।
देखत रूप ठगौरी सी, कछु-बौरी सी ह्वै रही—
ये तन मन री आवै तावरौ॥
मोहि मिले मारग में आवत, हाथ कनक की दोहनी—
वाम पाणि पाट कौ दावरौ।
सूरदास हो मोहि लई हौ,
मदनमोहन जाकौ नाम री॥[४०]

एक सखी दूसरी सखी से कहती है—मैं अब खरिक को नही जाऊगी। वहा मेरे तन की ओर हरि बारबार देखते है। जब मै नीची दृष्टि किये आ रही थी तब 'गौरी-गौरी गैया' कहकर झूठे ही मुझे बुलाने लगे। मै लजाती-सकुचाती जा रही थी कि मेरे आड़े आकर उन्होंने मुझे घेर लिया। जब मैं उनकी ओर देखती हू तो मेरा स्वय का मन ही उनकी ओर फिर जाता है।[४१]

पनघट का वातावरण मिलन-हेतु सबसे अधिक स्वच्छंद है। वहां कृष्ण गुरुजनो के भय से रहित निर्द्वद्व होकर गोपियो से मिल सकते है। इसीलिए पनघट पर पानी भरने के लिए आयी गोपियो से वे निःशंक छेड़छाड़ करते है। उनका रास्ता रोककर कभी उनकी गगरी उलट देते है व कभी किसी की भरी मटकी, ककड़ फेककर, फोड डालते है। बाहर से रोष प्रकट करती हुई गोपियां अंदर-ही-अदर उन पर रीझ जाती है। उनकी बकिम दृष्टि युवतियों का चित्त उलझा लेती है। उन्हे नटखट श्यामसुदर की चितवन मे कुछ 'टोना' नजर आता है।[४२] फिर भी अपने प्रेम वश उनसे लड़ने-झगड़ने मे उन्हे आनद की अनुभूति होती है। वे उनको निपट ढीठ, लपट आदि विशेषणो से विभूषित करने मे भी नहीं चूकती। रोष प्रकट करती हुई ललित किशोरी की गोपिया कहती है—तुम रोज हमारा रास्ता रोककर हमारी मटकी, कंकड डालकर, फोड़ देते हो। आज पकड़कर हम तुम्हे ठीक कर देगी। तुम नटनागर हो तो हम भी चतुर नागरिया है।[४३]

प्रेम की प्रतिक्रिया प्रेमोदय के पश्चात उसकी प्रतिक्रिया भी तीव्र एव विभिन्न होती है कृष्ण स मिलन होते ही गोपिया क मन की गति स्तब्ध हो

जाती है और तब उनका तन भी निश्चेष्ट हो जाता है। प्रेम की उस अभूतपूर्व अनुभूति के कारण उनकी बाह्य चेतना विलुप्त हो जाती है। श्याम के रंग में रंगकर वे अपनी सुध-बुध भूल जाती हैं और खोयी-खोयी-सी रहने लगती है। उनकी दृष्टि के आगे सदा वही श्याम-सलोनी सूरत घूमती रहती है। उस अद्भुत अनुभूति को कहा भी तो नहीं जा सकता—

> सखी, हौं स्याम रंग रंगी।
> देखि बिकाय गयी वह मूरति, सूरति माँहि पगी॥
> संग हुतो अपनो सपनो सो, सोइ रही रस खोई।
> जागेहु आगे दृष्टि परै सखि, नेकु न न्यारो होई॥
> एक जु मेरी अंखियनि में निसिद्योस रह्यो करि भौन।
> गाइ चरावन जात सुन्यो सखि सो धौं कन्हैया कौन॥
> कासों कहौं कौन पतियावै, कौन करै बकवाद।
> कैसैं कै कहि जात गदाधर, गूंगे को गुड़ स्वाद॥[४४]

उधर राधा की भी यही अवस्था होती है। कृष्ण से मिलने पर वह स्तब्ध-सी रह जाती है। राधा की इस स्तम्भित, विस्मय-विमुग्ध दशा का चित्रण शोभन गोस्वामी के निम्न पद में भावानुकूल शब्दों के प्रयोग द्वारा सुंदरता से हुआ है—

> कीरत लली जू तो रगीली रंग रावटी में।
> चित्र की पटी में रूप नटवर नयो है री।
> तब ते छकी सी झिझकी सी त्यों जकी सी होय।
> बकी सी थकी सी मोय मद सौं छायो है री॥[४५]

कृष्ण को देखकर राधा ठगी-सी रह जाती है एवं मुख से बोल नहीं निकलते। उनकी छवि को निरखने के अतिरिक्त उसे अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता। उस क्षण वह अपने-आपको भी भूल जाती है। बाद में वह पश्चात्ताप का अनुभव करती है कि मैं आंख भर कर उन्हें देख भी नहीं पायी।[४६] ललित किशोरी की गोपी तो अपनी इस खीज को भी निगोड़ी लाज पर उतारती है—

> मोहन के अति नैन नुकीले।
> निकसे जात पार हियरा के निरखत निपटि गंसीले।
> × × ×
> जब सों जमुनाकूल विलोक्यो सब निसि नींद न आवै
> उठत मरोर बंक चितवनियां उर उतपात मचावै।
> ललित किशोरी आज मिलै जहं ना कुलकानि विचारो
> आग लगै यह लाज निगोड़ी दृग भरि श्याम निहारो।[४७]

वे नुकीले नैन स्तब्ध चित्त में चुभकर उतपात मचाना आरंभ कर देते हैं और तब रात्रि की नींद गायब हो जाती है। कृष्ण से अंखियां लगने पर तो मन उनमें

अधिक उलझता ही चला जाता है, सुलझता नही है। उनके प्रेम की अग्नि बढती जाती है, दबाने पर भी दमित नही होती, ठीक उसी प्रकार जैसे रुई मे आग लगने पर वह अधिक धधकती ही है, दबती नही।[४८]

विभ्रम-व्याकुलता : कृष्ण से मिलन के पश्चात् गोपियो का चित्त विभ्रमित हो जाता है। उनको कुछ भी अच्छा नही लगता, सिवा कृष्ण-दर्शन के। हर वस्तु मे उन्हे वही रूप दिखायी देने लगता है। उनके मन की शाति छिन जाती है और वे बेचैन हो जाती है। एक गोपी की ऐसी चित्त-विभ्रम जनित व्याकुल अवस्था का चित्रण सूरदास मदनमोहन के निम्न पद मे हुआ है—

हौं कहा करौं री कित जाऊं।
जित देखों तित ही वह देखियै री,
नद नंदन बिन कतहु न ठाउ ।।
बिन देखे हू न रह्यौ परै (सखी) री,
कहि कैसे री तजौ गाउ।
'सूरदास मदनमोहन' मेरै, अब यह आवति हित,
इनहीं सों हिल-मिल रहाउं ।।[४९]

कृष्ण के प्रति प्रेम-भाव जागृत होने पर गोपियां उनके संकेतों पर ऐसा नाचने लगती है कि उन्हे अपने कार्य का भी ध्यान नही रहता। कृष्ण की वंशी की ध्वनि सुनकर गोपियां प्रेम-विह्वल हो जाती हैं। उन्हें अपने देह की सुध-बुध नही रहती।[५०] मुरली की ध्वनि सुनते ही अपने पति-सुत को सोते हुए छोड़कर एव समस्त गृह-काज छोडकर वे शीघ्रता में उलट-पलटकर आभूषण पहनकर आतुर-सी कृष्ण-मिलन हेतु दौड़ पड़ती है। उनकी यह विभ्रम-व्याकुलता किशोरीदास जी के निम्न पद मे द्रष्टव्य है—

धाई श्रवन सुनत ब्रज वधू छांड़ि सब गृह काज।
पय ओटि जमावत वछ मिलावत पति सुत छाडि समाज।।
उलटि पलटि भूषन सजे एक चखि काजर आज।
है आतुर ऊठि चली मिलन कुवर ब्रजराज।।[५१]

वशी की ध्वनि मोहिनी मन्त्र-सी राधा को विमुग्ध कर देती है। परतु किशोरीदास की परकीया राधा विवश होकर अत्यंत दयनीय अवस्था मे हो जाती है क्योंकि सास-ननद के भय से निकल न पाने का दुःख उसे सालता रहता है और दूसरी ओर कृष्ण के वशीभूत होकर प्राण-मिलन हेतु छटपटाते रहते हैं।[५२]

कृष्ण के अधरो पर मुरली के धरी रहने का सौभाग्य देखकर गोपियां मन मे उनसे ईर्ष्या करने लगती हैं। मुरली के गुमान की भर्त्सना करते हुए गोपियो के इस ईर्ष्या-भाव की सुदर व्यंजना सूरदास मदनमोहन ने की है—

वंसी तू कौन गुमान भरी।
उतपति जानौं, तेरी जाति पहिचानौं, है मधुवन की लकरी।।

आसन छोड़ि सिंहासन बैठी मोहन मुग्ध ह्वै घरी
श्री वृंदावन की सघन कुंज में, [illegible] ॥
सुनत नाद त्रैलोक मोहे, सुर-नर मुनि बुद्धि हरी।
'सूरदास मदनमोहन' की, संगति नें सुधरी ॥[23]

कृष्ण के प्रेम में बावरी राधा उनका तनिक-सा भी वियोग सहन नही कर सकती। यहां तक कि नीद आ जाने पर और उस बीच प्रिय के वापस लौट जाने पर वह अपनी खीज निंदरिया पर उतारती हुई अपना रोष प्रकट करती है। रामराय जी के प्रस्तुत पद में राधा की व्यथा, व्याकुलता, उद्वेग, खीज एवं रोष—इन भावों की एक साथ सुंदर अभिव्यक्ति हुई है--

निंदरिया नाचैं निप की भरी।
मेरे प्यारे लालन फिरि गये कैसी खोटी घरी।
अब जीऊं का विधि सुन सजनी कहा गई जीवनि-जरी।
देखि कहूं जो मिलैं बुलावहु बरसन आंखिन अरी।
श्री रामराय जा नींदहि बेचहु तो तौ भई बावरी ॥[24]

प्रेम की पीर तीर के समान शोभन गो० की राधा के हृदय को सालती रहती है। उसकी वेदना से मर्माहत वह धीरज खो बैठती है। शोकाकुल उसका हृदय कहीं चैन नही पाता और वह सयानी राधा अयानी हो जाती है।[25]

प्रेम की चोट बहुत बुरी होती है। इसकी व्यथा को तो वही जान सकता है जिसे वह चोट लगी हो। इसे मन-ही-मन सहन करना पड़ता है। इसमें व्याकुल होकर बौरा जाने पर इस रोग का उपचार भी साधारण नहीं है। कृष्ण से मिलन ही इसकी औषधि है एवं कृष्ण के वैद्य होने पर ही इसका उपचार सम्भव है।[26]

प्रीति के बंधन में बंधकर सुयश, नींद, भूख, प्यास, माता-पिता, पति, लोक-कुल की लाज यहां तक कि पातिव्रत धर्म का निर्वाह भी छूट जाता है। इसीलिए भुक्तभोगी गोपियां कहती है कि यदि इन सबको चाहना हो तो प्रेम का मार्ग कोई भी मत अपनाओ—

प्रीति की कोई गैल गहो ना।
नैनन नींद सुजस जो चाहो नेह लगन की बात कहो ना।
भूख प्यास पति मात तात तजि लोक लाज कुल कान चहो ना।
ललित किशोरी नेह नगर पथ पतिव्रत धन लै निबहो ना ॥[27]

प्रियतम कृष्ण के विरह में प्रिया की व्याकुल दशा का अत्यंत मर्मस्पर्शी चित्रण माधुरी जी ने 'उत्कंठा माधुरी' में किया है। प्रिय से मिलन हेतु तीव्र लालसा-उत्कंठा इसमें व्यक्त हुई है। प्रिय के बिना कुछ भी अच्छा नहीं लगता, पवन पत्थर के समान, सेज सूर्य के समान तथा भोजन-जल विष के समान कष्टदायक लगते हैं, सैकड़ों सूर्यों का प्रकाश होने पर भी गहन अंधकार छाया दिखायी देता है। ऐसे में

उस तप्त हृदय की वेदना को किसी से कहा भी तो नही जा सकता, वह विर अग्नि तीव्रतर धधकती ही रहती है—

> कहि कहि काहि सुनाइये, सहि सहि उपजै शूल।
> रहि रहि जिय ऐसे जरै, दहि दहि उठै दुकूल॥
> बिरह अग्नि उर मे बढी, तप्यौ अवनि तनु जाय।
> सुरत तेल तापर परै, कहु किहि भांति सिराय॥[५८]

राधा एवं गोपियो के अतिरिक्त कृष्ण पर भी प्रेम की प्रतिक्रिया होती है गो-दोहन के लिए खिरक मे आयी राधा की रूप-छवि देखकर नंदलाल की विचि दशा का निरूपण बांकेपिया ने किया है। दूध-दुहते हुए दोहनी कही और क्षीर धार कही और बहती है, उन्हें कुछ सुध नही। वे तो बस एकटक राधा की ओर मुग्ध होकर देखते रहते हैं। राधा के नेह-जाल के वशीभूत वे बेहाल हो जाते है।[५९] अंजन-रंजित खंजन से सुंदर राधा के नेत्र कृष्ण के अंतस् मे प्रेम-भाव जागृत करते है और तब कृष्ण राधा से तनिक उनकी ओर देखने का अनुरोध करते है।[६०] राधा ही कृष्ण के प्रेम मे नही रंगती, कृष्ण भी राधा के प्रेम मे रंगकर उनके अधीन हो जाते है। तब वे भी उसी प्रकार व्याकुल एवं बेचैन होते है जैसे राधा—

> मोपै कहा कियौ लै प्यारी।
> सब बिधि भयौ आधीन तिहारे सघन पुंज नव कुंज बिहारी।
> अति आतुर अनुराग रंग्यौ तब जितु न चैन इन नैनन जारी॥
> मोहि महाभय कबहु-कबहु जिय होत अहो ये छयौ कहारी।
> कहत और सो लाज लगत है रामराय नित हंसत निहारी॥[६१]

प्राण प्यारी राधिका के दर्शन की उन्हें उत्कट लालसा है। रस-मूर्ति कृष्ण की दशा उन्माद तक पहुंच जाती है, उनकी वंशी, मुकुट आदि सब अस्तव्यस्त पड़े हैं। वे प्रिया के ध्यान में हंसते है, रोते है। उनकी प्रेमावेश से उन्मत्त दशा का एक चित्र मनोहरदास जी के निम्न पद में देखिए—

> कौन कहै को सुनो लाल कछुवै नहिं जानत।
> एक राधिका बिना जगत सूनो करि मानत॥
>
> × × ×
>
> कबहुंक नैन लगाय अधर धर धरि कबहुंक हियरो।
> कबहुंक माथे लगाय चरण सोंपत रहे सियरो॥[६२]

गोपियों का मिलनोद्यम कृष्ण के प्रेम में व्याकुल गोपियां उनसे मिलने के लिए अत्यंत उत्कंठित हो जाती हैं। उनसे मिलने के लिए वे अनेक बहाने ढूंढ़ लेती हैं। कभी तो कृष्ण द्वारा माखन-चोरी किये जाने एवं छेड़छाड़ करने के उलाहने लेकर वे यशोदा के पास पहुंचती हैं और इस बहाने कृष्ण को देखने की इच्छा-पूर्ति करती हैं तथा कभी खरिक में गाय दुहाने के मिस कृष्ण से भेंट करती है। गोपिया

अपनी खोयी हुई गौरी गैया को ढूढ़ने के बहाने कृष्ण के पास आती हैं और उनसे गाय को ढूढने के लिए कहती हैं। आखिर गाय को भी तो कृष्ण की वंशी की धुन सुनने की आदत हो गयी है। इसीलिए गोपियां कहती हैं कि वंशी-ध्वनि की टेर सुनते ही गाय दौड़ी चली आयेगी। इस पर पिता वृषभानु भी कृष्ण से कहते हैं कि क्यों नही वंशी से टेरकर गाय को बुला लेते ? अब क्या है, आज्ञा तो मिल ही गयी। वंशी बजाकर गैया को बुलाने के बहाने कृष्ण अन्य गोपियों को भी बुला लेते है और तब गोपियों एव कृष्ण का मिलन होता है।[57]

राधा भी कृष्ण से मिलने के लिए अत्यंत आतुर है। परन्तु ऐसे तो वह कैसे मिले, किसी के देख लेने का भय है। इसलिए वह पुरुष-वेश धारण कर कृष्ण से मिलने जाती है। इस वेश मे वह कृष्ण के सखा सुबल की प्रतिमूर्ति जान पड़ती है। इस वेश मे कृष्ण भी उन्हे अनायास पहचान नहीं पाते और सुबल समझकर ही उनसे वार्तालाप करते हैं।[58]

कृष्ण के राधा एवं गोपियों से मिलनोद्यम की छद्म लीलाएं : गोपिया कृष्ण से मिलने के लिए जैसे अनेकानेक बहाने ढूढ लेती है, वैसे ही कृष्ण भी उनसे, विशेषकर राधा से मिलने के लिए अनेक छद्म-वेश धारण करते है। चैतन्य संप्रदाय के बगला काव्य की भांति इस सप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भी कृष्ण की इन छद्म लीलाओं का अत्यंत रंजक रूप मे वर्णन किया गया है। ललित किशोरी ने 'रस कलिका' मे इनका विस्तृत एवं सरस वर्णन किया है। माधवदास कृत 'परतीत परिच्छा' ('बाणी' मे) तथा ललित लड़ैती कृत 'किशोरी करुणा कटाक्ष' आदि कृतियों मे भी छद्म लीलाओं का सरल एव सरस शैली मे निरूपण हुआ है। इन लीलाओ के अतर्गत कृष्ण एवं राधा-सखियों के परस्पर वार्तालाप मे वाक्चातुर्य प्रकट हुआ है जो आह्लाद की सृष्टि करता है।

कृष्ण सुनारी, बैपारिन, पुरतानी, मालिन, अहीरिन-ग्वालिन, नाइन, पनिहारिन, मिसरानी, मनिहारिन, कुम्हारिन, तमोलिन, ढाढ़िन आदि बनकर राधा से मिलने जाते है और अपने सुदर वेश से उनको लुभाते है। नाइन के वेश मे कृष्ण राधा के पास पहुंचते है। उनके इस मोहक रूप से राधा एवं सखिया अत्यत मोहित होती है। सखियां कहती है कि नाइन, तू तो राधा को दर्पण दिखाती हुई साथ-साथ अपने नुकीले नैनो के सैन भी चलाती जाती है—

> तेरे नैना नुकीले री नाइनिया।
> कजरा रेख घुरानी पैनी कानन लौ फैली अनियां।
> तू तौ सैनों से बैना करै कमनी दिखरावै लली जू को दरपनियां।
> मटकि बलैयां ले चटकी अग ललित किशोरी भली बनियां।।[59]

दाहिने हाथ मे माला, बायें मे पोथी लेकर चटकीली मिसरानी का वेश धारण कर कृष्ण राधा के पास पहुंचते हैं। राधा को आशीष देने के बहाने उनके गले मे मंत्र-सिद्ध माला पहनाकर आनंदित होते है। कृष्ण का मालिन रूप भी अत्यंत मनमोहक लगता है। सांझी के लिए पुष्प-चयन को सखियों के साथ आती हुई

राधा को देखकर, उनके प्रेम मे विवश नंदकिशोर तुरंत मालिन का वेश बना-
हाथ मे पुष्प की डलिया लेकर फूल बेचने के मिस उनसे मिलने आ जाते हैं। य
सुदर मालिन, राधा एवं सखियों को अपनी बगिया की बहार दिखाती है ए
अवसर देखकर राधा के गले मे पुष्प की माला डालने मे भी नही चूकती। मालि
के वेश मे कृष्ण का सांवल-कमनीय रूप अनुपम प्रतीत होता है। वे मालिन बनक
राधा की, चवर डुलाने से लेकर चरण दबाने एवं धोने तक की, पूरी सेवा करते
परतु सेवा करते-करते मुड़-मुडकर राधा से नैन-जोडना भी नही भूलते—

> करत आरती चपल मलिनिया।
> सावल गात कमल दल अंगुरिन नख सिख रूप अनूप कमिनिया।
> थिरकि फिरकि मंडल दै मुरि-मुरि रहत जोरि नैनन की अनिया।
> बरषत मुसकन फूल किशोरी अली भली मालिनि छबि बनियां।[66]

चतुर राधा भी समझ जाती है कि यह सांवरी-मालिन कौन है? निकुज के एकांत मे ले जाकर तब मालिन-रूपधारी कृष्ण राधा से मिलते हैं।

इसी प्रकार बैपारिन लीला के अतर्गत कृष्ण बैपारिन बनकर राधा से मिलने जाते हैं। उनके रूप का वर्णन कर सखी राधा से कहती है कि एक सुदर बैपारिन विविध प्रकार के गुलाल बेचने आयी है। वह किशोरी अपने-आपको प्रेम-नगर की रहने वाली एवं प्रेम-रंग बेचने वाली बताती है। यह सुनते ही राधा तुरत उसको बुला भेजती है। उसके आने पर उसके हाव-भाव देखकर वह समझ जाती है कि यह चतुर कृष्ण हैं।[67] मनिहारिन के भेष मे राधा को चूडी पहनाने के लिए, अहीरन रूप मे दही-बेचने, पुरतानी के रूप मे अपनी जिजमान राधा को राखी बाधने के मिस एव इसी प्रकार अनेक रूप धारण कर अनेकानेक बहानो से कृष्ण राधा से मिलते है एवं उनको रिझाते है। गोपिया भी उनकी इन छद्म-लीलाओ से अत्यंत आनंदित होती है। इन छद्म-लीलाओ में राधा-कृष्ण का प्रेम प्रमुख रूप से अभिव्यक्त हुआ है।

माधुर्य भावपरक विभिन्न लीलाएं नित्य विहार एवं भाव-चित्रण

कृष्ण और गोपियों का प्रेम दिनो-दिन गहन से गहनतर होता जाता है। कृष्ण की विविध चेष्टाओ से गोपियो का सकोच दूर होता जाता है और वे अब उनसे नि सकोच मिलती है। दान, मान, बिरह, अनुराग, होली, बसत, रास आदि माधुर्य भाव परक विभिन्न लीलाओ के अंतर्गत इनके प्रेम का परिपाक हुआ है। इन लीलाओं में राधा-प्रेम को प्रधानता मिली है। वस्तुत: गोपी-प्रेम के क्रमश: विकास द्वारा राधा-कृष्ण का मधुर प्रेम-रस अधिक विस्तारित व परिपुष्ट हुआ है। चैतन्य सम्प्रदाय के ब्र   कवियों ने माधुर्य ——— प्रत्येक लीला के अंत में निकुंज केलि क्रीडाओं का सुदर चित्रण किया है स्वतत्र रूप से भी निकुज लीलाओ का

विस्तृत निरूपण हुआ है। निकुंज में नित्य विहार की लीलाओं में राधा-कृष्ण प्रेम चरम उत्कर्ष को प्राप्त करता है। जिसका [illegible] कर सखियाँ आनंदित होती है। नित्य विहार की निकुंज लीलाओं में सखी भाव का भी उत्कर्ष हुआ है। सखियां राधा-कृष्ण की मधुर क्रीड़ाओं का संयोजन करने के साथ ही विभिन्न प्रकार की सेवाओं द्वारा [illegible] में संलग्न रहती हुई उसका आस्वादन भी करती है। सखियों का यह भाव [illegible] के [illegible] भक्त-कवियों का चरम उपास्य तत्त्व है। माधुर्य भावात्मक विभिन्न लीलाओं में अनेकानेक भावों की सुंदर एवं सूक्ष्म अभिव्यंजना हुई है।

दान लीला

गोपियों ने अपना मन तो कृष्ण को अर्पित कर दिया, परंतु देह का समर्पण अभी शेष रहता है। इसलिए उनको अपने और भी निकट लाने के लिए कृष्ण दान लीला रचते हैं एवं स्पष्ट रूप से उनसे यौवन का दान मांगते हैं। कृष्ण के प्रति समर्पण में देह त्याज्य नहीं है वरन् अनिवार्य है।

अधिकांश कवियों ने दान-लीला संबंधी पदों की रचना की है। प्रमुख रूप से दान-लीला का प्रसंग सूरदास, मदनमोहन, किशोरीदास, बाकेपिया, ललित किशोरी, माधवदास, माधुरी कवि एवं ललित लड़ैती ने सरसता से वर्णित किया है।[६८]

दूध-दही बेचने के लिए जाती हुई गोपियों को मार्ग में ही कृष्ण रोककर उनसे दही का दान मांगते हैं। वे गोपियों से साधिकार कहते हैं कि तुम रोज चोरी-चोरी गोरस बेच आती हो, आज पकड़ में आयी हो, अब मेरा दान देकर जाओ। वे दधि दान के बहाने उनके सुंदर रूप का दान चाहते हैं।[६९] रोके जाने पर गोपियां भड़क उठती हैं—

> बोलिये जीभ सम्हारि बात यह नाहि भली है।
> यह ब्रज की सिरताज श्री वृषभान लली है॥
> दान न कान सुनो कहूं सो तुम मांगत आय।
> नई रीत ह्वै है नहीं सुनो कुंवरि ब्रजराय॥[७०]

अब वे दीन नहीं हैं, इसलिए कृष्ण से दबती नहीं है, बल्कि बहस करने लगती हैं। कृष्ण और गोपियों की रही-सही दूरी भी समाप्त हो जाती है। इसीलिए उनसे बराबरी से उत्तर-प्रत्युत्तर करती रहती हैं। वे तुरंत आत्म-समर्पण नहीं करतीं बल्कि कृष्ण द्वारा दान लेकर जाने का हठ करने पर वे भी अड़ जाती हैं। कृष्ण की प्रभुता का अब उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि वे उनसे तर्क-वितर्क करती हुई व्यंग्य-विनोद करती हैं। वे उनके आचरण की भी आलोचना करती हैं। उन्हें फटकार बताती हुई [illegible] की गोपियां कहती है

या ब्रज म तुम ही अनोग्र छैल
आवत जात टारत वधअन की राकत वनवन गैल
दौरि निसंक गहत मरौ अचरा माग दान कर बहु फैल,
किशोरीदास अब दीसे है जैसे ब्रजचद भये हौ अरैल ।।[७१]

इस प्रकार गोरस-दान मागते-मागते कृष्ण एव गोपियो के बीच झगड़ा बढ जाता है। लेकिन उस झगडे मे भी मधुर आनंद छिपा रहता है। जब कृष्ण दान के लिए अड़ जाते है तो ब्रज-नागरी कहती है कि यदि तुम्हें दान चाहिए तो हमारे पाव पड़कर एव नृत्य दिखाकर हमे रिझाओ। परंतु गोपियों के आगे कृष्ण कैसे झुके, राधा की बात अलग है। इसलिए वे यह सरल उपाय खोज लेते हैं—राधा को रिझाने का। राधा से विनती करते हुए वे उनसे दधि के दान के मिस कुज मे चलकर उनके रूप-रसपान का दान मागते है। तब राधा उन पर रीझकर तुरत दान देने के लिए तैयार हो जाती है। इस प्रकार दान-लीला के मिस गोपियों—राधा व कृष्ण की प्रीति प्रगाढ़ होती है। गोपिया ऊपर से तो रोप प्रकट करती है, परंतु मन-ही-मन आनंदित होती है। उधर कृष्ण भी मनचाहा दान पाकर प्रफुल्लित होते है।

ललित किशोरी कृत 'दान केलि माधुरी' (रस कलिका के अतर्गत) एव माधुरी कवि की 'दान माधुरी' ('माधुरी वाणी' मे) नामक लघु रचनाओ मे चैतन्य संप्रदाय के आचार्य—रूप गोस्वामी कृत 'दानकेलि कौमुदी' तथा रघुनाथ दास कृत 'दान केलि चितामणि' नामक रचनाओं के समान प्रछन्न परिहास की सृष्टि हुई है। श्रीकृष्ण रस के आस्वादन के लिए स्वय दानी बनकर भी राधिका तथा ललितादिक सखियों से दान की याचना करते है। इनमे कथोपकथन शैली का सुदर प्रयोग मिलता है।

कवि माधुरी ने 'दान लीला' के प्रसग में राधा की स्नेह-विभोर दशा का सुदर चित्रण किया है। कृष्ण के हाथ का स्पर्श पाते ही वह पूर्णतया प्रेम-विह्वल हो जाती है, उस आत्मविस्मृत विमुग्ध दशा मे संघर्ष के लिए अवकाश ही नही रह पाता।[७२] इसके अनतर कवि ने दान के मिस दपति सुख का सरस एवं कौतुक-मय चित्रण किया है। सखियां यहां मध्यस्थ है और राधा का प्रभुत्व (गौडीय गोस्वामियो की भावनानुसार ही) विद्यमान है। कृष्ण सखियों को सौरभ-सुगध लाने के लिए भेजकर एकात की व्यवस्था करते हैं और तब दंपत्ति राधा-कृष्ण माधुरी-लताओ के मध्य मधुर विलास-सुख प्राप्त करते है। सखियां मधुमक्खियो के सदृश उस विलास-सौरभ को ग्रहण करके हर्षित होकर जीती हैं—

माधुरी लता में अति मधुर विलासन की,
मधुकर आनि लपटानी सब सखियां।
दुलहिन दुलहू के फूल के विलास कछु,
बास लै-लै जीवित हैं जैसे मधु-मखियां।।

[illegible] ज [illegible]
कुंज की [illegible] चोलिया
दान मिस [illegible],
ऐसो दिन-दिन देखें [illegible] चोलिया ॥[५३]

चीर-हरण लीला

कृष्ण और गोपियों के मध्य संकोच हट जाता है। चीर-हरण लीला में वे परस्पर और अधिक निकट आते हैं। विविध-आवरणों का निरावरण होकर गोपियों का अंतर्बाह्य कृष्ण-प्रणय से प्रदीप्त हो जाता है। परन्तु अन्य लोगों के समक्ष निरावरण आने से तो लाज-संकोच का अनुभव होता है। इसीलिए, कृष्ण द्वारा चीर-हरण कर लेने पर वे उनसे विनती करती हुई कहती हैं

> मैं वारिया है दै चीर बिहारी।
> सीतल नीर पवन सीरी अति कंपत अंग सुकुमारी।
> इत उत निकसत नगर वासिनी हम जल माझ उघारी।
> ललित किशोरी लाज सकोचन मरी जात ब्रजनारी ॥[५४]

इस लीला का प्रस्तुत काव्य में अधिक विस्तार नहीं मिलता।

सांझी लीला

इस लीला के अंतर्गत संध्या में सांझी-पूजन के लिए राधा अपनी सखियों सहित पुष्प-चयन हेतु वाटिका में आती हैं और वहां सांझी के मिस राधा-कृष्ण का मधुर मिलन होता है। सांझी लीला का प्रसंग ललित किशोरी ने 'पुष्प माधुरी' में ('रस कलिका' में) एवं वल्लभ रसिक (१०६ छंदों में), किशोरीदास, ललित लड़ैती, रामराय, सूरदास मदनमोहन, शोभन गोस्वामी[५५] आदि कवियों ने सुंदरता से वर्णित किया है। पुष्प-चयन के लिए सखियों के साथ जाती हुई राधा के पुष्पों से शृंगार किये हुए रूप का शोभन गोस्वामी ने आकर्षक ढंग से चित्रण किया है—

> चली सब मिलि हेली कुसुम चमेली लैन,
> मैन से नवेली रति रूप लखि होत बाझ।
> सुंदर सहेली संग सोहत सुनहरी चीर,
> भीर तीर तरणी तनुजा भरी अपांझ।
> करे मृदु केली दुरे कबुक नवेली जाय,
> शोभन सनेह भरी भामती बिलोक सांझ।
> फूल ही वसन पहरें फूल ही की माल गरें,
> फूल ही सी बीनैं फूलें फूली फुलवारी माझ ॥[५६]

वन में राधा को आया हुआ जानकर कृष्ण तुरत वहां पहुंच जाते हैं और

सखियो से पूछते है कि यहा किसलिए आयी हो ? हमारी वाटिका म किससे पूछ ये फूल तोड़ रही हो और यदि तोड़ रही हो तो एक-एक पंखुडी के ब अपने स्वयं का मूल्य देकर फिर घर जाना। प्रत्युत्तर मे सखियां भी कम न रहती, बल्कि राधा को 'श्रीवन' की ठकुरानी बताकर कृष्ण को लंपट सि करती है—

इनकी कहा चलावत लपट अपनी बात बतावो।
जाये कौन-कौन गाव को कामो यह वन पायो।
ये तो श्रीवृषभान किशोरी या वन की ठकुरानी।
श्री वन नाम विदित जग कहु तो नै का पै अभिमानी।।[७७]

ललित लड़ैती की चतुरा सखि कृष्ण को फटकारती हुई कहती है—

अबलान मे पुरुष को कौन काम मानो तुमरो यह
विपिन धाम ऐसे अपने मुख कढ़त बैन।
अब चलो हटो घर को सटको क्यों बेर-बेर हमते अटको
ललित लड़ैती लैन दैन।।[७८]

इस परस्पर तर्क-वितर्क मे कृष्ण एवं राधा—सखियो का अद्भुत वाक् चातुर्य प्रकट हुआ है और मधुर हास-परिहास की सृष्टि हुई है।

सांझी लीला के अंतर्गत कृष्ण का राधा से मिलन हेतु सांवरी सखी का वेश धारण करने का प्रसग ललित किशोरी, ललित लड़ैती, किशोरीदास एवं वल्लभ रसिक के काव्य मे मिलता है। इसमे प्रिया राधा से मिलने के लिए कृष्ण अत्यत व्यग्र है, अतएव मिलन हेतु छद्म वेश धारण करते हैं। राधा के स्नेह के वशीभूत होकर कृष्ण स्वयं मालिनि का रूप बनाकर आते हैं। ललित किशोरी ने राधा के प्रति कृष्ण के गहन प्रेम की व्यजना सुदरता से की है। सांझी के पुष्प-चयन के मिस प्रिया राधा के आने की आशा कृष्ण को लगी रहती है, अतः वे पुष्पों के बीच कटक चुन-चुनकर निकाल रहे हैं (उन्हे आशंका है कि कही राधा के कोमल चरणों मे वे चुभ नही जाये) और पत्ते-पत्ते पर राधा का नाम अंकित कर रहे हैं—

सीचत श्याम सुदर वर बेली।
सांझी सुमन बीनबे मिस कहुं आवै प्रिया नवेली।
कोमल करत बीनि कांकरि सग फुलवैया बिच हेली।
पात पात पै नाम किशोरी अकित करत चमेली।।[७९]

राधा के प्रति कृष्ण के प्रेम की यह अनन्यता कितनी विलक्षण है जो मन को बांधे बिना नही रहती। प्रियतम कृष्ण मालिनिया का वेश धारण कर बड़े चाव से राधा को अपनी बगिया के दर्शन कराते है—

क्या फनी चटा [illegible] मदनला
[illegible] कलिया।
नवकमल कुमोद [illegible]
[illegible] रस-रलियाँ।
क्या छवि [illegible]
[illegible] विमुलियाँ।
क्या कदली फल [illegible]
ललित किशोरी [illegible] बिकलिया।[80]

कृष्ण के अद्भुत रूप और मधुर वाणी से व्रज-गोपिकाएं विमुग्ध हो जाती हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होता है—मानो उन पर किसी जादू-टोने का मोहक प्रभाव हो गया हो, जिसके वशीभूत होकर वे बावरी-सी हो जाती हैं, उन्हें अपनी सुध-बुध भी नहीं रहती। परन्तु जब इन छद्म रूप का भेद खुलता है तब वे उन छलिया बनवारी कृष्ण को लंगर-लंपट, कपटी कहने से भी नहीं चूकतीं।[81] परन्तु चतुर कृष्ण श्याम सलोनी के छद्म वेश से भोली राधिका को छलने में सफल हो जाते हैं और कपट से उसे निकुंज में ले जाते हैं। इस सांझी लीला का अवसान राधा-कृष्ण के निकुंज रति-विलास में होता है जिसके रस का आस्वादन सखियाँ अत्यंत हर्षित होकर करती हैं—

देखो री प्यारी लाल विहारें।
सांझी सुमन भरे छोरिन में काढ़ि काढ़ि भामिनि वारें।
सघन लता नव कुंज छबीली विलसत गहे कुसमित डारें।
ललित किशोरी लोचन विथकित गोरी सावल रूप निहारें।[82]

ऋतु वर्णन एवं विभिन्न लीलाएं

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने वर्षा, बसंत आदि विभिन्न ऋतुओं का वर्णन करते हुए राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं का सरस चित्रण किया है। विभिन्न ऋतुओं संबंधी पदों की रचना अधिकांश कवियों ने की है जिनमें ललित किशोरी, ललित लड़ैती, मनोहरदास, किशोरीदास, शोभन गोस्वामी, वल्लभ रसिक, माधुरी, गदाधर भट्ट, सूरदास मदनमोहन, रामराय, आकिंचन हरिराम व्यास आदि का प्रमुख स्थान है।[83]

ग्रीष्म ऋतु लीला

ग्रीष्म ऋतु में प्रकृति का स्वतंत्र रूप में चित्रण, प्रस्तुत काव्य में, नहीं किया गया है अपितु राधा-कृष्ण के संदर्भ में ग्रीष्म-वर्णन हुआ है। इसमें ग्रीष्म के तप्त प्रभाव से बचने के लिए सघन लता-कुंजों की छाया में विराजमान राधा कृष्ण के चन्दन आदि सुगंधित व शीतल द्रव्यों के लेप से मंडित रूप-सौंदर्य एवं जल विहार व

क्रीड़ा का वर्णन प्रमुख रूप से किया गया है।

इस ऋतु मे प्रकृति का वातावरण भीषण ताप से तप्त हो जाता है जिसका प्रभाव सभी जीव-जंतुओं पर पड़ता है। ग्रीष्म के इस प्रभाव की व्यंजना शोभन गोस्वामी के निम्न पद मे दृष्टव्य है जिसमे पशु-पक्षी और मनुष्य-सभी जीव तो व्याकुल व व्यथित हो ही जाते है, स्वयं राधा-कृष्ण को, खस की हवा होने एवं गुलाब के रस मे भीगे वस्त्र पहनने पर भी, समीर तप्त और तीर-सा दुखदायी लगता है—

> भीषण गभीर वीर जीर करै डारै जीव,
> भवन समीर नीर भीर हू तपात है।
> खस की समीर औ गुलाब आब बोर चीर,
> धारे तन तोऊ आन तीर सी लगात है।
> शोभन भनत हीर भूषण हूं पीर देत,
> तीर भानुजू को नैन ताको नाहि जात है।
> कीर है अधीर टीर टीर करें मीर बिन,
> क्षीर तजि सावक अहीर हूं दुखात है।[८४]

मनोहरदास जी ने ग्रीष्म ऋतु के अनुकूल वेशभूषा और शृंगार किये राधा-कृष्ण की रूप-शोभा का मनोहारी चित्रण किया है। श्यामसुदर इस निदाघ ऋतु में अल्प आभूषण और झीने व श्वेत वस्त्र धारण कर, गर्मी के प्रभाव से बचने के लिए, तहखाने के शीतल स्थल पर विराजमान है—

> इंद्रनीलमणि श्याम सुदर निदाघरितु,
> थोरे थोरे भूषण मुकता माल पहरैं।
> झीनी धोती सेत पै किनारी लाल उपरैना,
> पीरे मोहि अग अग झलकनि लहरै।
> तिलक बनाइ भाल बाहु वक्ष कक्ष खौर,
> केसरी पगिया मोर चंदा ब्यार फहरै।
> राधिकारमण प्रिया मिल बैठे तहखानें,
> मनोहर नैन शोभा सिंधु पैठे गहरै॥[८५]

राधिका को भी ग्रीष्मोचित वेश-महीन तन-सुख की साड़ी व अन्य वस्त्र तथा थोड़े आभूषण धारण किये हुए अद्भुत कांतियुक्त बताया गया है—

> तन सुख सारी में किनारी जग मग जोति,
> अतरौटा अतलस नील पीत धारी है।
> सोधें सनी आंगी मिहीं हरी कोर कसि बांधी,
> राधिका रमण मन गज बंध बारी हैं॥

चोटी बना आढ नासा मोती औ चिबुक बेंदी
अजन विशाल नन त्यौ कटाच्छ कारी हैं।
तपरितु थोरे थोरे भूपन पहरि प्यारी,
जलजंत्र मेह मनोहर चहचारी है ।।[८६]

कवियो ने प्रिया-प्रियतम—राधा-कृष्ण को आतप से बचने के लिए कही सघन लता-कुजो की सुशीतल छाया-तले आसीन बताया है जहां मलय पर्वत से आने वाली शीतल, मंद, सुगधित—त्रिविध पवन उन्हे सुख प्रदान कर रही है, कही सखियो द्वारा उनकी सेवा मे लीन होकर चदन आदि सुगधित और शीतल द्रव्यो से लेप करते हुए प्रदर्शित किया है तो कही पर कवियो ने राधा-कृष्ण को पुष्प-वाटिका मे फव्वारो के मध्य कदब-वृक्ष के नीचे विश्राम-रत या यमुना मे जल-विहार एव क्रीडा करते हुए चित्रित किया है ।[८७]

शोभन गोस्वामी ने राधा-कृष्ण के सुखार्थ सभी वस्तुओ—वेशभूषा, चौकी-चौक, हवा, जल आदि को सुशीतल चंदन-युक्त बताया है । निम्न पद में अनुप्रास की छटा के साथ भाव-सौदर्य लक्षणीय है—

चंदन महल चारु चौखे चहुं ओर भरे,
चंदन चिरागन की चमक चुनी रहै।
चंदन के चीर औ बियार चलें चंदन की,
चामीकर जंत्रन में चंदन के नीर है।
शोभन भनत चंद चांदनी हूं चंदन की,
चंदन की चौकी चौक चंदन बनी रहै।
चंदमुखी चंदन की चपमाल चंपकली,
चंदन के चूर पूर ग्रीषम सनी रहै ।।[८८]

इसी प्रकार कवि ने खस व गुलाब से बने महल तथा अन्य सुशीतल वस्तुओ के मध्य राधा-कृष्ण के रूप का सरस चित्रण किया है।

ग्रीष्म-विहार करते हुए राधा-कृष्ण की अनुपम शोभा एवं विविध क्रीड़ाओ का रसास्वादन मंजरी-गण मोदपूर्वक करती है ।[८६] वे राधा-कृष्ण की सेवा मे रुचिपूर्वक जुट जाती है और उनके विहार का उचित प्रबंध करती है। यमुना के तट पर सुदर नव-कुंज मे उनके लिए पुष्प-शैया बनाती है जिस पर खस-खस, गुलाब-जल, इत्र आदि सुगधित द्रव्यो का छिड़काव करती है। वे ऋतु के अनुकूल शीतल फल, मिश्री, सिखरिन आदि का भोग लगाती है और राग केदार का आलाप मधुर और मंद स्वर मे करती हुई धीमे-धीमे पंखा झलती रहती है। कुसुम-सेज पर श्याम-श्यामा केलि विलास मे लीन होते है जिसे सखिया एकटक निहारती हुई मन मे आह्लादित होती हैं।[६०]

ग्रीष्म की केलि-क्रीड़ा मे राधा-कृष्ण के परस्पर गहन अनुराग की सुदर अभि-व्यंजना हुई है। किशोरीदास के कृष्ण प्रिया राधा के श्रम का हरण करने के लिए

अपने पीतांबर को खोलकर उससे उन्हें हवा कर रहे हैं—

> नंद को नंदन सुंदर मृगनयनी ।।
> अति शीतल कदंब तर बैठे मृदुवर पंक लसैनी ।
> बोलत कोकिल मधुर मधुर महा शीतल मंद सुगंध समीर
> जहां जमुना निकट दैनी ।
> गूंगे समर श्रम जान व्रजचंद्र किशोरी को पवन ढुरावैं
> खोल पीत उपरैनी ।।[81]

ग्रीष्म-लीला में जल-विहार एवं जल-क्रीडा के प्रसंगों की आयोजना भी की गयी है। राधा-कृष्ण कहीं जल-विहार करते हैं तो कहीं नौका-विहार और विहार करते हुए विविध केलि-क्रीडाएं करते हैं। सहचरिगण इस केलि के राग-रंग में रंगकर अपना पूरा सहयोग देती हैं। जल में विहार करते हुए कृष्ण-राधा एवं सखियां परस्पर एक-दूसरे को धकेलते, जल के छींटे मारते सरस क्रीडाएं करते हैं। बांकेपिया द्वारा रचित जल-क्रीड़ा से संबंधित निम्न पद द्रष्टव्य है—

> क्रीडा जल माहिं करत दोऊ मिल श्यामा श्याम यमुना तट
> सहचरि गण सहित रंग भीने ।
> जल उलीच छींटा दै एकन के एक भजल एक पैरि पकरत
> तेहिं नयन ओट दीने ।।
> कबहुक जल यान साजि मणिन जटित सिंहासन धरि
> दोहुन पधरावत पहिराय वस्त्र झीने ।
> बांकेपिय खेवत तहं ललितादिक नवल बाम करत राग रंग
> संग सबै रस प्रवीने ।।[82]

इस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में राधा-कृष्ण व सखियों की मधुर क्रीड़ाओं-लीलाओं में अतुल राग-रंग, रस एवं उल्लास की अभिव्यक्ति हुई है जो उनके मधुर प्रेम का पोषण करती है।

वर्षा ऋतु लीला

वर्षा ऋतु की लीला के प्रमुख वर्ण्य-विषय हैं—वर्षा ऋतु चित्रण एवं हिंडोरा—फूल-डोल, फूल शृंगार। इसमें राधा-कृष्ण के रूप-सौंदर्य एवं वन-विहार तथा रति-विलास की अभिव्यंजना हुई है।

वर्षा-ऋतु वर्णन : वर्षा ऋतु में प्रकृति की शोभा अनुपम हो जाती है। प्रकृति की इस सुषमा का वर्णन कवियों ने सुंदरता से किया है। शोभन गोस्वामी ने रीतिकालीन शैली से प्रभावित होकर ऋतुओं का वर्णन किया है। निम्न पद में अनुप्रास व पुनरुक्ति के साथ शब्दों के ध्वन्यात्मक प्रयोग द्वारा वर्षा ऋतु का सजीव, प्रभावशाली एवं सुष्ठु चित्र अंकित किया गया है—

दाय दाय दामिनी दिशान दिये देखि देखि
दुखिया दुखित देहि दुनी दुख पाय नाय।
छाय छाय छाजत छबीली छिन छातन पे,
छाजन छतान तान छवि सो सु गाय गाय।

× × × ×

झाय झाय झरना झमाक झरे झूम झूम,
झरत घटान मे झरी हूं झमकाय काय।
पिऊ पिऊ करके पपैया जिय काढि लेन,
चैन छिन देति नाय पापी पिक गाने सै।।[६३]

वर्षा का मानवीकरण करते हुए कवियो ने उसे सुंदर नायिका का रूप प्रदान किया है। सूरदास मदनमोहन, गदाधर भट्ट एव ललित किशोरी ने अपने काव्य मे[६४] पावस को सुदर नायिका के रूप मे चित्रित किया है। गदाधर भट्ट का निम्न पद द्रष्टव्य है जिसमे पावस ऋतु का नव-वधू के समान चित्रण किया गया है, इसका शृंगार एवं रूप-सौदर्य अनुपम है—

देखो हरि पावस वधू बनी।
साजि सिंगार अंग अगनि प्रति तुमसों सनेह सनी।।
सघन घटा घूंघट मे चपला चपल कटाछ विलास।
ढरकि रहे धुरवा अलकावलि बग पंगति मृदुहास।।
जलकनधार हार मोतिन के विपिन बसन पहिराउ।
ठौर ठौर सुर चाप सुरंग छवि जगमगि रह्यो जराउ।।
कुसुम कदंब सुगध बदन कौ लागत अधिक सुहायो।
चद्रवधू रुचि रुचिर विराजत चरण महावर लायो।।
दादुर मोर सोर चातक पिक सुनियत भूपन राउ।
उपजै क्यों न गदाधर प्रभु के मन मनसिज-रस भाउ।।[६५]

गदाधर भट्ट ने वर्षा ऋतु के विभिन्न उपकरणो को हरि की आरती के विविध साधन बनाकर प्रस्तुत किया है—

हरि की नव घन करत आरती।
गर्जनि मंद शख ध्वनि सुनियति दादुर वेद भारती।।
पचरंग-पाट भाति सुर धनुकी दामिनी दीप उज्ज्यारती।
जल कन कुसुम जाल बरषावत बग-गण चमरनि ढारती।
घंटा ताल झाझि झालरि पिक चातक केकी क्वान।
तातें भयो गदाधर प्रभु के श्यामल अंग समान।।[६६]

पावस में राधा-कृष्ण की विहार-स्थली—वृंदावन की शोभा अनुपम हो जाती है। विविध प्रकार के पुष्पों-लताओं से वृंदा-विपिन का श्री-वैभव अतुल हो जाता

है। वातावरण सुरम्य हो उठता है। घनघोर घटाएं घिर आती हैं, रिमझिम-रिमझिम बूंदे बरसने लगती है। चातक, मोर, कोकिल आदि खग-वृंद सुंदर कलरव करने लगते है। ऐसा सावन मन को भाने लगे तो आश्चर्य क्या! फिर रसिक शिरोमणि राधा-कृष्ण के हृदय में ऐसी सुहावनी ऋतु अपार आनंद उत्पन्न कर देती है।[९७] ऐसी उल्लासमयी ऋतु शृंगार के सरस भाव को उद्दीप्त करती है। सूरदास मदनमोहन के प्रिया-प्रियतम को वह रस-विलास के लिए निमंत्रण देती है—

> बरषा रितु अलि कुंज सुहाई। जहां-तहां कोकिल कल गाई।
> फूले डोलत मधुप डुलावे। उत्कंठा सी तुमहिं बुलावै।।
> वृन्दा विपिन भूमि हरियारी। इंद्रवधू डोलत हैं न्यारी।
> 'सूरदास मदनमोहन' स्यामा। केलि करो मिली मन अभिरामा।।[९८]

दंपति श्याम-श्यामा के चित्त को हर्षित करने के लिए व अद्भुत रस की वृष्टि करने के लिए यह वर्षाऋतु आयी है जिसमे घन-श्याम के संग दामिनि-सी कांतिमयी सखियों की अनुपम शोभा का सरस चित्रण वल्लभ रसिक की 'मांझ' में लक्षणीय है—

> दंपति चित हरषावनि रस बरषावनि बरषा आई।
> हरी भरी वन भूमि करीं चलि इंद्रवधू दरसाई।।
> नव घन दामिनि संग लसे हुलसे लखि मति ललचाई।
> बल्लभ रसिक लाल बसननि बनि निकसे अति छवि छाई।।
> घन घन श्याम संग बहु कामिनि दामिनि सी दमकी हैं।
> रंग रंग सारी लगीं किनारी झूमि झूमि चमकी है।।
> सुवरण वेलि मोल महगा अतलस लहगा झमकी हैं।
> बल्लभ रसिकनि दीसें कंचुकि सब नग की सबकी है।।[९९]

वन-विहार करते हुए राधा-कृष्ण जितना अधिक जल में भीगते हैं, उतना ही मन में रीझते जाते है, उनकी इस प्रेम-विभोर स्थिति का एक चित्र देखिए—

> आनंद को बाग रंग भीनी फुलवारि फूली चहूं कोद
> फुहारा रस वारन झरत हैं।
> भीजे तन ज्यों ही ज्यों ही रीझै मन त्यों ही त्यों ही मिलि
> रही नैन कोर पल न परत है।[१००]

ऐसी उद्दीपनकारी ऋतु में निकुंज मे राधा-कृष्ण प्रेमपूर्वक रति-विलास एवं क्रीड़ा मे रत होते हैं—

> आज कुसुमित बन महक रह्यो।
> श्यामा श्याम निकुंज विराजे दृगन प्रेमरस छलक रह्यो।

श्याम घटा बिच दमक दामिनी मनहु मदन धनु नमक रह्यो।
बाकेपिया दोऊ मिल क्रीड़त मनसिज भट तमक रह्यो।[101]

वन-विहार करते हुए राधा-कृष्ण के रूप-सौंदर्य तथा हर्षोल्लास व अनुराग की व्यजना कवि मनोहरदास एवं हरिराम व्यास ने भी सुदरता से की है।[102]

हिंडोरा : (फूल-डोल, फूल-शृगार, केलि-विलास)—राधा-कृष्ण के फूल-शृगार व हिंडोरे मे झूलने का वर्णन करने मे कवियों की चित्त-वृत्ति अधिक रमी है। सूरदास मदनमोहन, गदाधर भट्ट, रामराय, किशोरीदास, ललित किशोरी, ललित लड़ैती, वल्लभ रसिक, व्यास, बाकेपिया प्रभृति अनेक कवियो ने इसका सरस वर्णन किया है।[103]

श्याम-श्यामा का पुष्प शृंगार अद्भुत है, जिससे उनका अत.-बाह्य—दोनों सुसज्जित हैं। रामराय जी ने फूल के महल मे विराजमान उन्हे फूल मे ही फूलकर (प्रफुल्लित) बातें करते हुए बताया है—

स्याम-स्यामा सुभग, फूल के महल में,
फूल-सिंगार कर, अतिहि सोहै।
मुकुट काछनी फूल, फूलको चोलना,
फूल सूथन निरखि, तीय मन मोहै॥
फूल सारी बनी, फूल कचुकी तनी,
फूल के हार बहु, फूल पोहै।
फूल में फूल अति, फूल बाते करे,
रामराय प्रभु फूल में, निरखि जोहै॥[104]

हिंडोले को रत्न जटित स्वर्ण एव पुष्पो से निर्मित—दोनों रूपो का बताया गया है। वर्षाऋतु मे सघन निकुंज की छाया-तले राधा-कृष्ण फूलो के हिंडोरे (फूल-डोल) मे झूलते हुए मधुर रस का संचार करते हैं। झूला-झूलते हुए उनके आभूषण, वस्त्र यहा तक कि अंग-प्रत्यंग भी एक-दूसरे मे उलझ जाते है। सहचरि-गण राग मल्हार मे मधुर गान गाती हुई उन्हे झोंटे देकर झुला रही है। उनके झूलने से हुए श्रम कणों के परिहार हेतु ललिता आदि सखियां अपने आचल से हवा करती हैं और इस प्रकार उनकी शोभा का दर्शन करती हुई तथा उनकी सेवा करती हुई सुख से हर्षित होती हैं। राधा-कृष्ण की झूला झूलते हुए की शोभा अनुपम है, जिसे वाणी से कहा नही जा सकता।[105] कवि किशोरीदास का मन तो प्रतिपल उस छवि में ही झूलता रहता है—

झूलैं श्री ब्रजचन्द्र छबीली संग रंग हिंडोरैं।
चौंपनि रमक लपटि ऊर लागत तब अति बढ़त हिंडोरैं।
झरत कुसुम बैंनी सैं खुलि खुलि नील पीत पट फहरत छोरैं।
सो झूलन छिन छिन प्रति झूलत किशोरीदास मन मोरैं॥[106]

सावन की हरियाली तीज की चर्चा भी इसी प्रसग म हुई है हरियाला तीज पर प्रकृति की हरियाली के मध्य राधा और कृष्ण का गौर श्याम काति मिलकर हरित आभा दे रही है, इसकी अभिव्यक्ति बांकेपिया के प्रस्तुत पद मे लक्षणीय है—

सावन की हरियाली तीज।
झूलत श्यामा श्याम दोउ रस रग बूदन भीज।।
हरित भूमि हरित लता द्रुम हरित शुक पिक टेर।
हरित उडत अनेकन पक्षी रहि घटा घन घेर।।
हरित बसन विचित्र भूषण अंग प्रति दोउ धारि।
हरित सारी पहिर आई, झुलत संग ब्रज नारि।।
गौर श्यामल रग मिल दोउ, हरित आभा देत।
मनहु कीन्हो यमुन तट नव मेघ शशि दोउ खेत।।
झूलत सावन तीज हिल मिल बढ्यो रग अपार।
बाकेपिय प्रभु ललित छवि पर काम कोटन वार।।[१०७]

ललित किशोरी ने झूलते हुए राधा-कृष्ण के परस्पर अनुरागमय मिलन मे प्रेम, उमग-उत्साह, हर्ष के भाव एव अनुभावो की सुंदर व्यंजना की है—

झूलत अलबेलो अलबेली।
पुलकित अग अनग लजावत बरसत रंग सुरत भुज मेली।
परसत विहसि कपोल कपोलन जोरत नैनन नवल नवेली।।
ललित किशोरी उमगि मिलत ज्यों नील लता सों कंचन बेली।।[१०८]

झूला झूलते हुए राधा-कृष्ण में झोटे दे देकर आगे बढ़ने की स्पर्धा होती है। साथ-साथ झूलते हुए नटनागर श्याम तेज-तेज झोटे देने से बाज नही आते तब आखिर प्रिया को मान धारण करना पड़ता है। झूला-लीला के अंतर्गत मान का प्रसंग ललित किशोरी, शोभन गोस्वामी एव ललित लड़ैती ने वर्णित किया है।

कवि शोभन की राधिका इसलिए मान धारण करती है कि उसने अपने प्रिय के सबंध में किसी अन्य स्त्री के साथ विहार करने की बात सुनी है। मानिनी राधा के मान-मोचन का प्रयास करती हुई ललिता सखि श्यामसंदर के गहन प्रेम व विरह-व्याकुल दशा का निरूपण करती हैं—

मान को गुमान प्राण प्यारी बलिहारी तजि,
सुजस तिहारो रिझवार लाल गात है।
रीति प्रेम प्रीति की न तेरी सम जाने और,
बहुत निहोरों कर तोकों समझात है।

पल छिन न तेरी सखि मोहन वियोग सहै
शोभन उदासी सों तेरो मग चाहत है।
बेग चलौ स्वामिनी सुहावनी विहारी पास,
तू तौ इतरात उतरात बीती जात है ।।[१०६]

ललित किशोरी और ललित लडैती की राधिका तेज-तेज झूला झुलाने के कारण मानिनी हो जाती है। कृष्ण प्रिया से मान त्यागने के लिए अनुनय-विनय करते है। इस अनुरोधपूर्वक मनुहार मे कृष्ण के गहन प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। वे दीनतापूर्वक विनती करते हुए प्रिया से कहते है—

करिये मान न रूप अगाधे।
तोकों सौह अलक कुटिली की रमक बढाऊं साधे साधे।
ललित किशोरी तरल न करिहो मंद पैंग पहिले सी आधे।
बिना मोल को चेरो तेरो मोसों कहा रूसनो राधे ।।[११०]

मान-मोचन के उपरांत उनके परस्पर मिलन मे असीम आनद का स्रोत प्रवाहित हुआ है। इस सुदर मिलन मे राधा-कृष्ण की प्रेमानुभूति मे सकोच व सुख की अभिव्यक्ति देखिए—

प्यारी हंसि निज दृगन तै लालन लिये बुलाय।
दोऊ मिलि करने लगे सुदर केलि सुहाय।।
सुख को अगार चारु नवल सिंगार अति,
सौरभ विविध रति केलि सुखदात है।
सरस प्रसून सेज रस अति शोभा मानो,
निरखि निरखि अलीगन ना अघात है।
करत कपोल मृदु मृदुल कपोल जोर।
झिझकि झिझकि दोउ अंग लपटात है।[१११]

इस प्रसंग मे सुरति-केलि-क्रीड़ा का वर्णन ललित किशोरी ने भी सुदरता से किया है।[११२]

शरद ऋतु लीला

शरद ऋतु का वर्णन कवियों ने रास लीला के प्रसग मे किया है, केवल शोभन गोस्वामी एवं मनोहरदास ने इस ऋतु का पृथक् वर्णन किया है। शोभन ने शरद ऋतु में प्रकृति के विमल-शीतल सौंदर्य का चित्रण इस प्रकार किया है—

आई ऋतु सरद सुहाई विमलाई छाई,
छाई नभ भूतल मे सुतल तल ताल मे।
अलि कुल राजे कुंज कुजन मे गुंज गुंज,
पुज पुज कुसुम समूहन के जाल मे।

शोभन भनत नव खंजन चकोरन की,
नीकी पाति भांति भांति सोभित मराल में।
विधिमुखी ब्यालन में गंधित तमालन में,
बालन में राजित विहारी बनमाल में ॥[113]

कवि मनोहर ने शरद की सुषमा का अंकन किया है—

सारद विमल राका उडपति उदै देखि,
फूले द्रुम बल्ली मल्ली आदि अधिकाई है।
चांदनी हू चहुं ओर पत्र पत्र फैल रही,
दक्षिण पवन मंद मंद गति भाई है ॥[114]

यह सुहावनी ऋतु प्रेम भाव को उद्दीप्त करती है, प्रेमी-प्रेमिका के मिलन हेतु अनुकूल ऋतु है। तभी तो अभिसारिका नायिका—राधा अपने प्रिय से मिलने के लिए शरद-ज्योत्सना के समान श्वेत वस्त्र धारण कर प्रस्तुत होती है ताकि उसमें वह मिल जाये और दिखायी न दे। इस भाव की सशक्त अभिव्यक्ति मनोहरदास जी ने अपने पद में की है—

सरद की रैनि उजियारी अभिसार प्रिया,
प्रीतम पैं सेत सारी और अंग कीने है।
मालती मुकता मल्ली माला अंग अंग सोहै,
आभूषन हीरनि जटित रंग भीने है ॥
चांदनी में मिलि चली देखन न पावैं अली,
अंग की सुगंधि अनुसार के हू चीने है ॥
राधिका रमन मिले मनोहर भांति भांति,
खिले नैन झिले मानो शोभा जल मीने है ॥[115]

अन्य कवियों द्वारा रास के संदर्भ में किये गये शरद वर्णन का विवेचन हम आगे रास-लीला के प्रसंग में करेंगे।

वसंत लीला

ऋतुराज वसंत और उसमें विविध क्रीड़ाओं का वर्णन प्रस्तुत काव्य में प्रचुरता एवं सरसता से हुआ है। प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण को सर्वाधिक हर्षित करने वाली ऋतु कवियों को विशेष रूप से प्रिय है। वसंत में प्रकृति का सौंदर्य अपने पूर्ण निखार पर होता है। विविध प्रकार के पुष्प खिल उठते हैं, भौरे गूंजने लगते है, कोयल मीठे स्वरों में कूकने लगती है, मोर-मयूरी के संग नृत्य करने लगते है—

नित मोरे कुसुमित बनराई ॥
गुंजत मधुप कोयलिया कुहुकत पवन दक्षिन तैं आई।

रजनी रगभरी राजत है चद्र चद्रिका सुहाई
राजत है रितुराज तहा रितु सबहिन कौ सुखदाई।
नाचत मोर मयूरी के सग कुज लता झुकि आई।
श्री व्रजचद्र किशोरी तहा चलि कीजै मदन बधाई ।।[११६]

वसत ऋतु मे वृंदावन की शोभा का सुदर चित्रण अनेक कवियो ने किया है।[११७] शोभन गोस्वामी का निम्न पद द्रष्टव्य है—

बेलिन नवेलिन मे विपिन विहारिन मे,
वृंदावन बीथिन विलोकि बगरत है।
बादल बिमान बाम बालन बितानन मे,
बेश नव बाजन में विविध छयत है।
शोभन भनत सब गलीन बिछौनन में,
विपिन बागन मे सु कुसुम धरंत है।
विजय बयारन में विमल बजारन मे,
विधु बननालन मे राजत बसत है ।।[११८]

कवि माधुरी ने वृंदावन का अत्यत सरस व मधुर चित्रण किया है। मधु-ऋतु वसत के आते ही वृंदावन श्रीवैभव से युक्त होकर अद्भुत प्रकाश से युक्त हो जाता है। वन में छाया और प्रकाश का सुदर संगम माधुरी जी को ऐसा प्रतीत होता है मानो दामिन-घन परस्पर मिलकर धरती पर विचरण कर रहे हों। अरुण लताएं, पुष्प दल की सेज, भूमि आदि प्रातःकालीन सूर्य के समान लगते है और अरुणिमा के रूप मे मानो विपुल अनुराग भाव ही उमड पड़ा हो।[११९] इस वन की शोभा में दंपति राधा-कृष्ण के तन की कांति प्रकृति में झलकी पड़ती है जो दिनकर की कांति से भी अधिक प्रदीप्त है। प्रिया की द्युति इतनी सुदर है मानो जल में दीपमालिका का झिलमिल प्रकाश हो—

पल्लव प्रसून पत्र सरस सलोल लता,
नखसिख शोभा सब अगन मे झलकै।
दिनकर हूंते द्युति दिपति अधिक देखि,
दम्पति की देह सत द्रुमनि मे दलकै।
माधुरी की धारा रोम रोम ते उमगि चलि,
अरस परस छवि दुहुन की छलकै।
प्यारी जी की कांति न समाति कहूं कानन में,
मानो दीपमालिका-सी दोलें ढिग जल कै ।।[१२०]

राधा-कृष्ण और वृंदावन की कांति का मीलित रूप कवि को घन-दामिनी के सम्मिलित रूप-सा सुंदर प्रतीत होता है। वसंत मे प्रकृति की पल-पल, नव-नव कोटि रूपों मे परिवर्तित शोभा का वर्णन करने में कवि अपने को असमर्थ पाते हैं।[१२१]

कवियो ने वसत को नायक व प्रकृति को नायिका के रूप म चित्रित किया है [22] माधुरी ने प्रकृति को अभिसारिका नायिका के समान शृंगार धारण किये हुए बताया है—

> फूलन की रचना रुचिर कौन भाति रची,
> कर अभिसारी जनु नायिका सिंगारी है।
> जगमगि रही तैसी जौन्ह उजियारी जैसी,
> गौरे तन सोहै मानो तनसुख सारी है ॥[123]

गदाधर भट्ट ने वसंत रूपी प्रियतम के शुभागमन के अवसर का आनंदोत्सव के रूप मे आकर्षक वर्णन किया है। वसंत-रूपी प्रिय के आगमन को जानकर प्रकृति-रूपी प्रेयसी सुदर शृंगार करती है। वह अनेक वर्णो के पल्लव व फल-फूलों के वस्त्राभूषणों को धारण करती है। पक्षियों का कलरव ऐसा लगता है मानो बधाईया बज रही हों। मगल-गान गाने के लिए कोकिला को आमंत्रित किया गया है। मलय-पवन-रूपी परिचायक सेवा करते हुए सबके मन को संतोष प्रदान कर रहा है। अलि गण-रूपी द्विज-जनों को मकरद-रूपी भोजन परोसा जा रहा है।[124]

श्रीकृष्ण के अंग-प्रत्यंगों की शोभा की समता वसत के विकसित सौंदर्य-से स्थापित की गयी है। गदाधर भट्ट के निम्न पद मे कृष्ण को साक्षात् वसंत का रूप प्रदान किया गया है—

> देखोऊ प्यारी कजबिहारी मूरतिवत बसंत।
> मोरी तरुण तरुलता तनमैं मनसिज रस बरसंत॥
> अरुण अधर नव पल्लव शोभा विहसनि कुसुम विकास।
> फूले विमल कमल से लोचन सूचित मन को हुलास॥
> चल चूर्ण कुंतल अलिमाला मुरली कोकिल नाद।
> देखियति गोपीजन बनराई मुदित मदन उनमाद॥
> सहज सुबास स्वास मलयानिल लागत सदानि सुहायौ।
> श्री राधामाधवी गदाधर प्रभु परसत सुख पायौ॥[125]

कवि ने इसी प्रकार राधा को प्रकृति का रूप प्रदान किया है। वसत ऋतु मे प्रकृति अपने पूर्ण यौवन मे होती है और नायिका का भी यौवन मे पूर्ण विकास होता है। गदाधर भट्ट ने राधिका के अग-प्रत्यंगों में प्रकृति के उपकरणों की स्थापना कर राधा के सौंदर्य की सुष्ठु व्यंजना की है।[126]

वसंत ऋतु मे राधा-कृष्ण को वासंती (पीत) शृंगार धारण किये हुए चित्रित किया गया है।[127] शोभन गोस्वामी का एक पद प्रस्तुत है जिसमें पीत सदन में पीत चौकी पर पीत वस्त्राभूषण को धारण करके राधा-कृष्ण सुपीत सखियों सहित सप्रेम विराजमान हैं—

पीले ही सदन माहि पीत मीन चौकी पर
राजत सुपीत चारु चारु सखि बृंद है।
प्रीत सो करन माहि पीत हरि आसन लें,
पीत स्वेत किरण दिखात सो अमद है।
पीत ही वसन अरु हसन सुप्रीत भरी,
पीत जड़े भूषण सुहाग सुख कद है।
प्रीत सो सुशोभन विराजे पीत साड़ी ओढि
गोकुल कुमारी रूप धारी मनु चंद है।।[१२८]

वसंत शृंगार की उद्दीपनकारी ऋतु है। इस मधु ऋतु मे प्रिया-प्रियतम राधा-कृष्ण के मन मे प्रेम की भावना प्रबल होती है और मिलन की उत्कंठा जाग्रत होती है। माधुरी जी ने वसंत मे राधा-कृष्ण के मिलन एवं क्रीड़ा-विलास का सरस चित्रण किया है। नवल-निकज मे वे विहार करते हुए प्रमुदित होते है और कुसुम शैय्या पर केलि-क्रीड़ा मे रत होते है। प्रेमोत्कर्ष की ऐसी दशा का एक चित्र देखिए जिसमे राधा-कृष्ण का स्वरूप परस्पर इतना उलझ गया है कि वे सुलझते नही हैं और मिलकर अद्वैत हो रहे है—

श्यामा श्याम सेज सुख सोए। अंगन मे सब अंग समोए।।
मुख सो मुख सुख सों लपटाने। नैननि मे दोऊ नैन समाने।।
उर सों उर भुज सो भुज जोरें। प्रेम बंध छूटक नही छोरें।।

सुरझाये सुरझे नही, उरझ रहे यह रूप।
अरस परसि ऐसे मिले, द्वै मे एक सरूप।।[१२९]

होली (फाग) लीला

वसंत ऋतु के वर्णन के साथ होली के प्रसंग का निरूपण भी हुआ है। अधिकांश कवियो ने होली संबधी पदो की रचना की है जिनमे प्रमुखतया ललित किशोरी, किशोरीदास, गदाधर भट्ट, माधुरी, वल्लभ रसिक, ललित लड़ैती, व्यास, शोभन गो०, मनोहरदास, रामराय, बांकेपिया के पद उल्लेखनीय है।[१३०] होली के अवसर पर फाग खेलने के वर्णन में पर्याप्त रोचकता एव सरसता है। होली लीला में प्रमुखतया ये प्रसंग वर्णित हैं—फाग-क्रीड़ाएं—रंग, अबीर, गुलाल आदि डालना, पिचकारी मारना; डफ, चंग, मृदंग, झालर-झांझ आदि वाद्य-यन्त्रों के साथ होली धमार, नृत्य एवं गीत; कृष्ण का गोप-मंडली के साथ एवं राधा का सखियों के साथ आना; होली खेलते हुए उनका रूप-रंग एवं परस्पर हास-परिहास व प्रति-स्पर्द्धा।

गोप-मंडली के साथ कृष्ण होली खेलने वृंदावन की गलियों मे निकलते हैं। डफ और मुरली की ध्वनि सुनते ही सखियां प्रिय से होली खेलने के लिए आतुर हो जाती है परतु परकीया राधा एवं सखियो को सास, ननद व गुरुजनों का भय

सालता रहता है। दूसरी ओर मोहन के प्रेम के वशीभूत हो वे रह भी नहीं पाती उनकी इस आकुलता एव विवशता की सजीव अभिव्यक्ति किशोरीदास के निम्न पद में हुई है—

अरी ए हा री खेलन केहि मिस जाऊं।
सासु ननद और पार परौसिनि करैगी सबै चबाऊं।।
बाजत डफ मुरली छला की सुनि सुनि के अकुलाऊं।
बहुरि नंद कौ बोलत मरुआ लै लै मेरौ नाऊं।।
उत मोहन इत गुरजन डर पर्यौ कठिन कुदाऊं।
मिलिए श्री ब्रजचद किशोरी करियै सोई उपाऊं।।[131]

गोपिकाए सोलह श्रृंगार करके होली खेलने निकल पड़ती है। ब्रज की गलियो मे गोप-गोपिया मिलकर फाग खेलते है जिसमे मर्यादा और लज्जा के समस्त बधन खुल पड़ते है। गोप-गणो के साथ कृष्ण एक टोली बनाकर आते है और राधा सखियो के साथ दूसरी टोली बनाकर। उनमे परस्पर होली खेलने के अतर्गत प्रति-स्पर्द्धा का भाव रहता है। वे कभी केशर, रग भरी पिचकारी मारते हैं, कभी मुख पकडकर गुलाल आदि मलते हैं। चंग, डफ, मृदंग आदि बजाते हुए, होली-धमार गाते हुए नृत्य करते हैं। इसमे उनके प्रेमोल्लास की सुदर अभिव्यक्ति हुई है। गदाधर भट्ट द्वारा रचित एक पद यहां प्रस्तुत है जिसमे होली खेलते हुए राधा-कृष्ण एवं सखियो के परस्पर अनुराग, हर्षोल्लास, उमंग एवं मधुर क्रीड़ा-विलास की सुंदर व्यंजना हुई है—

मिलि खेले फाग बन मे वल्लव बाला।
संग खरे रसरंगभरे नवरंग त्रिभंगी लाला।।
बाजत बांसरि चंग उपंग पखावज आवज ताला।
गावत गारी दे दे ब्रजनारि मनोहर गीत रसाला।।
सींचत रंगनि अंग भरे बढ़्यो प्रेम प्रवाह विसाला।
मैन सैन खुररेनु उड़ी नभ छायो अबीर गुलाला।।
कंचन बेलि करे जनु केलि परी बीच स्याम तमाला।
धाइ धरे हसि अंक भरे छूटे केश टूटि उरमाला।।
देखि थकी भंवरी सबरी मृगि मोरि चकोरिनि जाला।
राधिका कृष्ण विलास सरोवर गदाधर मानो मराला।।[132]

होली खेलते हुए सखियां कृष्ण को घेर लेती हैं और उनको पूरी तरह रंगकर उनका युवती रूप बनाकर नख-शिख श्रृंगार करती हैं। अब चतुर कृष्ण पूरी तरह गोपियों के वशीभूत हो जाते है। वे जैसा चाहें वैसा उनको नाच नचाती हैं, कभी राधा के पांव पकड़ने को कहती हैं और कभी नाच दिखाने को, और चतुर कृष्ण प्रिया से मिलने के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जाते है[133] गोपियां अपने चपल हाव भाव से कृष्ण को रिझा लेती हैं वल्लभ रसिक के निम्न पद मे इन

चचल कटाक्ष भाव भगिमाओ का अकन सशक्तता से हुआ है

होरी खेलि आवति है छैल सरसावति हैं,
अंग दरसावति बढ़ावनि है ह्ाल को।
नैननि नचावति हैं धूमहिं मचावति है,
डफहि बजावति उठावति गुलाल को।।
कुंकुम हिलावति है चलि चलि धावति है,
मुख लपटावति झुलावति है माल कों।
वल्लभ रसिक रंग मेह वरसावति है,
गावति रिझावति है लाल नव बाल को।।[134]

कृष्ण के अमर्यादित, उन्मुक्त, निडर-निस्संकोच, व चचल क्रिया-कलापों एव क्रीड़ाओ से गोपियां मन में तो हर्षित होती है परंतु ऊपर से कृत्रिम क्रोध प्रकट करती हैं, वे उनको लंपट-ढीठ कहने से भी नही चूकती—

सजनवा काहू सौ न डरै हो।
निधरक आय कै पकरत बहियां गुलाल भरै हो।।
छैला के रसिया होरी कौ नैंक न काहू की कानि करै हो।
हो हो हो कहि छतियां भांल गावत फिरि फिरि अंक भरै हो।।
मानत नाहिन लोक लाज कहूं लंगर अपनी अरनि अरै हो।
किशोरी श्री व्रजचंद्र कहा तू ढीट्यौ देत फिरै हो।।[135]

ब्रज में होली के अवसर पर मधुर गाली गाने की प्रथा का समावेश भी प्रस्तुत काव्य मे हुआ है। गोपियां कृष्ण को गाली देती हुई उन पर व्यंग्य करती है जिससे अद्भुत हास-परिहास की सृष्टि हुई है। वे कृष्ण को ढीट, लपट-लगर, निर्लज्ज, लालची आदि कहने से भी नही चूकती।[136]

होली-लीला में कृष्ण का सखि-वेश धारण करने का उल्लेख कवियो ने किया है।[137] कृष्ण राधा से मिलने के लिए सखी का छद्म वेश धारण करते है। सखियां राधा से कहती है—यह नंद गांव की सुघर सखी है, इससे अंक में भर कर मिलो। यह सुनकर राधा जब मन मे हुलसकर, उससे लिपटकर मिलती है तो भेद खुलता है कि ये तो कृष्ण हैं, तब वह संकोच में भर उठती है। उसके मन मे मोद है और नेत्रों में लज्जा परंतु बाहर से कृत्रिम क्रोध का प्रदर्शन।[138]

ललित किशोरी की राधा प्रियतम कृष्ण का वेश धारण करती है। वह दर्पण मे अपने प्रतिबिंब को निहारकर मुग्ध होती है और अपने स्वयं के कृष्ण-वेश धारण किये हुए रूप के प्रतिबिंब को प्रियतम समझकर होली खेलती है—

झमकि झमकि पिचकारियां भरि भरि रंग सुकमारि।
भरि भरि मारत मुकर सो पी प्रतिबिंब निहारि।।
भरि भरि मूठ गुलाल की झोरिन लाय अबीर।
लपकि लपकि धालत मुकुर भाजत पलटि अधीर।।[139]

होली मे मान का प्रसग भी वर्णित हुआ है। कृष्ण की चपल क्रीड़ाओं से तंग आकर राधा रूठ जाती है। तब उसके मान को दूर करने के लिए कृष्ण दीनतापूर्वक विनती करते है। राधा के मान धारण करने एवं कृष्ण द्वारा मान-मनौवल संबधी ललित किशोरी का निम्न पद द्रष्टव्य है—

खेलत रंग रूप गरबीली बैठि रही करि मान।
तेरे संग कौन सठ खेलै झटकी चूनर नदान।
अटकी कुंडल मोर कोर पट झटकि गयो मेरो कान।
ललित किशोरी पैयां परि परि मनवत ललन सुजान।।[१४०]

होली खेलने के पश्चात् राधा-कृष्ण के रति-विलास एवं क्रीड़ाओं का चित्रण किया गया है। आलस विथकित राधा-कृष्ण कुंज मे आकर कुसुम सेज पर विश्राम करते हुए विविध क्रीड़ा-विलास मे लीन होते है।[१४१] सुरति-रंग मे विलसित उनकी अनुरागमयी छवि का सौंदर्य अनुपम है—

रवि ससि घन अनुराग निहारे।
अबिर गुलाल दुदभ डफ मे झलकत जुगुल रूप उजियारे।।
बरसत सुरति रंग बिलसन मे भीजत मन लोचन रिझवारे।
ललित किशोरी मदन सदन मे रंग पौलि छवि त्रिभुवन वारे।।[१४२]

मान लीला

विविध लीलाओ के अंतर्गत मान के स्वरूप का विवेचन गत पृष्ठों में प्रसंगानुकूल किया जा चुका है परंतु इसके अतिरिक्त कुछ कवियों ने स्वतंत्र रूप से भी मान के प्रसग का निरूपण किया है जिनमे कवि माधुरी, ललित किशोरी, ललित लड़ैती, व्यास, वांकेपिया, शोभन गोस्वामी व रामराय के नाम उल्लेखनीय हैं।[१४३] माधुरी की 'मान माधुरी' एवं ललित किशोरी की 'मान माधुरी' इस विषय पर स्वतत्र रचनाएं है।[१४४]

स्नेह मे प्रेमी-प्रेमिका के परस्पर समर्पण के साथ अधिकार-भावना का भी विकास होता जाता है। डॉ० जगदीश गुप्त के शब्दों में, 'मान अथवा रोष तभी उत्पन्न होता है जब काम्य वस्तु पर रहने वाले एकाधिकार मे बाधा पड़ती है। 'कामात्क्रोधोभिजायते' के द्वारा गीताकार ने इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को स्पष्टतया व्यक्त किया है। वस्तुत: रोष, क्रोध अथवा मान काम का ही परिवर्तित रूप है।[१४५] कवियों ने इस भाव सत्य को मान लीला के द्वारा सुदरता से व्यक्त किया है। मान प्रेम भाव को अधिक परिपक्व, सरस एवं रोचक बना देता है। मान की महत्ता माधुरी जी ने इस प्रकार स्थापित की है—

बिन सनेह नहिं मान, मान विना न सनेह कछु।
जैसे रस मिष्ठान्न नोन सहित रोचक अधिक।।[१४६]

मान मिश्री के सदृश है जो ऊपर से स्पर्श करने पर कठोर प्रतीत होता है

किंतु उसका आस्वादन करने पर उसकी सरसता का अनुभव होता है। इस मान माधुरी-रस के समक्ष कवि को अन्य सभी रस फीके व व्यर्थ प्रतीत होते हैं।[१४७]

राधा कृष्ण को अन्य स्त्री में अनुरक्त समझकर रुष्ट हो जाती हैं और मान धारण कर लेती है। इस प्रसंग में आलोच्य कवियों ने मानिनी राधा की मनोदशा, कृष्ण की व्याकुल अवस्था एवं मानने वाली सखियों की भावनाओं का सूक्ष्मता एवं कुशलता से अंकन किया है।

मान लीला के कई रूप चित्रित हुए हैं। माधुरी की 'मान माधुरी' में संभ्रम मान का सुंदर रूप है जिसमें कृष्ण द्वारा आलिंगित राधा उनके अनुपम द्युति वलित अंगों में अपने ही श्री अंगों के प्रतिबिंब को देखकर भ्रमवश अन्य नायिका समझ लेती है और मानिनी हो जाती है—

> निरखत निज प्रतिबिंब तन, मन संभ्रम में आनि।
> उठनि उठी मन मान की, और त्रिया संग जानि ।।[१४८]

इसी प्रकार व्यास की राधा प्रियतम के हृदय में अपने प्रतिबिंब को देखकर भ्रमवश उसे अन्य नायिका समझकर उसके प्रति ईर्ष्याजन्य रोष प्रगट करती हुई, फटकारती है—

> पिय के हिय तें तू न टरति री।
> मेलि ठगौरी खेलि स्याम सों मोहू तें न डरति री।
> मेरौ नाह कि तेरौ कहि धौं, जासौं प्रीति करति री।
> हौं इनकी प्यारी तू न्यारी, हौं ही बकत अरति री।[१४९]

सखियों द्वारा अनेक प्रकार से प्रयत्न किये जाने पर भी जब राधा का मान शिथिल नहीं होता तो ललिता की युक्ति से कृष्ण लाल रंग का झीना वस्त्र ओढ़कर राधा के पास आते हैं और तब उसमें अपना प्रतिबिंब न दिखने पर राधा का मान भंग होता है।[१५०] इस समय कवि माधुरी द्वारा राधा के लज्जा भाव की अभिव्यक्ति स्वाभाविकता एवं कुशलता से की गयी है—

> तिरछी ह्वै चाही तब संभ्रम सों मिटि गयो,
> हँसि मुसिकाय दियो सोहैं मुख करिकें।
> पट मे न प्रतिबिंब देख्यौ निज अंगनि कों,
> कछुक लजाय रही नीचें चख ढरिकें।[१५१]

ललित लड़ैती के 'दंपति विलास' में कृष्ण से आलिंगन-बद्ध राधा दर्पण में अपना प्रतिबिंब निहारकर उसे अन्य सुंदरी समझ लेती है और तब मानकर बैठती है।[१५२]

मान लीला का दूसरा रूप वह है जिसमें स्वप्न के कारण मान होता है। इसका निरूपण ललित किशोरी की 'मान माधुरी' एवं ललित लड़ैती के 'किशोरी करुणा कटाक्ष' में हुआ है।[१५३] प्रातःकाल राधा को सोई हुई जानकर कृष्ण सेज से

उठकर फुलवारी में प्रिया के लिए फूलों का हार बनाने के लिए चले जाते है। इतने में राधा को स्वप्न आता है कि प्रिय किसी अन्य स्त्री के पास बैठे हुए हंस-हंसकर बाते करके रस-विलास में मग्न है। आंख खुलने पर कृष्ण को अपने पास न देखकर उसे स्वप्न की बात पर विश्वास हो जाता है और वह रूठ जाती है। कृष्ण प्रसन्नतापूर्वक घर लौटते है परन्तु राधा के मान धारण करने का समाचार सुनकर स्तंभित रह जाते है। प्रिया का शृंगार करने की उनकी कामना पर पानी फिर जाता है। उनकी हंसी विलुप्त हो जाती है और वे अधीर व चकित से रह जाते है।[१५४]

मान के अन्य रूप में कृष्ण के बहुनायकत्व के कारण राधा खंडिता होकर मान करती है। इस विषय के पदों की रचना ललित किशोरी, ललित लड़ैती व शोभन गोस्वामी व व्यास के काव्य में उपलब्ध होती है। इस प्रसंग में कृष्ण को अन्य सखियों में अनुरक्त दिखाया गया है। ललित लड़ैती की राधा इसलिए रूठ जाती है कि उसके प्रियतम कृष्ण किसी अन्य स्त्री के साथ रात्रि व्यतीत करके आये है।[१५५] इस समय कृष्ण की चतुरता भी द्रष्टव्य है कि वे राधा का मान दूर करने के लिए अपनी निर्दोषिता सिद्ध करते हुए कहते है कि रात को मैं अपने घर का रास्ता भूल गया था तब उस सखी ने मुझे अपने घर बुला लिया। रात हो गयी थी और मेह बरसने लगा था। रात भर वह बातों में उलझाए रही इसमें भला मेरा क्या दोष ! कृष्ण की चतुरता एव भोलापन—दोनों की एक साथ स्वाभाविक एव सुंदर अभिव्यंजना है—

> उत भई रैनि लग्यो बरसन मेह होवत बूंद सवाय।
> वा घरवारी राख्यौ रैन भर बातन में उरझाय।
> निकस्यो भोर भवन वा लखि तुम भृकुटी लई चढ़ाय।
> यामें दोष नहीं कछु मेरो देखो रिस बिसराय।
> ललित लड़ैती प्राण जीवती लेवौ कंठ लगाय।।[१५६]

ललित किशोरी ने राधा के रोष का कारण यह बताया है कि एक नागरी द्वारा संकेत से बुलाये जाने पर कृष्ण उसके पास चले जाते है, गुपचुप बाते करते है और उसमें अनुरक्त हो जाते है।[१५७]

राधा को जैसे ही कृष्ण पर संदेह होता है, उसकी प्रतिक्रिया तीव्र होती है। वह व्यंग्यपूर्वक कटु वचन कहती है। मानिनी राधा की रोष से परिपूर्ण भाव-मुद्रा को ललित किशोरी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

> नैन तरेरे रोष भरि भामिनि भृकुटी तान।
> मुरि बैठि चटपट झटकि हटकि लाल करि मान।।[१५८]

कवि माधुरी ने मानिनी राधा की मनोदशा का सूक्ष्मता एवं कुशलता से अंकन किया है। क्रोध में आकर वह अपने समस्त आभूषणों को उतार फेंकती है आंसू बहा-बहाकर अपने आंख के अंजन को पोंछ डालती है और बिना कुछ बोले चुप

चाप नीची गर्दन करके चिंताग्रस्त सी बैठ जाती है[९] उसके मन के रोष दु
एव विरह जनित व्याकुलता की एक साथ सशक्त अभिव्यक्ति हुई है—

बन देखे मन कछु अति कलमली होत,
घन देखे नैनन मे नीर भरि आवही।
केकि किलकारे मृग रीस कैं निकारे,
सह मधुकर द्वारे हूलों आवन न पावही।
कोकिला की बानी सुनी कानि मूदि बैठति है,
काहू के कहेते मन अधिक रिसावही।।
नील कमलन देखि विकल ह्वै जात तनु,
काहू सो न कहि बात मन की जनावही।।[१६०]

राधा के मान-मोचन का कार्य कहीं सखियों द्वारा संपन्न हुआ है तो कहीं कृष्ण स्वयं इस हेतु प्रयास करते हैं। सखी द्वारा समझाये जाने पर राधा भड़क उठती है और उसको ही फटकारने लगती है—

आयी पिय की ओर तें गढ़ि गढ़ि बात बनात।
मिलन सीखिबे दै इन्हैं कूद परी बिन बात।।
लाज खेल गयौ बिखर सब इन्हैं कहा अब लाज।
इन बट आयी निलज्ज कहां लाज सों काज।।[१६१]

कवियो ने सखियों द्वारा राधा को मनाये जाने का ढंग मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सफल एवं स्वाभाविक रूप मे वर्णित किया है। रूठी हुई राधिका को मनाने के लिए वे विभिन्न तरीकों से कृष्ण की एकनिष्ठता एवं निर्दोषिता को सिद्ध करती हैं, कभी कृष्ण की व्याकुल दशा का वर्णन करके राधा पर वांछित प्रभाव डालना चाहती हैं,[१६२] कहीं ऋतुओं के माध्यम से राधा की सुप्त काम-भावना को जाग्रत करना चाहती है तो कभी वे यौवन की क्षणभंगुरता का बखान कर उसके उपभोग-जन्य आनंद को प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न करने का प्रयास करती है।[१६३] इस प्रकार राधा को मनाने के अपने वांछित उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए अनेक मनोवैज्ञानिक तरीकों को अपनाती हैं।

ललित किशोरी ने राधा के मान-भंग के लिए एक मौलिक, आकस्मिक किंतु स्वाभाविक तरीके की उद्भावना की है। बंदरों के कूदने से अचानक चौंककर भयभीत राधिका प्रिय के गले से लिपट जाती है और इस प्रकार स्वतः उसका मान समाप्त हो जाता है।[१६४]

रास लीला

रास, अन्य संप्रदायों की भांति चैतन्य संप्रदाय के काव्य का महत्त्वपूर्ण विषय है। अनेक कवियों ने रास लीला संबंधी पदों की रचना की है रास-वर्णन संबंधी रचनाओं मे ललित किशोरी की रास माधुरी कवि माधुरी की वंशीवट

माधुरी'[165] एवं 'किशोरीदास की वाणी' व व्यास वाणी के अनेक पद महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त सूरदास मदनमोहन, गदाधर भट्ट, ललित लड़ैती, वल्लभ रसिक, बांकेपिया, रामराय, मनोहरदास आदि कवियों ने भी रास विषयक सुंदर पदो की रचना की है।[166]

आलोच्य कवियों द्वारा वृंदावन मे शारदीय रास का सुंदर वर्णन किया गया है। इनके काव्य मे रास के ये रूप मिलते है—गोपी-कृष्ण रास, राधा-कृष्ण-गोपी रास एवं राधा-कृष्ण रास। यह रास वर्णन भागवत के 'रास पंचाध्यायी'[167] से प्रभावित है, साथ ही 'ब्रह्म वैवर्त' एवं 'गीत गोविंद' की परंपरा का समावेश भी परिलक्षित होता है। सांप्रदायिक ग्रंथों—प्रमुख रूप से 'गोविंद लीलामृत' (कृष्ण-दास कविराज कृत) के रास-वर्णन का भी प्रभाव आलोच्य काव्य पर हुआ है।

हरिराम व्यास विशेष रूप से रास के रसिक प्रेमी थे। रासलीला का प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन कर वे भाव-विभोर हो जाते थे और फिर अपने पदों मे उसकी सरस अभिव्यंजना करते थे। भागवत के दशम स्कध में वर्णित कथा के आधार पर त्रिपदी छंद मे रचित 'रास पंचाध्यायी' व्यास जी की अपने ढंग की अनूठी व सरस रचना है। चैतन्य संप्रदाय के कवियों द्वारा रास लीला में प्रमुख रूप से इन प्रसंगो का निरूपण हुआ है—वेणु-वादन और गोपियों का आगमन, गोपी-कृष्ण संवाद, गोपी-गर्व एव कृष्ण का अतर्ध्यान होना, गोपियों की विरहाकुलता, कृष्ण-लीला-नुकरण, कृष्णान्वेषण, कृष्ण का प्राकट्य और गोपियों का हर्षित होना, महारास का आयोजन, रास मे राधा-कृष्ण-गोपियो की अनुपम शोभा, वाद्य-संगीत, नृत्य विलास, जल क्रीड़ा एवं संभोग वर्णन।

रास लीला मे इन कवियों ने कृष्ण-राधा-गोपियों के संयुक्त संगीतमय नृत्य-विलास, व आनंद-उल्लास का चित्रण प्रमुख रूप से किया है। शरद-पूर्णिमा की शुभ्र चादनी मे यमुना तट पर होने वाले रास के नादमय एवं गतिशील दृश्य को प्रत्यक्ष करने में एवं राधा-कृष्ण-गोपियों की रूप शोभा की अभिव्यक्ति में कवियो का मन अधिक अनुरक्त हुआ है। उसमे ये भाव-अनुभूतियां व्यंजित हैं—वंशी-ध्वनि सुनकर गोपियो की अधीरता, रस-विलास की कामना, प्रिय के सामीप्य-जन्य गोपियों की प्रसन्नता व मुग्धता और कृष्ण के अंतर्ध्यान होने पर गोपियो की विरह जनित व्याकुलता।

रास का प्रारंभ कृष्ण के वेणुवादन से होता है। शरद ऋतु के सुहावने एवं मनमोहक वातावरण में कालिंदी के तट पर खड़े कृष्ण के मन मे रास-विलास की कामना जाग्रत होती है। वे वेणु-वादन द्वारा गोपियो का आवाहन करते है। कृष्ण-प्रेम के वशीभूत गोपियों को वंशी की ध्वनि सम्मोहित कर देती है। उस मधुर ध्वनि को सुनकर उनको आह्लाद-मिश्रित उन्माद होता है। वे कृष्ण के पास पहुंचने के लिए अत्यंत व्याकुल एवं अधीर हो जाती हैं। प्रेम-विह्वला गोपियों को न गृह-काज का ध्यान रहता है और न लोक-लाज का। अपने प्रिय के पास पहुंचने की उतावली में वे अपने सभी कार्य अधूरे छोड़कर या उल्टे कार्य करके चल देती है

और शीघ्रता मे अस्त-व्यस्त-सी उलट-पलट शृंगाराभूषण धारण करके दौड़ पड़ती हैं। गोपियों की इस अस्त-व्यस्त दशा एवं व्याकुलता का किशोरीदास ने अत्यं स्वाभाविक चित्रण किया है—

> एरी ए सरद रैनिक उजियारी कुसुमित वन सुखकारी।
> मोहन मुरली बजाई, श्रवत सुनत उठि धाई।
> धाई श्रवन सुनत ब्रज वधू छाड़ि सब गृह काज।
> पय औंटि जमावत बछ मिलावत पति सुत छाड़ि समाज।।
> उलटि पलटि भूषन सजे एक चक्षि काजर आज।
> है आतुर उठि चली मिलन कुंवर ब्रजराज।।[१६८]

बांकेपिया की गोपियां भी इसी प्रकार मुरली की मोहिनी ध्वनि सुनकर अत्यत व्याकुल हो जाती है। वे अपने पति, पुत्र, कुल-मर्यादा को त्याग देती है। अधीर होकर अधर मे अजन, नयन मे मंजन आदि उल्टे शृंगार कर लेती है। उन्हें अपने तन की सुधि नही रहती और वे सम्मोहित-सी हरि के पास दौड पड़ती हैं।[१६९] ललित किशोरी की गोपिया तो न घर की रहती है न वन की, विरह व्यथित उनकी गति छुईमुई के समान हो जाती है, उन्हे एक पल भी चैन नही मिलता—

> बांसुरी की नई धुनि सुनि कै प्रानन की गति कैसी भई री।
> घर की भई न वन की अब हम कौन-सी करनी हाय हुई री।
> अधीर मन विरह विथित तन भई गति जैसे छुईमुई री।
> जिये न कल मल न मुये न चैना निकसा पैठी प्रान लई री।[१७०]

इसी प्रकार वंशी-ध्वनि सुनकर गोपियों के चित्त की विभ्रम-व्याकुलता का अंकन गदाधर भट्ट, सूरदास मदनमोहन, ललित लड़ैती, माधुरी व व्यास आदि कवियो ने भी अपने काव्य में कुशलता से किया है।[१७१]

उन्मादित एवं व्याकुल गोपियां जब वन मे कृष्ण के समीप पहुंचती है तो कृष्ण उनके प्रेम की परीक्षा लेने के लिए उन्हे घर लौट जाने के लिए कहते है। वे उन्हें समझाते हुए कहते है तुमने यहां आकर कुल की मर्यादा के विरुद्ध अनुचित कार्य किया है। पतिव्रत धर्म को भुलाकर तुमने भारी अपराध किया है। अब मेरी सीख मानकर तुम अपने भवन को लौट जाओ।[१७२] यह सुनकर गोपिया स्तब्ध-सी रह जाती है। जिन प्रियतम के लिए वे घर-बार, पति-पुत्र आदि सभी कुछ त्यागकर यहां चली आयी हैं, उनके मुख से इस प्रकार के कठोर शब्द सुनने की उन्हे आशा न थी। उनका सारा उत्साह-उल्लास समाप्त हो जाता है। वे मर्माहत, दुखी एवं निराश हो उठती हैं। वे अपने प्रेम का विश्वास दिलाती हुई उनसे दीनतापूर्वक कहती हैं—

> ऐसे निठुर न बोलौ प्यारे।
> अमीं बचन कहि अब विष घोलौ निकसत तन तें प्राण हमारे।।

सुख संपति परिवार मान सुख उर तुमरे पद कमलन धारे।
ललित लड़ैती सों तिया यों ही जन्म गंवावत राज दुलारे।।[173]

रास के मध्य अनायास जब कृष्ण अंतर्ध्यान हो जाते हैं, तब गोपियां विरह वेदना से व्याकुल हो उठती हैं। वे कृष्ण की लीला का अनुकरण करती हैं। फि भी जब वे नही आते है तो उनकी व्याकुलता तीव्र हो जाती है। वे उन्मादित होकर वन, वृक्ष लता, पशु-पक्षी सभी से कृष्ण के विषय में पूछने लगती है।[174] कृष्ण के चरण-चिह्न देखकर गोपियां उस मार्ग पर उन्हे ढूढ़ने निकल जाती हैं—

कीनी जु लीला तऊ न आये तब उठि पुनि ढूढन चली।
बूझत वन द्रुम बेलि वसुधा इक इक ह्वै न्यारी अली।।
चिह्न देखे चरन के तब वुही मारगि गहि लियौ।
बीच मे एक तिया देखी ताहि पूछत भरि हियौ।।
एरी ए बहुरि पुलिन में आई, सुमिर प्रिया गुन गाई।
आइ मिले तिहि काल, कर जोरे मदन गोपाल।।[175]

कृष्ण के पुनः प्रकट होने पर रास की रचना की जाती है। यहां रास-विलास व माधुर्य-निरूपण में कवियों की वृत्ति अधिक रमी है, इस सबध मे अनेक सुदर पदो की रचना की गयी है।

रास मे सखियो का मंडल बनाकर उनके बीच में युगल रसिक राधा-कृष्ण नृत्य कर रहे हैं। उनकी यह शोभा घन-दामिनी के समान अनुपम है।[176] राधा मृदग एव वीणा आदि के स्वरो का अनुसरण करती हुई अपने कोमल पदों की विशिष्ट गति विन्यास से मधुर झंकार करती हुई अद्भुत नृत्य कर रही है। उस षोडश शृंगारिणी राधा के रूप की कांति अनुपम है। उस रूप-सौंदर्य एवं नृत्य माधुरी से विमुग्ध कृष्ण हर्ष से पुलकायमान हो रहे हैं।[177] गदाधर भट्ट द्वारा रचित रास की शोभा का एक सुदर चित्र दृष्टव्य है—

निर्त्तत राधानंद किशोर।
ताल मृदंग सहचरी बजावत बिच-बिच मोहन मुरली कलघोर।।
उरप तिरप गग धरत धरणि पर मंडल फिरत भुजन भुजजोर।
शोभा अमित विलोक गदाधर रीझ-रीझ डारत तृण तोर।।[178]

सूरदास मदनमोहन ने भी रास की शोभा का वर्णन आकर्षक रूप से किया है—

घोष-नागरी मडल मध्य नाचत गिरधारीलाल,
लेत गति अनेक भांति, चरन पटकनी।
गिड़गिड़ता-गिड़गिड़ता, ताता तत-तात तत, थेई-थेई,
बीच-बीच अधर मधुर मुरलिया मटकनी

भुजसों भुज जोरि जोर, लेत तान नवकिशोर,
गावत श्री राग, मिलि ग्रीव लटकनी।
'सूरदास' प्रभु सुजान, नदनंदन कुंवर कान्ह,
मदनमोहन छवि निरखत काम मटकनी ।।[179]

रास में प्रिया-प्रियतम—राधा-कृष्ण रासोचित सुंदर वेश धारण करते हैं उनके छवि-सौंदर्य की अभिव्यक्ति वल्लभ रसिक की 'मांझ' में अवलोकनीय है—

नव नागर नट चटक मटक सों मोर मुकुट छवि धारी।
धारी छवि चटकीलें दुपटा लटकत छोर छटारी ।।
किये प्रकाश रास मंडल पर ताम काछिनी न्यारी।
वल्लभ रसिक करली मुरली सुर लिये तीय मन हारी ।।
प्यारी पहरि बादली सारी चहुदिस लाइ किनारी।
जाली की चौली पर बंद जगे केहीं की हारी ।।
अटकनि लटकनि लालन की लखि हरखि अस भुज धारी।
लटकि चली मंडल पर वल्लभ रसिक अली बलिहारी ।।[180]

माधुरी व व्यास के रास-वर्णन में पर्याप्त सरसता एवं रोचकता है। रास में राधा-कृष्ण की श्री-सुषमा की सुंदर व्यंजना के साथ-साथ उन्होंने उनके रस-विलास, हर्षोल्लास, भाव-भंगिमाओं, मुद्राओं एवं अनुभावों की मधुर एवं आकर्षक ढंग से अभिव्यक्ति की है—

नृत्य लास भ्रूविलास मंद-मंद चारु हास,
रास में विलास केलि कोटि कोटि कामिनी।
कुंडल मृदु गंड लोल चचल अचल सुलोल,
श्रमकन शोभित कपोल कनक धामिनी।
परम मधुर करत गान लेति सरस सुघर तान,
निकसत दुरिजात मन घनहुं मेघ दामिनी ।।
टूटत मन कटि प्रदेश छूटत कल कुसुम केस,
लूटत सुख सिंधु सरस भाय भामिनी ।।[181]

व्यास कृत रासलीला के पदों में नृत्य की-सी गति, लय एवं संगीतात्मक नाद-सौंदर्य दिखायी देता है। इनमें कवि जयदेव की कोमल-कांत मधुर पदावली के समान मधुर भाव-संवेदनाओं व विन्यासों की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। प्रेम विभोर दशा के अंतर्गत हृदय के उल्लास व उमंग का साकार रूप चित्रित हुआ है—

वृषभान-नंदिनी सरद-चंदिनी नटति गोबिंद-संगे ।।

× × ×

कंकन किंकिन नूपुर धुनि मिलि, सुनियत ताल मृदंगे।
हस्तक-मस्तक भेद दिखावत, उमगत उरज उतंगे॥
भृकुटि-बिलास, बंक अवलोकनि, मंद हास उपजत रंगे।
व्यास स्वामिनी के रस गावत, तरु-मृग-भंवर-बिहंगे॥

× × ×

अंग-अंग प्रति सुधंग, रंग गति तरग सग,
रति-अनंग मान-भग मनि-मृदंग बाजै।
सुर-बंधान गान-तान मान जान गुन-निधान,
भ्रुव-कमान, नैन-बान सुर बिमान छाजै॥[152]

ललित किशोरी द्वारा प्रस्तुत रास-लीला वर्णन मे रास मे रत राधा-कृष्ण की सहचरियो द्वारा सेवा करते हुए उस रस-विलास के आस्वादन व आनंद का निरूपण किया गया है—

निरतत रास मे पिय प्यारी।
उडि-उड़ि भ्रमत चकोर चंदमुख चौंकत लाल बाल सुकुमारी॥
ललितादिक अलि चवर ढुरावत झमकि-झमकि होती बलिहारी।
ललित किशोरी चपल चलत झुकि मुख मोरत ओटत पट सारी॥[153]

रास के प्रसग मे कवियों ने राधा-कृष्ण के विवाह का आयोजन कराके उन्हे दूल्हा-दुल्हन के रूप मे चित्रित किया है। इस संबंध में गदाधर भट्ट, रामराय एव सूरदास मदनमोहन के नाम उल्लेखनीय है।[154] रास-स्थली को विवाह-वेदी बनाकर कुजों मे पुष्प-मडप के मध्य राधा-कृष्ण के विवाह का वर्णन किया गया है।[155] गदाधर भट्ट ने इस विषय का अधिक विस्तृत एवं सुंदर निरूपण किया है। उन्होने दूल्हा-दुल्हन बने राधा-कृष्ण की रूप-शोभा के अतिरिक्त विवाह महोत्सव के अंतर्गत विभिन्न रीति-रिवाजो, परंपराओं तथा दांपत्य जीवन के सुख-आनद, सखियो के मधुर हास-परिहास का भी सुदर चित्रण किया है। शरद में विवाह-रात्रि के शुभावसर पर दूल्हा-दुल्हन के रूप मे राधा-कृष्ण की शोभा अनुपम है। यहा कवि ने प्रकृति के विभिन्न उपकरणों से उनके विवाह की आयोजना सुदरता से की हे। नक्षत्रों से युक्त गगन वितान के समान तना हुआ है। विवाहोत्सव पर सारस, हस, कपोत, भौंरे आदि पक्षियों को ब्राह्मणों का रूप दिया गया है जो मानो सस्वर वेद-मत्रों का उच्चारण कर रहे हों। कोयल मीठे स्वरों मे गान गा रही है। विविध रगो के पुष्प मानो अनेक बाराती है जिन पर पराग रूपी चंदन-केसर का छिड़काव किया गया है। देवतागण इस अद्‌भुत विवाहोत्सव को देखकर मोहित है।[156] विवाह मे कंगना खोलने की रस्म का वर्णन करते हुए कवि गदाधर ने सखियों के हास-परिहास के मध्य राधा-कृष्ण की प्रेमपूर्वक स्थिति एवं अनुभवों की स्वाभाविक एव मोहक की है

हंसि-हंसि कसि-कसि ग्रंथि बनावें नवल निपुन ब्रज नारि।
ना छूटै मोहन डोरना हो बलि बाध्यो लड़ैती के पानि ।।
बड़े होहु तौ छोरि औटौ सुनहु घोष के राइ।
कर जोरौ बिनती करौ कै छुवहि प्रिया जू के पाइ ।।
यह न होइ गिरि को धरिबौ हो सुनहु कुवर गोपीनाथ।
बहुत कहावत है आपुन, अब काहे कापन लागे हाथ ।।
स्वेद सिथिल कर पल्लव हरिलीनो छोरि सम्हारि ।।

× × ×

ज्यौं-ज्यौं छूटे डोरना हो त्यौं-त्यौं बधे प्रेम की डोरि।
देखि दुहुन की रीति सखि सब हंसहि मुदिल मुख मोरि ।।[१५७]

भागवत पुराण गोविंद लीलामृत (सांप्रदायिक संस्कृत ग्रंथ) के समान ललित किशोरी व व्यास ने रास के अंत में यमुना में कृष्ण-गोपियों की जल-क्रीड़ा का वर्णन किया है। कृष्ण-राधा व गोपियों की इस जल-केलि-क्रीड़ा में उनके रसोल्लास व उमंग का मधुर चित्र द्रष्टव्य है—

श्याम जल विहरत श्यामा संग।
चहूं ओर मृगनैनिन मंडल हास विलास महारस रंग ।।
छीटन कर रस केलि मचावत सोभित सीकर बदन सुढंग।
झलमलात उडगन आभूषन छुटे केस मुख लेत तरंग ।।
दुरि-दुरि लाल गहत गोपिन को चपला चमकि बचावत अंग।
ललित किशोरी नव घन दामिनी क्रीड़त जमुना भरे उमंग ।।[१५८]

माधुरी ने जल-क्रीड़ा का वर्णन रास से पूर्व संध्या समय ही कर दिया है और उसके पश्चात् सेज-सुख का निरूपण किया है।[१५९]

निकुंज लीला—सुरति केलि-विलास

राधा-कृष्ण के प्रेम का पूर्ण परिपाक निकुंज केलि-क्रीड़ाओं में हुआ है, जहां सुरति-सेज पर संभोग चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। प्रायः सभी कवियों ने स्फुट पदों में तथा श्रृंगार के विविध प्रसंगों के मध्य रति-वर्णन किया है। इस संबंध में ललित किशोरी, माधुरी, सूरदास मदनमोहन, शोभन गोस्वामी, वल्लभ रसिक, रामराय, बांकेपिया, किशोरीदास व व्यास के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[१६०] ललित किशोरी ने 'रस कलिका' में प्रत्येक लीला के अंत में सुरति-क्रीड़ा संबंधी पदों की रचना की है। विविध लीलाओं के अतिरिक्त स्वतंत्र रूप से भी रति-वर्णन किया गया है। माधुरी की 'केलि माधुरी' एवं ललित किशोरी की 'निकुंज विहार माधुरी' का तो विषय ही यही है।[१६१]

ललित किशोरी ने सुरति-लीला से पूर्व मधुपान का वर्णन किया है। मधुपान से प्राप्त रति क्रीड़ा के आनंद में वृद्धि करती है अत राधा-कृष्ण क्रीड़ारत

होने से पूर्व वन में मधुपान करते है। सखियां इसमें सहायक होती है और वे बरजोरी करके उन्हे पिलाती है। प्रिया राधा के मना करने पर भी कृष्ण हठपूर्वक उन्हे पिलाने से नहीं चूकते।[१६२] इस प्रकार मधु-पान करके वे आनंद में झूम उठते हैं। इस प्रकार की उनकी प्रेम-आनंद-विभोर दशा का एक चित्र देखिए—

ललित किशोरी अति आमोद झूमैं।
रसीले मैन मद दुउ नैन घूमैं॥

× × ×

का कछु आई दुहुन मन झमकि उठे कर जोर।
डोलत हसि-हंसि झूमि-झुकि मदन रंग सरबोर॥[१६३]

सुरति-लीला मे प्रथम समागम का सुदर वर्णन शोभन गोस्वामी व ललित किशोरी ने किया है। शोभन गोस्वामी ने प्रथम समागम मे प्रिया राधिका की झिझक, लज्जा व संकोच को अत्यत स्वाभाविक व प्रभावोत्पादक रूप से व्यक्त किया है। प्रियतम कृष्ण के आगमन को जानकर वह प्रथम संभोग की कल्पना मात्र से ही स्वाभाविक रूप से उत्पन्न लज्जा और भय के कारण पलंग के नीचे जाकर छिप जाती है। प्रथम समागम संबधी निम्न पद द्रष्टव्य है जिसमे हर्ष, भय, लज्जा, संकोच आदि भावो का सहज व सुदर प्रकाशन हुआ है। राधा के मन में तो प्रसन्नता है परंतु ऊपर से रोप प्रकट करती है—

जघन कटोर जोर बांह को मरोर ओर,
पति को न देख उर कंचुकी दुरावती।
नीवी की गांठ कौ सुसांठ मार कीनी दृढ,
साटीका की छोर मोर पायन दबावली।
सोभन सुछल कर दृग तें सुजल बिंदु,
डार-डार नार अति पीकौ दुरावती।
कवुक कुटिल युग भृकुटी चढ़ाय चौंक,
देख पिय ओर हंसि मन कों चुरावती॥[१६४]

ललित किशोरी द्वारा प्रस्तुत प्रथम समागम के वर्णन में लज्जा व संकोच कम है, प्रारभ मे ही सभोग खुलकर वर्णित हुआ है जिसमें सुरति-व्यापार व अनुभावों की व्यंजना हुई है—

दुऊ करन कपोल दबाये।
कैंची किये कनक भुज पद की कसि-कसि उभै उरोज दुराये।
नीवी डोर छोर दै दसनन पालिका मग सौं पग उरझाये।
ललित किशोरी कंप पुलक अंग स्वेद स्वास सिर हिये गढ़ाये।
सो-सो सौंहे घात रसिक मणि बसि पौढोंगो उर लिपटाये
ललित किशोरी प्रथम दातन दाव पसीना आये[१६५]

प्रथम समागम के पश्चात् सखियों के हास-परिहास, चुहुलबाजी, मधुर व्यंग्य का वर्णन ललित किशोरी ने किया है। सखियां चुटकी लेती हुई राधा से प्रथम मिलन के 'रजनी रस' की बात पूछती हैं। संकोचशीला राधा निरुत्तर है परन्तु उसके कपोलों की लालिमा व नमित नेत्र, लज्जित भंगिमा उसकी सब बात को व्यक्त कर देते हैं।[१६६]

राधा-कृष्ण की सुरति-क्रीड़ा हेतु निकुंज में प्रसून-सेज की रचना सहचरियां प्रसन्नतापूर्वक करती हैं। वे राधा के विभिन्न प्रकार से रुचिर व नवल शृंगार करके उसे प्रतीक्षारत कृष्ण के पास भेजती हैं। सुख-सेज पर राधा-कृष्ण परस्पर क्रीड़ा-रत होते हैं। बांकेपिया के निम्न पद में सुरति-लीला के विभिन्न व्यापारों का सरस व मधुर निरूपण हुआ है—

> भीजि रहे रति श्रम जल दोउ जन।
> बिलसत श्यामा श्याम रंग भरे कोक कला की भौजन।
> परिरंभन आलिंगन चुंबन गहि-गहि हस्त सरोजन।
> नखन प्रहार हास रस मस भरे बतियां करत अति चोजन।
> सुरति समर में निपुण वीर दोउ मेलत कंठ उरोजन।
> बांकेपिय भुज जंघ अधर मिल प्रकटत केलि मनोजन।।[१६७]

माधुरी ने प्रिया-प्रियतम की दिव्य केलि का सूक्ष्म व सरस आख्यान किया है। राधा-कृष्ण के अद्वैत रूप का सुंदर अंकन हुआ है—

> श्यामा श्याम सेज सुख सोए, अंगन में सब अंग समोए।
> मुख सों मुख सुख सों लपटाने, नैननि में दोऊ नैन समाने।
> उर सों उर भुज सों भुज जोरें, प्रेम बंध छूटक नहीं छोरे।
>
> सुरझायें सुरझे नहीं, उरझ रहे यह रूप।
> अरस परसि ऐसे मिले द्वै भै एक सरूप।।
>
> × × ×
>
> एकै मन एकै सुतनु, एकै चित्त चितार।
> प्रिया पीय के पिय प्रिया, कछू न होत विचार।।[१६८]

सुरति-क्रीड़ा में व्यास की राधा कृष्ण से इस प्रकार मिल गयी है जैसे खांड घी से।[१६९] वल्लभ रसिक का निकुंज वर्णन अतिशय सांद्र, सूक्ष्म व प्रखर है। निकुंज में सुरति-उल्लास की अभिव्यक्ति दर्शनीय है—

> रतिरस केलि दुहूं मिलि बाढ़ी। रस चसकनि में ससकनि गाढ़ी।।
> मन-मन हुलसनि सुलसनि सोहै। विहसनि चौप चौगुनी भोहै।।
> लालचु ललचि बसो पिय माही। रीझि-रीझि क्यों हूं न अघाही।।
> उनमद जोबन मद मतवारे। हंसि-हंसि हसत हंसे नहीं हारे।।
> लटकि-लटकि लपटाति अंकनि में। मचकति लचकति दुहु लंकनि में।।[२००]

संभोग मे विपरीत-रति के चित्र वल्लभ रसिक व ललित किशोरी कुशलता से चित्रित किये गये हैं।[201] वल्लभ रसिक द्वारा रचित निम्न पद द्रष्ट है—

रति प्यारी-प्यारी कहर करलि सुरति विपरीत्ति।
रति पति की मूरति भई लई दुहुनि मन प्रीति।।
मतवारी हारी नही प्यारी रति विपरीत्ति।
झुकि उर सों उर लाइ के लेति अधर रस मीति।।[202]

केलि-क्रीड़ा के उपरात राधा-कृष्ण की छवि व अवस्था का मनोहारी अंक कवियों ने किया है। सुरतोपरांत उनकी छवि अनुपम है। केलि-क्रीड़ा से थकि उनके शिथिल अंगों पर श्रम-जल-कण शोभायमान हो रहे है। उनकी इस अस्त व्यस्त दशा का एक सुंदर चित्र द्रष्टव्य है—

देखि सखी, आंखिन सुख दैन दोऊ जन।
बिपुरी-अलक, पीक-पलक, खंडित-अधर,
मंडित गंड, सिथिल-बसन गौर-सांवरे तन।।
नव निकुज, कुसुम, पुज रचित सैन, मैन-केलि,
कलित दुहूं अंग-अग, स्रम-जलकन।।
आवेस अरुन चकित नैन चाह, बिवस कमल बैन,
सैननि कछु कहत 'व्यास' दासी जन।।[203]

राधा-कृष्ण की इस शोभा के साथ-साथ कवियों ने उनकी लज्जामिश्रित मनोदशा का भी सहज चित्रण किया है। व्यास जी ने अनेक पदों मे इन मनोभावों की अभिव्यक्ति की है। सुरतांत राधा की अस्त-व्यस्त दशा का चित्रण करते हुए कवि व्यास ने राधा के अपार, हर्षोल्लास व लज्जा-संकोच के अनुरूप विभिन्न भाव-मुद्राओं और अनुभावों की सहज व सुंदर अभिव्यजना की है—

आजु पिय के संग जागी रात।
दुरति न चोरी कुवरि किसोरी, चीन्हैं परसत गात।।
पुलकित कंपित गातनि संकित, बात कहत तुतरात।
जावक, पीक, मखी रंग रंजित, सारी स्वेत चुचात।।
छूटी चिकुर चंद्रिका, उरजनि पर लटकति लर-पांत।
मानहुं गिरवर कंचन ऊपर, मेघ घटा धुरवात।।
खंडित अधर पीक गंडनि पर, लोचन अलस जभात।
हंसत अकोर देत, चित चोरत, अंग मोर एंड़ात।।
कहा-कहा रति बरनौं बैभव, फूली अग न मात।
वेगि देखाउ बहुरि वह कौतिक, 'व्यासदास' अकुलात।।[204]

नवल किशोर से मिलने के पश्चात किशोरी राधा का हृदय तो हर्ष से हिलोर

प्रथम समागम के पश्चात सखियों के हास परिहास चहुलबाजी मधुर व्यंग्य का वर्णन ललित किशोरी ने किया है। सखियां चुटकी लेती हुई राधा से प्रथम मिलन के 'रजनी रस' की बात पूछती हैं। सकोचशीला राधा निरुत्तर है परतु उसके कपोलों की लालिमा व नमित नेत्र, लज्जित भंगिमा उसकी सब बात को व्यक्त कर देते है।[१९६]

राधा-कृष्ण की सुरति-क्रीड़ा हेतु निकुंज में प्रसून-सेज की रचना सहचरिया प्रसन्नतापूर्वक करती है। वे राधा के विभिन्न प्रकार से रुचिर व नवल शृंगार करके उसे प्रतीक्षारत कृष्ण के पास भेजती है। सुख-सेज पर राधा-कृष्ण परस्पर क्रीड़ा-रत होते है। बांकेपिया के निम्न पद में सुरति-लीला के विभिन्न व्यापारों का सरस व मधुर निरूपण हुआ है—

> भीजि रहे रति श्रम जल दोउ जन।
> विलसत श्यामा श्याम रंग भरे कोक कला की भौजन।
> पररंभन आलिगन चुबन गहि-गहि हस्त सरोजन।
> नखन प्रहार हास रस मस भरे बतियां करत अति चोजन।
> सुरति समर मे निपुण वीर दोउ मेलत कठ उरोजन।
> बाकेपिय भुज जंघ अधर मिल प्रकटत केलि मनोजन॥[१९७]

माधुरी ने प्रिया-प्रियतम की दिव्य केलि का सूक्ष्म व सरस आख्यान किया है। राधा-कृष्ण के अद्वैत रूप का सुंदर अंकन हुआ है—

> श्यामा श्याम सेज सुख सोए, अगन मे सब अंग समोए।
> मुख सों मुख सुख सों लपटाने, नैननि मे दोऊ नैन समाने।
> उर सों उर भुज सों भुज जोरें, प्रेम बंध छूटक नही छोरे।
>
> सुरझाये सुरझे नही, उरझ रहे यह रूप।
> अरस परसि ऐसे मिले द्वै भै एक सरूप॥
>
> × × ×
>
> एकै मन एकै सुतनु, एकै चिह्न चिह्नार।
> प्रिया पीय के पिय प्रिया, कछू न होत विचार॥[१९८]

सुरति-क्रीड़ा मे व्यास की राधा कृष्ण से इस प्रकार मिल गयी है जैसे खांड घी से।[१९९] वल्लभ रसिक का निकुज वर्णन अतिशय सान्द्र, सूक्ष्म व प्रखर है। निकुज मे सुरति-उल्लास की अभिव्यक्ति दर्शनीय है—

> रतिरस केलि दुहूं मिलि बाढ़ी। रस चसकनि में ससकनि गाढ़ी॥
> मन-मन हुलसनि सुलसनि सोहै। विहसनि चौंप चौगुनी भोहैं॥
> लालचु ललचि बसो पिय मांही। रीझि-रीझि क्यों हूं न अघाही॥
> उनमद जोबन मद मतवारे। हंसि-हंसि हंसत हंसे नही हारे॥
> लटकि-लटकि लपटाति अंकनि में। मचकति लचकति दुहु लंकनि मे॥[२००]

संभोग मे विपरीत-रति के चित्र वल्लभ रसिक व ललित किशोरी द्वा कुशलता से चित्रित किये गये है।[201] वल्लभ रसिक द्वारा रचित निम्न पद द्रष्टव्य है—

रति प्यारी-प्यारी कहर करति सुरति विपरीति।
रति पति की मूरति भई लई दुहुनि मन प्रीति ॥
मतवारी हारी नही प्यारी रति विपरीति।
झुकि उर सो उर लाइ के लेति अधर रस मीति ॥[202]

केलि-क्रीड़ा के उपरांत राधा-कृष्ण की छवि व अवस्था का मनोहारी अंक कवियों ने किया है। सुरतोपरात उनकी छवि अनुपम है। केलि-क्रीड़ा से थकि उनके शिथिल अंगों पर श्रम-जल-कण शोभायमान हो रहे है। उनकी इस अस्त व्यस्त दशा का एक सुंदर चित्र द्रष्टव्य है—

देखि सखी, आंखिन सुख दैन दोऊ जन।
बिपुरी-अलक, पीक-पलक, खंडित-अधर,
मंडित गंड, सिथिल-बसन गौर-सांवरे तन ॥
नव निकुंज, कुसुम, पुंज रचित सैन, मैन-केलि,
कलित दुहू अंग-अंग, स्रम-जलकन ॥
आवेस अरुन चकित नैन चाह, बिवस कमल बैन,
सैननि कछु कहत 'व्यास' दासी जन ॥[203]

राधा-कृष्ण की इस शोभा के साथ-साथ कवियों ने उनकी लज्जामिश्रित मनोदशा का भी सहज चित्रण किया है। व्यास जी ने अनेक पदों में इन मनोभावो की अभिव्यक्ति की है। सुरतांत राधा की अस्त-व्यस्त दशा का चित्रण करते हुए कवि व्यास ने राधा के अपार, हर्षोल्लास व लज्जा-संकोच के अनुरूप विभिन्न भाव-मुद्राओ और अनुभावों की सहज व सुदर अभिव्यंजना की है—

आजु पिय के संग जागी रात।
दुरति न चोरी कुवरि किसोरी, चीन्हैं परसत गात ॥
पुलकित कंपित गातनि संकित, बात कहत तुतरात।
जावक, पीक, मसी रग रंजित, सारी स्वेत चुचात ॥
छूटी चिकुर चंद्रिका, उरजनि पर लटकति लर-पांत।
मानहुं गिरवर कंचन ऊपर, मेघ घटा धुरवात ॥
खडित अधर पीक गंडनि पर, लोचन अलस जभांत।
हंसत अकोर देत, चित चोरत, अंग मोर ऐंड़ात ॥
कहा-कहा रति बरनौं वैभव, फूली अंग न मात।
वेगि देखाउ बहुरि वह कौतिक, 'व्यासदास' अकुलात ॥[204]

नवल किशोर से मिलने के पश्चात किशोरी राधा का हृदय तो हर्ष से हिलोर

लेने ही लगता है, तन भी हिलोरें लेने लगता है। उनके केश विकीर्ण है, नैन आलस से भरे अरुण हो रहे है, सुरत-रंग मे रंगी वह डगमगाकर चरण धरती है। सुरतांत राधिका की इस दशा का रामराय जी ने अत्यंत स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत किया है—

> आजु किशोरी लेत हिलोर।
> नेंक सभात न हिये रसिकनि मिली जु नवल किशोर।
> शिर सीमंत कुसुम लट अटपट बिकिरत चारों ओर।
> अरुन नैन आलस बस विथकित पीक कपोल अथोर।
> सुरत रंग मे रंगी रंगीली लूटे निज चित चोर।
> डगमगात पग धरत गहलई रामराय पट छोर ।।[२०५]

सुरतांत चित्रण मे सूरदास मदनमोहन ने नवीन कल्पनाओं की योजना की है जैसे मिलनोपरांत राधा के झुके हुए नेत्र ऊपर नही उठते मानो भीगे हुए मधुकर है जिनसे उड़ा नहीं जाता। एक सखि के शब्दों में कृष्ण के नेत्र इसलिए ऊपर नही उठते कि या तो उन्होंने अन्य किसी को न देखने का नेम लिया हुआ है या पलकों पर प्यारी को बसा लिया है जिससे ऊपर नही उठते। व्याकुल हरि मिलन के पश्चात् उसी प्रकार शांत हो गये जिस प्रकार कांसे की ठनक हाथ के स्पर्श से शांत हो जाती है।[२०६]

सुरति-क्रीड़ा के पश्चात् राधिका के भय की व्यंजना भी की गयी है। ललित किशोरी की परकीया राधा गुरुजनों के भय से इतनी अधिक भयभीत व लज्जित है कि अन्य उपाय न होने पर 'कुछ' खाकर मर जाने तक की सोचने लगती है—

> आली अब मैं घर ना जाऊंगी।
> फूटि गई ह्वै है चौहट में का पुरवासिन मुंह दिखाऊंगी।
> दुरी दुरी देखत ही चांदनी झलक गई मैं कहा बताऊंगी।
> बगल बजावत भजी अंधेरे आग धसत गृह जाल गाऊंगी।
> ललित किशोरी मिलौं ना काहू कछु न बनै तो कछु खाऊंगी।।[२०७]

चैतन्य की माधुर्य भाव परक लीलाएं

राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं के अतिरिक्त ब्रजभाषा कवियों ने राधा-कृष्ण के मीलित अवतार चैतन्य महाप्रभु की मधुर लीलाओं का भी सरस चित्रण किया है। चैतन्य संप्रदाय के बंगला कवियों ने चैतन्य की मधुर लीलाओं का निरूपण जितना विस्तारपूर्वक प्रचुर मात्रा में किया है, वैसा विस्तार ब्रजभाषा काव्य मे नहीं हुआ है। तथापि अनेक कवियों ने ब्रजभाषा में चैतन्य की मधुर लीला-संबंधी पदों की सुंदर रचना की है। चंद्रगोपाल कृत 'गौरांग अष्टयाम', गौरगणदास कृत 'गौरांगभूषण मंझावली', कृष्णदास कृत 'गौर नाम रस चंपू' व बांकेपिया की 'प्रेम रस वाटिका नामक रचना के कुछ पदों में माधुरीदास किशोरीदास मनोहरदास गुणमंजरी

आदि कवियों द्वारा रचित पदों मे गौराग चैतन्य की मधुर लीलाओं का चि
हुआ है।

वस्तुत: चैतन्य की ये लीलाएं राधा-कृष्ण की प्रेम-पराकाष्ठा की महाभा
परक लीलाए है। इन लीलाओं मे गौरांग चैतन्य के अतरंग पार्षदों की लील
रसाधिकारिणी विशाखा ललिता आदि सखियो के रूप मे उद्भावना की गयी है
निम्न पद में श्री गौरांग की मधुर लीला में उनके अतरंग पार्षद गदाधर पडि
का राधा के रूप मे एव स्वरूप दामोदर, रामानंद का सहचरी रूप मे चित्र
किया गया है—

जुगलवर क्रीड़त जमुना तीर।
श्री गौराग गदाधर मिलि मिलि, सुंदर धीर समीर।
ललिता श्री स्वरूप दामोदर, लाड़ भरे गभीर।
गलबाही दै चलत महासुख, परछाई लखि नीर।
रामानद विसाखा बपु सों, खेल खिलावत वीर।
श्री प्रभु 'चंद्र' भरि भौरन की, बोलत कोकिल कीर ।।[२०८]

गौरांग चैतन्य के प्रेम-मग्न स्वरूप ने कवियों को सर्वाधिक आकृष्ट किया है
आनंद व केलि रसिक गौर हरि प्रेम-रस में निमग्न रहते हैं। वे गौर-सुदर राधा
भाव मे विभोर होकर 'कृष्ण-कृष्ण' पुकारते हुए उज्ज्वल मधुर रस का स्रोत
प्रवाहित करते हैं—

अंग सुधंग में रोम तरंग, कदंब प्रसून को नून बनामें।
दोनों भुजान उठान सो प्रेम, प्रिया प्रिय रूप अनूप जतावै।
हे हरि माधव, कृष्ण पुकार, कहां हौ हे नंदकुमार सुनामैं।
'स्यामा' के भाव भरे नव निर्तत, गौर किसोर कों मोर प्रनामें।।[२०९]

राधा-कृष्ण की विभिन्न लीलाओं के समान ही कवियों ने चैतन्य की विभिन्न
माधुर्यपरक लीलाओं मे वन-विहार, रास, होली, वसंत, वर्षा ऋतु आदि उत्सव
संबधी लीला पदों की रचना की है। कुंज-विहार करते हुए गौर किशोर की सुदर
शोभा को निरखकर पुर-नारियों की आत्म-विस्मृत प्रेम विभोर दशा का एक चित्र
देखिए—

अरी अब कौन कुज के माही।
बिलसत गौर किसोर चोर चित्त, लिये दिये गलबाही।
बतरावत आवत जो पूछत, सो बतात जब नाही।
अपनी-अपनी बातन भूली, एक तान चित्त लाहीं।
मेलो मच्यो डगर मे दीसत, कोउ दरसन हित जाही।
श्री प्रभु 'चंद्र' कलिद सुता की, छटा छई परछाहीं।।[२१०]

गौरांग की मधुर लीला में गदाधर पंडित को राधा-रूप में एवं उनके भक्तो

को सखियों के रूप में चित्रित करके लीला का विस्तार एवं परिपोषण हुआ है। निम्न पद में राधा भाव, कांति व रति को धारण करने वाले नटवर गौर चंद्र-चैतन्य की, सखियों के साथ नृत्य करते हुए, अनुपम शोभा है—

राधा भाव कांति रति धरि कैं,
प्रिय संगिनी सब सहचरी करिकैं।
सदय भये कलि काल नर कें,
अपने गुन पर वारी।
बाजे करताल मृदंग मधुर ध्वनि,
सफल भक्त हरि हरी रव गर्जनी।
मध्ये विराजत न्यासि चूड़ामणि,
निभृत निकुंज विहारी।
नाचत नटवर गौर चंद्र नवद्वीप सुधाकर,
बामे विराजत प्रान गदाधर, शोभा की बलिहारी।
थातै थातै गंभीर गर्जन,
खोल करताल बोलि अति अगनन।
शचीकुमार पग मंजीर झनमन,
भक्त देत कर तारी।।

× × × ×

दास वृंदावन दीन हीन जन, सो वंचित जन्म अकारण।[211]

वर्षा ऋतु में प्रेम के हिंडोरे पर झूलते हुए प्रियतम कृष्ण-चैतन्य व नित्यानंद की अपार रूप शोभा से प्रभावित सखियां (चैतन्य के भक्त रूपी सखियां) प्रेमानंद में निमग्न हो जाती है—

झूलत नवल हिंडोरे दोऊ प्रीतम बसन सुरंग।
महाप्रभु चैतन्य कृष्ण हरि श्री नित्यानंद संग।
चहुं दिस भक्त झुलावत गावत नाना प्रेम तरंग।
रूप निहारत तन मन वारत नैन पुलकित अंग अंग।
बाजे विविध बजावत नाचत निरखत मति गति पंक।
छवि अपार मनहरण कहा कहे छिन छिन कौतिक होत अभंग।।[212]

वर्षा ऋतु के सांगरूपक द्वारा मनोहरदास जी ने गौर चंद्र चैतन्य के प्रेम-प्रधान रूप के अंतर्गत सात्विक अनुभावों की सुंदर अभिव्यंजना की है—

देखौ री एक गौर मेह
नख शिख ते मानो धर्यौ है देह।।
नृत्य करत मानो प्रेम पवन वश,
नयन झरत मानौ वर्षा घन रस।।

वरण वरण आभूषण राजत
मानहु बिज्जुल माला साजत ।।
बिच बिच अट्टहास मनु गर्जनि,
थरहरात हिय रोम रोम सुनि ।।
सीचत स्वजन बेलि मानो उलही,
भनत 'मनोहर' नाहिन तुलही ।।[213]

इसी प्रकार गुणमंजरी दास ने वर्षा ऋतु के सांगरूपक द्वारा एवं कृष्णदास ने वसंत के सांगरूपक से चैतन्य के प्रेमोल्लासकारी मधुर रूप व लीला को चित्रित किया है ।[214] होली खेलते हुए गौर-गोपाल चैतन्य की नख-शिख-मधुर छवि का निरूपण गदाधर भट्ट ने एक लंबे पद मे किया है । इसके कुछ अंश द्रष्टव्य हैं—

खेलत फाग रंग रह्यो सजनी नागर गौर गोपाल ।
जूट लटक छंदक चटकारे शिर घुंघरारे बार ।
तापर माल मालती मधुकर, मधुकरि करत गुंजार ।
अलकन झलक तिलक ललकत चमकत श्रुति कुडल युगगड ।
अमल कमल लोटित लोचन, घन बरखत धार अखंड ।
भौंह नटन नासिका निकाई, बधु अधर सुरंग ।
× × ×
निरखि गदाधर आवेशित चित पुलकित नख सिख अंग मुरार ।[215]

बांकेपिया ने भी गौरांग की सुरम्य प्रेम से परिपूर्ण होली-लीला का सरस चित्रण किया है ।[216]

श्री गौराग प्रेम और आनंद के निधान हैं। उनके भावोद्रेक से परिपूर्ण नृत्योल्लासकारी रूप का प्रभाव अतिशय होता है। जगत के समस्त प्राणी उस अपूर्व प्रेमानंद के वशीभूत होकर स्तभित रह जाते है। इस भाव दशा का चित्रण मनमोहरदास जी ने निम्न पद में किया है। रास-लीला में नृत्य करते हुए गौर-गोविंद की अनुपम शोभा व आनद विभोर दशा के अंतर्गत स्वेद, पुलक, कप आदि सात्विक भावों का भी सुदर प्रकाशन हुआ है—

रास मडल बने नृत्य नीकी बनी ।
गौर गोविंद के नैन अरविंद सूं,
छूटत आनंद मकरंद चहुं दिसि घनी ।।
ताल बस मृदु चरण धरत धरनी,
हुलसि विलस मस्तक भेद चलत लोयन अनी ।
पुलक सब देह घन कंप भरि थहरानि,
परसत प्रस्वेद सुरभेद भारी बनी ।।
निपट अवसन्न जब तबहिं छिति झुकि परत,
अंग नहिं हलत गत स्वास की निगमनी ।।
× × ×

लगी टकटकी यह सुख मनोहर भनी ।।[२१७]

गौराग का मधुर रस-विलास कवियों का चरम उपास्य तत्व है। गौर-कृष्ण का मधुर कुंज-केलि रस उज्ज्वल प्रेमरस है जिसके आस्वादन के बिना भक्त कवि गौरगणदास को अन्य सभी रस फीके प्रतीत होते है—

रस भूषित गौराग प्रेम वपु उज्ज्वल नीके।
रस भोजन रस शयन वैन रस विन रस सब फीके।
रस मे विलसत कुंज केलि रस पगे अमी के।
ठाकुर परम रसाल चसक रस वस जु भली के।
रस उमगे निसि याम सहचर गन रस ही के।
विन लखे गौर-विलास रचै का भूषण जी के ।।[२१८]

चैतन्य की मधुर लीलाओं और निकुंज केलि-विलास संबंधी अनेक पदों की रचना वनविहारिनदास व सरस माधुरी नामक कवियों ने की है किंतु इन कवियो के विषय मे प्रामाणिक रूप से ज्ञात नही होने के कारण इनके पदों को यहा समाविष्ट नही किया गया है।[२१९]

विरह

संयोग में प्रेम की अनुभूति जितनी तीव्र होती है, उससे अधिक वियोग मे होती है। प्रेम की परिपुष्टता के लिए संभोग से अधिक विप्रलभ की महत्ता मानी गयी है। आचार्य रूप गोस्वामी की यह मान्यता है कि विप्रलंभ शृंगार संयोग शृंगार की शाश्वत गति है, अतः विप्रलंभ के बिना संभोग की पुष्टि संभव नही है।[२२०] वल्लभ संप्रदायी कवि सूर ने भी इस प्रकार का मत व्यक्त किया है कि जिस प्रकार पुट लगाने से वस्त्र का रंग स्थायी और चमकदार बन जाता है, बीज गलने पर सैंकडों फलों से युक्त होकर फलता है, आग मे तप्त होकर घड़ा दूध व अमृत भरने योग्य बनता है, उसी प्रकार विरह में तपकर ही प्रेम का रूप निखरता है।[२२१] चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में वियोग की अपेक्षा संयोग-वर्णन अधिक किया गया है, परंतु विरह की मार्मिकता एवं तीव्रता व्यंजित हुई है। विरह संबंधी काव्य-रचना कृष्ण चैतन्य निज कवि कृत 'उद्धव चरित्र', बाकेपिया विरचित 'प्रेमोद्दीपनी', 'पथिक मराल' व 'मधुर मिलन', माधुरी के 'उत्कंठा माधुरी' तथा अन्य स्फुट पदों मे हुई है। 'उद्धव चरित्र' तो प्रमुख रूप से विप्रलंभ काव्य ही है।

गोपियों एवं राधा के विरह का प्रारंभ वहां से होता है जब कृष्ण के ब्रज से मथुरा जाने की बात प्रकट होती है। कृष्ण चैतन्य निज कवि ने यहा कृष्ण के मथुरा-प्रवास का कारण श्राप को बताया है। श्रीदामा ने राधा-कृष्ण को सात वर्ष के वियोग का श्राप दिया था उसी के कारण उन्हें विरह का यह दुख सहन करना पड़ा।[२२२] कृष्ण को जाते हुए देखकर गोपियां मर्मांतक पीड़ा के आघात से

स्तमित-जड़ हो जाती हैं उन्हें अपनी सुधबुध नहीं रहती

नकु न चलत अचल भइ अनमिष केती वाल ।[२२३]

कृष्ण के मथुरा चले जाने के पश्चात राधा व गोपियो की विरहाकुल स्थिति व मनोवेगों की मार्मिक व मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति प्रस्तुत काव्य मे हुई है । कवि बाकेपिया ने कृष्ण के विरह में व्याकुल गोपियो को विगत की स्मृतियो में डूबी हुई चित्रित किया है । वे अतीत के कृष्ण के प्रेम का स्मरण करती हुई वर्तमान मे उनके द्वारा भुलाये जाने पर उनकी निष्ठुरता को व्यक्त करती हैं—

कल न एक छिन परत बिना राधा के देखे ।
छद्म रूप धरि जात मिलन प्रभु ब्रज वरसाने ।।
हम सब करत सहाय तब, प्रभु सो देत-मिलाय ।
सो अब निठुर भये इतै, श्याम मधुपुरी जाय ।।
समय को फेर वह ।।[२२४]

कृष्ण के विरह में गोपियां अत्यंत व्याकुल होकर दीन एवं असहाय हो जाती है । उनके जीवन का उत्साह व उल्लास समाप्त हो जाता है । वे अपनी सुधबुध भूल जाती हैं और कृष्ण-कृष्ण पुकारती उन्हें खोजती रहती हैं—

प्रेम अमल मद छक रही, तन की दशा बिसारि ।
नयनन में मनु वसि रह्यो, प्रीतम नंद कुमार ।।
वियोगिनि सी फिरै ।।
टेरत पुनि पुनि कृष्ण प्राण धन नंद दुलारे ।
गये कितै मोहि छांड़ि मिलहु हे प्रीतम प्यारे ।।[२२५]

बिना प्रीतम के उन्हें कुछ अच्छा नहीं लगता । शीतल चंदन अंगों को तप्त लगता है, माथे की बिंदिया लाल अंगारे की भांति दग्ध करने वाली है, पुष्प भार सम एवं अलके नागिन, आभूषण पाहन, केश अधियारी रात के सदृश दुखदायी लगते हैं । विरह में व्याकुल होकर उनके अधर सूखकर श्याम हो गये हैं । उनकी प्रति श्वास से श्याम नाम उच्चारित होता है । दुख की मारी वियोगिनी राधा की अवस्था तो इससे भी अधिक दयनीय है । उसके नेत्रों से इतने आंसू प्रवाहित हो रहे है कि उसे स्नान की भी आवश्यकता नहीं होती ।[२२६] सखियों द्वारा समझाये जाने पर उसकी विरह-अग्नि शांत नहीं होती अपितु और अधिक धधकती है । बाकेपिया ने विरहणी राधा के चित्त की विभ्रम-व्याकुलता, उद्वेग एवं गहन वेदना का मार्मिक अंकन किया है—

विरह अनल तन बढ़त प्रबोधत अलिगण ज्यों ज्यों ।
लगत न एकहु सीख हूक उपजत हिय त्यों त्यों ।।
उठत गिरत रोवत हसत छण छण बहु अकुलात ।
श्याम श्याम हा ! प्राणधन कहि अधीर मुरझात ।।
विकल विरहिनी महा ।।

पात पात खोजत फिरत, अब कदब तमाल।
छण छण आलिंगन करत, अनुमानत नंदलाल।।
पड़ी संभ्रांति मे।।[227]

प्रिय-मिलन की आशा-निराशा के मध्य झूलती विरहणी राधा एवं गोपियां मानसिक उद्वेलन से पीड़ित हैं। पत्ते के हिलने की आवाज से ही वे चौंक उठती है और प्रिय-मिलन की आशा में आतुर होकर दौड़ पड़ती है परंतु श्याम को वहां न पाकर वे निराश एवं दुखी हो जाती हैं। उनके नेत्र सजल हो जाते है। वे कभी अति दुखी होकर अपने प्रेम को ही कोसने लगती है। वे खीज उठती है कि उन्हे यह नेह का फल अच्छा मिला है—

विरह सिंधु उमगत सखी, सुमिरत छवि ब्रजचंद।
प्रेम सलिल दृग तें बहै, गयो सकल आनंद।।
मिल्यो फल नेह को।।[228]

अतिशय दुख के कारण गोपियों की स्थिति उन्माद तक पहुंच जाती है वे कृष्ण से सादृश्य रखने वाली वस्तुओं को देखकर सभ्रमवश उन्हे कृष्ण की समझ लेती है। कोकिल की बोली को सुनकर भ्रमवश मुरली-ध्वनि समझ लेती हैं और व्याकुल हो जाती हैं।[229] मृग-छौना को श्याम के लोचन व बादल को श्याम-तन समझकर प्रिया राधा अकुला उठती हैं। वह चातकी के समान प्रियतम के दर्शन रूपी स्वाति-बूंद को प्राप्त करने के लिए अत्यंत उत्कंठित एवं व्याकुल है—

मृग छौनन कों निरखि श्याम मृग लोचन जानत।
आतुर पकरन हेतु तिनहिं, पाछे उठ धावत।।
श्याम जलद तन हेर के पिय पिय करत पुकार।
प्रीतम स्वाती दरस हितु तलफत बारबार।।
तृषित चातकी सम।।[230]

बांकेपिया ने 'पथिक मराल' मे राधा के विरह की मार्मिक व्यंजना की है। इसमें हंस को दूत बनाकर कृष्ण के पास सदेश भिजवाया गया है। हंस को पथिक के रूप में संबोधित करके राधा की प्रिय सखी ललिता कृष्ण तक संदेश पहुचाने के लिए कहती हैं जिसमे राधा की विरह-व्याकुल दशा को व्यक्त किया गया है। राधा-कृष्ण के विरह में अत्यंत व्याकुल हो गयी है। वह उन्मादिनी होकर कुंज-कुंज में उन्हे ढूढती फिरती है और कृष्ण-नाम पुकारती रहती है। वह अहर्निश प्रीतम के ध्यान मे मग्न रहती है, अपनी सुध-बुध भुलाकर क्षण मे भीतर जाती है क्षण में बाहर या द्वार की ओर निहारती रहती है। बांकेपिया के निम्न पद मे राधा की विरह-व्याकुल दशा के अंतर्गत विषाद, उद्वेग, चिंता आदि भावों की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है—

कंपित होत शरीर बढ़त जब हृदय वेदना।
टपकत अंग-अंग स्वेद बोल मुख तें आवत ना।।

कृशतन अति उद्वेग मन छिन छिन होत अचेत
तन पीरो चिंतित पडी, विषम उसास लेत ।।
प्रलाप करत महा ।।[231]

विरह की चरमावस्था तब होती है जब राधा प्रिय के विरह मे मरण तक की कल्पना कर लेती है। राधा के उदात्त एवं गहन प्रेम की अभिव्यंजना यहां देखने को मिलती है जब जीवित समय मे तो वह अपने प्रिय से मिलने की स्वाभाविक आकाक्षा रखती ही है लेकिन वह प्रेयसी तो मरने के पश्चात् भी उनके सामीप्य की उत्कट कामना व्यक्त करती है। अपने शव को श्याम तमाल-वृक्ष से बांधने और अपने प्रत्येक अंग पर श्याम-नाम लिखने को कहती है—

जो नहिं पाऊं दरश मरौ सखि कृष्ण-विरह में।
दीजो मम शव बांधि, श्याम द्रुम इक तमाल मे।।
लिखियो मेरे अंग प्रति, श्याम नाम सुख धाम।
गल तुलसी, भुज बाधियो, मोर पंख अभिराम।।
धरहु ढिग वेण इक ।।[232]

पथिक मराल से गोपियों का संदेश सुनकर और उनकी विरह-व्यथित दशा को जानकर कृष्ण व्याकुल होते हैं। उनके मन में ब्रज में लौटने की उत्कट अभिलाषा जाग्रत होती है। यहां कृष्ण की विरह-व्याकुल दशा की अभिव्यजना हुई है—

जब ही कह्यो सदेस आय इक मानसवासी।
कृष्ण सुनी ब्रजदशा लगी हिय प्रेम की फांसी।।
विरह ताप हिय द्रवित करि बही जु अंसुवन धार।
काजर लोचन श्याम मुख गगन मेघ अनुहार।
लगी श्रावण झड़ी ।।[233]

गो० कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि के 'उद्धव चरित्र' मे गोपियों के साथ कृष्ण के विरह की भी अभिव्यंजना हुई है। भ्रमरगीत प्रसंग को लेकर कृष्ण-भक्त कवियो ने गोपियों की मनोदशा को ही प्रमुख रूप से अभिव्यक्ति प्रदान की है परंतु चैतन्य सप्रदाय के निज कवि की यह मौलिक विशेषता है कि उन्होंने गोपियो के साथ कृष्ण व उद्धव के भावों को भी व्यक्त किया है। यू, वल्लभ संप्रदाय के सूरदास ने भी कृष्ण के ब्रज-प्रेम की व्यंजना की है परंतु 'निज कवि' एवं सूर में मौलिक अतर है। सूर के कृष्ण उद्धव का ज्ञान-गर्व नष्ट करने के निमित्त व्रज के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित करते-से लगते है परतु इसके विपरीत 'निज' ने कृष्ण का ब्रज के प्रति प्रेम स्वाभाविक रूप से प्रकट किया है, किसी कारण या उद्देश्य विशेष से प्रेरित होकर नहीं। सूर की अपेक्षा 'निज' कवि के कृष्ण की स्थिति मानवीय धरातल पर अधिक स्वाभाविक एवं सहज है।

पूर्ववर्ती भ्रमरगीत काव्यों मे श्रीकृष्ण समस्त कथा के केंद्र बिंदु होते हुए भी

पात्र के रूप म गौण रहे। उनके व्यक्तिगत चरित्र की स्पष्ट व सूक्ष्म रेखाए कवियों द्वारा अंकित नही की गयी है। इसके विपरीत निज के 'उद्धव चरित्र' मे कृष्ण एक जीवंत पात्र के रूप मे चित्रित किये गये है। कृष्ण परब्रह्म है, पर उससे अधिक यहां वे एक व्यक्ति के सदृश भावुक, रसिक व प्रेम-विह्वल है। उन्हें मानवीय दुर्बलताओं से आपूरित बताया गया है। 'उद्धव-चरित्र' का प्रारभ ही कृष्ण की विरह-व्याकुल दशा के चित्रण से किया गया है। वे ब्रज एवं ब्रजवासियो की ममतापूर्ण स्मृतियो मे अत्यंत विह्वल एवं ब्रजभक्तों के दुख से दुखी दृष्टिगोचर होते हैं। ब्रजवासियों को संदेश भेजकर उनके दुखो को दूर करने के लिए वे अपने अभिन्न मित्र उद्धव को बुलाते है। उद्धव के समक्ष कृष्ण के भावुक हृदय का उद्घाटन हुआ है। उसमें उनके विगत कार्यों का स्मरण करके जो आत्मग्लानि एवं पश्चात्ताप के भाव अभिव्यक्त हुए है वे निज की अपनी मौलिक सूझबूझ एव मानवीय सवेदनशील सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है—

निज कवि सब जग हसि है कहा धौ मोहि,
माता औ पिता को न साथी ऐसो स्याम है।
पुत्र सो हू अधिक सुप्रीति करि पाखे पारे,
सोई तात जननी यौ वेद की रिचा में है॥
पुनि वे बिचारी ब्रजवासिनै गरीबनी को,
मन लेई भाज्यौ कहौ कौन धर्म यामै है।
तुम सो को उद्धव सुबुद्ध वर सुद्ध भक्त,
देखो तो कुबुद्ध मेरी ऐसी भई कामै है॥[२३४]

कृष्ण की व्याकुल दशा को देखकर उद्धव अत्यंत प्रभावित होते है। यहा उद्धव का सर्वथा नवीन एवं मौलिक रूप देखने को मिलता है। 'निज' ने परंपरानुसार उद्धव को ज्ञान-गर्व से मंडित नही बताया है अपितु उनके उद्धव भावुक, संवेदनशील, विनम्र, धैर्यवान एवं गोपियो के प्रति आदर, सहानुभूति एवं कोमलता का भाव रखने वाले सत्पुरुष हैं।

हिंदी की भ्रमरगीत काव्य परंपरा मे उद्धव को प्रेमानुभवहीन व ज्ञानाभिमानी के रूप मे चित्रित किया गया है जिनके ज्ञान के घमड को चूर करने के लिए कृष्ण उन्हें ब्रजभूमि मे भेजते हैं। यहां उनके माध्यम से गोपियों की अनन्य प्रेम-भावना, विरह-व्याकुल दशा का चित्रण करना कवियों का प्रमुख ध्येय रहा है। इन काव्यो मे उद्धव का रूप संदेशवाहक से अधिक कुछ नही है, उनका अपना कोई पृथक् व्यक्तित्व व चरित्र विकसित नहीं हो सका। निज कवि की सहृदयता उद्धव के चरित्र से अपना सामजस्य स्थापित कर सकी है। परंपरा से उपेक्षित उद्धव के चरित्र के मानवीय संवेदनशील, कोमल व भावुक पक्ष की ओर निज का ध्यान प्रमुख रूप से आकृष्ट हुआ है। उन्होने उद्धव के मानसिक संवेगों, भावोद्वेग, परिस्थितियों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया का सूक्ष्म आलेखन किया है और उनका

निजी व्यक्तित्व विकसित किया है श्री भगवानदास तिवारी क शब्दो म जिन गोपियो के कृष्ण विरह को लेकर मनो कागज रगा गया है, उनके दु.खा की उद्धव प कोई स्पष्ट प्रतिक्रिया न दिखलाना उन कवियों की भूल ही मानी जायेगी। निज जी ने इस भूल का परिमार्जन किया है और उद्धव द्वारा गोप-ग्वालो को आश्वस्त कर कृष्ण को पुन: ब्रज बुलाया है जहां कृष्ण सबसे आकर मिलते हैं, सबके दुख को हरते है और गोपियों के साथ पुन: रास रचते हैं। निज जी की यह उद्भावना मानवीय धरातल से अधिक संबद्ध है।"[२३५]

श्रीकृष्ण का संदेश पाकर निज कवि के उद्धव अपने ज्ञान के घमंड मे चूर होकर नहीं आते, न कोई उपदेश ही देते है अपितु एक भावुक व्यक्ति के सदृश वे कृष्ण की विरह-व्याकुल दशा को देखकर अत्यधिक प्रभावित होते हैं। उनकी आखे अश्रुपूरित हो जाती है और वे स्तभित-से खड़े रह जाते है—

> वत्सलता हरि की निरखि दृग भरि कर कों जोरि।
> ऊधो सूधो सो खरो बोले स्याम बहोरि॥[२३६]

कृष्ण के भावुकतापूर्ण वचनों को सुनकर उद्धव स्वय भावना के प्रवाह मे बह जाते है, उनका चैन छिन जाता है और वे व्याकुल हो जाते है—

> निज आपुहि आपुने ही मुख ते,
> बनि दोषी रहे किमि पार परूं।
> उलटे सब मो हिय कायल के जब,
> बूझि है उत्तर कौन सरूं॥
> कह धीर धराइहौ गोपिन कों,
> किमि नंद जसोमति पीर हरूं।
> सुनि बैन तिहारे न चैन अहो,
> तरफैन है नाथ कहो सो करूं॥[२३७]

कृष्ण माता-पिता, गोप, गोपी और राधा के नाम पांच पत्रिकाएं देकर उद्धव को ब्रज भेजते है। उद्धव यह शंका करते हैं कि आपके अनन्य प्रेम में आकठ निमग्न उन ब्रजांगनाओं के धाम मे मेरा प्रवेश किस प्रकार संभव है? इसके समाधान के लिए कृष्ण उद्धव को अपने वेशभूषण धारण कराके भेजते हैं।[२३८]

उद्धव के ब्रज मे पहुंचने पर वेश-साम्य के कारण गोपिया उन्हें कृष्ण समझ लेती हैं परंतु जब उन्हें ज्ञात होता है कि वे वस्तुत: कृष्ण नहीं है, उद्धव है तो कृष्ण-विरह के अतिरेक से मूर्च्छित हो जाती हैं।[२३९] उद्धव उनकी दशा को देखकर अत्यधिक प्रभावित होते हैं और उन्हें सांत्वना देते हुए कृष्ण को ब्रज मे लाने का वचन देते हैं। गोपियां कृष्ण का विशेष संदेश जानने हेतु उद्धव को राधा के पास ले जाती हैं। उद्धव राधा की वंदना करके उन्हें कृष्ण की पत्रिका देते है। बिना अवधि की पत्रिका को देखकर राधा एव उनकी सखियां अत्यत दुखी होती है।

उद्धव के ब्रज-प्रवास के प्रसंग में कवि ने राधा एवं गोपियों की विरह-व्याकुल दशा का विस्तृत एवं मार्मिक चित्रण किया है।

उद्धव ब्रज में आकर देखते हैं कि गोपियां कृष्ण के विरह में अत्यंत व्याकुल हो रही है। वे अहर्निश कृष्ण के ध्यान मे डूबी रहती है। वे विरहणियां अत्यंत बेचैन है, उनकी नीद उनसे छीन गयी है। वे दिन-रात रोती रहती हैं और अपने प्रिय की बाट देखती रहती हैं। उनकी इंद्रियां कृष्णमयी हो गयी है। श्रवणो मे सदैव बंशीनाद गूंजता रहता है और नेत्रो मे वही सलोनी श्याम मूर्ति विराजमान रहती है इसके अतिरिक्त वे अन्य कुछ देखना-सुनना नही चाहती।[२४०] कृष्ण-संबद्ध सभी वस्तुओ को देखकर उन्हें अपने प्रियतम की तीव्र स्मृति हो आती है। उद्धव के समक्ष अपनी विरह-वेदना अभिव्यक्त करती हुई गोपिया कहती है कि यमुना को देखकर हमे कृष्ण की जल-केलि का स्मरण होता है, गिरि से उन गिरधर की व गायों को देखकर उनके गो-दोहन की सुधि आती है। अब बताओ ऊधो, हम कहा जायें, कहां बैठें, किस प्रकार उन्हे बिसरा दें—

जमुना जो जाहि जल केलि वाकी याद आवै,
गिरि पै गये ते गिरिधर के अदा की है।
गायन में गयें सुधि आवत गोदोहन की,
बन गये तुरत ही सुरति चढ़ै ताकी है॥
कहां जाय कित बैठि का विधि बिसारे ऊधो,
हाथ नहिं भूलिवे को ठौर कहू बाकी है॥[२४१]

विरह की ज्वाला में जलती हुई उनकी व्याकुल स्थिति जलहीन मछली के सदृश हो गयी है—

उछकि छकी उमगी पगी दगी दगा की ज्वाल।
मछली-सी उछली परै तुम बिन हम सब बाल॥[२४२]

अतिशय वेदना के कारण गोपियों की स्थिति जड़ता तक पहुच जाती है—

नैकु न चलत अचल भई अनमिष केती बाल।
मीच गयी जरि परस तें विरहानल की जाल॥[२४३]

विरह-व्यथित गोपियों के हृदय की वेदना मे अपने प्रिय के प्रति उनका अनन्य प्रेम भाव व्यक्त हुआ है—

पिय-सा बंधी है पास नेह की हमारी सो तो,
छूटि है न टूटि है जू आगिहू दगे भये।
'निज जू' सुकवि हो तो हरि सो लगे है नैन,
जैसे अलि पंकज में रहत लगे भये॥
दसों दिसि बचिवे की ठौर ना बची है काहू,
चाहें अब गोपिन के प्रान ए भगे भये॥[२४४]

इस प्रकार कृष्ण चैतन्य निज कवि द्वारा प्रस्तुत गोपियो का विरह-वर्णन सजीव व मार्मिक बन पड़ा है, किंतु कुछ स्थलों पर विरह का ऊहात्मक वर्णन भी मिलता है। विरहिणी के शरीर के ताप मे तप्त होकर कलम, स्याही व कागज जल जाते हैं—

> कलम बरी स्याही जरी कागद जरि-जरि जात।
> यह गति देखि भ अनौखिये ऊधो हियो दुखात॥[२४५]

विरहणी के विरहोताप का प्रभाव प्रकृति पर भी पड़ता है। उसके ताप से प्रकृति का वातावरण उष्ण हो जाता है। समीर गर्म हो जाता है, वृक्ष आदि झुलस जाते है।[२४६]

गोपियो के विरह का प्रभाव उद्धव के मन पर गहन रूप मे पड़ता है। यहा उद्धव ज्ञान-गरिष्ठ के रूप में चित्रित नही किये गये हैं अपितु भावुक व्यक्ति के समान वे व्रजभक्तों के विरह-प्रवाह मे डूब जाते हैं। गोपियों की विरहाकुल दशा को देखकर उद्धव उन्हें अनेक प्रकार से समझाते हुए दिलासा देते हैं। वे कृष्ण को ब्रज मे लाने का वचन देते हैं और गोपियों से पत्र का उत्तर लिखने को कहते हैं। उनका संदेश लेकर उद्धव जाते है परंतु ब्रज-प्रेम से इतने अधिक प्रभावित है कि ब्रज-प्रदेश को छोड़ना नहीं चाहते। उनकी इस समय की मनःस्थिति का कवि ने सजीव अंकन किया है कि वे जाते-जाते बार-बार रथ से उतरकर ब्रज की पवित्र भूमि की ओर लौटते है।

उद्धव गोपियों के प्रेम से इतने अभिभूत होते है कि मथुरा मे पहुचकर वे विह्वल होकर कृष्ण के चरणो मे गिर जाते है। उद्धव की अश्रु-विगलित अवस्था का अंकन हुआ है—

> हरिजू के चरन पखारि निज आंसुनि सौं,
> प्रेम बस विवस है पर्‌यौ छित छाम है।[२४७]

कृष्ण की भावुकता यहां द्रष्टव्य है जब वे उद्धव के मुख से ब्रज-गोपियो की विरह-व्याकुल अवस्था को सुनकर स्वयं अत्यंत व्याकुल हो उठते हैं और गोपियो द्वारा भेजी हुई पत्रिका को पढकर तो मूर्च्छित ही हो जाते हैं। चेतना होने पर तुरत रथ पर चढ़कर वे गोपियों से मिलने के लिए चल पड़ते हैं।

पुनर्मिलन

सुदीर्घ वियोग के पश्चात कृष्ण के ब्रजभूमि मे लौटकर आने पर गोपियों व कृष्ण का सुखद पुनर्मिलन होता है। बांकेपिया के 'मधुर मिलन' एवं कृष्ण चैतन्य निज कवि के 'उद्धव चरित्र' में इस मधुर मिलन का वर्णन हुआ है। बांकेपिया के कृष्ण पथिक मराल द्वारा गोपियों का संदेश पाकर अपने माता-पिता, वसुदेव-देवकी से आज्ञा लेकर ब्रजभूमि के लिए प्रस्थान करते है। ब्रज की सीमा में प्रवेश करने से पूर्व

वे अपना वेश बदल लते हैं और ब्रजवासियो के कायकलापो एव दशा को प्रत्यक्ष देखते है। वे देखते है कि उनके विरह मे ब्रजवासी अत्यंत व्याकुल हो रहे है। अपने कार्यो मे लगे हुए भी वे कृष्ण की ही चर्चा में मग्न रहते है। गोपिया अपने दैनिक कार्यों को करती हुई कृष्ण के नाम व गुणो का गान कर रही है, कभी कृष्ण की लीला का अनुकरण करती हैं। यही नही, उनके विरह मे प्रकृति भी श्रीहीन हो गयी है। यमुना विरह-व्यथित है, विपिन में तरु-फल-पुष्प, पक्षी आदि सभी दुखी व उत्साहहीन होकर मुरझा गये है।[२४८] सभी की ऐसी अवस्था को देखकर कोमल-हृदयी कृष्ण अधीर होकर अपने वास्तविक रूप को प्रकट कर देते है।

कृष्ण को देखते ही उल्लास व उत्साह का समुद्र ही ब्रज मे हिलोरे लेने लगता है। समस्त ब्रजवासी कृष्ण के दर्शन के लिए दौड़ पड़ते है। ब्रज मे उत्सव का-सा आनंद व्याप्त हो जाता है। कृष्ण-आगमन के समाचार को सुनकर राधा व गोपिया अत्यंत आनंदित हो उठती है। उनके हृदय का आह्लाद उनके मुख की श्रीकांति मे वृद्धि करता है। अपने प्रिय से मिलने की उत्कठा लिए वे आकुलता से सबसे पूछती है कि कृष्ण कहा है? उनके हृदय की मिलनोत्कठा, तीव्र अभिलाषा, व्याकुलता व उद्विग्नता की व्यंजना कवि ने की है—

> विरह वेदना सहि जात नहिं, नेकहु तिन सों।
> इत उत खोजत फिरत न देखें निज प्रीतम को।।
> सुन पायी है बात यह, आय गये ब्रजचंद।
> पर अधरो पतियाय जब, पावैं नेत्रानंद।।
> बाट हेरैं सबै।।
> पूछैं इक अकुलाय निरखि कोउ नारि तहां पैं,
> प्राणनाथ नंद सुवन जात कहूं दीखे इत तैं।।[२४९]

तब राधा की विकल दशा को देखकर कृष्ण वंशी बजाते हुए प्रकट हो जाते हैं और प्रिया-प्रियतम का अपूर्व मिलन होता है। आनंद-रस-पयोधि उमगने लगता है और विरह का दुख मिट जाता है। बाकेपिया ने मिलन के अंतर्गत राधा-कृष्ण के आनंदोल्लास व उत्साह का सुंदर चित्रण किया है। स्वर्ण के मध्य जड़ी नीलमणि के समान उनके मिलन की शोभा भी अनुपम है—

> पाय चकोरी चंद मनु, गयी कुमोदिनि फूलि।
> शिखी मोर कों पाय धौ, गयी विरह दुख भूलि।।
> रस पयोध उमग्यो मनहु, पाय पूर्ण ब्रजचंद।
> अंग-अंग पुलकित भये, मिटे विरह के द्वंद्व।।
> प्रिया प्रीतम मिलत।।
> कंचन बिच जिमि नीलमणि, जड़ित तड़ित छवि देत।
> तैसेइ श्यामा श्याम मिलि, शोभा मन हरि लेत।।
> न कछु पटतर बनैं।।[२५०]

पुन मिलने के पश्चात राधा के हृदय की वेदना विगलित होकर अश्रु रूप बरस पड़ती है प्रयसी के अतस् की मार्मिक पीड़ा उपालभ क रूप म भा अभिव्यक्त होती है। अबला नारी को मोहित करके फिर उसे विरह मे बिलखती छोडक मथुरा चले जाने की शिकायत करती हुई वह कृष्ण को उलाहना देती है—

> ब्रज पिंजरा में पटक-सटक गये मथुरा नगरी।
> बिलखि-बिलखि हम रही तिहारी कह धौ बिगरी।।
> आवन कौं षट दिन कहे, बीत गये षट मास।
> जीवित राख्यो हम सबन, तव मिलबे की आस।।
> भलो कीनो कपट।।[२५१]

प्रियतम कृष्ण मधुर वचनो से राधा की मनुहार करके उसे मना लेते है। पुर्नमिलन के इस प्रसग में रास की रचना हुई है, जल-केलि-क्रीडाए की जाती है जिसमें मधुर रस का अतुल स्रोत प्रवाहित हुआ है।

कृष्ण चैतन्य निज कवि ने कृष्ण-गोपियो के पुनर्मिलन के प्रसग मे भावो का सूक्ष्म व सुदर आलेखन किया है। कृष्ण-आगमन के समाचार को सुनकर ब्रज गोपिकाओ के औत्सुक्य एव आकुल दशा की स्वाभाविक व्यजना हुई है जिसमे वे अपने गृहकाज, लाज-मर्यादा—सबको छोडकर कृष्ण से मिलने के लिए दौड पड़ती है—

> अपनो गृह काज बिहाय सबै ब्रज सुदरि कोटिवु दौर परीं।
> मन देह सुचचल नेह भरे निज लाज समाज हू को बिसरी।
> तन भूषन धारि कही के कही अति आतुर देखन को डिगरी।
> गहि मंगल तन उचारहि गान सुकान्ह सुजान के मोद भरी।।[२५२]

राधिका आनंदातिरेक से उसी प्रकार प्रफुल्लित हो उठती है जिस प्रकार सूर्य के उदित होने पर कमल खिल उठता है—

> रवि के उदीत ज्यौं कमल खिलि उठें त्यौं ही,
> प्रफुल्लित भए हियौ आनद में भीनी है।
> आठों सखि साठौ अलि चौसठ जु थे सुरीनु,
> साथ लेइ नाथ जू के दरस अधीनी है।।[२५३]

निज कवि ने राधा-कृष्ण के शृगार का मर्यादित रूप भी प्रस्तुत किया है। गुरुजनो के मध्य कुल-वधू राधा अपने प्रिय से मिले तो कैसे ! परंतु प्रेम के वशीभूत होकर वह रह भी तो नहीं पाती और घूघट के पीछे से ही कृष्ण के दर्शन करती है।[२५४] सध्या समय कृष्ण राधा से मिलने जाते है। प्रिय के आगमन पर राधा व गोपियों की मनःस्थिति, मिलनोत्कठा व अश्रु-विगलित अवस्था का कवि ने सजीव अकन किया है—

सहसनि जूथ गोपी प्रम रस औपि दौ।र,
आगम विहारी जी को प्यारिहिं जतायो है।
पिय को पधार्यो सुनि औचक उचक धाय,
गिरत परत आय उर सौं लगायो है।
रोइ रोइ आसुन भिजोइ मनमोहिनी जू,
मानो मनमोहन को अर्घपाद धायो है।
आदर सों सादर निकुज पधरायो पीव,
बारि बारि मुक्ताहल विपुल लुटायो है।।[२५५]

इसके अनतर कवि ने राधा-कृष्ण गोपियों की महारास लीला, कुज विहार लीला का आयोजन किया है। कृष्ण अनेक रूप धारण करके प्रत्येक गोपी के साथ रास करते हुए सबको समान रूप से आनंदित करते है। इस प्रसंग मे राधा-कृष्ण कुज-विहार करते है—

रमत रमत अति थकित है 'निज' की जुगल किशोर।
निकसे निबिड़ निकुज ते चले सरोवर ओर।।[२५६]

वात्सल्य भाव

चैतन्य संप्रदाय की मूल भाव-धारा मधुर प्रेम की है। सांप्रदायिक ब्रजभाषा काव्य में भी प्रमुख रूप से मधुर रस का स्रोत प्रवाहित हुआ है। विस्तार एव महत्त्व की दृष्टि से माधुर्य भाव के पश्चात वात्सल्य को स्थान मिला है। इन दोनों भावों का स्वतत्र रूप मे सरस चित्रण हुआ है। विशिष्ट रूप से सूरदास मदनमोहन एव किशोरीदास के वात्सल्य सबंधी पद अत्यंत सुदर एव स्वाभाविक बन पड़े है। वल्लभ सप्रदाय में वात्सल्य का जितना अधिक विस्तार हुआ है, विशिष्ट रूप से सूर के पदो मे, उतना विस्तृत वर्णन इस संप्रदाय के काव्य मे नही मिलता, परतु जितना हुआ है वह प्रभावोत्पादक है।

आलोच्य काव्य मे वात्सल्य की अनुभूति यशोदा-नंद के सदर्भ मे ही अधिक चित्रित की गयी है। राधा के बाल-भाव के अंतर्गत वृषभान-कीरति में भी वात्सल्य की अभिव्यक्ति हुई है। इसके अतिरिक्त ब्रज-वनिताओं की वात्सल्य-संवेदना को भी कही-कही दर्शाया गया है। चैतन्य की बाल-लीला का चित्रण भी कवियो ने किया है जिसमें शची-जगन्नाथ का वात्सल्य भाव प्रकट हुआ है।

वात्सल्य भाव संबंधी पदों की रचना सूरदास मदनमोहन, किशोरीदास, बांकेपिया, माधवदास, ललित लड़ैती, ललित किशोरी, रामराय आदि कवियो ने की है।[२५७] वात्सल्य भावपरक विभिन्न लीलाए एवं उनमें निरूपित विभिन्न सवेदनाओ का विवेचन नीचे किया जा रहा है—

कृष्ण-राधा-जन्म लीला—कृष्ण-जन्म के अवसर पर समस्त ब्रजवासियों के

आनद का सुदर वर्णन किया गया है नद-यशोदा के सुकृत्यो एव सौभाग्य मे उनके यहां परब्रह्म श्रीकृष्ण अवतार धारण कर यशोदा की कोख से जन्म लेते है। यह समाचार सुनते ही ब्रज के नर-नारी अत्यंत उत्सुकता से उनके दर्शनों के लिए दौड़ पड़ते है। इस शुभ दिवस पर नंद-यशोदा ही नही समस्त गोकुल आनद के रग मे रंग गया है। विविध मंगलाचार हो रहे हैं, नौबत-शहनाई आदि मगल वाद्य बज रहे है, आनंद-मंगलदायक सोहिलो आदि बधाई के गान गाये जा रहे है। नदनंदन कृष्ण के प्रकट होते ही समस्त ब्रजवासियों के संताप दूर होकर आनंद की वृद्धि हो गयी है, और हर्षातिरेक से वे नाच उठे है। नदराय परम उदारता से मणि-मुक्ता, आभूषणो आदि का दान दे रहे है। कृष्ण-जन्म के अवसर पर ब्रज मे होने वाले विभिन्न सांस्कृतिक कृत्यों, लोकाचारो, उत्सवो एवं मंगलाचारो का सुदर वर्णन किशोरीदास ने किया है। कृष्ण-जन्मोत्सव की आनंद-बधाई का चित्रण किशोरीदास के निम्न पद मे द्रष्टव्य है—

माई रंग रंगीली बधाईयां।
जसुमति रानी ढोटा जायौ श्याम सुदर सुखदाईयां॥
गृह-गृह प्रति अरु वीथिन-वीथिन वढौ आनंद अधिकाईयां।
सदन-सदन धुज नौबत बाजत बंदन माल बधाईयां॥
कलश दिया बलि चौक साथिये कदली द्वार कपाईयां।
ब्रजनारी मिलि मंगल गावति लागत परम सुहाईयां॥
नंद सुवन की शोभा अद्भुत वरनी कोये आईयां।
प्रगटे श्री ब्रजचंद आप ही किशोरीदास मन भाईयां॥[२५८]

इस शुभ अवसर पर भला सवासनि—ढांढ़िन कैसे अपना 'नेग' चूक जाये? दूर-दूर से ढाढ़ी-ढांढ़िनें यशोदा के 'ढोटा' के दर्शन करने एवं यशोदा को बधाई देने आती हैं। ढाढिनें द्वार पर साथिये थाप कर झगडती हुई अपना नेग मांगती है। नेग मांगने मे कोई कसर नही छोड़ती—साड़ी-चोली, अंगूठी आदि आभूषण मागती-मांगती वे नद के गले की माला को भी नहीं छोड़तीं और वह लेने पर ही घर जाने का हठ करती हैं। उनके मन की अभिलाषा पूर्ण होती है और वे जो-जो भी मांगती है, सभी यशोदा उनको दान देती है। मनचाहा दान मिलने पर वे अनेकानेक आशीष देती हुई चली जाती हैं।[२५६] बड़ी दूर से आई एक ढांढ़िन की यशोदा-लाल के दर्शन करने एवं दुलराने की अभिलाषा निम्न पद मे प्रकट हुई है—

जीवै तेरो गुपाल री माई।
बड़ी दूर तें ब्रज मे आई देखन तेरो लाल री माई॥
गोद खिलाऊं पलना झुलाऊ करदे मोहि निहाल री माई।
बांकेपिया ब्रज जन को सरबसु बैरिन के उर साल री माई॥[२६०]

सूरदास मदनमोहन स्वय ढाढ़ी बनकर अत्यत आतुर होकर नद भवन पहुचते

है और नंद-पुत्र के एक बार दर्शन करने की उत्कट अभिलाषा प्रकट करते हैं।[२६१]

इस प्रकार इन कवियों ने कृष्ण-जन्म के प्रसंग में यशोदा-नंद एवं ब्रजवासियों के मनोभावों को प्रदर्शित करके एव विभिन्न सांस्कृतिक कृत्यों एव लोकाचार के वर्णन से समस्त वातावरण को सजीव बनाया है।

कृष्ण-जन्म के समान ही राधा-जन्मोत्सव पर विभिन्न आमोद-प्रमोद का सुंदर वर्णन किया गया है। बरसाना में वृषभानु-कीरति के घर पर वही मंगल बधाईयां, मंगलाचार एव आनंद का सुंदर वर्णन किशोरीदास ने किया है।[२६२]

सखियां बधाई-गान गाती हुई कहती है कि आज कीरति-गृह में रस की बेल प्रकट हुई है जिसका नाम राधा है। वह छबीली राधा त्रिभुवन की एकमात्र स्वा-मिनी है जो क्षण-भर में ब्रह्मांड की रचना करने की सामर्थ्य रखती है, वही राधा रसिकन शिरोमणि कहलाती है।[२६३] उसके अद्भुत रूप की समता देव-पत्निया—कमला, शचि, रति आदि कोई भी नहीं कर सकती। उस अद्भुत रूप पर रीझकर ब्रज-वनिताए उसकी बलैया ले रही है।[२६४]

सूरदास मदनमोहन का निम्न पद विशेष रूप से अवलोकनीय है जिसमे सांग-रूपक द्वारा राधा रूपी कमल के बरसाने रूपी सरोवर में प्राकट्य का सरस वर्णन किया गया है—

> बरसाने वर सरोवर प्रगट्यौ अद्भुत कमल।
> वृषभान किरन प्रकास पोष्यौ ह्वेत प्रफुलित,
> सदा ही यह सरस सुंदर अमल॥
> सखी चहुंदिस केसर-दल करनिका,
> आकार राजति राधिका जस धवल।
> श्री 'सूरदास मदनमोहन' पीय,
> नव-मकरंद हित सदा अति नलिन अलि॥[२६५]

वह ब्रज-चंद्र-चंद्रिका राधा आनंद, सुख शोभा एवं सुंदरता की निधि है। वृषभानु की लाड़िली कुंवरि राधा की अनुपम छवि को निरखकर भक्त-कवि निहाल हो जाते हैं।[२६६]

चैतन्य-जन्म लीला : चैतन्य की जन्म लीला का वर्णन करने वाले कवियों में किशोरीदास एवं बाकेपिया चंद्रगोपाल, मनोहरदास, वृंदावनदास व गुणमंजरी के नाम उल्लेखनीय है।[२६७] राधा-कृष्ण के सम्मिलित रूप में गौरांग चैतन्य नदिया नामक स्थान पर फाल्गुन मास की पूर्णिमा के शुभ अवसर में जन्म लेते हैं। शची माता के पुण्य-प्रताप से चैतन्य उनकी कोख से जन्मते है। उनके जन्मोत्सव पर समस्त नदियावासी उत्साह, उल्लास व उमंग से भर उठते है। आनंदपूर्वक नदिया-नारियां मंगलगान करती हैं। द्वार पर बंदन माल, सांथियें, मोतियों से चौक पूर-कर—विविध प्रकार के मांगलिक कार्य किये जा रहे है। मुनिगण वेद-मंत्रों का पाठ कर रहे हैं और देववधुए कुसुमों की वर्षा कर रही हैं। ऐसे आनद, सुख एवं

शोभा क निधान चैत य के ज मोत्सव पर बधाई गान मे मागलिक कृत्या ए उल्लास की अभिव्यक्ति किशोरीदास ने की है—

> बाजत रंग बधाई घर-घर।
> आनद निधि सुखनिधि सोभानिधि जनमे सची कुवरवर।।
> पठत वेद मुनि गावत नारी मगल द्वारै संथिया घर-घर।
> बाजत ध्वज वर बदनमाला मोतियन चौक पूरत घर-घर।।
> देववधू कुसुमावलि बरषत हरषत दुंदुभी बाजत सुरपुर।
> किशोरीदास श्रीमहाप्रभु प्रगटे प्रघट कृष्ण अवतार मनोहर।।[२६८]

बांकेपिया ने भी चैतन्य के जन्मोत्सव पर आनंद बधाई एवं मंगलाचारो का वर्णन इस प्रकार किया है—

> आज प्रकट भये शची सुवन सब रसिक बधाई गावौ।
> फागुन मास सुभग पूनो तिथि लग्न मुहूर्त्त धरावौ।।
> कदली खंभ कलश कंचन धरि वंदनमाल बंधावौ।
> धूप दीप रोरी दधि अक्षत मंगल संवज बनावौ।।
> चोवा अतर छिड़कि रग केसर सरस गुलाल उड़ावौ।
> श्रीचैतन्य जन्म मंगल बांकेपिय गाय सुनावौ।।[२६९]

इसी प्रकार चैतन्य जन्मोत्सव पर आनंद और उल्लास से परिपूर्ण मांगलिक बधाइयों संबधी पदो की रचना मनोहरदास, वृंदावनदास, चंद्रगोपाल व गुणमंजरी ने भी की है।[२७०]

पालना—बाल-छवि एवं मातृ हृदय का भाव सौंदर्य

कृष्ण के पालने मे सोने एवं झूलने के प्रसंग पर सूरदास मदनमोहन, किशोरीदास एव बांकेपिया ने कई पदो की रचना की है, जिनमे कृष्ण के बाल-रूप सौदर्य एव यशोदा के मातृ-हृदय का भाव-सौदर्य अभिव्यक्त हुआ है। इन कवियों ने राधा के पालने मे सोने व राधा के बाल-रूप सौदर्य एवं कीरति के मातृ-हृदय का भी सरसता से चित्रण किया है।

पालने में झूलते हुए नंद-नंदन की बाल-छवि का अंकन किशोरीदास के निम्न पद में देखिए—

> झूलौ पालने मे नंद नदन।
> सुंदर रचि पचि गढ्यौ गढइया तुमकों आनद कंद।।
> छोटी-छोटी दतियां पीत झंगुली हसै कछु जब मद।
> किशोरीदास तन मन अति फूलै देखै श्री ब्रजचद।।[२७१]

पालने मे कृष्ण को झुलाते हुए यशोदा के मातृ-हृदय का अत्यत स्वाभाविक एव मनोहारी चित्रण किया गया है पालने मे पुत्र के विभिन्न बाल विनोद देख

कर यशोदा का हृदय आनंद से अत्यधिक प्रफुल्लित होता है। जब नन्हे कन्हाई मुंह मे अंगूठा लेकर किलकते है तो माता अत्यंत प्रसन्नता से उनका मुख चूमती है। यहां वात्सल्य भाव से युक्त मातृ-सुलभ विभिन्न क्रियाओं का सुंदर चित्रण किया गया है। कभी तो माता यशोदा कृष्ण की बाल-छवि को निरखकर आनंद से विभोर हो लाल को कंठ से लगा लेती है, कभी मधुर-स्वर में गीत गाती हुई अपने हाथ में सुरंग खिलौना लेकर उनको खिलाती है और कभी पुत्र को स्तन-पान कराती है। इस प्रकार विविध प्रकार से लाड लडाकर श्यामसुंदर को दुलराती है।[262]

मातृ-स्वभाव जन्य आशंका का एक सुंदर चित्र किशोरीदास के निम्न पद मे द्रष्टव्य है जिसमे अपनी ही नजर लगने के भय मे माता यशोदा अपने पुत्र के मस्तक पर काला टीका लगाती है एवं उसको अलाय-बलाय से बचाने के लिए राई लौन उतारती है—

देखी हो बड़ भागिन जसुमति निस दिन श्याम सुंदर दुलरावत।
× × ×
निरखि-निरखि कै अपनी दीठि डर रुचि सौं भाल चखौड़ा बनावत।
किलकि-किलकि ब्रजचंद हंसत जब जननी पुलकि-पुलकि दुलरावत।।
राई लौन उतारि डारि लखि-लखि अपने सुत जीव जिवावत।
अलाय-बलाय लाल की कृपा करि किशोरीदास है सगरी ध्यावत।।[263]

सूरदास मदनमोहन ने वात्सल्य भाव का सुंदर एवं स्वाभाविक चित्रण किया है। निम्न पद मे उन्होने भाव के अनुरूप भाषा का सहज प्रयोग करते हुए यशोदा के वात्सल्य भाव की सुंदर अभिव्यक्ति की है—

जसोदा मैया लाल कौ झुलावै।
आछे बारे कान्ह कौ हुलसावै।।
कनियां-कनिया अइयां-अइयां, यों कहि लाड लडावै।
हुलुलुलु-हुलुलुलु, हां-हां-हां-हां कहि गोद लिये खिलावै।।
दोउ कर पकर जसोदारानी, ठुमकी पांय धरावै।
घननन-घननन घुघरु बाजे, झाझरियां झमकावै।।
'सूरदास मदनमोहन' कौ, याही भांति रिझावै।[264]

पालने में झूलती हुई राधा के रूप सौंदर्य एवं कीरति के मातृ सुलभ मोद-भरी विभिन्न क्रियाएं तथा ब्रज के नर-नारियों के आनंद-उमंग का चित्रण बांकेपिया ने इस प्रकार किया है—

आज भीर बरसाने भारी सुनि-सुनि उमहि चली ब्रजनारी।
श्री वृषभानु दुलारी झूलैं पालना रे।
कैसो बन्यो पालनो सुंदर मणिन जटित को परम मनोहर।
बिशुकर्मा जेहि रच्यो सुघर मन भावनारे

झिगुली पीत रुचिर पहुंची कर कटकिंकिणि पाइन नूपुर बर
कोटिभान श्रीराधे छवि पर वारनारे।।
बैठी कीरत मुदित झुलावत, मुख चूमत पय पान करावत।
बाल विनोद भरी गहि गहि उर लावनारे।।
नाचत मुदित सबै नर नारी, देत बबा वृषभानहि गारी।
हुलसि-हुलसि गावत आनंद बधावनारे।।[२७५]

कीरति के संदर्भ में भी उन्ही मातृ सुलभ क्रिया-कलापों एवं मनोभावों का वर्णन किया गया है जो यशोदा के प्रसंग में मिलते है। माता कीरति यशोदा की भाति वात्सल्य भाव से अभिभूत होकर अपनी सुकुमार लली को चूमती एवं गाती हुई विविध प्रकार से दुलराती है। कीरति-वृषभान के वात्सल्य भाव एवं उससे संपृक्त विविध क्रियाओ तथा उनके परम उल्लास का दिग्दर्शन सूरदास मदन-मोहन ने इस पद में कराया है—

अहो मेरी लाड़िली सुकुमारि, कंचन पालने झूलै।
मृदु मुसकान निरखि नैनन सुख, कीरति जू मन ही मन फूलै।।
कबहुंक चटकोरी चटकावनि, झनन-झनन झूलनी झूलै।
कबहुंक लेति उछंग अंक भरि, अंतरगति की हरति है सूलै।।
श्री वृषभान गोद लै बैठे, मन क्रम वचन साधुता तूलै।
'श्री सूरदास मदनमोहन' के, अतरंग निधि की खानि खुलै।।[२७६]

राधा के बाल-जीवन से संबधित पद जन्म एवं पालना तक ही सीमित हैं, आगे उनका विस्तार नही मिलता।

कृष्ण की बाल-क्रीड़ाएं—चपलताएं एवं बाल-रूप सौंदर्य

कृष्ण के वय-विकास के साथ प्रगटित होने वाली विभिन्न भंगिमाओं, चेष्टाओ एव मनोभावों को चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने अत्यंत स्वाभाविक एव भावपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है। कृष्ण का आगन मे घुटनों-चलना, दूध के दात निकलना, डगमगाकर चलना—फिर गिर पड़ना, तुतलाकर बोलना आदि सुलभ क्रियाओ का सुदर वर्णन है। सूरदास मदनमोहन के निम्न पद में कृष्ण के बाल रूप वेश एव क्रियाओं का सरस चित्रण है—

देखोरी रुनक झुनक पैंजनी पग, डगमगी चाल।
लाल के त्रिभुवन की सोभा सग, लागी डोलैं आगन।।
पचरग (पीरी) पाटकी कौधनी कटि पट बांधे,
कंचन मनि नूपुर धूरि धूमर तन नगन।।
आगे चले जात तब जननी डरपावति, आवति हैं डरपि,
किलकि-किलकि जसोमति उर लागत तन।
'श्री सूरदास मदनमोहन' लीला-सागर गुन-आगर,
ब्रज-नारी सुर-नर-मुनि मगन।।[२७७]

बाल-स्वभाव की कितनी स्वाभाविक अभिव्यक्ति कवि बाकेपिया ने की है कि माता के डराने पर बालक-कृष्ण डर जाते है और माता के हृदय से लग जाते है। इसी प्रकार बंदरों को देखकर भी डरकर माता के आंचल मे छिप जाते है।[२७८]

कृष्ण का बाल-रूप वेश अत्यत मनमोहक है—

शीश चौतनी अग पीत अगुली पहिरावै।
मुक्ता गुजा माल औ कठुला कठ धरावै॥
कट किंकिणि नूपुर चरण करन कड़ा अनमोल।
गरें लखचघा नासिका मोती परम सुडौल॥
हाथ पहुंची सुभग॥
मेचक कुंचित केश शीश गभुआरे साहै।
द्वै-द्वै दतियां दमक-दमक जननी मन मोहैं॥[७९]

अब कृष्ण इतने बड़े हो गये है कि तुतलाकर बोलने लगे है। माता यशोदा जब पुत्र को लेकर आंगन मे डोलती है तब कृष्ण चंदा को लेने का हठ करके रोने लगते हैं। इस बाल-हठ एव यशोदा द्वारा पुत्र को बहलाने का स्वाभाविक वर्णन बांकेपिया ने किया है।[२८०]

वय-विकास के साथ-साथ कृष्ण की चपलताएं भी बढ़ने लगती हैं। बिल्ली को देखकर उसकी बोली की नकल करते है और दही-दूध से भरे मटके उसके लिए खोल देते है तब माता यशोदा उनको मना करते हुए झिड़की देती है। पुत्र को खाना खिलाने एवं शृंगार के लिए मनाने के लिए यशोदा जब कहती है कि तेरे दो ब्याह रचाऊंगी—काली और गोरी दो बहुए लाऊंगी तो कृष्ण तुरत उत्सुकता एव चंचलता से उत्तर देते हैं—जल्दी से मेरी दो स्त्रिया ला दे, मेरा ब्याह कब रचायेगी?[८१]

कृष्ण की बाल-लीला से उल्लसित पिता नंद के वात्सल्य भाव की भी अभिव्यंजना हुई है। उत्साह में भरकर नंद अपने पुत्र को गोद में उठा लेते है, अगुली पकड़कर अपने साथ चलना सिखाते है। कृष्ण का डगमग चलना, गिर पड़ना एवं घुटनों चलना आदि बाल-सुलभ क्रीड़ाएं नद को अत्यंत उल्लसित करती हैं—

छण नंद राय उछंग लेत सुत मुदित उठाई।
गहि अंगुरी निज सग फिरावत कुंअर कन्हाई॥
धावत पाछे बबा के, गिरत उठत छण माहिं।
धरत अवनि पग डगमगे, नंद निरख हुलसाहिं॥
कबहुं घुटुरुन चलत॥[२८२]

बालक कृष्ण कभी गाय के बछड़े की पूछ पकड़कर उससे लटकते हुए डोलते है, और कभी बाबा नंद के कंधे पर चढ़कर बछड़े को खोल देते हैं। नंद जब गाय दुहते हैं तो कृष्ण द्वारा दूध की धार पकड़ने के प्रयत्न में दूध के छींटे श्याम मुख पर शोभायमान होते हैं

इसी प्रकार की विविध चपल-क्रीड़ाओं से बालक कृष्ण नंद-यशोदा के वात्सल्य भाव को उद्दीप्त करते है और तब वात्सल्य की सरस धारा प्रवाहित होती है।

चैतन्य की बाल्य-क्रीड़ाएं, रूप-सौंदर्य एवं शची का वात्सल्य भाव

चैतन्य का बाल-रूप व क्रीड़ाओं तथा माता शची के वात्सल्य भाव की अभि-व्यक्ति बांकेपिया ने की है। शची माता अपने पुत्र चैतन्य का सुंदर शृंगार करती हैं। पुत्र के आंख मे काजल लगाते हुए उसके बाल-रूप सौंदर्य पर माता स्वयं रीझ जाती है और उसका वात्सल्य भाव उमड़ पडता है। स्नेह से विभोर शची पुत्र का मुख चूमकर गोद में भर लेती है। चैतन्य के बाल रूपवेश, किलक-किलककर हसने एव झुककर चलने को देखकर मातृ-हृदय के हर्ष की सुंदर व्यजना हुई है—

श्री चैतन्य महाप्रभु सुत को करत सिंगार शची महतारी।
टोपी ललित केसरी बागो सूथन पहिरावत जरतारी॥
मुक्तामाल श्रवण मे कुडल नासा बिच लटकन छवि न्यारी।
गंडस्थल के ऊपर दोहु दिश छूट रही अलकै घुघरारी॥
केसर तिलक लगाय भाल पै दै इक टिमुक दीठ निवारी।
पग नूपुर किंकिणि कट झमकत फेंटा कस्यो परम रुचकारी।
नयनन मे काजर लै आंज्यों मुख चूमत भरि भरि अंकवारी।
किलकि हसन झुकि दौरि चलन पै बांकेपिया जाय बलिहारी॥[२८३]

पिता जगन्नाथ की पौली पर सखाओं के साथ खेलते हुए निमाई चैतन्य सुदर क्रीड़ाएं करते हैं। उनकी बाल-छवि एवं विनोद भरी क्रीड़ाओं को निरखकर माता शची हर्षित होती है—

जननी निरखत सुत छवि बाल विनोद भरी।
खेलत सखन संग पौरी पै श्री चैतन्य हरी॥
मारि अजत इक पकरन धावत लीन्हें कनक छरी।
छोरत तबहि जबहि बोलत मुख श्रीगोविंद हरी॥
गौर बदन पर छींटा रग के उपमा रहत परी।
बांकेपिय यह छवि मो उरतैं टारत नाहि टरी॥[२८४]

गो-चारण : चैतन्य संप्रदाय के व्रजभाषा काव्य मे कृष्ण के गो-चारण का प्रसंग संक्षेप मे, कुछेक पदो मे ही, निरूपित किया गया है। कृष्ण अब बड़े होते हैं और गो-चारण के लिए जाने को तत्पर होते है। प्रातः ग्वाल-बाल आकर उनको जगाते हैं और माता यशोदा बड़े चाव से उनके वन-गमन की तैयारी करती है। वह कृष्ण का सुंदर गोप-वेश बनाती है—

पीत-बसन कटि काछिनी उर वैजन्ती माल।
पाग सुरगी शीश पै शोभित मदन गुपाल॥
गोप को वेष धरि

× × ×

मणिन जटित नूपुर चरण फेंटा कस्यो सुधारि
तामे वंशी लसि रही, कर लकुटी सम स्वार ।
जात बन धेनु लै ।। ८५

सखाओं के साथ कन्हैया यह सुंदर गोप-वेश धारण कर बन मे गायों को चराने जाते है और यमुना के तट पर मुरली बजाते हुए गायों को चराते हैं। वन मे सखाओ के साथ हिलमिल कर भोजन करते है एवं विविध प्रकार के गेंदुक, चड्डी आदि खेल खेलते है। साझ को कन्हैया गायों को टेरते हुए वापस घर लौटते हैं। गोकुल की गलियों में गो-चारण से आते हुए कृष्ण की शोभा को ब्रज-सुंदरिया अपनी-अपनी अटारियों पर चढ़कर देखती है। यहां पर गोपियो का भी आनंदित होना बताया गया है। घर लौटने पर माता यशोदा कृष्ण की आरती उतारती हुई व उनकी बलैया लेती हुई अपने मन के उल्लास एवं वात्सल्य भाव को अभिव्यक्त करती हैं।[२८६]

कृष्ण के गो-चारण से लौटने मे तनिक भी देरी होने पर यशोदा चिंता करने लगती हैं। मातृ-सुलभ चिंता का स्वाभाविक चित्रण सूरदास मदनमोहन के निम्न पद मे हुआ है—

अजहु न आए गै बन ते,
कहां बार लाई आजु कन्हाई।
कै कहु कुजन गाय चराय, किधौं,
हिराय गई पराय, देहु बताय कहू सुधि पाई।।
बैठे कहा, सुधि लेहु सवारे,
नैनन अधिक औसरो लाई।
'सूरदास मदनमोहन' आये बेनु बजावत,
वारति जसोमति देति बधाई।।[२८७]

माखन चोरी एवं गोपियों का उपालंभ

माखन-चोरी के प्रसंग ने भक्त-कवियों को विशेष रूप से आकर्षित किया है। चैतन्य संप्रदाय के कवियों ने कृष्ण की बाल-लीलाओ के अंतर्गत अन्य प्रसंगों की अपेक्षा माखन-चोरी के प्रसंग को विस्तार से एवं सुंदर ढंग से वर्णित किया है। वल्लभ संप्रदाय के सूर के समान यद्यपि चैतन्य संप्रदाय के कवियों ने इस प्रसंग में उतने विषयगत विस्तार एवं अनेकानेक सूक्ष्म भावों की अधिक अभिव्यंजना नही की तथापि जितना भी चित्रण इन्होंने किया है, उसमे भाव-सौंदर्य प्रकट हुआ है।

माखन-चोरी करने के लिए तत्पर कृष्ण गोपियों के घर मे लुक-छुपकर इधर-उधर झांकते हुए घुटनों के बल चलते हैं। उनकी यह छवि मोहित कर देती है—

निरख सखी छवि माखन चोरी।
मोहन इत उत झंकत झरोखे होय भवन जनि कुऊ गोरी।

झुक-झुक डोलत चारौ दिसि लसि-लसि रहत लता सों ओरी।
मूदि येक यह उझकि पौरि को चलत घुटरुवन ललित किशोरी।[२८८]

माखन-चोरी करते हुए कृष्ण की चपल चेष्टाओं का अत्यंत स्वाभाविक व प्रभावपूर्ण चित्रण ललित-लड़ैती के पद में द्रष्टव्य है—

चले करन माखन की चोरी ।।
अचक-अचक पग धरत द्वार पैं नूपुर धुनि कहुं नैक न होरी।
उझक-उझक इत-उत मे झांकत पाई छीके धरी कमोरी ।।
माखन खाय सखन संग मोहन आंगन माहि मटुकिया फोरी ।।
धूम मचावत देखि सबन को चकित होय उठि बैठी गोरी ।।
ललित लड़ैती उत नंदनंदन भाजि चले करिकै बरजोरी ।।[२८९]

कृष्ण की बाल-चपलता का सुंदर वर्णन किया गया है। गोपियों का सूना घर पाकर कृष्ण ग्वाल-बालों के सग माखन चोरी के लिए जाते हैं। वहां छीका हाथ न आने पर सखा के कंधे पर चढ़कर लकुटिया से मटके को फोड़कर दधि-माखन खाते है। स्वय तो खाते ही हैं, सखाओ को भी खिलाते जाते हैं। कभी जब मटको मे कुछ नही मिलता तो क्रोधित होकर उनको फोड़कर चले जाते है।[२९०]

कृष्ण को माखन चोरी करते हुए देख लेने पर गोपी उनको पकड़ने के लिए दौड़ती है लेकिन चतुर कृष्ण भला कहां पकड़ में आने वाले है! नैन मटकाते, कतरैंयां दे-देकर बचते-दौड़ते चंचल कृष्ण की चपलताएं मनमोहक है—

पकरो री नट जाय न पावै।
यह कहि झपटि चली नव नागरि गुलचौ गाल हाथ जो आवै।
मुख मडित नवनीत कछुक कर चपल भजन मग चितै चुरावै।
कतरैंयां दै ललित किशोरी बिच-बिच निकसि नैन मटकावै ।।[२९१]

कृष्ण के माखन-चोरी एवं अन्य उपद्रवो से गोपियो के मन में खीज होती है तो वे उन पर रीझ भी जाती है। वे मन-ही-मन कृष्ण के उनके घर आने एवं माखन खाने की अभिलाषा रखती है। कृष्ण की चोरी करने की वृत्ति पर सूरदास मदनमोहन की एक गोपी की खीज और रीझ—दोनों इस प्रकार अभिव्यक्त हुई है—

मन चोरै, दधि चोरै, व्रजपति ढोटा
नैन-बैन कर चरन बस करत, आवत कौन अगोरै।
सोवत सिसु जगाइ घर-घर के, बंधे बछरुआ छोरै।
दुराय धर्यो गोरस लै सखि री, कछु पीवै, कछु ढोरै।
सुंदर मुख देखत हसि दीजै उत्तर कोटिक जोरै।
'सूरदास मदनमोहन' देखत कौन त्रिया मुख मोरै ।।[२९२]

कृष्ण के नित्य नवीन उपद्रवो से तंग आकर गोपियां यशोदा के पास उनकी

शिकायतें लेकर पहुंचा करती हैं। एक गोपी उलाहना देती हुई यशोदा से कहती है—

जहां दुराय धरै दधि-माखन,
मोहन कोटिक आखिन चितवै ताहीं आनि तकै।
जो कहिये तौ अंचरा फारै, चपल नैन करि असुवा ढारै,
उत्तर देत न हारै, उनकौं कहि कौ आज् सकै।।
आपुन खात, खवावत ग्वालन, भाजन भरि
उबारि ढारि भाजै, धावत हू न धरै।
'सूरदास मदनमोहन' सुत के औगुन सब जिय भावत,
तातै उतर न देति जसोमति, कब की ठाड़ी ग्वालि बकै।[२६३]

मातृ-हृदय का कितना स्वाभाविक चित्रण है कि माता को अपने पुत्र के अवगुण भी अच्छे लगते है, इसलिए गोपियां चाहे खड़ी बकती रहे, पर यशोदा निरुत्तर ही रहती है।

चोरी करते हुए देखे जाने पर कृष्ण गोपियों के मुख पर दूध फेंकते हुए उनके नेत्रों में छीटें डालकर उनको परे धकेल देते है और तब गोपियां कुछ नहीं कर पाती, ठगी-सी खड़ी ही रह जाती है। जब गोपिया कृष्ण को समझाती हुई कहती है कि अपना घर छोड़कर दूसरों के घर जाकर हाथ डालना भली मति नहीं है तो कृष्ण तुरंत चतुरता से उन्हीं को उपदेश देते हुए उत्तर देते है कि ग्वालिनि, यह तुम्हारा मिथ्या अभिमान है। यह घर मेरे लिए पराया नहीं है, मै अपने ही घर में आया हूं। घर, धन, यौवन इत्यादि तुम्हारा कुछ भी नहीं है। घर-भीतर सब मेरा है, इसलिए मैं कहीं भी खा-पी लेता हू। अब गोपियां क्या कर सकती हैं, सिवा उनकी मधुर वाणी पर रीझने के।[२६४]

कृष्ण के नटखटपन से तंग आकर गोपियां यशोदा को उलाहना देती हुई अपनी खीज को अभिव्यक्त करती है—

गोरस केरौ दान मागि गहने धरि हारा।
काहू केरौ काढ़ि करै नवनीत अहारा।।
काहू त्रास दिखावई काहू फिरि मारै।
कबहुक जमुना पार होइ मागे घाट उतराई।
जहां तहां हमहि खिजावई यह तुम्हारौ कन्हाई।।[२६५]

माधवदास जी ने इस प्रसंग मे कृष्ण की चतुरता एवं भोलेपन का एकसाथ सुंदर एव स्वाभाविक चित्रण किया है। गोपियो के उलाहने सुनकर चतुर कृष्ण बड़ी चतुराई से अपना भोलापन प्रकट करते है और अपने ऊपर लगाये गये आरोप गोपियों के माथे मढ़ देते हैं। वे कहते हैं, माता, तुम इन मिथ्यावादिनी गोपियों की बातों पर विश्वास मत करना। ये घर-घर मे कलह कराने वाली, कपट एव दोषों से भरी हुई है। मेरे साथ भी ये छल-कपट करती हैं। दही के मटके सिर पर

रख हुए समूह में साथ साथ चलती एक-दूसरे से भिड़ती ये गोपिया अपना मस्तक डुलाते-हिलाते हुए चलती है तो भला दही का मटका क्यो नही गिरेगा, व्यर्थ मे मटका फोड़ने का दोष मुझ पर लगाती है। और जो ये वस्त्र फाड़ने का आरोप मुझ पर लगाती है, उसकी गाथा भी सुनो। ये तालियां बजा-बजाकर एव गा-गाकर मेरी गौओं को खिझाती है और फिर गायो के दौड़ने पर स्वयं भी दौड़ती है तो इनके वस्त्र काटो मे उलझकर फट जाते है, इसमे भला मेरा क्या दोष ? ये अपने कर्म तो देखती नही, दूसरों पर दोष लगाती है। ये गोपियां कभी मेरी वेणु हर लेती हैं, कभी गेंद और वनमाला, फिर मागने पर भी नही देती। विविध प्रकार से मुझे नाच नचाती हैं, कभी गाने के लिए कहती हैं, कभी वंशी बजाने को, कभी नाव पर चढ़ाने को और कभी पार लगाने को, कोई उलटकर फिराने को कहती है तो कोई पलटाने को। इस प्रकार ये मुझे अनेक प्रकार से तग करती है। चतुर कृष्ण का सीधा-सच्चा भोलापन वहा टपका पड़ता है जहां वे कहते हैं कि जब मैं अकेला चुपचाप बैठा रहता हूं तब ये गोपियां स्वयं मुझे बुलाती है। मै तो स्थिर होकर रहता हू, ये ही मुझे अस्थिर चचल कर देती हैं। फिर कृष्ण माता को प्रभावित करने के लिए अपने अंतिम अस्त्र के रूप मे अपनी दीनता प्रदर्शित करते हुए माता से कहते है कि मै तो अकेला हूं और ये बहुत-सी, सब एकसाथ मिलकर मुझे छका जाती है—

काहि-काहि के वचन करौं मैं चल्यो पलाई।
वे बहुतैं मैं अकेल छकै मोहिं जाई॥[२६६]

अपनी बात के प्रमाण के लिए चतुर कृष्ण यह कहना भी नही भूलते कि मेरी बात पर विश्वास न हो तो सखा सुबल और सुदामा से पूछ लो।

कृष्ण के इस प्रकार दीन वचनो को सुनकर मातृ-हृदय पर तुरंत स्वाभाविक प्रतिक्रिया होती है और यशोदा गोपियों पर ही दोष लगाती हुई, अपने लाल को वात्सल्य से अभिभूत होकर गले से लगा लेती है।[२६७]

कृष्ण के वाक्-चातुर्य से प्रभावित होकर ब्रज गोपियो को, रोष में भरी होने पर भी, अपने हृदय के आनद को मुख के आगे आचल डालकर छिपाना पडता है।

मथुरा गमन (विरह) एवं पुनर्मिलन

कृष्ण के मथुरा चले जाने पर उनके अभाव मे यशोदा-नंद एव ब्रजवासियो के वात्सल्य भाव से अभिभूत होकर, विरह-व्याकुल होने का प्रसंग चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे विस्तार नही पा सका है। कृष्ण के मथुरा से गोकुल लौटने एव छिपकर गोकुलवासियों की विरह-व्यथा का अवलोकन करने तथा यशोदा एवं ब्रजवासियो स पुनर्मिलन संबंधी कुछ पदों की रचना बाकेपिया कृत 'मधुर-मिलन' मे हुई है।

मथुरा चले जाने पर कृष्ण एक बार ब्रज में मिलने हेतु आते हैं और वेश बदलकर छिपकर ब्रज के नर-नारियों की वात्सल्य-भाव से अभिभूत विरह-व्याकुल

दशा का अवलोकन कर रहे हैं। अपने दैनिक विभिन्न गृह-कार्यों को करते हुए भी गोपियां कृष्ण के अभाव में उनको स्मरण कर-करके व्याकुल होती हैं। एक गोपी धान-कूटते हुए मुख से 'कृष्ण-मुरारी' कहती जाती है, दूसरी चक्की पीसती हुई गिरधारी कृष्ण के गुण गा रही है, कोई दही बिलोती हुई कहती है कि यह नवनीत अच्छा है इसे गोपाल के लिए रख लेती हूं। उसमे वात्सल्य-प्रीति की सहज अभिव्यक्ति हुई है। एक गोपी बुहारी देती हुई गोपाल का चरित्र गा रही है, कोई एक रसोई बनाती हुई 'नंदलाला आओ' कह रही है, अपने पुत्र को दूध पिलाती हुई कोई कह रही है—'गोपाल पीओ', अपने पुत्र को सुलाती हुई कहती है, 'सोओ नंदलाल'। इसी प्रकार की गोपियों की चित्त-विभ्रमित अवस्था का चित्रण निम्न पद में किया गया है जिसमे वे अपने पुत्र को नंदलाला समझकर उससे वैसा ही व्यवहार करती है—

> टेरत इक निज सुतहिं बोलि मुखरे नंद-नंदन।
> क्षुधित होयगो आय पाय ले रोटी माखन॥
> लरिकन संग खेलत फिरत, गृह बैठत छिन नाही।
> नंद बबा आवै भवन, तो बोलहु उन पाहिं॥
> भयो तू ढीठ अति॥[२६८]

कृष्ण का आगमन सुनकर गोकुल के नर-नारी अत्यंत आतुर होकर कृष्ण के दर्शन के लिए दौड़ पड़ते हैं और नंद-यशोदा की पौरी पर गोप-गोपिनजन आकर जुट जाते है। उस समय अपार उत्साह एवं आनंद का कोलाहल सर्वत्र व्याप जाता है।

कृष्ण से पुनर्मिलन में माता यशोदा के भावों की अभिव्यंजना हुई है। गौ जिस प्रकार दिन-भर के बिछुड़े अपने बछड़े से अत्यंत अधीर होकर मिलती है, उसी व्याकुलता से यशोदा का अपने बिछुड़े पुत्र से मिलने में कितनी मार्मिकता है—

> मातु यशोदा दौरि कृष्ण को कंठ लगायो।
> बिछुरो बछरा धेनु, दिवस बीते ज्यौं पायो॥
> तात मातु आनंद भरे, स्रवत नयन जल धार।
> आलिंगन करि कृष्ण कों, लीने चरण पखार॥
> सुमुख चुंबन कर्यो॥[६९]

कृष्ण से पुनर्मिलन के अवसर पर वात्सल्य भाव से अभिभूत होकर गोकुलवासी नाच-गाकर विविध प्रकार से आनंदोत्सव मनाते हैं।

दास्य भाव

वदना स्तुति के पदो मे हुई है चतन्य सप्रदाय क माधुर्योपासक भक्त कवि अपने आराध्य के मधुर रूप के अतिरिक्त उनके ऐश्वय बलशाली समथ रूप की महत्ता से भी प्रभावित हैं और अपनी रचनाओ मे यत्र-तत्र प्रभु को अपना स्वामी और स्वयं को उनका दासानुदास मानकर, दैन्य का प्रदर्शन करते हुए, उनसे अपनी शरण मे लेने के लिए विनती करते है ।

सांसारिक विषय-वासनाओ से असंतुष्ट एवं क्षुब्ध भक्त को संसार मिथ्या लगने लगता है । उसे यह एक प्रपंच एवं भ्रम-जाल प्रतीत होता है जिसमे जकडा हुआ वह अत्यंत निराश हो उठता है । उस घोर निराशा की स्थिति मे उसे एकमात्र आशा की किरण प्रभु के आश्रय मे दिखायी देती है । स्वार्थ, लोभ, मोह आदि अपने मन के विकारो के पाश मे जकड़ा, अपनी ही करनी के त्रास से अत्यंत व्याकुल भक्त-कवि गदाधर को एकमात्र भगवान की आस लगी रहती है और वह अत्यत दीन होकर उनका आवाहन करता है—

> मोहि तुम्हारी आस । जिनि करहु न निरास ।।
> मन मेरो बंध्यो मोहपास । स्वारथ पर सौधो कैसो दास ।।
> मोहि अपनी करनी के त्रास । निसि बीतति भरि-भरि लेत स्वांस ।।
> रचि-रचि कहिये बाते पचास । मन की मलिनता को कहु न नास ।।
> जो चितवै नेकु श्रीनिवास । गदाधर मिटहि दोष दुख अनायास ।।[300]

ईश्वर से विमुख होने पर भक्त लोभ, लालच आदि दुष्प्रवृत्तियो के कुपथ मे भटकता रहता है । सासारिक सुखों की मरीचिका के महाताप से क्षुब्ध वह अनेकानेक दु:खों को भोगता रहता है । इन दु:खों से निवृत्ति एव सुखों की प्राप्ति का एकमात्र उपाय भगवान के चरणारविंदों का आश्रय ग्रहण करना है ।[301]

इस ससार मे आकर और मानव-तन पाकर भी भगवान की भक्ति न कर पाने पर पश्चात्ताप का अनुभव होता है । चैतन्य सप्रदाय के काव्य में भक्त-कवियो की आत्म-ग्लानि एवं पश्चात्तापजन्य दु:ख की अभिव्यक्ति हुई है । अपने दोषो को दीनतापूर्वक भगवान के सम्मुख प्रकट करके उनसे सहायता की याचना की गयी है । निम्न पद में गदाधर भट्ट पश्चात्ताप करते है कि उन्होंने मनुष्य देह पाकर भी सासारिक मोह मे व्यर्थ जीवन गवा दिया और हरि की आराधना के लिए एक भी उपाय नही किया । अपनी इस अवस्था से क्षुब्ध होकर वे प्रभु से सहायता की विनती करते हैं—

> कहा हम कीनो नरतन पाई ।
> हरि परितोषण एको कबहु बनि आयो न उपाइ ।।१।।
> हरि हरिजन आराधि न जाने कृपण वित्त चित लाइ ।
> वृथा विषाद उदर की चिंता जनमहि गयो विताइ ।।२।।
> सिंह त्वचा को मढ्यो महापशु खेत सवन को खाइ ।
> ऐसे ही धरि भेष भक्त को घर-घर फिर्यो पुजाइ ।।३।।

जस चार भाग क अ य म [illegible] मिला
ऐसे ही गति [illegible] गदाधर प्रभु [illegible] ॥४॥[302]

पश्चात्ताप की यह अग्नि भक्त के मानसिक विकारों को जलाकर मन को शुद्ध करती है और तब अपने पापों की स्वीकृति उसे भगवान के निकट पहुंचने में सहायता करती है। भगवान के महान गुण उसे उनकी ओर आकर्षित करते हैं। उनके भक्तवत्सल, पतितोद्धारक एवं शरणागत-पालक होने की विरद सुन-जानकर भक्त को अपने जैसे अधम जन के भी उद्धार की आशा हो जाती है। तभी तो भक्त-कवि बांकेपिया पतितोद्धारक, दीनबंधु, सर्वशक्तिमान अपने आराध्य-चैतन्य महाप्रभु की भक्ति की कामना करते हैं—

भज मन शची सुवन चैतन्य।
पतितोद्धारक दीनबंधु प्रभु सर्व शक्ति सम्पन्न ॥
कलिजीवन हित नाम कीर्तन कियो प्रचार धन धन्य।
बांकेपिय प्रभु चरण कमल की पाऊं भक्ति अनन्य ॥[303]

वह अनन्य भक्ति प्राप्त होने पर भक्त अपने इष्ट के चरण-कमलों को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं जाना चाहता। भगवद् चरणों में उसकी एकनिष्ठ भक्ति सुदृढ़ होती है। जब श्री गोविंद-पद-पल्लव सिर पर विराजमान हों तो उस सुख का परिमाण इतना अधिक बढ़ जाता है कि गदाधर भट्ट से उस सुख को कहते नहीं बनता। उस भगवद्-संरक्षण से काल रूपी अग्नि से भय नहीं लगता अपितु भगवान के लीलामृत का पान करके मन हुलसता-विलसता रहता है। उन प्रभु के अनेकानेक गुणों का कथन करते-करते नेत्र भीगे रहते हैं, अतएव सांसारिक त्रिविध ताप भी नहीं लगता। उन गोविंद के मुख-कमल के दर्शन कर एवं पावन चरण-रेणु का स्पर्श कर, कवि कहते हैं कि, मुझ जैसे अधम जन भी सनमान प्राप्त करते हैं।[304]

जो जीव प्रभु की शरण में आने से पूर्व सांसारिक दुःखों से दुखी था, अब उसे उनका आश्रय ग्रहण करने पर सर्व दुःखों से मुक्ति मिल गयी और भक्त व्रत, नियम आदि साधनों को एवं अन्य देवों का आश्रय त्यागकर एकमात्र अपने इष्ट-देव के चरणों में स्थान पाता है। भगवान के प्रति दास्य भावपरक एकनिष्ठ भक्ति सूरदास मदनमोहन के निम्न पद में द्रष्टव्य है—

मेरे गति तूही अनेक तोष पाऊं।
चरण-कमल-नखमनी, ऊपर विषय-सुख बहाऊं ॥
घर-घर जो डोलो हरि, तौ तुमहिं लजाऊं ॥
तुम्हरो कहाइ कहौ, कौन कौ कहाऊं ॥
तुमसों प्रभु छाड़ि, काहि दीनन को धाऊं।
सीस तुमहिं नाइकै, अब कौन को नवाऊं ॥

× × ×

कनक-महल छाहि नयो परन कुटी धाऊं।
श्री 'सूरदास मदनमोहन' लाल गुन गाऊं।
संतन की पानही कौ, रक्षक कहाऊं।।[305]

अपने आराध्य देव को एकमात्र स्वामी और स्वयं को तुच्छ से तुच्छ दा मानकर एव उनके प्रति अपनी दास्य भक्ति निवेदित कर भक्त अत्यत सहजता भव-बधनों से मुक्त होकर प्रभु के सामीप्य-लाभ से आनंद की प्राप्ति कर सकत है।

सख्य भाव

साप्रदायिक ब्रजभाषा काव्य मे सख्य भाव की अभिव्यक्ति स्वतंत्र एवं विस्तृत रूप से नही हुई है। सख्य का निर्वाह वात्सल्य एवं माधुर्य-भक्ति की अभिव्यंजना में हुआ है, वह भी अल्प मात्रा मे।

वात्सल्य के अतर्गत सख्य भाव के कुछ उदाहरण गोचारण एव माखन-चोरी के प्रसग मे मिलते है जिनका उल्लेख वात्सल्य भाव का विवेचन करते हुए पीछे किया जा चुका है। सखाओ के साथ मिलकर कृष्ण गोपियों के घर जाकर, सखा के कंधे पर चढ़कर माखन-चोरी करते है।

सखाओ के सग कृष्ण गौ-चारण के लिए वन में जाते है। वहां एक साथ भोजन करते हुए सब ग्वाल-बालों के साथ कन्हैया एक-दूसरे के मुख में ग्रास देते हुए अत्यत रुचि से भोजन करते हैं। सखाओं के साथ कृष्ण विभिन्न खेल खेलते है, एक-दूसरे को मारकर भागते है, इस प्रकार विविध क्रीड़ा-कौतुक करते है—

कबहुं अधर धरि वेणु कबहुं बन पत्र बजावत।
मारि भजत इक धौल दूसरो पकरन धावत।।
गेंदुक खेल कबहुं रचत, फल बूझन को खेल।
चड्ढी चढ़ि इक एक की, सब मिलि करत कुलेल।
सखन सुख देत हरि।।[306]

माधुर्य भक्ति की अभिव्यंजना मे सख्य का कुछ निर्वाह उस प्रसंग में हुआ है हा सखाओं के साथ कृष्ण गोपियो से होली खेलते है। इससे संबंधित कुछ पदो की रचना गदाधर भट्ट ने की है।

सखाओं के संग कृष्ण ब्रज की गलियों में होली खेलने निकलते हैं। ग्वाल-सखाओं के साथ होली खेलते हुए हलधर-गिरधर की जोड़ी इस प्रकार शोभायमान हो रही है—

हो हो हो सब खेलत होरी। मध्य हलधर गिरिधर की जोरी।
तैसो ये परी पूर्ण पूर्णमासी। विमल जोन्ह वर्षं सुखरासी।।
खोरिनि खोरिनि करत कलोलैं। हंसत हंसावत गावत टोलैं।।[307]

होली खेलते हुए सखा एक-दूसरे पर रंग छिड़कते हुए एवं कुसुमों की गेंदुक बनाकर परस्पर मार करते हुए अत्यंत आनंदित होकर नाचते-गाते हैं—

सकल कुंवर गोकुल के निकसे खेलन फाग।
हरि हलधर सखा नायक अंतर अति अनुराग ॥
ओलन बूका चंदन रोरी हरद गुलाल।
बाजति मधुर महुवरि मुरली अरु डफ ताल ॥

× × ×

लै कुसुमनि गेंदुक करत परस्पर मार।
छूटनि फैंट लटपटी बिगरि परत घनसार ॥
हसत हंसावत गावत छिरकत फिरत अबीर।
भींजि लगे तन शोभित रंग-रस रंजित चीर ॥[३०८]

उनका कोलाहल सुनकर गोपियां सोलह शृंगार किये हुए टोली बनाकर होली खेलने के लिए बाहर निकल पड़ती हैं। कृष्ण के सखा जब कहते हैं कि आज हमारे हरि का ब्याह है, गोप-किशोरी राधा दुलहन है और हम ग्वाल-सखा बराती हैं तो गोपियां बनावटी क्रोध प्रकट करती हुई सखा हलधर को जाकर पकड़ लेती है एवं अंजन से दृग आंजकर, मुख को मृगमद से लपेट देती है।

इस प्रकार होली खेलते हुए कृष्ण एवं सखा परस्पर सख्य-भाव से अनुरक्त होकर आनंदित होते हैं।

होली के प्रसंग में सख्य भाव की अभिव्यक्ति चैतन्य-लीलाओं में भी हुई है। यहां माधुर्य भाव या वात्सल्य भाव के संपोषण में सख्य सहायक बना है। चैतन्य के अपने सखाओं—नित्यानंद, अद्वैत, दामोदर आदि के साथ होली खेलने का प्रसंग बांकेपिया व गदाधर भट्ट ने कुछ पदों में वर्णित किया है।[३०९] निम्न पद में वात्सल्य के अंतर्गत सख्य भाव की अभिव्यक्ति हुई है—

जननी निरखत सुत छवि बाल विनोद भरी।
खेलत सखन संग पौरी पै श्री चैतन्य हरी।
मारि भजत इक पकरन धावत लीन्हें कनक छरी।
छोरत तबहिं जबहिं बोलत मुख श्री गोविंद हरी।
गौर वदन पर छींटा रंग के उपमा रहत परी।
बांकेपिय यह छवि मो उर तें टारत नाहिं टरी।[३१०]

'मधुर मिलन' में बांकेपिया ने दो पदों में कृष्ण के मथुरा चले जाने पर उनके अभाव में सखाओं का सख्य-भाव से भावित होकर व्याकुल होना बताया है। कृष्ण के विरह में सखा कृष्ण की क्रियाओं एवं भावों का अनुकरण कर उनका प्रदर्शन करते हैं। कृष्ण का वेश धारण किये हुए एक सखा को दूसरा अपने कंधे पर चढ़ा लेता है और फिर उसको भूमि पर गिराकर स्वयं भाग जाता है। इस प्रकार विविध क्रीड़ाएं करते हैं। कृष्ण की कथा सुनकर सखागण प्रेम में व्याकुल हो जाते हैं—

इक दिशि बड़रे गोप कृष्ण की कथा सुनावैं।
चाउ भरे इक सुनैं नयन जल प्रेम बढ़ावैं॥
एक कहत गोपाल बिनु, गइयां सब बिलखायं।
चरत नहीं तृण पेट भर, दुहन समय अकुलायं॥
प्रीति बछरन तजी॥[311]

सख्य सहचरी भाव के अंग रूप में भी उपलब्ध होता है। राधा के साथ गोपियों का सहचरी भाव माधुर्य-भाव परक विभिन्न लीलाओं के प्रसंग मे अभिव्यक्त हुआ है जिनमे सखियों का प्रमुख कार्य राधा का कृष्ण से मिलन करवाना है। इसका विवेचन माधुर्य भाव के प्रसंग मे पिछले पृष्ठों मे किया जा चुका है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य मे माधुर्य भाव को सर्वोपरि स्थान मिला है। इस संप्रदाय के बंगला काव्य मे माधुर्य भाव के अंतर्गत परकीया और विरह को अधिक प्रमुखता व विस्तार मिला है, किंतु सांप्रदायिक ब्रजभाषा काव्य में स्वकीया भाव व संयोगपरक लीलाओं की प्रधानता है। इस वैभिन्न्य का प्रमुख कारण यह है कि बंगाल और ब्रज की तत्कालीन अपनी-अपनी विशिष्ट परिस्थितियों और परिवेश के अनुरूप बंगाल में परकीया भाव और ब्रज में स्वकीया भाव की प्रधानता रही। इसका प्रभाव दोनों प्रदेशों के साहित्य पर अलग-अलग रूपों में पडना अत्यंत स्वाभाविक था, किंतु ये दोनों रूप चैतन्य संप्रदाय की भावोपासना के अंतर्गत हैं। वस्तुत: चैतन्य सप्रदाय में परकीया व स्वकीया भाव—दोनों की स्वीकृति है। जीव गोस्वामी ने परकीया भाव को स्वीकार करते हुए भी स्वकीया को स्वाभाविक व वैशिष्ट्य-युक्त प्रतिपादित किया है। उन्होंने स्वकीया भाव को वास्तविक व तात्त्विक माना है और परकीया भाव को प्रातीतिक।[312] इसी प्रकार गौड़ीय आचार्यों ने विरह के साथ संयोगमयी लीलाओं पर भी बल दिया है। इसका विवेचन हम प्रथम अध्याय मे सिद्धांत निरूपण के अंतर्गत नित्य विहार के प्रसंग में कर आये हैं।

चैतन्य संप्रदाय के बंगला काव्य की भांति ब्रजभाषा काव्य में भी कृष्ण की छद्म लीलाओं का अत्यंत रंजक रूप मे वर्णन किया गया है। आलोच्य काव्य मे माधुर्य भाव का प्रकाशन राधा और गोपियों—दोनों के प्रसंग में हुआ है किंतु प्रमुखता राधा की है। राधा का प्रेम महाभावपरक है, अत: राधा-प्रेम को अधिक प्राधान्य व विस्तार मिला है। गौड़ीय आचार्यों के अनुसार ही ब्रजभाषा काव्य मे भी राधा का प्रभुत्व बना रहा है। सांप्रदायिक रसोपासना के अनुरूप ब्रजभाषा कवियों ने सखी-भावोपन्न निकुंज रस को सर्वाधिक प्रधानता देते हुए इस रस का विस्तृत व सरस निरूपण किया है। निकुंज रस का स्वतंत्र रूप में भी चित्रण हुआ है और ब्रजरस के चरम उत्कर्ष के रूप मे भी निकुंज रस की अभिव्यक्ति हुई है। निकुंज लीला के साथ ही अन्य मधुर लीलाओं में भावों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अभिव्यंजना आलोच्य काव्य की श्रेष्ठता को प्रमाणित करती है।

राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं के अतिरिक्त ब्रजभाषा कवियों ने राधा-कृष्ण

के मीलित अवतार चैतन्य महाप्रभु की मधुर लीलाओं का भी सरस चित्रण किया है। यद्यपि साम्प्रदायिक [illegible] चैतन्य लीलाओं को अनेक रूपों में जितना अधिक विस्तार मिला है, उतना विस्तृत वर्णन ब्रजभाषा-काव्य में नहीं हुआ, तथापि अनेक ब्रजभाषा कवियों ने चैतन्य की मधुर लीला संबंधी पदों की सुंदर रचना की है। वस्तुतः चैतन्य की ये मधुर लीलाएं राधा-कृष्ण की प्रेम-पराकाष्ठा की महाभावपरक लीलाएं हैं। इन लीलाओं में उनके अंतरंग पार्षद भक्तों का लीला रसाधिकारिणी विशाखा-ललिता आदि सखियों के रूप में भाग लेते हुए चित्रित करना इस संप्रदाय के माधुर्य वर्णन की विशेषता है। राधा-कृष्ण की विभिन्न लीलाओं के समान ही कवियों ने चैतन्य की मधुर लीलाओं में वन-विहार रास, होली, वसंत वर्षा आदि ऋतु-उत्सव संबंधी लीला-पदों की रचना की है। चैतन्य-लीला संबंधी इन पदों की रचना चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा साहित्य की अपनी मौलिक विशिष्टता है जो इसे ब्रज के अन्य संप्रदायों के साहित्य से पृथक् व विशिष्ट रूप में रेखांकित करती है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने सांप्रदायिक मान्यताओं को मूलभूत एवं प्रमुख रूप से स्वीकार करते हुए उसकी सरस भाव-व्यंजना अपने काव्य में की है, साथ ही, चूंकि इन कवियों का प्रमुख ध्येय अपने इष्ट के लीला-गान में केंद्रित रहा, अतः संप्रदाय से इतर भी—जहां से इन्हें अपनी अभीप्सित सामग्री मिली, उसे इन्होंने सहृदयता से अपनाया। अपने उदार दृष्टिकोण के कारण ब्रज के अन्य धर्म-संप्रदायों की मान्यताओं से भी ये प्रभावित हुए हैं और उनकी भावोपासना को अपने अनुसार इन्होंने ग्रहण किया है। प्रस्तुत अध्याय व विगत अध्याय में यथास्थान हमने इसे स्पष्ट किया है। विभिन्न उत्सव संबंधी पदों की रचना करते हुए कुछ कवियों ने वात्सल्य भाव की भी सुंदर व सशक्त रूप में अभिव्यंजना की है। ब्रज के विभिन्न संप्रदायों के मध्य पारस्परिक प्रभाव व समन्वय स्वाभाविक व वांछनीय है।

संदर्भ

१. भक्तिरसामृतसिंधु २।१।६५
२. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० २६
३. वही, प० ६७
४ माधुरी वाणी—'वंशीवट माधुरी', छं० १२, पृ० २२
५. रस कलिका—चतुर्थ दल—राजपौरिया लीला, पद ११६
६. वल्लभ रसिक की वाणी, पद ६, पृ० ३६
७. रसिक कर्णाभरण लीला (ह० प्रति)—मनोहरदास, पृ० ६
८ गदाधर भट्ट की वाणी, पद २५
९. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ६८

१० गदाधर भट्ट की वाणी प० ३१

११. वही, प० ३२

१२. रसकलिका, द० ४, प० २३०

१३ वल्लभ रसिक की वाणी, छ० १६, पृ० ५४

१४ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ७५

१५. गदाधर भट्ट की वाणी, प० २६ । इसी भाव का पद द्रष्टव्य—भ० व्यास—वाणी, प० ३०३, पृ० २६८

१६ गदाधर भट्ट की वाणी, प० २६

१७. आदिवाणी—रामराय, पद ५६

१८. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३८-३९

१९. वल्लभ रसिक की वाणी, छं० ७, पृ० ५१

२०. क्रमश इनकी काव्य रचनाएं रस कलिका, द० ८, प० ३१, ३२, ३३ एव १६०, १७५, शोभन पदावली—पृ० स० ३४-३५ एवं ४३ से ७३ तक; गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३६, सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १०२; भ० व्यास, वाणी, प० ३३६-३७७

२१. शोभन पदावली, प० १३, पृ० ३३, ३४

२२. भ० व्यास, वाणी, पद स० ३४६-३५२

२३. भ० व्यास, वाणी, पद सं० ३३६, पृ० २७८

२४. भ० व्यास, वाणी, पद सं० ३७७, पृ० २८६

२५. शोभन पदावली, प० ४५, पृ० ५६

२६. शोभन पदावली, प० ७१, पृ० ६८

२७. शोभन पदावली, पृ० ४३-७३

२८. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३६

२९. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १०२

३०. गौरांग भूषण मंजावली—गौरगणदास, छं० ७, पृ० ५

३१. द्र० किशोरीदास जी की वाणी, पृ० १; प्रेमरस वाटिका—बांकेपिया, प्रथम विटप, पद २; गौर गुणावली—मनोहरदास, पद सं० ४-५

३२. गौरनाम रस चम्पू—कृष्णदास, पृ० ३

३३. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ६१

३४ सू० म० वा०, प० १०६

३५. माधवदास की वाणी, पृ० २-५

३६ रसकलिका, द० १४, प० १०४

३७ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ६६

३८ वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ६५-६६

३९ आदि वाणी—(उत्तरार्द्ध)—रामराय कृत, प० ३८

४० सू० म० वा०, प० २१

४१ सू० म० वा० प० १२२

४२ रसकलिका (ललित किशोरी), द० ५, प० २८०

४३. कांकरिया क्यों घालै हमारी गागरिया।
निपट ढीठ लपट नित रोकै कदम तरा चढ़ि डागरिया।
आज पकरि तुहि ठीक बनाऊ सुरति रहै मन सांकरिया।
ललित किशोरी नै नटनागर हो नागरि गुन आगरिया।

—र० क० द० ४, प० २४

४४. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३४

४५ शोभन पदावली, प० ३, पृ० ४२

४६. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ४२

४७. रसकलिका, द० ४, प० ३६४

४८. आली इन अखियन लगन लगाई।
पहिले तो ये आप मिली हीं फिरि मोको उरझाई।
अधिक-अधिक उरझान मर्थो री सुरझत नहिं सुरझाई।
दयी सखी ज्यों आग रुई बिच अब नहिं दबत दबाई।

—रस कलिका, द० ५, प० २८०

४९ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० २३

५०. माई वशीधर की बासुरी।
कित कुहकी कालिन्दी कूलन कठिन व्यथा हिय फांसुरी॥
मचकित तन सुधि बुधि बिगराई आवत जात न सासुरी॥
ललितादिक कर ताल बजावत श्रीरामराय उपहासुरी॥

—आदिवाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय, प० ३५

५१. किशोरी० वा०, पृ० ४२

५२. रगीली बासुरी मन हर्यौरे।
कहा करो सुनि मेरी सजनी मोहनी मत्र कर्यौरे॥
सास ननद डर निकसत न पड़ए यह दुख मोपै न जात भर्यौरे।
किशोरीदास व्रज चद्र बिहारी कै पर बस प्रान पर्यौरे॥

—किशोरी० वा०, पृ० ४०

५३. सू० म० वा०, प० १९

५४. आदिवाणी (पूर्वार्द्ध), प० ५३

५५. बैठी सुभ सदन मदन सी मयक मुखी
सखी करकंज निज कर से गह्यो है री।
देख वीर तीर की सी पीर बार-बार होत,
धीर ना धरत जिय शोक से छयो है री।
सोभन सयानी सी अयानी किहिं हेत होत,
याहि नहिं जानी यह मन्मथ नयो है री।
मेरो मन मेरी आली जानत हौ मेरी जान,
नैन बटमारन के भेद मे गयो है री॥

—शोभन पदावली प० ५ प० ४२ ४३

५६ (क) बरी प्रेम की चोट गसाईं
जा तन लागी सोई ता जानत विकल भये बौराई।
औषधि मिलै न वैद सयाने प्यारे की परछाईं॥
श्री रामराय कर करी सही निजु ज्यों की त्यों भरपाई॥
—आदिवाणी, (पूर्वार्द्ध)—रामराय, पद सं० ६३

(ख) ब्रज में वैद सावरोड होई।
जत्री मन्त्री तन्त्र ज्योतिषी गुनी गारुड़ी ओई।
येक प्रीति को रोग हिया सखि दूजो रोग न कोई।
ललित किशोरी औषद येकै कुंज केलि रस जोई।
—रस कलिका, ललित किशोरी द० ४, प० ४६४

५७ रस कलिका, द० ८, प० १२
५८ माधुरी वाणी—उत्कंठा माधुरी—दो० १३, १४ एवं १६, २१
५९ प्रेम रस वाटिका, प० ७, पृ० २६
६० खंजन से दृग अंजन गंजन मैन महा मन रंजन गोरी।
काज कहा कछु लाज सों आज जो चितवत हौ पग कंजन ओरी।
ललित किशोरी चंदमुखी चख ये तो कारन भये चकोरी।
जीवन को फल दीजै मो तन हेरहु टुक वृषभान किशोरी।
—रस कलिका—ललित किशोरी, द० ४, प० ६७७

६१ आदिवाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय, प० ४५
६२ रसिक कर्णाभरण लीला—मनोहरदास, पृ० १७, १८
६३ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १११
६४ रस कलिका—ललित किशोरी, द० ६, 'सुबल वेश लीला'
६५ वही, द० १४, प० ६७
६६ वही, द० १४, प० ३१
६७ वही, द० १०, प० ६-१०
६८ क्रमशः इनकी रचनाएं—सू० म० वा०, प० १०३, किशोरी० वा०, पृ० ३४-३७, प्रे० र० वा०, पृ० ३६-३८, ७२, ७३, र० क०—दल १५—'दान केलि माधुरी', माधव० वा०—'स्वामिनी झगरौ; मा० वा०—'दान माधुरी'; कि० क० क० एवं द० वि०।
६९ मेरो दान दै दै ग्वालिनी।
नित चोरी से बेंचि जात दधि बरसाने की कामिनी॥
अधर बिंब, दृग चपल, पीन कुच, शोभा गुण अभिरामिनी।
लीन्हे फिरत अमोल वस्तु सब बांके पिय लव भामिनी॥
—प्रेम रस वाटिका—वांकेपिया, वि० ३, प० ३६

७० किशोरीदास की वाणी, प० ४, पृ० ३४
७१ वही प० ३६

७२ माधुरी वाणी, पृ० ७४, ७५, छं० ३१

७३ वही—'दान माधुरी'— छं० ३३, पृ० ७५

७४ रस कलिका—ललित किशोरी, द० ५, प० २१६

७५ क्रमश इनकी काव्य-रचनाए रस कलिका—दल १८—'पुष्प माधुरी', व० र० वा०, पृ० ६-१६, किशोरी० वा०, पृ० ३६, ४०; दम्पति विलास—भाग २—सांझी लीला, पद १-२२ व भाग ३, पद १-३६; आ० वा०—प० ७७; शो० प०, पृ० २८-२९

७६ शोभन पदावली, पृ० २८, प० १

७७. रस कलिका—ललित किशोरी, द० १५, प० ११३

७८. दम्पति विलास, भा० २—सांझी लीला, प० ११

७९. रस कलिका—ललित किशोरी, द० १४, प० १९

८० वही, द० १४, प० २८

८१. दम्पति विलास—ललित लडैती, भाग ३, प० २३

८२ रस कलिका—ललित किशोरी, द० १४, प० ५७

८३. क्रमश इनके काव्य में—र० क०; द० वि० एव कि० क० क०, रा० र० सा०, किशोरी० वा०, शो० प०, व० र० वा०, मा० वा०, ग० भ० वा०, सू० म० वा०, आ० वा०, प्रे० र० वा० एव भ० व्यास-वाणी।

८४. शोभन पदावली, पृ० १२, प० १

८५. राधारमण रस सागर, पृ० २३, प० ६८

८६. वही, पृ० २५, प० ७२

८७. किशोरी० वा०, पृ० ६६; र० क०, द० १, प० ७४-८०, रा० र० सा० (मनोहरदास), पृ० २३-३०; प्रे० र० वा०—(बाकेपिया), पृ० ५७, शो० प० (शोभन)—पृ० १२-१६

८८. शोभन पदावली, पृ० १३, प० ३

८९. किशोरीदास की वाणी, पृ० ६६

९०. प्रेम रस वाटिका (बाकेपिया), पृ० ५७ एव किशोरीदास की वाणी, पृ० ६९, ७०

९१ किशोरी० वा०, पृ० ६९

९२. प्रेम रस वाटिका, पृ० ५७, प० ५

९३. शोभन पदावली, पृ० १७, प० १-२

९४. क्रमश: इनकी काव्य रचनाए—सू० म० वा०, प० ९८; ग० भ० वा०, प० ७४; र० क०—दल १२, प० ८७

९५. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ७४

९६. ग० भ० वा०, प० ७३

९७. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ९१, ९२; शोभन पदावली, पृ० १७, १८; रस कलिका द० १२ प० ८७ रस सागर (मनोहर) प० ३२

९८ सू० म० वा० प० ९८

९९. ब० र० वा०—'बर्षा की साँझ', पृ० ३७

१००. र० क०, दल १२, प० ८७

१०१. प्रे० र० वा०, पृ० ३२, प० २३

१०२. राधारमण रस सागर, पृ० ३१, प० ९२, ९३ एवं भ० व्यास, वाणी, प० ६८१-६८६, पृ० ३७८-३८०

१०३. दे० क्रमश. इनकी काव्य रचनाएं—सू० म० वा०, प० ८५-१००, ग० भ० वा०, प० ७५-८४; आ० वा०, प० ६९-७४; किशोरी वा०, पृ० ६७, ६८; र० क०, दल १२, १३, द० वि०—भाग २—'वन झूलन लीला', हिंडोरा लीला व कि० क० क०, पृ० १२६-१३५, ब० र० वा०, पृ० २८-३६; भ० व्यास, वाणी, पृ० ३८०, ३८१, प्रे० र० वा०, पृ० ३३-३६

१०४. आदिवाणी, प० ६९

१०५. आ० वा० (रामराय), प० ७१-७४; किशोरी० वा०, पृ० १२-१४; कि० का० क० (ललित लड़ैती), पृ० १२६, र० क० (ललित किशोरी), द० १३; वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ६, २८

१०६ किशोरी० वा०, पृ० १५

१०७. प्रेम रस वाटिका, पृ० ६१, ६२, प० १-३

१०८ रस कलिका, द० १३—'हिंडोल माधुरी', प० १६

१०९. शोभन पदावली, पृ० २३, प० ३६

११०. रस कलिका—ललित किशोरी, द० १३, प० २९

१११ शोभन पदावली, पृ० २५, छं० ५०, ५२

११२. रस कलिका, द० १२, प० ९८

११३. शोभन पदावली, पृ० ३०, छं० ६

११४ राधारमण रस सागर, पृ० ९, छ० २४

११५. राधारमण रस सागर, पृ० ७, प० १९

११६. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ५२

११७. दे०—र० क० (ललित किशोरी), द० १०, शोभन पदावली, पृ० ८-९, माधुरी वा०, पृ० २०-२४, रा० र० सा० (मनोहर), पृ० १९, कि० क० क० (ललित लड़ैती), पृ० १४५, गदाधर भट्ट की वाणी, पृ० ३९

११८. शोभन पदावली, पृ० ८, प० १८

११९. माधुरी वाणी, पृ० २२, छं० २०-२२

१२०. माधुरी वाणी, पृ० २२, छं० १२

१२१. माधुरी वाणी, पृ० २२, छ० १४-१५

१२२ गदाधर भट्ट की वाणी, पृ० ३९, माधुरी वाणी, पृ० २३, किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ५३

१२३. माधुरी वाणी, पृ० २३

१२४. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ५९

१२५. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ५८

१२६ वही, प० ६०

१२७. किशोरी० वा०, पृ० ५३, रस कलिका, द० १०, प० ३१६, शोभन पदावली, पृ० ४-५

१२८. शोभन पदावली, पृ० ४-५, छ० ७

१२९. माधुरी वाणी. पृ० ३२, ३३

१३०. दे० क्रमश इनकी काव्य रचनाए—र० क० —द० १०—'फागु माधुरी'; किशोरी० वा०, पृ० ५३-६६; ग० भ० वा०, प० ६१-७२, मा० वा०—'होरी माधुरी'; ब० र० वा०, पृ० ४, ३३-३४, ५१-५५; द० वि०, भाग २ व कि० क० क०, पृ० १५२-१७५; भ० व्यास, वाणी, पृ० ३६८-३७०; शो० प०, पृ० ८७-९०; रा० र० सा०, पृ० २०-२३; आ० वा०, पृ० २३-२५, प्रे० र० वा०, पृ० ८५-९५

१३१ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ६२

१३२. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ७०

१३३. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ५८

१३४. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ५३, छ० १६

१३५ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ६३

१३६. ग० भ० वा०, प० ७२, किशोरी० वा०, पृ० ५४, रस कलिका, द० १०, प० २१६

१३७. किशोरी० वा०, पृ० ६१, र० क० (ललित किशोरी), द० १०, प० १५२; द० वि० भाग २, छद्म होली लीला, एवं कि० क० क० (ललित लडैती), पृ० १५२

१३८ किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ६१

१३९ रस कलिका, दल १०, प० १९१, १९२

१४० रस कलिका, द० १०, पद्य ३२

१४१. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ६३

१४२. रस कलिका, द० १०, प० १५१

१४३. क्रमश: इनकी काव्य रचनाए—मान माधुरी (मा० वा०); मान माधुरी (र० क० द० २०); कि० क० क० मान लीला, पृ० ४२-७२ एव द० वि०—मान लीला; भ० व्यास, वाणी, पृ० ३१८-३३७ व ३९३-३९७; प्रे० र० वा०, पृ० ४५-४८; शो० प०, पृ० २१-२६; आ० वा०, पृ० १२-१३

१४४. क्रमश: इनकी रचनाओ—'माधुरी वाणी' एव 'रस कलिका' में सकलित।

१४५. गुजराती और व्रजभाषा कृष्ण काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डा० जगदीश गुप्त, पृ० ३०१

१४६. मान माधुरी—(मा० वा०), छ० ३६

१४७. वही, छ० ३८-३९

१४८. मान माधुरी (मा० वा०), दो० २-३

१४९. भ० व्यास, वाणी, प० ४७६, पृ० ३१८

१५०. मान माधुरी (माधुरी वाणी), छं० ३३

१५१ मान माधुरी (मा व० छ० ३४
१५२ द० वि० — सभ्रम मान लीला, प० १-३८
१५३ मान माधुरी (र० क०)—द० २०, प० ६२३-६४२, कि० क० क०—मान लीला, प० १-१२।
१५४ किशोरी करुणा कटाक्ष—मान लीला, (ललित लड़ैती) प० १-१२
१५५ दपति विलास — खडिता मान लीला, प० १-३३
१५६ दंपति विलास— सभ्रम मान लीला, प० १०
१५७ मान माधुरी, (रस कलिका)—द० २०, प० १००-११०
१५८ वही, छ० १०६
१५६ मान माधुरी (माधुरी वाणी), छ० ११-१३, पृ० ७७
१६० मान माधुरी (मा० वा०), छ० १४. पृ० ७८
१६१ किशोरी करुणा कटाक्ष (ललित लड़ैतीकृत) — मान लीला—प० ८५-८७
१६२ मान माधुरी (मा० वा०), द० वि०, कि० क० क०, रस कलिका, शोभन पदावली आदि।
१६३. शोभन पदावली, पृ० २२
१६४. मान माधुरी (र० क०—द० २०), प० ११५
१६५. क्रमश इनकी काव्य कृतियों मे सकलित—'रस कलिका'—दल १६ एव 'माधुरी वाणी'।
१६६. सू० म० वा०—प० २८-३६, १३६-१३८, ग० म० वा०—प० ४७-५६, कि० क० क०, पृ० १६४-२०० एवं द० वि०, भाग २, 'रास लीला', व० र० वा०—'रास की मांझ'—पृ० ३२, प्रे० र० वा०—पृ० ७६-७७, आ० वा०—प० ५६-५८, रा० र० सा०, पृ० ७-१७
१६७. श्रीमद्भागवत, दशम स्कध, अ० २६-३३
१६८ किशोरीदास की वाणी, पृ० ४२
१६६. प्रेमरस वाटिका, पृ० ७६
१७०. रास माधुरी—(र० क० द० १६), प० २०३
१७१. दे० क्रमश: इनकी रचनाए—ग० म० वा०—प० २१-२३, सू० म० वा०—प० १६-१६; कि० क० क०—प० १४; मा० वा०—वशीवट माधुरी; भ० व्यास, वाणी—रास पचाध्यायी, प० १-४
१७२ प्रे० र० वा०—बाकेपिया, पृ० ७६-७७; कि० क० क०—'रास पंचाध्यायी लीला' ललित लड़ैती—प० १४ व भ० व्यास, वाणी—रास पचाध्यायी, प० ६-८
१७३ कि० क० क० — रास पचाध्यायी लीला, प० १७
१७४. रास माधुरी (र० क०—द० १६)—ललित किशोरी, प० ३००-३४५ एवं कि० क० क० (ललित लड़ैती)—रास पचाध्यायी लीला, प० २६
१७५. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ४३

१७६ माधरी वाणी छ २६६ प० ४२

१७७. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ४७, किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ४३-४४

१७८. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ५०

१७६ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १३८

१८०. बल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ३२

१८१. वशीवट माधुरी—(माधुरी वाणी)—प० २६८, पृ० ८३

१८२ भ० व्यास, वाणी, प०८५६, ४६२ पृ० ३१३

१८३. राम माधुरी—(र० क० द० १६)—प० १५७ (ललित किशोरी)

१८४. क्रमश इनकी रचनाएं—ग० भ० वा०—प० ५१-५६, आ० वा०—प० ६१-६३, सू० म० वा०—प० १०१-१०२

१८५ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १०१, आदि वाणी—रामराय, प० ६२

१८६ गदाधर भट्ट की वाणी, प० ५१

१८७ वही, प० ५३

१८८. रास माधुरी (र० क०—ललित किशोरी, द० १६)—प० ३५६; एवं द्रष्टव्य—भ० व्यास, वाणी—रास पचाध्यायी, प० २६

१८६. माधुरी वाणी, पृ० २५, ४०

१६०. दे० क्रमश. इनके काव्य—र० क०—'निकुज माधुरी विहार'—द० २३, मा० वा०—'केलि माधुरी', सू० म० वा०—प० ३८-४८, गो० प०—पृ० ३७-४१, व० र० वा०—पृ० ५५-५६, आ० वा०—प० २-१०, ७४-७६, प्रे० र० वा०—पृ० ५०-५३, किशोरी वा०; भ० व्यास, वाणी, पृ० २६६-२७६, ३४०-३४६

१६१. क्रमश. इनके काव्य—माधुरी वाणी व रस कलिका में सकलित।

१६२. रस कलिका, प० ३२

१६३. रस कलिका, प० ३२ व ४८

१६४ शोभन पदावली, प० ६, पृ० ३८

१६५. रस कलिका, द० ६, प० २५१

१६६. रस कलिका, द० ३, प० १३५; द० ४—प० २०५

१६७. प्रेम रस वाटिका, प० ७१, पृ० ५१

१६८. माधुरी वाणी, पृ० ३२-३३, ५१

१६६. "मिलि बिछुरी न 'व्यास' की स्वामिनि, ज्यौंब खाँड मिलि घिय सौं।"

—भ० व्यास, वाणी, प० ५७६, पृ० ३४५

२००. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ५६

२०१. व० र० वा०—पृ० ५६, रस कलिका—ललित किशोरी, द० १, प० २५०-२६५

२०२ वल्लभ रसिक की वाणी पृ० ५६

२०३. भ० व्यास. वाणी. प० ३१६. प० २७३

२०४ भ० व्यास वाणी प० ३१८ प० २७२

२०५ आदिवाणी प० ६

२०६. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ४०, ४४, ५४

२०७ रस कलिका, द० ३, प० २१२

२०८ चंद्र चौरासी—चंद्रगोपाल कृत। चै० म० ब्र० सा०, पृ० १६३ और गौरांग पदावली, पृ० ५०-५१ पर उद्धृत।

२०९. राधा रस सुधा निधि—राधिकानाथ। चै० म० ब्र० सा०, पृ० १८० पर उद्धृत।

२१०. चंद्र गोपाल कृत पद। चै० म० ब्र० सा०, पृ० १६३ एवं भक्त भाव संग्रह, पृ० ५१ पर उद्धृत।

२११. वृंदावनदास कृत पद, गौरांग पदावली, (पृ० ४७, प० १११) में संकलित।

२१२ मनोहरदास कृत पद, गौरांग पदावली, (पृ० ३१, ३२) व चैतन्य पदावली, (पृ० २०४) में संकलित।

२१३. चैतन्य पदावली, पृ० २०२

२१४. (क) देखो आली गौर-मेघ उल्लास।

श्री अद्वैत पवन पुरवाई करुणा बिजुरी विलास।

अंतर श्याम घटा प्रगटत है अरुणाम्बर परकास।

नाम धुनी गरजत प्रेमामृत बरसत है रस रास।

× × ×

श्री वृंदावन प्रेम सिंधु मिल, गुणमंजरी सुख वास।

—रहस्य पद—गुणमंजरी कृत

(ख) बसंत देखोरी नयन भरि, गौरचंद मूरति बसंत।

अंकुर पलक अधर नवपल्लव, वचन कोइल कुहकंत।

केसर चंदन अंग-लेपन, अरुण वसन रुचि अति ही लसत।

'कृष्ण' प्रेम रस मगन रैन दिन, चरण शरण आचत॥

—कृष्णदास कृत पद; चैतन्य पदावली (पृ० २०६) में संकलित।

२१५ गदाधर भट्ट की वाणी, प० ६१

२१६. प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, पृ० १४-१५, प० २६

२१७. मनोहरदास कृत पद, भाव संग्रह, पृ० ४५-४६, प० ५७

२१८. गौरांग भूषण मंजावली—गौरगणदास कृत, पृ० ४

२१९. इसी प्रकार कृष्ण जीवन, गौर चरण, चरणदास, दीनदास, नवद्वीप चैतन्य, नव प्रसाद, बल्लभ, मदन, सूरज, दामोदर, रसिकदास, जुगलदास आदि अनेक कवियों द्वारा रचित चैतन्य की मधुर लीलाओं से संबंधित पद उपलब्ध होते हैं। ऐसे सभी अज्ञात कवियों के पद 'गौरांग पदावली' व चैतन्य मत और ब्रज साहित्य (पृ० २६८ से ३७८) में संकलित हैं। इनके अतिरिक्त चैतन्य लीला संबंधी अनेक स्फुट पद सांप्रदायिक कीर्तन-पोथियों व अन्य हस्तलिखित पद-संग्रहों में भी उपलब्ध होते हैं जिनके प्रामाणिक संकलन के लिए पृथक् रूप से शोधपरक अध्ययन अपेक्षित है।

२२०. भ० र० सि०, २/५

२२१ ऊधौ विरही प्रम करै

—सूर सागर, पृ० ४६०

२२२. उद्धव चरित्र, पृ० ५२२, ५२५

२२३. वही, पृ० १०२

२२४. पथिक मराल, छं० ४५, पृ० १०

२२५ प्रेमोद्दीपनी—बांकेदिया, छ० ३-४, पृ० २

२२६. वही छं० १०-१९, पृ० ४-७

२२७. वही, छं० २१, २७, पृ० ८, १०

२२८. वही, छं० ८, पृ० ४

२२९ वही, छं० ३१, पृ० ११

२३० वही, छं० ३४, पृ० १२

२३१ पथिक मराल, छ ३६, पृ० ८

२३२ मधुर मिलन—बांकेदिया छं० ४३, पृ० १२

२३३. मधुर मिलन, छं० १

२३४. उद्धव चरित्र, पृ० १२

२३५. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६९, अंक ४, पृ० १३२

२३६. उद्धव चरित्र, पृ० १३

२३७. वही, पृ० १७

२३८. वही, पृ० २१

२३९. वही, पृ० २६-२७

२४०. वही, पृ० २८०

२४१. वही, पृ० १८१

२४२. वही, पृ० २९७

२४३. वही, पृ० १०२

२४४. वही, पृ० ३७६

२४५. वही, पृ० ३८२

२४६. वही, पृ० ४५४

२४७. वही, पृ० ४५९

२४८. मधुर मिलन, छं० ६-१६

२४९. वही, छं० २५-२६, पृ० ८

२५०. वही, छं० ५०, ५१, ५३

२५१. वही, छं० ५६

२५२ उद्धव चरित्र, पृ० ४४७

२५३ वही, पृ० १४२

२५४. वही, पृ० ४४६

२५५ वही पृ० ४५८

२५६ उद्धव चरित्र प० ८८९

२५७. क्रमश: इनकी काव्य-रचनाएँ [illegible] पृ० ३-१४, १०६-११४; किशोरी० वा०—पृ० २०-३८, ५०-५१ [illegible] पृ० ६३-७० व प्रेमोद्दीपनी—पृ० १६-२७; माधव० वा०—[illegible] १-६६, कि० क० क०—पृ० २६-३७ व द० वि०—पृ० १८-२[illegible] श्री० वा०—उत्तरार्द्ध—पृ० १९-२१

२५८. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० २५

२५९ वही, पृ० २६, प्रेम रस वाटिका —[illegible] ७०

२६०. प्रेम रस वाटिका, प० २७, प० ६६

२६१ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० [illegible]

२६२ किशोरीदास जी की वाणी, पृ २७-[illegible]

२६३. प्रेम रस वाटिका, प० ३१, पृ० ६८

२६४. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पृ० ८

२६५. वही, प० ५

२६६. माई बरसाने सरस आनद [illegible]।
आनद निधि सुखनिधि [illegible]
[illegible]॥

अति सुकुमारि अग-अग माधुरी श्री [illegible]।
श्री वृषभानु कवरि लाड़िली किशोरीदास [illegible]॥
—[illegible], पृ० २८

२६७ क्रमश. इनकी काव्य-रचनाए—'[illegible] 'प्रेमरस वाटिका' व चह-चौरासी मे। मनोहरदास, वृन्दावनदास [illegible] पद गौराग पदावली, चैतन्य पदावली व भक्त कवि समग्र मे सकलित है।

२६८. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ५

२६९. प्रेम रस वाटिका, प० ३, पृ० ५-६

२७०. गौराग पदावली, पृ० १-४, १३ [illegible]

२७१. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० २६

२७२ प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया, प० ४१, पृ० [illegible] किशोरीदास की वाणी, पृ० २७

२७३ किशोरीदासजी की वाणी, पृ० २७

२७४ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १४

२७५. प्रेम रस वाटिका, प० ३३, पृ० ६९

२७६ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ८

२७७ वही, प० ९

२७८. प्रेमोद्दीपनी—बांकेपिया, प० ९, १०, पृ० ११

२७९ वही प० २ ३ प० १७

२२१ अथो [illegible]

सूर सागर, पृ० ४१

२२२. उद्धव चरित्र, पृ० ४३२, ५०४

२२३. वही, पृ० १०२

२२४. पथिक मराल, छं० ४५, पृ० १०

२२५. प्रेमोद्दीपनी - बाकेपिया, छं० ३०, पृ० ३

२२६ वही छं० १०-१८, पृ० ६-७

२२७ वही, छं० २१, २७, पृ० ९, १०

२२८. वही, छं० ८, पृ० ४

२२९. वही छं० ३१, पृ० ११

२३०. वही, छं० ३४, पृ० १२

२३१. पथिक मराल, छं ३६, पृ० ८

२३२ मधुर मिलन —बाकेपिया छं० ४२, पृ० १२

२३३. मधुर मिलन, छं० ५

२३४. उद्धव चरित्र, पृ० १२

२३५. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६६, अंक ४, पृ० १३२

२३६. उद्धव चरित्र, पृ० १३

२३७. वही, पृ० १७

२३८. वही, पृ० २१

२३९ वही, पृ० २६-२७

२४०. वही, पृ० २८०

२४१. वही, पृ० १८१

२४२. वही, पृ० २६७

२४३. वही, पृ० १०२

२४४. वही, पृ० ३७६

२४५. वही, पृ० ३८२

२४६. वही, पृ० ४५४

२४७. वही, पृ० ४५६

२४८. मधुर मिलन, छं० ६-१६

२४९. वही, छं० २५-२६, पृ० ८

२५०. वही, छं० ५०, ५१, ५३

२५१. वही, छं० ५६

२५२. उद्धव चरित्र, पृ० ४४७

२५३ वही, पृ० १४२

२५४ वही, पृ० ४४६

२५५ वही पृ० ४५८

२ [illegible]

सूर सागर, पृ० ४१

२२२. उद्धव चरित्र, पृ० ५२०, ५०४

२२३. वही, पृ० १०२

२२४. पथिक मराल, छं० ४५, पृ० १०

२२५. प्रेमांगिनी——वाकिपिपा, छं० ३-८, पृ० २

२२६ वही छं० १०-१८, पृ० ४-५

२२७. वही, छं० २१, २७, पृ० ८, १०

२२८. वही, छं० ८, पृ० ४

२२९. वही छं० ३१, पृ० ११

२३०. वही, छं० ३४, पृ० १२

२३१. पथिक मराल, छं ३६, पृ० ८

२३२. मधुर मिलन——वाकिपिपा छं० ४३, पृ० १२

२३३. मधुर मिलन, छं० ५

२३४. उद्धव चरित्र, पृ० १२

२३५ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६९, अंक ४, पृ० १३२

२३६. उद्धव चरित्र, पृ० १३

२३७. वही, पृ० १७

२३८. वही, पृ० २१

२३९ वही, पृ० २६-२७

२४०. वही, पृ० २८०

२४१. वही, पृ० १८१

२४२. वही, पृ० २९७

२४३. वही, पृ० १०२

२४४. वही, पृ० ३७६

२४५. वही, पृ० ३८२

२४६. वही, पृ० ४५४

२४७. वही, पृ० ४५६

२४८. मधुर मिलन, छं० ६-१६

२४९. वही, छं० २५-२६, पृ० ८

२५०. वही, छं० ५०, ५१, ५३

२५१. वही, छं० ५६

२५२ उद्धव चरित्र, पृ० ४४७

२५३. वही, पृ० १४२

२५४. वही, पृ० ४४६

२५५ वही पृ० ४५८

२५६ उद्धव चरित्र पृ० ४८१

२५७ क्रमश इनकी काव्य-रचनाओं में—सू० म० वा०—पृ० ३-१४, १०६-११८; किशोरी० वा०—पृ० २०-३४, ५०-५१; प्रे० र० वा०—पृ० ६३-७० व प्रेमोद्दीपनी—पृ० १६-२७, माधव० वा०—"बाल लीला"—छं० १-६६; कि० क० क०—पृ० २६-३७ व द० वि०—पृ० १८-२२; र० क०—द० ६; आ० वा०—उत्तरार्द्ध—पृ० १६-२१

२५८. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० २५

२५६. वही, पृ० २६, प्रेम रस वाटिका—बांकेपिया—प० २६, पृ० ६७

२६०. प्रेम रस वाटिका, प० २७, पृ० ६६

२६१ सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ३

२६२. किशोरीदास जी की वाणी, पृ २७-३३

२६३. प्रेम रस वाटिका, प० ३१, पृ० ६८

२६४. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ४

२६५ वही, प० ५

२६६. माई बरसाने सरस आनंद प्रगटी राधा बालरी।
आनद निधि सुखनिधि सोभानिधि सुदरता की रासि छबीली
रसमै रसिक रसालरी॥
अति सुकुमारि अग-अग माधुरी श्री ब्रजचद्र चद्रिका विसालरी।
श्री वृषभानु कवरि लाड़िली किशोरीदास निरखत भये निहालरी॥
—किशोरीदास की वाणी, पृ० २८

२६७ क्रमश इनकी काव्य-रचनाएं—'किशोरीदास की वाणी,' 'प्रेमरस वाटिका' व चंद्र-चौरासी में। मनोहरदास, वृ दावनदास व गुणमजरी कृत कुछ पद गौरांग पदावली, चैतन्य पदावली व भक्त कवि सग्रह में संकलित हैं।

२६८. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० ५

२६६ प्रेम रस वाटिका, प० ३, पृ० ५-६

२७०. गौराग पदावली, पृ० १-४, १३ एव चैतन्य पदावली, पृ० १५३-१५६

२७१. किशोरीदास जी की वाणी, पृ० २६

२७२. प्रेम रस वाटिका—बाकेपिया, प० २१, पृ० ६४ एवं किशोरीदास की वाणी, पृ० २७

२७३. किशोरीदासजी की वाणी, पृ० २७

२७४. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १४

२७५. प्रेम रस वाटिका, प० ३३, पृ० ६६

२७६. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ८

२७७. वही, प० ६

२७८. प्रेमोद्दीपनी—बांकेपिया, प० ६, १०, पृ० १६

२७६. वही, प० २, ३, पृ० १७

२८०. प्रमोद्दीपनी—बाकेपिया, प० ५, ६, पृ० १८

२८१. वही, प० १५, पृ० २१

२८२ वही, प० ८, पृ० १६

२८३. प्रेम रस वाटिका—बाकेपिया, प० ६, पृ० ७

२८४. वही, प० ८, पृ० ६

२८५. प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, प० १७, १६, पृ० २२

२८६ किशोरीदास की वाणी, पृ० ५०-५१ एव प्रेमोद्दीपनी—प० २०, २१, पृ० २३

२८७. सूरदास मदनमोहन की बाणी, प० ११४

२८८. रसकलिका—ललित किशोरी, द० ६, प० २

२८९ दपति विलास, माखन चोरी लीला, प० १६

२९० माधवदास की बाणी—बाल लीला—दोहा १२-१६, पृ० २ एव प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, प० २४, पृ० २४

२९१ रसकलिका—ललित किशोरी, द० ६, प० ७

२९२ सूरदास मदनमोहन की बाणी, प० १०६

२९३. वही, प० १०७

२९४. माधवदास की वाणी—बाल लीला, दो० १४-२३, पृ० २, ३

२९५. वही, दो० ३३-३५, पृ० ३

२९६. वही, दो० ५० पृ० ५

२९७. तुरत अपने कै नैन बैन चूवत नदरानी।
कठ लगाइ सुनावई सु ललित मृदु बानी।
तुम हौ मेरे प्राणनाथ ब्रजनाथ मुरारी।
मिथ्या तुमहि खिजावही गोकुल की नारी॥
—माधवदास की वाणी—बाल लीला, दो० ५८, ५९, पृ० ५

२९८. मधुर मिलन—बाकेपिया, प० ११

२९९. वही, प० १८

३००. गदाधर भट्ट की बाणी, प० २६

३०१ धर्म अधर्म विवेक होत हू प्रवृत्ति निवृत्ति हित नाहि चलत मन।
भटकत फिरत लोभ लालच लग परयौ कुपथ भूले निजु भवन॥
महा मरीचिका व्यापी तापत चितवन कितव करत डरपत तन।
श्रीराधामाधव जुगल रामराय प्रभु मुख रुख तजि परयौ दु:खसघन॥
—आदिवाणी—रामराय, प० ६०

३०२. गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३

३०३. प्रेम रस वाटिका, प० २५, पृ० १४

३०४. गदाधर भट्ट की वाणी, प० १०

३०५. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० १

३०६. प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, प० २१, पृ० २३

३०७ गदाधर भट्ट की वाणी पृ० ६४

३०८ वही पृ० ६३

३०९ प्रेम रस वाटिका—वाकेपिया, पृ० ६, १४, १५, १८, एव गदाधर भट्ट की वाणी. पृ० ४०, पृ० ६१

३१० प्रेम रस वाटिका, पृ० ६

३११. मधुर मिलन, पृ० १४

३१२. उज्ज्वल नीलमणि, श्लोक १८—लोचन रोचिनी व्याख्या (जीव गोस्वामी कृत) और आनद चद्रिका टीका (विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत)।

पांचवां अध्याय

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा-काव्य में रस-निरूपण

वैष्णव रस साधना बाह्य काव्यशास्त्रीय रस साधना की समानुरूपा ज्ञात होती है तथापि भाव दृष्टि से वह मूलतः भिन्न है। भक्ति रस की भावभूमि अलौकिक है, उसमें लौकिक भावभूमि जनित वासनात्मक रति के स्थान पर भगवद् रति को प्रमुखता मिली है। इस रूप मे वह लौकिक राग का परिष्कार करती है। अत आधारभूमि पृथक् होने के कारण भक्ति-काव्य एवं लौकिक काव्य की विवेचना के मापदंडों में भी पार्थक्य होना चाहिए। भक्ति-काव्य को मात्र परंपरागत काव्य-शास्त्रीय कसौटी पर कसने के कारण ही उसमे अनेकत्र केवल शृंगारिकता को देखने की भूल होती है। अतः भक्ति साहित्य का पूर्णरूपेण समुचित मूल्यांकन करने के लिए भक्ति रस शास्त्रीय सिद्धांतों के अनुसार उसके समीक्षण की आवश्यकता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की विवेचना भक्ति रस शास्त्र के अनुसार की जा रही है, क्योंकि प्रथमतः यह भक्ति काव्य है, साथ ही चैतन्य संप्रदाय मे सबद्ध होने के कारण संप्रदायगत रसशास्त्र के अनुसार इसका मूल्यांकन अत्यावश्यक है। सांप्रदायिक ग्रंथ 'भक्ति रसामृत सिंधु' एव 'उज्ज्वल नीलमणि' इस विवेचना के मूल आधार रखे गये है तथापि परंपरागत काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण को भी ध्यान मे रखकर इस संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की रस-विवेचना प्रस्तुत की जा रही है।

भक्ति रस के भेद

मुख्या और गौणी रति के आधार पर कृष्ण भक्ति रस भी द्विविध कहे गये है—

मुख्य एवं गौण। मुख्य भक्ति रस में शांत, प्रीति (दास्य), प्रेयान् (सख्य), वत्सल तथा मधुर भक्ति रस आते है। इनमे क्रमश: भावों की उत्तरोत्तर श्रेष्ठता के कारण इनका इसी क्रम के अनुसार 'भक्तिरसामृत सिंधु' में वर्णन किया गया है। गौण भक्ति रस के सात भेद हैं—हास्य, अद्‌भुत, वीर, करुण, रौद्र, भयानक तथा वीभत्स।[2] इस प्रकार कृष्ण रति के अनुसार ही कृष्ण भक्ति रस मे परपरागत काव्यशास्त्रीय रस (शात एवं श्रृंगार किंवा मधुर को छोडकर) गौण रूप में ही स्वीकृत किये गये हैं। इस अध्याय में चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे रस की प्रमुखता के आधार पर क्रमिक रूप से विभिन्न रसों की विवेचना की जा रही है, इसीलिए प्रमुख रस—मधुर रस—का विवेचन सर्वप्रथम किया जा रहा है।

मुख्य भक्ति रस

मधुर भक्ति रस (उज्ज्वल रस) (शृंगार)

चैतन्य संप्रदाय के कवि माधुर्योपासक कवि है अत: इनके काव्य में प्रमुखतया मधुर रस का चित्रण हुआ है। रस की पूर्णतम अभिव्यक्ति आस्वादक-आस्वाद्य के तादात्म्य में होती है। तादात्म्य की चरमावस्था कांता भाव के माध्यम से मधुर भक्ति रस में पायी जाती है। युगल राधा-कृष्ण का मधुर आनंद आद्य रस-परात्पर रस है, जिसे गौड़ीय विद्वान आचार्यो ने 'उज्ज्वल रस' की संज्ञा प्रदान की है। चैतन्य संप्रदाय के रस-शास्त्र में यही शीर्षस्थ है। इसे भक्ति रस राज कहा गया है। वस्तुत: यही रस चैतन्य सम्प्रदाय की सांप्रदायिक चेतना का प्रतीक है। यह गौड़ीय विद्वान आचार्यों का अभीष्ट रहा है और उन्ही का अनुसरण करते हुए ब्रजभाषा कवियों का भी। इसे रूप गोस्वामी ने दुरूह एवं 'रहस्यमय' कहा है। यही कारण है कि उन्होंने 'भक्तिरसामृत सिंधु' मे इस रस को विस्तार नहीं दिया अपितु इस परम रहस्यमय गूढ़ तत्त्व के लिए उन्होंने 'उज्ज्वल नीलमणि' नामक पृथक् ग्रंथ की रचना कर 'उज्ज्वल रस' के नाम से मधुर रस का सांगोपाग विस्तृत विवेचन किया है।

मधुर रस को प्रकृत रस माना गया है और अन्य रसों को इसकी विभिन्न विकृतियो एवं प्रभेदों के रूप में स्वीकार किया है। मधुर रस में शांत, प्रीति, प्रेय, वत्सल रसो के गुण विद्यमान रहते है। शात की स्थिरता, दास्य की सेवा भावना, सख्य का नि:ससकोचत्व तथा वात्सल्य का ममत्व मधुर रस मे एकत्र होकर इनसे भी ऊपर एक अनिर्वचनीय तादात्म्य की अनुभूति कराता है जिसका अन्य रसों में अभाव रहता है। इसीलिए मधुर रस का आस्वादन सर्वोपरि है। मधुर रस के परिपाक् में राधा के साथ गोपियों को भी स्थान मिला है परन्तु चैतन्य संप्रदाय मे राधा एक मात्र नायिका है, गोपियां उनकी सहचरी या दूती रूप में आयी हैं। ब्रजभाषा काव्य में भी सांप्रदायिक परंपरा का निर्वाह हुआ है।

गौड़ीय विद्वानों द्वारा प्रस्तुत मधुर रस का शास्त्रीय विवेचन

शृंगार रस के आधार पर है तथापि उनके समायोजन, स्फुरण तथा विषय विस्तार में मौलिक उद्भावनाएं पर्याप्त रूप से की गई हैं जिसने भक्ति रस को शास्त्रीय स्तर पर विद्वत्-समाज में भली प्रकार से प्रतिष्ठित कर दिया। मधुर रस को शृंगार की चरम आध्यात्मिक परिणति कहा जा सकता है यद्यपि इनमें तत्वतः अंतर है। लौकिक शृंगार जड़ीय काम-गंध युक्त है जबकि अलौकिक शृंगार (मधुर) चिन्मय व काम गंध शून्य है।

अपने अनुरूप विभावादि द्वारा सहृदयों के हृदय में परिपुष्ट मधुरा रति को मधुर भक्ति रस कहा जाता है।[3]

स्थायीभाव : मधुर रस मे मधुरा रति स्थायीभाव है। इसे प्रियता रति भी कहा गया है। प्रगाढता एवं श्रेष्ठता के भेद से यह रति तीन प्रकार की कही गयी है—साधारण, समंजसा एव समर्था।[4] ये क्रमशः मणि, चितामणि एवं कौस्तुभ मणि के सदृश सर्वत्र न अति सुलभा, सुदुर्लभा एवं अनन्यलभ्या कही गयी हैं। जो रति अत्यंत गाढ़ नहीं है, प्रायः हरि के दर्शन से उत्पन्न होती है एवं जिसमे संभोगेच्छा ही कारणरूप मानी जाती है, वह साधारण रति है, जो कुब्जादियो मे पाई जाती है। समंजसा रति मे कृष्ण की पत्नीत्व का अभिमान रहता है। यह गुणादि श्रवण से उत्पन्न होती है तथा इसमे कभी सभोग तृष्णा भी जाग्रत होती है। यह कृष्ण-महिषियों मे पाई जाती है। इन दोनो रति से किंचित् विशेष संभोगेच्छा के द्वारा तादात्म्य प्राप्त रति समर्था है। यह कृष्ण सुखार्थ रति सान्द्र होती है। इसी रति में मधुर रस का पूर्ण परिपाक् होता है। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे समर्था रति को ही स्थान मिला है, शेष दो को नहीं। ब्रजभाषा कवियो ने राधा-कृष्ण की संभोगपरक जिन लीलाओं के चित्र गहन रूप से चित्रित किये है उनमे राधा की कृष्ण सुखार्थ तादात्म्य प्राप्त समर्था रति का मधुर रस के रूप मे पूर्णतम परिपाक् हुआ है।

मधुरा रति प्रौढ़ावस्था मे महाभाव दशा प्राप्त करती है। उत्तरोत्तर विकासानुसार जिस प्रकार ईख क्रमशः बीज, ईख, रस, गुड़, खांड, शक्कर, सिता एव सितोपला—ये आठ रूप धारण करती है, उसी प्रकार स्थाई रति के क्रमशः आठ भेद (विकास) होते हैं—रति, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, अनुराग, भाव एवं महाभाव। इन सभी की परिभाषाओं एव उपभेदों का कथन किया गया है।[4] ब्रजभाषा पदावली मे इन सभी स्थितियों से संबद्ध सुदर पदों की रचना की गयी है (पिछले अध्याय में माधुर्य भक्ति के प्रसंग में इनके उदाहरण देखे जा सकते हैं) महाभाव मे प्रेम की सर्वोत्कर्ष अवस्था होती है जो केवल ब्रज-सुंदरियों में ही प्रकाशित होती है। इसके रूढ़ एवं अधिरूढ़—दो भेद हैं। अधिरूढ़ महाभाव के दो उपभेद है—मोदन एवं मादन। राधा-कृष्ण दोनो के समस्त सात्विक उद्दीप्त सौष्ठव धारण करने पर मोदन भाव होता है। यही भाव विरह दशा मे उत्पन्न होने पर मोहन कहलाता है इसकी अत्यधिक विकसित - है जिसमे किसी वृत्ति को प्राप्त कर भ्रम-सदृश विचित्र दशा हो जाती है। इसके भी

उद्घूर्णा, चित्रजल्पादि बहुभेद किये गये हैं। रति से लेकर महाभाव पर्यंत समस्त भावों के उद्गम में उल्लसित भाव मादन भाव कहा गया है जो मोहन भाव से भी श्रेष्ठ है। यह ह्लादिनि का चरम सार रूप सर्वदा राधा में ही विराजमान रहता है। यह संयोग की नित्य लीला के विलास में ही रहता है, विप्रलंभ में नहीं। ब्रजभाषा कवियों ने राधा-कृष्ण की नित्य लीला में युगल-विलास के अत्यंत सूक्ष्म एवं विविध चित्र अंकित किये हैं, उनमें मादन भाव परिलक्षित होता है।

आलंबन : रसिक चूड़ामणि श्रीकृष्ण एवं उनकी वल्लभाएं। जिसके समान या जिससे अधिक कोई नहीं है ऐसे सौंदर्य, लीलाओं एवं वैदग्ध्य—सम्पत्ति के आश्रय रूप श्रीकृष्ण आलंबन है। नायक शिरोमणि श्रीकृष्ण सुरम्य, मधुर, चतुर, धीर, प्रेमवश्य, नारीजनमनोहारी अतुल्य केलि सौंदर्य आदि अनेक मधुर रस संबंधी गुणों से युक्त हैं। नायक के चार भेदों—धीरोदात्त, धीरललित, धीरशांत एवं धीरोद्धात के गुण भी कृष्ण मे विद्यमान हैं। इसके अतिरिक्त उनमें पतित्व एवं उपपतित्व ये दो विशेष गुण रस की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। वेदोक्त-विधान से कन्या का कृष्ण के साथ जो पाणिग्रहण है उनमें उनका पतित्व है जैसे रुक्मिणी, सत्यभामा आदि द्वारिका की महिषियों से संबंध। जो व्यक्ति राग से अर्थात् आसक्तिवश धर्म का उल्लंघन कर परकीय रमणी के प्रति अनुरागित होता है तथा उस रमणी का प्रेम ही जिसका सर्वस्व है, वह उपपति कहा गया है।[6] ब्रजांगनाओं के साथ श्रीकृष्ण का संबंध प्रकट रूप से उपपति का है। अप्रकट रूप से उनका अनादिकाल से नित्य संबंध है जिनमें उपपतित्व का अवकाश नहीं तथापि प्रकट लीला को लेकर राधिकादि में परदारा का उपक्रम रस मर्यादा के अंतर्गत ही मानना चाहिए। परकीया भाव से रस की पूर्णतम पुष्टि एवं चरमतम आस्वादन होता है। अतः प्रकट लीला में परकीया रूप का विस्तार हुआ है। उपपति भाव का प्रेम प्राकृत नायक के लिए वर्जित है परंतु श्रीकृष्ण के लिए नहीं क्योंकि रसनिर्य्यास के लिए अवतार ग्रहण करने वाले श्रीकृष्ण मे यह वंदनीय है, निंदनीय नहीं। इनमें लघुत्व, धर्म-विरुद्धता न होकर प्रशस्तता और पवित्रता है क्योंकि यह मात्र लीला के लिए है अलौकिक दृष्टि से यह पतित्व ही है। मधुर रस का निर्यास ब्रज में ही संभव है, गोलोक में इसका अभाव कहा गया है।

प्रतिक्षण नव-नव माधुरी को धारण करने वाली, प्रणय-तरंग से तरंगित अंगों वाली तथा रमण रूप से कृष्ण का भजन करने वाली अद्भुत किशोरियां मधुर रस की आश्रय हैं। इनमें वृषभानुनंदिनी सर्वप्रमुख है।[7] प्रेयसियां कृष्ण के ही समान सुरम्यांग एवं समस्त लक्षणो से युक्त, प्रेम एवं माधुर्य की चरम सीमा आदि गुणो से विभूषित कृष्ण के तुल्य है। प्रेयसियां दो प्रकार की हैं—स्वकीया व परकीया। गांधर्व रीति से कृष्ण के साथ विवाह होने के कारण वास्तविक रूप में ब्रज-देवियों का स्वकीयात्व है परंतु प्रकाश रूप में विवाह न होने से उनका परकीयात्व प्रचलित है।[8]

परकीया के दो भेद हैं—कन्या एवं परोढ़ा। परकीया में राधा के साथ

ललिता विशाखा आदि गोपियों की भी गणना की ग है परन्तु उनमें राधा सब प्रमुख है वह महाभावस्वरूपिणी राधा रूपाधिक्य गुणाधिक्य एवं सौभाग्याधिक्य के कारण सर्वापेक्षा प्रिय है। वे सुष्ठुकांत-स्वरूपा षोडश शृंगार एवं द्वादश आभरण युक्त हैं। उनमें असंख्य गुण हैं जिनमें मधुरा, नववया, चारु, विनीता, विदग्धा, लज्जाशीला, सुविलासा, महाभाव-परमोत्कर्षतर्षिणी, कृष्ण-प्रियावली मुख्या आदि प्रमुख महागुण है।

आलबन विभाव के प्रसंग में ही नायक-नायिका के विभिन्न भेदों का वर्णन काव्यशास्त्र के अनुसार किया गया है। नायिका भेदों में दूती भेद, सखी भेद आदि किये गये है।

ब्रजभाषा काव्य 'रस चंद्रिका' (हरिदेवजी कृत) काव्यशास्त्रीय रचना है जिसमें रस का शास्त्रीय निरूपण तथा नायक-नायिका के लक्षण एवं भेदो-उपभेदों का कथन किया गया है। इसी में परकीया का लक्षण इस प्रकार दिया गया है—

> दुरै दुरै पर पुरुष सौ, करै नारि जो प्रीत।
> परकीया तासो कहें, रसिक राव रस रीत ॥[९]

परकीया, रसिकों के अनुसार, सरस एवं दुर्लभ होते हुए सभी स्त्रियों में प्रमुख है—

> जहां सरस रति नेह गत, रति पति हित अनुकूल।
> ताई तै रसिकन मतै, परकीया सुख मूल।
> × × ×
> मुख्य पदारथ जगत में, सोई दुरलभ जान।
> ताई तै सब तियन में, परकीया परधान।[१०]

इसी में परकीया के अन्य भेद बताये गये है। विस्तार-भय से उन सभी को यहां पर नही दिया जा रहा है।

ब्रजभाषा पदावली में सौंदर्य और रसिकता के सम्पद् नागर नट श्रीकृष्ण मधुर रस के आलबन हैं—

> चटकीलौ पट, लपटानौ कटि,
> बंसीवट-जमुना के तट, नागर नट।
> मुकुट लटक और भृकुटी मटक देखि,
> कुडल की चटक सों अटक दृगन भई,
> चरन लपेंटी आधी कंचन-लकुट ॥
> चटकीली बनमाल, कर गही द्रुम-डार,
> ठाडे हैं नवल लाल, छवि छाई घट-घट।
> 'सूरदास मदनमोहन' कों एक टक देखैं गोपी ग्वाल,
> टारे न टरत रत-उत, निपट निकट आवै सोंधे की लपट ॥[११]

कृष्ण एवं कृष्ण-प्रियावर्ग दोनो ही परस्पर विषय रूप एवं आश्रय रूप आलंबन बनते है। प्रिया वर्ग जिस प्रकार कृष्ण का रूप देखकर मोहित होती है, उसी प्रकार कृष्ण भी उनको देखकर मोहित होते हैं। राधा का रूप-सौंदर्य कृष्ण के लिए मधुर रस का आलबन बनता है—

> प्यारी रूप भूप पिय ऊपर निपट अनीति चलावै।
> कहत कह्यो नहिं जाय हाय यह देखत ही बन आवै॥
> बूझति हूं हो तोसों आली यह बैरकि प्रीति कहावै।
> वल्लभ रसिक सखी कौतुक पिय याही लखि सुख पावै॥[12]

उद्दीपन : कृष्ण एवं उनकी प्रियाओं के गुण, नाम, चरित्र, भूषण एवं तटस्थ (प्रकृति आदि) को मधुर रस का उद्दीपन विभाव कहा गया है।

गुण : मानसिक, कायिक एवं वाचिक भेद ये तीन प्रकार के हैं।

मानसिक : कृतज्ञता, क्षमा, करुणा आदि।

कृतज्ञता—

> गोपाल लालन जोरिकै कर कहत रोस न कीजिए।
> सुनिये तिया नव जोवनी मोहि अपनौ करि लीजिए॥
> हौं तिहारौ रिनी आली अरिनी न होऊ कबै।
> सुनहु जुवती करू विनती कृपा दृष्टि कीजै अबै।
> एरी ए चितई मृदु मुसिक्याय, मोहन लिये अक भरि धाय
> रस मंडल रच्यौ भारी, राधे श्री ब्रजचंद्र बिहारी॥[13]

वाचिक : कर्णप्रिय व आनंदजनक वाक्य को वाचिक कहते हैं।

मधुर वचन—

> बोले मधुरे बैन श्याम करि ग्रीवा नीची।
> 'तुम मेरे हृदय बसत' बोलि रस बेली सीची।
> भोरे भोरे वचन कहि, श्यामा लई मनाय।
> रास रच्यौ वृन्दा विपिन, शरद निशा को पाय॥
> भई गोपी मुदित॥[14]

कायिक : वयस्, रूप, लावण्य, सौंदर्य, अभिरूपता, माधुर्य और मार्दव को कायिक गुण कहा गया है।

रूप-सौंदर्य : कृष्ण का रूप-सौंदर्य गोपियों को मोहित कर देता है—

> बड़ी बड़ी अंखियन सांवरो ढोटा अति लोनौं।
> अब ही तैं मनमथ मन मोह्यौ आगे अजहू हौनौं॥
> कहा री कहों अंग अंग की बालक, नख सिख रूप सु ठौनौं
> सूरदास मदनमोहन पिय की चितवन में कछु टौनौं।[15]

राधा का रूप-सौंदर्य कृष्ण के प्रेम को उद्दीप्त करता है—

प्यारी तेरौ बदन देखि लाजैं कोटि शरद के चंदा
नासा मग्यौ मन चकोर।
जहां रस मिलै तहां अति आशा बैठ समुझि चित
चौंध रसिकनी जितौ जिये जोर।।
चैन न बिना देखे हू तरफरात अधिक अनंग के
आलय कौ न जोर।।[16]

रूप-लावण्य—

मन मोह्यौ मदन गुपाल। तन श्यामल नैन विशाल।।
नव-नील घन तन श्याम। नव पीत पट अभिराम।।
नव मुकुट नव वन-दाम। लावण्य कोटिक काम।।
मनमोहन रूप धर्‌यौ। नव काम कौ गर्व गर्‌यौ।।[17]

चरित : अनुभाव एवं लीला को चरित कहा जाता है। लीला के अंतर्गत रासादि मनोहर क्रीडाएं, वेणुवादन, गोदोहन, नृत्य, पर्व्वसोलन, गोआह्वान तथा गमन (चाल) आते हैं।

नृत्य, रास-क्रीड़ा—

लियो रास में राग अति ही मधुर मधुर सुर सोहनौ।
करत नृत्य विचित्र गति सी मैन मन कौ मोहनौ।।
बाजत ताल परवाव किन्नर मंद मंद सुरसी मिली।
तत्थेई तत्थेई शब्द उचरें सकल भामिन रंगरली।।
एरी ए रुचि बाढ़त ब्रजबाला, कुंजन जाय दुरे नंदलाला।
तिया ढूंढ़ि कृष्ण रंग भीनी, तब हरि कैसी लीला कीन्हीं।।[18]

वेणु-वादन—

चलो री मुरली सुनियै, कान्ह बजाई जमुना तीर।
× × ×
देह की सुधि बिसरि गई, बिसर्‌यौ तन को चीर।
मुरली धुनि मधुर बाजै, कैसे के धरौ धीर।
'सूरदास मदनमोहन' जानत हौं यह पीर।।[19]
× × ×

माई वंशीधर की बांसुरी।
कित कुहकी कालिंदी कूलन कठिन व्यथा हिय फांसुरी
मचकित तन सुधि बुधि बिसराई आवत जात न सांसुरी
ललितादिक कर ताल उपहासुरी
× × ×

जैसे पकरत मृग बधिक, मोहिनि बेणु सुनाय।
तैसेइ युवतिन मन ह्र्‌यो, मुरली मधुर बजाय॥
डारि गल फासुरी॥[21]

मंडन : वस्त्र, भूषण माला एवं अनुलेपन को मंडन कहा गया है। मंडन का उदाहरण कवि हरिदेव ने इस प्रकार किया है—

गूदहरा गज मोतिन को, गज गोती गुवाल गलै सखि डारो।
देख पर्‌यौ पुरवरागिन को, अधरा दुतिरंग भयो रत नागे॥
फेर परी जब दीठ उतै, मण नीलम को हरिदेव निहारो।
रीझ रही सजनी छवि देखत, भीज रहो रस नंद दुलारो॥[22]

वस्त्र, भूषण, अनुलेपन, माला—

सुरंग लटपटे पेंचनि चीरा।
पीतांबर बनमाला सोहै, तन घनस्याम किये चंदन-खौरि,
ठाडै पौरि सावरों कर मुख बीरा॥
गज-मोती वर ह्रय नर, ग्रीवा सीमा मानौ रूप की,
तिन मधि जगमगात द्युति हीरा।
'सूरदास मदनमोहन' देखे तिहि जाने,
कै जाने मेरो जीरा॥[23]

× × ×

अटकी मूरति नागर नटकी। एरी यह मेरे मन।
कुंतल कुंडल चिलक तिलक केसरि वेसरि ठरि लटकी।
अंग अंग आभरन हरनि मन मनमथ गति उद भटकी।

× × ×

लखि लख आनंद चोट सहित मति वल्लभ रसिक सुभट की।[24]

संबंधी : संबंधी उद्दीपन दो प्रकार का कहा गया है—लग्न व सन्निहित। लग्न संबंधी है—वंशीरव, शृंग-ध्वनि, गीत, सौरभ, भूषण शब्द, चरण चिह्न, वीणारव व शिल्प कौशल। सन्निहित संबंधी हैं—माला, मयूरपुच्छ, पर्वतधातु, नैचिकी (उत्तम गाय), लगुडी (यष्टि), वेणु, शृंगी, श्रीकृष्ण की दृष्टि, गोधूलि, वृंदावन, वृंदावनाश्रित वस्तुएं जैसे गोवर्द्धन, यमुना, रासस्थानादि।

वृन्दावन, यमुना—

श्री वृन्दावन सरद जुन्हईया जमुना तट सुखदाई।
जहां रच्यो रास सुघर संगीतन ब्रजत्रिया नंद कन्हाई।[25]

तटस्थ : चंद्रिका, मेघ, विद्युत, वसंत, शरत्, पूर्णचंद्र, गंधवाह (दक्षिण वायु) एवं खग आदि।

मेघ, विद्युत, चातक मोर आदि खग-वृंद—

बोलत चातक-मोर, दामिनी दमकि आवै,
झूमि-झूमि बादर अवनि परसत।
तैसो हरियारो सावन मन-भावन,
आनंद उर उपजावन, इंद्रबधू दरसत॥
'सूरदास मदनमोहन' प्रिया संग गावत मल्हार,
ललित लता लागी सुनि-सुनि सरसत॥[२६]

× × ×

सिसकि-सिसकि रही मोरन की कूक सुनि,
अजहुं न आये पिया मुरझानी मन में।
चहु ओर बादर तंबुआ से छाय रहे,
पावस की पेसरवानों आन पर्यो बन में॥
बालम बिदेस-देस, कैसे राखू बाल बेस,
कोकिला की कूक सुनि हूक उठै तन में।[२७]

गंधवाह (सुगंधित पवन), खग (अलिपुंज, कोकिल), बसंत—

ऋतु बसंत में लसत सूरति दोऊ बैठे निकसि निकुंज बाग।
ललित गुंज मंजुल लतान पर अलिपुंजनि की सुनि सुनि गुनि गुनि
पुनि पुनि रस कौ चढ़त पाग।
बौरे आंबनि चढ़ि चढ़ि बौरे जुग जुग ह्वै कुहुकत कोकिल
कुल रीझत सुनि कलरव धिभाग।
प्रफुलित गुल लाला की क्यारी पवन लगति मटकति लहकारी
पिय प्यारी चख लगनि लाग॥[२८]

बसंत, खग—

नव वधु बसंत रितुहली लिये आवै।
नाना रंग कर कुसमित वल्ली विविध सुगंध संवारि सबै
विधि रति रस रंगनि बढ़ावै॥
भौरे अंबनि गुंजत मधुकर बोलत कोयल मृदु कल कंठनि
विविध भांति करि रुचि उपजावै।
किशोरीदास ब्रजचंद्र छबीली जहां रीझि रिझावन काजै
सुन्दरि बनठन आली कुसुमाकर गुन प्रगटावै॥[२९]

पूर्ण चंद्र, चंद्रिका—

पूरण शशि मंडल की किरनें मणि मंडल पर आईं।
चमकि-चमकि चहुंदिश दिशि पुलननि बन चांदनी बिछाई।

अबर पर सुंदर तारागण छाति छपा२ तनाई
बल्लभरसिक विलास रास उल्लास गास सुधि आई ।।[30]

× × ×

पूर्णचंद्र

पूर्णचंद्र भयो उदय सुधारस वर्षा कीनी।
आनंद सरिता बही भई युवती रस भीनी ।।[31]

अनुभाव—अलंकार, उद्भास्वर एवं वाचिक भेद मे अनुभाव मधुर रस मे तीन प्रकार के कहे गये है ।

अलकार—यौवनावस्था में रमणियों के सत्वगुण से उत्पन्न अलंकार विंशति सख्यक हैं जो समय-समय पर प्रकाशित होते हैं। उनमें से भाव, हाव, हेला ये तीन अगज; शोभा, कांति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य, तथा धैर्य—ये सात अयत्नज; लीला, विलास, विच्छित्ति, विभ्रम, किलकिंचित, मोट्टायित, कुट्टमित, विव्वोक, ललित तथा विहृत ये दश स्वभावज है।[32] रूप गोस्वामी ने माधुर्य के अधिक पोषण के कारण दो नये अलंकारों का उल्लेख किया है, वे है—मौग्ध एव चकित। कृष्णदास कविराज गोस्वामी ने किलकिंचित, कुट्टमित, विलास, ललित आदि भावों को राधा के भाव बताते हुए कहा है कि इन भावों से विभूषित राधा कृष्ण का मन-हरण करती है।[33] ब्रजभाषा काव्य में इन सभी अनुभावों की सुंदरता एवं सूक्ष्मता से अभिव्यक्ति हुई है।

अंगज—

हाव-भाव—

दोऊ रीझे भीजे झूलत है रस रग हिंडोरे।
नेह खभ डांडी, चतुरई, हाव-भाव मरुवे, चौंप पटुली,
अनुपम भाव कटाच्छ रमकि चित चोरै ।।[34]

हेला—

तब चली मंथर विहार। रन झनन-झनन नूपुर झंकार।
पुलकित गोकुल कुलपति कुमार। मिलि भयौ गदाधर सुख अपार।[35]

× × ×

रुकि-रुकि रही जु नवल तिय धुकि-धुकि पटके मांहि।
लुकि-लुकि देखें लाल को झुकि-झुकि झटके बांहि ।।[36]

अयत्नज—

शोभा, काति, दीप्ति—

झीनो पट दिपत देह, प्रीतम सों अति सनेह,
गौर-स्याम अभिराम सोभा कहत न आवै।

श्रीसूरदास मदनमोहन मोहिनी से बन दोऊ
हरि जात अंग अरगजा लगाव ।।[37]

× × ×

शिथिल शरीर नखत्र उर अंकित बिथुरी अलकन की छवि न्यारी।
उठत अनंग तरंगा की द्युति अंग-अंग रुचि मंगलकारी ।।[38]

स्वभावज—

लीला—

राधे को कृष्ण बनायो सांवर बपु सुघर रचायो ।।
शिर मुकुट धरे बनमाला, श्रुति कुंडल श्रवण रसाला।

× × ×

नव कृष्ण प्रत्युत्तर दीनो । हम कृष्ण नाहिं तुम चीन्हों
हम नंद महर के आये। यशुमत लै गोद खिलाये।[39]

विलास-प्रियतम कृष्ण के संगम से राधिका की अंग-चेष्टाओं में एक प्रकार का वैशिष्ट्य उत्पन्न होता है, उसका सुंदर चित्रण निम्न पद में हुआ है—

नैक मंजु अधर सु हसन विकास भई
वास गही नैनन में रंचक टिढ़ाई है।
विभ्रम समेत गति नैक जासु मंद भई
वंद नैक-नैक भई मति की थिराई है।
शोभन कवि कछुक उरोज खोज हू से भये
उदित बिलास भये नैक त्यौ लुनाई है।
उज्ज्वल सिंगार भये पति अति न्हाल भये
बाल तन ईषत दिखात तरु नाई है ।।[40]

विच्छित—कवि हरदेव ने विच्छिति भाव का लक्षण इस प्रकार दिया है—

थोरेई सिंगार तन, सोभा बढ़ै अपार।
विच्छित ताकों कहत है, कवि हरिदेव उदार ।।[41]

विभ्रम—

अंजन एक नैन बिसरयौ। कटि कंचुकि लहंगा उर धरयौ।
हार लपेट्यौ चरन सों ।।
स्रवननि पहिरे उलटे तार। तिरनी पर चौकी सिंगार।
चतुर चतुरता हरि लई ।।[42]

किलकिंचित, कुट्टमित—निम्न पद मे क्रोध, अश्रु, हर्ष, गर्व, अभिलाष का राधा में एक साथ संचार अत्यंत प्रभावशाली रूप में हुआ है। रति-क्रीड़ा में प्रसन्न होते हुए भी राधा ऊपर से क्रोध प्रकट करती है अतः कुट्टमित अनुभाव की भी साथ ही व्यंजना हुई है—

जघन कठोर जोर बाहु को मरोर ओर,
पति को न देख उर कंचुकी दुरावती।
नीवी की गाठ कौ सुसांठ मार कीनी दृढ़,
साटीका की छोर मोर पायन दबावती।
सोभन सुछल कर दृग तें सुजल बिंदु,
डार डार नार अति पीकौं दुरावती।
कबुक कुटिल युग भृकुटी चढ़ाय चौक,
देख पिय ओर हंसि मन कों चुरावती ।।[४३]

ललित—

श्याम सिंगारे लाडिली, बानिक सुघर बनाय।
छवि निरखत पुनि पुनि ललित, बार-बार बलि जाय।[४४]

विहृत—

वाही कौ रूप अनूप लखैं, रति के पति को मद होत है हीनौ।
सो व्रजराल मिल्योरी भट्ट, पर लाज निगोड़ी न देखन दीनौ।[४५]

चकित—

जब-जब कौंधति दामिनी, तब-तब भामिनी डराति, प्रीतम उर लागति।
उन्मद मेघ घटा-धुनि सुनि निसि, पियहिं जगावति आपुनि जागति ।।[४६]

मद—

पिय को नाचन सिखावत प्यारी।
वृंदावन मे रास रच्यौ है, सरद चंद उजियारी ।।
मान गुमान लकुट लियें ठाढ़ी, डरपत कुंज-बिहारी।
'व्यास' स्वामिनी की छवि निरखत, हंसि-हंसि दै कर-तारी ।।[४७]

इन अनुभावों के अनेकानेक सुंदर उदाहरण ब्रजभाषा पदावली में देखने को मिलते हैं। 'रस-चंद्रिका' में हरिदेव जी ने सभी अनुभावों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं उनमें से कुछेक को उद्धृत किया गया है।

उद्भास्वर : नीवी, उत्तरीय, धम्मिल्ल (जूड़ा) इत्यादि का भ्रंशन तथा गात्र-मोटन, जृंभा नासिका की प्रफुल्लता एवं विश्वास इत्यादि को उद्भास्वर कहा गया है।

नीवी भ्रंशन—

सुरति सेज पै लरति अंगना, मुक्ता माल टूटी ।।
उरज ते कुंचुकि चुरकुट भई, कटि तट ग्रंथ हूटी।
चतुर सिरोमनि 'सूर' नद-सुत, लीनो अधर घुटी ।।[४८]

धम्मिल्ल श्रशन

सहज मुरनि बिथुरनि अलकन की। शोभा स्वेद बिंदु झलकन की।
गोल कपोल तबोल झलक छबि। नथ मोतिन की ज्योति रही फबि की।[४६]

गात्र-मोटन—

मोर मरोरति मुसकति आगे चली पिया के।
लालच लागे लाल लगे पाछेहि तिया के।।[५०]

वाचिक : वाचिक अनुभाव द्वादश कहे गये हैं—आलाप, विलाप, संलाप, प्रलाप, अनुलाप, अपलाप, संदेश, अतिदेश, अपदेश, उपदेश, निर्देश तथा व्यपदेश। इन सभी का सूक्ष्म पार्थक्य प्रतिपादित किया गया है।

आलाप—

सुंदरता की तुहि परमान समानन आन लखि तव हेलि।
रंभा रमा शचि काम वधू और शैलसुता दुति पायन पेलि।।
को रमनी रमनीय लगै पुनि राधिका के तो सम माहिन वेलि।
ताते कृपा कर अपनी जान करी मम प्राण प्रिये मृदु केलि।।[५१]

विलाप—

टेरत पुनि पुनि कृष्ण, प्राण धन नंद दुलारे।
गये किते मोहि छांड़ि मिलहु हे प्रीतम प्यारे।।
विरह व्यथा क्लेशित हृदय मृत्यु रही नियराय।
जीव दान दे सांवरे, अधर सुधा रस प्याय।।[५२]

संदेश—

कठिन दशा राधिका विरह, थोरी-सी गाई।
पथिक सुनी सो कहो श्यामसुदर पै जाई।।
विध-वाहन-कुल में प्रकट, चपल बुद्धि गुणवान्।
या विधि कहियो जाय के, आवै श्याम सुजान।।
प्राण रक्षा करै।।[५३]

सात्त्विक : स्तंभ, स्वेद आदि परंपरागत सात्त्विकों को मधुर रस में स्वीकार किया गया है। गौड़ीय आचार्यों ने एक सात्त्विक भाव के उदय के अनेक कारण बताए हैं, जैसे—स्तंभ की उत्पत्ति हर्ष, भय, आश्चर्य, विषाद आदि कई कारणों से बतायी गयी है। इसी प्रकार अन्य सात्त्विकों के हेतु वर्णित किये गये हैं। इन सात्त्विकों की ज्वलित, दीप्त एवं उद्दीप्त दशाएं होती है। यदि दो या तीन भाव एक साथ प्रकट हों और उन्हें कष्टपूर्वक गोपन किया जा सके तो उस दशा को ज्वलित कहते हैं। तीन, चार अथवा पांच—प्रौढ़ भाव एक साथ उदित हों और उनको छिपाया न जा सके तो उन्हें दीप्त कहते है। उद्दीप्तावस्था वह है—

जब पाच छ अथवा समस्त सात्विक भाव एक समय मे उदित होकर परम उत्कर्ष को प्राप्त होते है।

चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे इन सभी सात्त्विक भावों की अत्यन्त भावपूर्ण अभिव्यंजना की गयी है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

स्तंभ (हर्ष जनित)—

हौं हुती अपने आंगन ठाढ़ी, लाल अचानक आये।
ठगि-सी रही मुख बोल न आवै,
छवि निरखत कछु और न भावै
काहू सखी बतियन न लगाये ॥[५४]

स्वेद, रोमाच, कंप—(हर्ष जनित) (दीप्त अवस्था)—राधा कृष्ण की सुरति लीला के प्रसंग मे इन सात्विको की सुंदर व्यंजना अनेक पदों में परिलक्षित होती है, निम्न उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

दुऊ करन कपोल दबाये।
... ...
ललित किशोरी कंप पुलक अग स्वेद स्वास सिर हिये गठाये।
सौ-सौ सौहैं खांत रसिकमणि बसि पौढ़ौंगी उर लिपटाये।
ललित माधुरी प्रथम समागम दांतन दांत पसीना आये ॥[५५]

रोमांच, अश्रु, स्वरभंग—(दीप्त)—महाप्रभु चैतन्य में इन सात्त्विकों का सुदर प्रकाशन हुआ है—

कृष्ण नाम ध्वनि सुनि पर मुख पुलकित तन ह्वै अश्रु झरै।
प्रेम सहित गहि गहि उर लावैं गद्गद ह्वैं निज अंक भरैं ॥[५६]

अश्रु, रोमाच—(हर्ष जनित)—

आज माई रिझाई सारंग नैनी।
... ...
अंखियां जल झलमलाइ आई भई तन पुलकित श्रेणी ॥
प्रेमपागि उरलागि रही गदाधर प्रभु के पिय अंग-अंग सुख दैनी ॥[५७]

अश्रु (रोष जनित)—

लालन तिहारी प्यारी आजु मनाये न मानति।
... ...
भरि-भरि अखिया नीर लेति, पै टारति नाहिन।
अतिरस बरषत अधर कोप करि भृकुटी तानति।[५८]

अश्रु (विषाद जन्य)—

विरह सिंधु उमगत सखी, सुमिरत छबि ब्रजचद।
प्रेम सलिल दृग तें बहै, गयो सकल आनंद ॥[५९]

स्वरभंग, वेपुथु, स्वेद—(दीप्त दशा)—प्रियतम श्रीकृष्ण के स्पर्श-सुख से प्रियतमा राधा में इन सात्त्विक भावों का उन्मेष होता है उनका हृदयस्पर्शी चित्रण माधुरीदास जी के निम्न पद में हुआ है—

प्यारे के परस होत उपज्यौ सरस रस,
स्वरभंग वेपथ प्रस्वेद अंग ढरक्यो ।।
... ...
चिबुक उठाय कै जु ऊंचे तब कीनो मुख,
धीरज न रह्‌यो घर-घर हीयो धरक्यो ।।[60]

अश्रु, स्वरभंग, रोमांच, वेपुथु (दीप्त)—राधा के दर्शन से प्रियतम श्रीकृष्ण में इन सात्त्विकों का सुंदर प्रकाशन हुआ है—

नैनन नीर प्रवाह बैन गद्‌गद पद रोकत ।
पुलक कंप अंग-अंग सुबल लखि लालै टोकत ।।[61]

समस्त सात्त्विक भावों का उदय (उद्दीप्तावस्था)—

विप्रलंभ में प्रिया राधा में समस्त सात्त्विकों का प्रादुर्भाव निम्न पद में अवलोकनीय है—

कंपित होत शरीर बढ़त जब हृदय वेदना ।
टपकत अंग-अंग स्वेद बोल मुख तें आवत ना ।।
कृशतन अति उद्वेग मन छिन-छिन होत अचेत ।
तन पीरो चिंतित पड़ी, विषम उसासैं लेत ।।
प्रलाप करत महा ।।
बाढ़त व्यथा वियोग प्रबोधत जब सखि आई ।
कंठ जात अवरोध दशा सो कही न जाई ।
प्राणनाथ हा ! कृष्ण कहि पुलकित तन अकुलात ।
हृदय बसी जो श्याम छवि सुमिर-सुमिर बिल-खात ।।
अश्रु नयनन बहैं ।।[62]

व्यभिचारी : उग्रता व आलस्य को छोड़कर अन्य सभी परंपरागत व्यभिचारी मधुर रस में कथित है। उनकी उत्पत्ति के कारणों का कथन भी किया गया है।

ब्रजभाषा काव्य में अन्य भावों की भांति व्यभिचारियों की भी सुंदर व्यंजना हुई है। कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

जड़ता—इष्ट दर्शन से जड़ता उपस्थित होती है—

हौं स्याम रंग रंगी ।
देखि बिकाय गई वह मूरति, सूरति माहिं पगी ।
संग हुतो अपनो सपनो सो, सोइ रही रस खोई ।।[63]

हर्ष

रति रस केलि दुहूं मिलि बाढ़ी। रस चखकनि मे रसकनि गाढ़ी॥
मन-मन हुलसनि सुलसनि सोहैं। बिहंसनि चोप चौगुनी ओहैं॥
उनमद जोबन मद मतवारे। हंसि-हंसि हंसत हंसे नहीं हारे॥[६४]

औत्सुक्य : इष्ट प्राप्ति की स्पृहा यहां प्रकट हुई है—

काग जो बोलत आय, चौंकि बूझत है तासौं।
आवन की कछु कहो, श्याम आगे नहिं अब-लौं॥[६५]

उन्माद, विषाद : कृष्ण विरह में चित्त विभ्रम एव विषाद की अभिव्यक्ति—

कुंज-कुंज प्रति फिरत बावरी सी निर्जन मे।
कृष्ण-कृष्ण हा कृष्ण विकल ह्वै टेरत बन मे।
उच्च स्वरन क्रन्दन करत तन की दशा बिसारि।
तब छवि नयनन मे बसी भ्रमवश तिमिर निहारि
सो आलिंगन करत॥[६६]

विषाद, उद्वेग, स्मृति, व्याधि, चिंता : सात्त्विक अनुभाव के प्रसंग में एक पद उद्धृत किया गया है जिसमें समस्त सात्त्विकों का प्राकट्य हुआ है उसी में इन व्यभिचारियों का भी प्रकाशन हुआ है (देखें—सात्त्विक अनुभाव शीर्षक में 'पथिक मराल' से उद्धृत पद)।

गर्व, व्रीड़ा, अवहित्था, हर्ष : नव संगम हेतु नायिका मे इन व्यभिचारियों की एक साथ सुंदर व्यंजना हुई है—

पिउ आयो गृह जान लुकी जाय परजंक पै।
नायक चतुर सुजान जाय भरी निज अंक मैं॥
जंघन कठोर जोर बांह को मरोर ओर,
पति की न देख उर कंचुकी दुरावती।
नीवी की गांठ कौ सुसांठ मार कीनी दृढ़,
साटीका की छोर मोर पायन दबावती।
सोभन सुछल कर दृग तें सुजल बिंदु,
डार-डार नार अति पीकौं दुरावती।
कबुक कुटिल युग भृकुटी चढ़ाय चौंक,
देख पिय ओर हंसि मन कौ चुरावती॥[६७]

आवेग : कृष्ण मे भी व्यभिचारी भावों का प्रकाशन हुआ है। प्रिया-आगमन को जानकर प्रेम-विवश कृष्ण की चित्त विभ्रम जनित किंकर्तव्य-विमूढ़ता-आवेग का चित्रण देखिए

स्वरभंग, वेपुथु, स्वेद—(दीप्त दशा)—प्रियतम श्रीकृष्ण के स्पर्श-सुख से प्रियतमा राधा में इन सात्त्विक भावों का उन्मेष होता है उनका हृदयस्पर्शी चित्रण माधुरीदास जी के निम्न पद में हुआ है—

प्यारे के परस होत उपज्यौ सरस रस,
स्वरभंग वेपथ प्रस्वेद अंग ढरक्यो ।।
... ...
चिबुक उठाय कै जु ऊंचे तब कीनों मुख,
धीरज न रह्यो घर-घर हीयो धरक्यो ।।[60]

अश्रु, स्वरभंग, रोमांच, वेपुथु (दीप्त)—राधा के दर्शन से प्रियतम श्रीकृष्ण में इन सात्त्विको का सुंदर प्रकाशन हुआ है—

नैनन नीर प्रवाह वैन गद्गद पद रोकत ।
पुलक कंप अंग-अंग सुवर्न लखि लालै टोकत ।।[61]

समस्त सात्त्विक भावों का उदय (उद्दीप्तावस्था)—

विप्रलंभ मे प्रिया राधा में समस्त सात्त्विकों का प्रादुर्भाव निम्न पद मे अवलोकनीय है—

कंपित होत शरीर बढत जब हृदय वेदना ।
टपकत अंग-अंग स्वेद बोल मुख ते आवत ना ।।
कृशतन अति उद्वेग मन छिन-छिन होत अचेत ।
तन पीरो चिंतित पड़ी, विषम उसासै लेत ।।
प्रलाप करत महा ।।
बाढ़त व्यथा वियोग प्रबोधत जब सखि आई ।
कंठ जात अवरोध दशा सो कही न जाई ।
प्राणनाथ हा ! कृष्ण कहि पुलकित तन अकुलात ।
हृदय बसी जो श्याम छबि सुमिर-सुमिर बिल-खात ।।
अश्रु नयनन बहैं ।।[62]

व्यभिचारी : उग्रता व आलस्य को छोडकर अन्य सभी परंपरागत व्यभिचारी मधुर रस मे कथित हैं। उनकी उत्पत्ति के कारणों का कथन भी किया गया है।

ब्रजभाषा काव्य मे अन्य भावों की भाति व्यभिचारियों की भी सुंदर व्यंजना हुई है। कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

जड़ता—इष्ट दर्शन से जड़ता उपस्थित होती है—

हौं स्याम रंग रंगी ।
देखि बिकाय गई वह मूरति, सूरति माहिं पगी ।
संग हुतो अपनो सपनो सो, सोइ रही रस खोई ।।[63]

हर्ष

रति रस केलि दुहू मिलि बाढी। रस चसकनि में रसकनि गाढी।।
मन-मन हुलसनि सुलसनि सोहैं। बिहसनि चौंप चौगुनी मोहैं।।
उनमद जोवन मद मतवारे। हंसि-हंसि हसन हंसे नहीं हारे।।[६४]

औत्सुक्य : इष्ट प्राप्ति की स्पृहा यहां प्रकट हुई है—

काग जो बोलत आय, चौंकि बूझत है तासौं।
आवन की कछु कहो, श्याम आये नहिं अब-लौं।।[६५]

उन्माद, विषाद : कृष्ण विरह मे चित्त विभ्रम एव विपाद की अभिव्यक्ति—

कुंज-कुंज प्रति फिरत बावरी सी निर्जन मे।
कृष्ण-कृष्ण हा कृष्ण विकल ह्वै टेरत बन मे।
उच्च स्वरन क्रन्दन करत तन की दशा बिसारि।
तब छबि नयनन मे बसी भ्रमवश तिमिर निहारि
सो आलिंगन करत।।[६६]

विषाद, उद्वेग, स्मृति, व्याधि, चिंता : सात्त्विक अनुभाव के प्रसंग में एक पद उद्धृत किया गया है जिसमें समस्त सात्त्विकों का प्राकट्य हुआ है उसी मे इन व्यभिचारियों का भी प्रकाशन हुआ है (देखें—सात्त्विक अनुभाव शीर्षक मे 'पथिक मराल' से उद्धृत पद)।

गर्व, व्रीड़ा, अवहित्था, हर्ष : नव संगम हेतु नायिका मे इन व्यभिचारियों की एक साथ सुंदर व्यंजना हुई है—

पिउ आयो गृह जान लुकी जाय परजंक पै।
नायक चतुर सुजान जाय भरी निज अंक मैं।।
जंघन कठोर जोर बांह को मरोर ओर,
पति की न देख उर कंचुकी दुरावती।
नीवी की गांठ कौ सुसांठ मार कीनी दृढ़,
साटीका की छोर मोर पायन दबावती।
सोभन सुछल कर दृग तें सुजल बिंदु,
डार-डार नार अति पीकौं दुरावती।
कबुक कुटिल युग भृकुटी चढ़ाय चौंक,
देख पिय ओर हंसि मन कौं चुरावती।।[६७]

आवेग : कृष्ण में भी व्यभिचारी भावों का प्रकाशन हुआ है। प्रिया-आगमन को जानकर प्रेम-विवश कृष्ण की चित्त विभ्रम जनित किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता-आवेग का चित्रण देखिए

नव सत करि सखि भूषन, तू चली री जब रुनक झुनक,
धेनु दुहत भए चपल कमल नैन, मनहु बात बस,
अंबुज अलि हीं, चकित भए गी परी कान भनक ।।
उठि धाये मोहन दोहन तजि, कहू मुरली कहूं गिरी—
पीत पट, पाग छूटे पेंच, अटपटी सी बनक।
'सूरदास मदनमोहन' प्यारे अछन-अछन—
पाछै, आवत फिरि चाहै तनक ।।[६८]

मधुर रस के भेद

शृंगार रस की भांति मधुर रस के भी दो भेद बताये गये है—विप्रलभ एवं संभोग (संयोग)।

विप्रलंभ : नायक और नायिका के मिलन अथवा अमिलन मे परस्पर के अभिमत आलिंगनादिकों की अप्राप्ति से जो भाव प्रकाशित होता है, वह विप्रलंभ है जो कि संभोग की पुष्टि करने वाला है।[६९] चैतन्य संप्रदाय में विरह का स्थान सर्वोपरि माना गया है, इसीलिए इसके साहित्य मे मधुर रस की व्यंजना अधिक महत्त्वपूर्ण है। स्वयं चैतन्य महाप्रभु की मधुरा भक्ति विरह-व्याकुल हृदय से नि:सृत हुई। अन्य संप्रदायो मे विप्रलभ को इतना महत्त्व नही दिया गया जितना चैतन्य संप्रदाय में। साम्प्रदायिक चेतना से प्रभावित होकर इस सप्रदाय के ब्रज-भाषा काव्य में भी विप्रलभ को स्थान मिला है। इतना अवश्य है कि संस्कृत एवं बगला पदावली में विरह को जो प्रमुख एव महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है, उतना ब्रजभाषा पदावली में दृष्टिगत नही होता लेकिन जितना भी मिला है वह रस की दृष्टि से स्वत: पूर्ण एवं स्वतंत्र है।

परपरागत रूप से विप्रलंभ के तीन भेद स्वीकृत हैं—पूर्वराग, मान, प्रवास। गौड़ीय विद्वानों ने एक और सूक्ष्म भेद जोड़ा है—प्रेम वैचित्र्य, जिसमें मिलन में विरह की अनुभूति होती है। परंपरागत भेद-करुण को प्रवास के अंतर्गत माना गया है।

पूर्वराग : संगम के पूर्व दर्शन, श्रवणादि द्वारा उत्पन्न होकर जो रति नायक-नायिका को विभावादि द्वारा आस्वादनीय होती है, उसे पूर्वराग कहा गया है।

साक्षात् रूप, चित्रपट तथा स्वप्नादि में श्रीकृष्ण का दर्शन माना गया है। श्रवण, बंदी, दूती व सखी अथवा गीत, मुरली आदि द्वारा उद्‌बुध होता है। इनमे से मुरली प्रमुख है। ब्रजभाषा पदावली मे पूर्वराग काव्यशास्त्रीय प्रणाली पर स्वप्न दर्शन या दूती श्रवण आदि द्वारा उद्‌बुध नहीं हुआ है, यहां प्रमुख रूप से साक्षात् दर्शन द्वारा या कही मुरली द्वारा पूर्वराग का उदय हुआ है। दृष्टि से दृष्टि मिलती है और राग का उदय हो जाता है—

साक्षात् दर्शन द्वारा पूर्वराग—

हौं तो या मग निकसी आय अचानक,
काम्ह् कुवर डाढ़े री अपनी पौर।
दृष्टि हू सौ दृष्टि मिली, रोम-रोम सीतल भई,
तन में उठत कछु काम रौर॥[70]

मुरली के श्रवण द्वारा पूर्वराग—

चलो री मुरली सुनियैं, कान्ह् बजाई जमुना तीर।

× × ×

देह की सुधि बिसरि गई, बिसर्‌यौ तन को चीर।
मुरली धुनि मधुर बाजै, कैसे कै धरौ धीर।
(श्री) 'सूरदास मदनमोहन' जानत हौ यह पीर॥[71]

पूर्वराग में व्याधि, शंका, असूया, श्रम, क्लम, निर्वेद, औत्सुक्य, दैन्य, चिंता, निद्रा, प्रबोधन, विषाद, जड़ता, उन्माद, मोह, मृत्यु आदि संचारीभाव कहे गये है। यह पूर्वराग समर्था, समंजसा, साधारणी रतियो के अनुरूप प्रौढ, समंजस व साधारण—तीन प्रकार का कहा गया है।

प्रौढ़ पूर्वराग : प्रौढ़ पूर्वराग मे बिरह की दसो दशाए घटित होती है—लालसा, उद्वेग, जागरण, तानव, जड़ता, व्यग्रता, व्याधि, उन्माद, मोह एव मृत्यु। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में इन सभी दशाओ का अत्यंत भावपूर्ण चित्रण हुआ है। स्थानाभाव के कारण कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे है।

लालसा—

एक बार तो आय के, नैनन ही मिलि जाउ।
सोंह तुमें जो सांवरे नेकु दरश दिखराउ॥

× × ×

इन लोचन की लालसा, कबहुं न मन ते जाय।
ज्यो प्यासे को नीर बिन, और न कछु सुहाय॥[72]

जड़ता—

मेरौ मन मोहे री नन्द कौ सावरो।
देखत रूप ठगौरी सी, कछु बौरी सी ह्वै रही—
ये तन मन री आवै तावरौ।[73]

उद्वेग—

हौं कहा करौ री कित जाउं।
जित देखौं तित ही वह देखियै री,
नंदनंदन बिन कतहुं न ठांउ॥

बिन देखे हू न रह्यौ परै री
कहि कैसे री तजा गाउ।
'सूरदास मदनमोहन' मेरे अब यह आवलि हित,
इनही-सो हित-मिल रहाउ ॥[७४]

× × ×

कहा करूं कासों कहूं, को बूझे कित जाउ।
वन वन ही डौलत फिरो, बोलत लै लै नाउ ॥[७५]

व्यग्रता : कृष्ण-अनुरागिनी राधा कृष्ण से मिलन हेतु अति व्याकुल होकर तड़पती है जैसे चातक और मीन। माघ की मध्य रात्रि भी उसे विरह के कारण जेठ की दोपहर के समान तप्त लगती है—

'सूरदास मदनमोहन' तलफत जैसे चातक-मीन,
माघ की मध्य रात, जैसे जेठ दुपहेरी ॥[७६]

× × ×

ये लोचन आतुर अधिक उनहि पीर कछु नांय।
जलते न्यारी मीन ज्यों तड़फि तड़फि अकुलाय ॥[७७]

राधा और गोपियों में जिस प्रकार कृष्ण से मिलने के लिए व्याकुलता एवं उत्कंठा रहती है, उसी प्रकार कृष्ण में भी मिलने के लिए व्यग्रता है—

स्वामिनी चलहु करहु जिन देर।
कुजविहारी अति विरहाकुल व्यथित मदन मद-झेर ॥
करत विशेष विलाप विनोदिनि राधे-राधे टेर।
भाल व्याल मुरली जु बान तन चंदन विषमय मेर।
पवन हुताशन चंद कौमुदी चड अंशु रह्यौ घेर।
कोमल हृदय मिली आतुर है श्रीरामराय की बेर।[७८]

जागरण—

आज रैन मैन मैन अति हि सताई मोहि,
नीद हू न आई नैन आलस छयौ है री।[७९]

मूर्च्छा—

बैठी चारु चौकी पर चौसर सी खेलें बाम,
काम नाम लेते कोउ श्याम यो कह्यो है री।
सुनत ही अचेत सी अचानक भई बाल,
ख्याल चाल भूल हाल अद्भुत भयो है री।[८०]

मान : परस्पर अनुरक्त तथा एक स्थान पर अवस्थित नायक-नायिका के अभिमत आलिंगन व दर्शनादि के नि[षेध]कारी भाव को मान कहते हैं निर्वेद शंका अमर्ष गर्व असूया अवहित्था ग्लानि चिंता आदि मान के

व्यभिचारी भाव होते हैं। सहेतु एवं निर्हेतु मान के दो भेद है।

सहेतु मान : यह मान ईर्ष्या द्वारा उत्पन्न होता है। प्रिय के मुख से विपक्षी-नायिकाओ का वैशिष्ट्य कीर्तित किये जाने पर प्रणय-प्रधान जो भाव उत्पन्न होता है, वह ईर्ष्यामान कहा जाता है।

रति-चिह्न को देखकर (सकारण) मान होता है—

परदारा गृह जाय प्रात मोहिं मुख दिखरायो।
रति सुख चिह्नित रूप निरखि हौ मान रचायौ।।[८१]

× × ×

अन्य स्त्री के नाम को सुनकर मान—

सुनत और तिय नाम मान कियो प्यारी विशद।
बैठी है अति वाम लाल विकल है पग परत।।[८२]

निर्हेतुमान कारणाभाव से किंवा कारणाभास से नायक-नायिका में जो प्रणय उदित होता है वह निर्हेतु मान का रूप धारण करता है। इसे प्रणयमान भी कहा गया है क्योंकि यह अहकारजन्य नही होता अपितु अत्यधिक राग के आवेश से उत्पन्न भाव है। इसमे सभी व्यभिचारी भाव होते हैं जिनमे अवहित्था प्रमुख है।

बिना किसी हेतु (कारण) के मान—

हौ कैसे कै त्याऊ, मरम न पाऊं स्याम,
मेरे जान बाकौ मान, मानगढ़ भयौ।

× × ×

वचन पौरिया बोले न खोलै मुख, पौरि मूंद रह्यौ,
भौंह धनुष, नैंना रिस के वान, तातैं जल न गम्यौ।

साम दाम दंड भेद, सब मैं करि देखे तव हौं आई उलटि—

'सूरदास मदनमोहन, आपुन चलिए जू,
जो तुम हू पै जाय लयो।।[८३]

गर्व—

ताको प्रेम अनते अजान की सी जी में जान।
मान अन कान सौ गुमान मैं रहति है।
देख तौ विचार कोउ ऐसौउ गमार जग
नीम की निबौड़ी खात-दाख ना चखत है।[८४]

प्रेम वैचित्र्य : प्रेमोत्कर्षवश प्रिय के निकट रहने पर भी उससे विच्छेद होने के भय से जो पीड़ा का अनुभव है, उसे प्रेम वैचित्र्य कहा गया है। इसमे तन, मन, प्राण बुद्धि सबसे एकाकार होने पर भी राग की अतिशयता के कारण राधा कृष्ण

में ऐसी आत्म-विस्मृत भाव-दशा उपस्थित होती है जिसमें उन्हें ऐसा अनुभव होता है जैसे वे एक-दूसरे से कभी मिले ही नही हों। मिलकर भी न मिलने के सदृश अनुभूति, प्राप्ति में भी अप्राप्ति का भाव प्रकट होता है—

पलक परत गत कल्प से भोरे दोऊ मीत।
मिले अनमिले मे रहत नवल नेह की रीत।।[८५]

प्रवास : पहले मिले हुए नायक-नायिका का देश, ग्राम, वन किंवा अन्य स्थानांतर आदि से जो परस्पर व्यवधान होता है, उसे प्रवास कहा गया है। पूर्वोक्त अन्य तीन प्रकारो की तुलना मे प्रवास मे विरहजन्य दुःख की मात्रा सर्वाधिक एवं प्रभाव अत्यंत प्रबल तीक्ष्ण, सहज व गभीर होता है। इसमे हर्ष, गर्व, मद, लज्जा, व्यतिरेक शृंगारोचित सारे व्यभिचारी प्रकट होते है। गौडीय आचार्यो के अनुसार प्रवास के दो भेद है—बुद्धिपूर्वक एव अबुद्धिपूर्वक। कार्यानुरोधवश दूरगमन को बुद्धिपूर्वक प्रवास तथा परतंत्रता से उत्पन्न प्रवास को अबुद्धिपूर्वक प्रवास कहते हैं। किंचित् दूर एवं सुदूर भेद से बुद्धिपूर्वक प्रवास दो प्रकार का माना गया है। चैतन्य सप्रदाय के व्रजभाषा काव्य म दोनो प्रकार के प्रवास को स्थान मिला है परंतु प्रमुख रूप से सुदूर प्रवास का अत्यत मार्मिक चित्रण हुआ है। गोस्वामी कृष्ण चैतन्य 'निज कवि' द्वारा रचित 'उद्धव चरित्र' मे प्राप्त विप्रलभ शृंगार प्रवास कोटि का है। इसके अतिरिक्त अन्य काव्यो मे भी प्रवासजन्य विप्रलंभ की अभिव्यक्ति हुई है, वे हैं—बांकेपिया विरचित 'पथिक मराल' (सपूर्ण काव्य मे), 'मधुर मिलन' एव 'प्रेमोद्दीपनी', रामराय जी की 'आदि वाणी' (कुछ पदों मे) तथा 'सूरदास मदनमोहन की बाणी' (कुछ पद) 'माधुरी वाणी' आदि।

किंचिद् दूर प्रवास : इसके उदाहरण गोचारण, कालियदमन तथा रास में श्रीकृष्ण की अतर्ध्यानता आदि है।

वन मे अंतर्ध्यान—

रुदन करत ह्वै विकल बोली सब गोपी।
है सुदर कुल कांति फिरौ कित वन मे लोपी।।
तब पद कोमल धरि डरत, पीन स्तन के माहि।
सो क्लेशित वन कंकरिन, सुमिर-सुमिर पछताहि।।
प्रकट ह्वै आइये।।[८६]

सुदूर प्रवास : यह भावी, भवन् (वर्तमान) एवं भूत भेद से त्रिविध कहा गया है। श्रीकृष्ण के दूर चले जाने की आशंका से जो विरह उत्पन्न होता है वह भावी प्रवास, आंखों के समक्ष मथुरा जाते हुए देखकर उत्पन्न विरह भवन तथा मथुरा चले जाने पर पीछे जो तीव्रतर वियोग होता है वह भूत प्रवास के अंतर्गत आता है।

सिसकि सिसकि रही मोरन की कूक सुनि
अजहु न आय पिया मुरझानी मन में,
× × ×
बालम विदेस—देस, कैसे राखू बाल बेस,
कोकिला की कूक सुनि हूक उठै तन मे।
'सूरदास मदनमोहन' बिन दुख पावै बाम,
काम करै टूक-टूक, सूर जैसे रन मे।।[८५]

अबुद्धिपूर्वक प्रवास : 'उद्धव चरित' में इसी प्रकार का प्रवास वर्णित है क्योंकि श्रीकृष्ण के गोपियो एवं राधा को छोड़कर मथुरा-गमन का कारण श्राप है अतः उनका प्रवास परतंत्रता से उत्पन्न है। श्रीदामा ने राधा-कृष्ण को सात वर्ष के वियोग का श्राप दिया था, उसी के कारण उन्हे विरह का दारुण दुख सहन करना पड़ा है—

सिरीदाम को आपहू याद करौ सत वर्ष बिछोह की दीनी तथा
बिमनी मन मे मत होहु पिया चित चेत धरौ गउ लोक कथा।।[८८]

प्रवास-विप्रलंभ मे, गौड़ीय आचार्यानुसार, विरह की दश दशाएं ये हैं—चिंता, जागरण, उद्वेग, तानव (कृशता), मलिनता, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, मोह (मूर्च्छा) एवं मृत्यु। ब्रजभाषा काव्य में इन सभी दशाओं की अत्यंत मर्मस्पर्शी व्यंजना हुई है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

जागरण—

असित पक्ष निश डसत, मनहु इक नागिनि कारी।
गिन-गिन तारे रहत, रहित निद्रा दुख भारी।।[८९]

उद्वेग :

मूंदि नयन भावन भरी, कहत कहां रहे आज।
छांड़ि अकेली फिरत हौ, निपट निठुर ब्रजराज।।
दया बिसराय के।।[९०]

तानव—

चंपक लता सम्हारि धरे बहु पाक अगाड़ी।
पावहु प्यारी कछुक भयो तन कृशित महारी।।[९१]

उन्माद—

पात पात खोजत फिरत, अब कदब तमाल।
छण छण आलिंगन करत, अनुमानत नंदलाल।।
पड़ी संभ्रांति में।।[९२]

मोह (मूर्च्छा)—

डारत अवनी तोड़ि-तेहि, सुमिरत मदन गुपाल।
मूछित ह्वै धरनी परत, मनहु बंधी शर जाल।।
मदन घाइल कियो।।[९३]

मृत्यु

राधा-कृष्ण विप्रलंभ में साक्षात मृत्यु नहीं होती है अपितु मृत्यु का उद्यम मात्र (कथन) होता है।

> जो नहिं पाऊं दरश मरों सखि कृष्ण-विरह में।
> दीजो मम शव बांधि, श्याम द्रुम एक तमालते।
> लिखियो मेरे अंग प्रति, श्याम नाम सुख धाम।
> गल तुलसी, भुज बांधियो, गौर पत्र अभिराम॥[66]

उन्माद, तानव, उद्वेग, चिंता, मोह, व्याधि, प्रलाप : निम्न पद में इन सब दशाओं का चित्रण अवलोकनीय है—

> दिवस अंग सुध हीन वसन धरणी पर डारत।
> छिन भीतर छिन अजिर जात छिन द्वार निहारत॥
> सखिन सीख लागत नहीं विरह विकल ह्वै जात।
> गावत, रोवत, हंसत छिन, नहिं पर बोल सुहात॥
> × × ×
> कृशतन अति उद्वेग मन छिन-छिन होत अचेत।
> तन पीरो चिंतित पड़ी, विषम उसासैं लेत॥[67]
> प्रलाप करत महा॥

विप्रलंभ का स्थान श्रीकृष्ण की प्रकट लीला में ही होता है। अप्राकृत रूप में नित्य लीला की दृष्टि से कृष्ण और गोपियों का वियोग नहीं होता।

संभोग (संयोग) : परस्पर आनुकूल्यमय दर्शन, आलिंगन, चुंबनादि के निषेवण द्वारा नायक-नायिका के उल्लासवर्द्धनकारी भाव को संभोग कहा गया है। प्राकृत संभोग से इसका तात्त्विक पार्थक्य यह है कि इसमें स्व-सुख मूलक वासना नहीं होती। यह मुख्य एवं गौण भेद से द्विविध होता है।[68]

मुख्य संभोग : जाग्रतावस्था में यह चार प्रकार का होता है—पूर्वराग, मान, किंचिद्दूर प्रवास एवं सुदूर प्रवास के अनुक्रम से संक्षिप्त, संकीर्ण, संपन्न व समृद्धिमान संभोग कहलाते हैं।

संक्षिप्त संभोग : लज्जा एवं भय आदि के कारण जहां युवक-युवती संक्षिप्त उपचारों का सेवन अर्थात् अल्पमात्र भोगांक वस्तु का व्यवहार करते हैं, वह संक्षिप्त संभोग कहलाता है। पूर्वराग के उपरांत प्रेमी-युगल का जो मिलन होता है, वह इसी के अंतर्गत आता है। यह अल्पकालीन मिलन कभी गोदोहन में, कभी गोचारण में व ब्रज की गलियों में आते-जाते तथा अन्य क्रीड़ाओं के अंतर्गत होता है। प्रारंभिक मिलन होने के कारण लज्जा एवं भय से संभोग का संक्षिप्त होना अत्यंत स्वाभाविक है, यथा—

> प्रीत रीति दोऊ चहैं और समागम ख्याल।
> लाज गाज तें सकुच अति करत झिझक मनु बाल।

पिय आयो गृह जान लुकी जाय परजक पै
नायक चतुर मुजान जाय भरी निज अक म।
जंघन कठोर जोर बांह को मरोर ओर,
पति की न देख उर कंचुकी दुरावती।

× × ×

सोभन सुछल कर दृग तें सुजल बिंदु,
डार-डार नार अति पीकौं दुरावती।[९७]

जीव गोस्वामी के अनुसार संक्षिप्त संभोग के चार प्रकार हैं—सदर्शन, मस्पर्श, संजल्प एवं सप्रयोग।

संकीर्ण संभोग : नायक द्वारा विपक्ष के गुणानुवाद एवं स्ववंचना आदि के स्मरण के कारण जब आलिगनादि संभोग के उपकरणों का संकुचित किंवा सकीर्ण व्यवहार होता है, तब उसे सकीर्ण सभोग कहते है। मान के पश्चात् जो मिलन होता है, वह इसी के अतर्गत आता है। मान के कारण मानिनी के मन मे क्षोभ एव दु.ख की स्मृति शेष रहने के कारण मिलन का पूर्ण आनंद प्राप्त नहीं हो पाता। जिस प्रकार तप्त इक्षु-चर्वण के समय स्वादुता एवं उष्णता का एक साथ अनुभव होता है उसी प्रकार संकीर्ण संभोग मे नायक-नायिका की मनोदशा होती है।

मान त्याग दोउ मिले परस्पर।
इत श्यामाजू रस रंग भीनी उत मन मोहन छैल रसिक बर।।
मानकाल मनु युग सम बीत्यो सहि न सकत दोउ नैकहु अंतर।
चले निकुज मुदित बांके-पिय श्यामा श्याम भुजन पर भुज धरि।[९८]

मानांतर संकीर्ण संभोग के मिलन में सूरदास मदनमोहन ने नवीन कल्पना की उद्भावना की है कि मिलन के उपरांत व्याकुल हरि का हृदय इस प्रकार शात हो गया जैसे कासे की ठनक स्पर्श द्वारा शांत हो जाती है—

राधा जू कौं ललिता मनाय लिये आवति,
हरि जू के कान परी नूपुर झनक।
तलप रचित किसलय दल हाथ रहे,
प्रति धुनि हिय भई, बाजत झनक।
जब जाय मिलि लपटाने हरि हियौ भरि,
जैसे फिरि परसै रहति कासे की ठनक।
'सूरदास मदनमोहन' लाल राधा रीझे,
हंसति - हंसति बैठे परियंक कनक।।[९९]

संपन्न संभोग : प्रवास (किंचिद्दूर) के पश्चात् कांत के संगम (मिलन) होने पर जो भोग होता है वह संपन्न संभोग कहा गया है। यह आगति एवं प्रादुर्भाव भेद से द्विविध होता है। लौकिक व्यवहार के द्वारा आगमन को आगति कहते

हैं, जैसे—गोष्ठादि मे श्रीकृष्ण का लौटना। प्रमगश्च अर्थात् रूढ भाव के विभ्रम द्वारा विह्वलित प्रियाओ के समक्ष श्रीकृष्ण का अकस्मात आविर्भाव प्रादुर्भाव कहा जाता है, जैसे—रास के अंतर्गत अंतर्धान होने के पश्चात् श्रीकृष्ण का पुनः प्राकट्य।

दशा जानि गंभीर तबै प्रकटै बनवारी।
बेणु बजाई मधुर अधर पर धारि गिरधारी॥
चौंक पडी सुनि मुरलिका देख्यो प्रीतम पास।
हरष प्रेम के रोष भरि फेर्यो मुख सह त्रास॥
विरह के क्रोध वश॥
लीनी अंकम लाय दौरि पिय रसिक बिहारी।
प्रीति रीति दर्शाय बहुत कीनी मनुहारी॥
सहचरि गण सब आयके रचि-रचि कियो सिंगार।
नव निकुंज पधराय दोउ, दीने कुंज किवार॥
तहा बिलसत दोउ॥[100]

समृद्धिमान संभोग : परतंत्रता के कारण वियुक्त नायक-नायिका को दर्शन दुर्लभता हो एवं फिर सुदूर प्रवास के पश्चात् जो अचानक मिलन संपन्न होता है उसमें आनंदातिरेक से अतिरिक्त संभोग होता है, उसे समृद्धिमान संभोग कहते है।

प्रियतम कृष्ण के मथुरा से ब्रज लौटने पर राधा-कृष्ण का मिलन समृद्धिमान संभोग का उदाहरण है—

खोयो रत्न अमूल्य आज धौ रंकिनि पायो।
चातकि हितु मनु श्याम जलद स्वाती बरसायो॥
× × ×
रस पयोध उमग्यो मनहु पाय पूर्ण ब्रजचंद।
अंग-अंग पुलकित भये, मिटे विरह के द्वंद्व॥
प्रिया प्रीतम मिलत॥[101]

मिलन में व्याघात पहुंचने पर सान्निध्य की अतिरिक्त लालसा उत्पन्न हो जाती है, इस अतिरिक्त लालसा का निदान समृद्धिमान संभोग के द्वारा होता है जिसमें मन-प्राण-एकाकार हो जाते हैं—

आजु किशोरी लेत हिलोर।
नेंक समात न हिये रसिकनि मिली जु नवल किशोर॥
शिर सीमंत कुसुमलट अटपट विकिरत चारों ओर।
अरुन नैन आलस बस विथकित पीक कपोल अथोर॥
सूरत रंग में रंगी रंगीली लूटे निज चित चोर।
डगमगात पग धरत गहलई रामराय पट छोर॥[102]

राधा कृष्ण की सुरति-लीला के चित्र अनेक कवियों ने अत्यंत सूक्ष्मता से अंकित किये हैं जिनमें समृद्धिमान संभोग के उदाहरण देखे जा सकते हैं।

गौण संभोग : जब संयोग नितांत जाग्रतावस्था में न होकर अर्द्ध-सुषुप्ति अवस्था में अर्थात् स्वप्न में होता है तब उसे गौण संभोग कहते हैं। विशेष प्रकार के स्वप्न में भक्त की जाग्रत चेतना पर एक दिव्य तंद्रा-सी व्याप्त हो जाती है जिसमें वह मिलनानुभूति करता है।

वत्सल भक्ति रस

विभावादि द्वारा परिपुष्ट वात्सल्य रूप स्थायीभाव वत्सल भक्ति रस कहलाता है।[१०३] अनुकम्प्य के प्रति अनुकंपाकारी की जो संभ्रम रहित रति होती है उसे वात्सल्य कहते हैं। यह वात्सल्य रति वत्सल रस का स्थायी-भाव है।

आलंबन : श्रीकृष्ण एवं गुरुजन। कृष्ण का कोमल, शैशव एवं कौमार्य ही इस रस में ग्राह्य है। वे सुंदर, शुभ लक्षणों से संपन्न, विनयी, लज्जाशील आदि अनेक गुणों से युक्त हैं। कृष्ण गुरुजनों द्वारा ईश्वरत्व के प्रभाव से रहित पुत्रादि रूप में अनुग्राह्य होते हैं। गुरुजन वे हैं जो अपने को कृष्ण से बड़ा समझने का भाव रखते हैं। यशोदा और नंद इनमें प्रधान हैं। व्रजभाषा पदावली में कृष्ण के अतिरिक्त जहां बालिका रूप राधा का वर्णन किया गया है वहां राधा भी वत्सल रस की आलंबन बनी है तथा कीरति-वृषभान आश्रय रूप आलंबन हैं। अन्य गोप-गोपियों का भी प्रसंगवश वात्सल्य भाव प्रकट हुआ है। चैतन्य-लीला संबंधी पदों में शिशु निमाई (गौरांग-चैतन्य) एवं माता-पिता शची-जगन्नाथ वत्सल रस के आलंबन हैं।

उद्दीपन : कौमारादि वय, रूप, वेश, बाल्य, चंचलता, मधुर वाक्य एवं मंद हास्य। व्रजभाषा काव्य में इन सभी उद्दीपनों का सुंदरता से चित्रण हुआ है।

बाल रूप-वेश, क्रीड़ा, मंद हास्य—(कृष्ण)—

देखो री रुनक झुनक पैंजनी पग, डगमगी चाल,
लाल के त्रिभुवन की सोभा संग, लागी डोलैं आंगन।
पचरंग (पीरी) पाटकी कौंधनी कटि पट बांधे,
कंचन मनि नूपुर धूरि धूसर तन नगन॥
आगे चले जात तब जननी डरपावति, आवति हैं डरपि,
किलकि-किलकि जसोमति उर लागत तन।
'श्रीसूरदास मदनमोहन' लीला-सागर गुन-आगर,
व्रज-नारी सुर-नर मुनि मगन॥[१०४]

बाल्य चंचलता, रूप छवि—(कृष्ण)—

निरख सखी छवि माखन चोरी।
मोहन इत उत झंकत झरोखे होय भवन जनि कुऊ गोरी।

झक-झये डोलत चारों निसि लसि लसि रहत लता सी ओरी
मूदि येक उझकि पौरि को चलत घुटरुवन ललित किशोरी ।।[105]

रूप-वेश (राधा)—

आज भीर बरसाने भारी सुनि-सुनि उमहिं चली ब्रजनारी
झिंगुली पीत रुचिर पहुंची कर कटकिंकिणि पाइन नूपुर
कोटि भान श्री राधे छवि पर वारनारे ।।
बैठी कीरति मुदित झुलावत, मुख चूमत पय पान करावत
बाल विनोद भरि गहि गहि उर लावनारे ।।[106]

मंद हास्य (राधा)—

अहो मेरी लाड़िली सुकुमारि, कंचन पालने झूलै।
मृदु मुसकान निरखि नैनन सुख, कीरति जू मन ही मन फूलै।[107]

रूप-वेश, हास्य, बाल-क्रीड़ा (चैतन्य)—

श्री चैतन्य महाप्रभु सुत को करत सिंगार शची महतारी।
टोपी ललित-केसरी बागो सूथन पहिरावत जरतारी ।।
मुक्तामाल श्रवण में कुण्डल नासा बिम्ब लटकन छवि न्यारी।
× × ×
नयनन मे काजर लै आज्यौ मुख चूमत भरि-भरि अकवारी।
किलकि हसन झुकि दौरि चयन पै बाकेपिया जाय बलिहारी ।।[108]

अनुभाव : वात्सल्य मे जो चेष्टाए अत्यत स्वाभाविक रूप में प्रकट होती है वे ही वत्सल रस के अनुभाव है। मस्तक-आघ्राण, अंग सहलाना, आशीर्वाद, निर्देश, लालन-पालन, हितोपदेश आदि असाधारण अनुभाव है। चुबन, आलिंगन, नाम लेकर पुकारना, उपालभ आदि साधारण क्रियाएं हैं।

लालन-पालन, चुंबन, आलिंगन व अन्य स्वाभाविक चेष्टाएं (कृष्ण का)

देखी हो बड़भागिन जसुमति निस दिन श्याम सुन्दर दुलरावत।
मुख चुबति अरु छतियां लगावत, पय प्यावत पुनि पलना झुलावत।
गावत गीत मद मधुरे स्वर लै लै सुरग खिलौना खिलावत।
पहिरावत कुल ही अगुली वर नाना विधि के लाड़ लडावत ।।
निरखि निरखिके अपनी दीठि डर रुचि सो भाल चखौड़ा बनावत।
किलकि किलकि ब्रजचन्द्र हसत जब जननी पुलकि पुलकि दुलरावत।
राई लौन उतारि डारि लखि लखि अपने सुत जीव जिवावत।
अलाय बलाय लाल की कृपा करि किशोरीदास है सगरी ध्यावत।[109]

चुबन (राधा का)—

झूलति पालनै प्यारी।
जननी निरखि निरखि मन ही मन करत प्रान बलिहारी।

पय प्यावत चूमत दुलरावत लखि फूलत सुकुमारी।
किशोरीदास खिलौना खिलावत गावैं साहिले व्रजनारी ।।[110]

चुबन (चैतन्य का)—

प्रकटे श्री चैतन्य हरी।

× × ×

मुख चूमत स्तन पय प्यावत जननी मोद भरी ।।
बांकेपिय चैतन्य जन्म सुनि सब नदिया उमडी ।।[111]

मातृसुलभ चेष्टाएं—

कर्‌यो कृष्ण शृंगार मातु निज हाथ खवायो।
करि अनेक पकवान बहुरि पय पान करायो।।[112]

× × ×

कबहूं खिलावै गोद लै, पुनि पलना पौढ़ाय।
राई लोन उतारि छण, बार बार बलि जाय।।
निहारत अंग छबि।।[113]

सात्त्विक : वत्सल रस मे स्तंभादि आठो सात्त्विक भावो का प्रकाशन होता है। इनके अतिरिक्त एक और विशेष सात्त्विक भाव प्रकट होता है—स्तन-दुग्ध क्षरण।

रोमांच—

किलकि किलकि व्रजचंद्र हसत जब जननी पुलकि पुलकि दुलरावत।[114]

अश्रु—

तात मातु आनंद भरे, स्रवत नयन जल धार।
आलिंगन करि कृष्ण को, लीने चरण पखार।।[115]

स्तन-दुग्ध क्षरण—

बाल विनोद हृदय भर्‌यो उमगत छण छण मांहिं।
स्तन पय टपक्यो परत पियत कृष्ण न अघाहिं।।[116]

व्यभिचारी : प्रीतिरसोक्त सभी व्यभिचारी वत्सल रस मे प्रकट होते हैं। इनके अतिरिक्त एक और भाव अपस्मार इसमें होता है।

चिंता—

अजहुं न आये री बन तैं,
कहां बार लाई आजु कन्हाई।
कै कहु कुजन गाय चराय, किधौ—
हिराय गई पराय, देहु वताय कहूं सुधि पाई।
बैठे कहा, सुधि लेहु सवारे,
नैनन अधिक ओसरौ लाई।[117]

रूप

जसोमति ढाटा पालन झूल ।
जननी देखि देखि मन ही मन आनंदित अति फूलै ।।[११८]
× ⁄ ×
कोटि मान श्रीराधे छवि पर वारनारे ।।
बैठी कीरत मुदित झुलावत, मुख चूमत पय पान करावत ।[११९]

वत्सल रस की योग और अयोग—दो अवस्थाएं होती है। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे वियोग वात्सल्य का रस रूप से परिपाक परिलक्षित नहीं होता। इस भाव संबंधी कुछ पदों की विवेचना पिछले अध्याय में की जा चुकी है।

प्रीति भक्ति रस (दास्य)

दास्य भाव की भक्ति के अनुरूप विभावादि के द्वारा भक्तों के हृदय मे आस्वादन योग्यता को प्राप्त हुई प्रीति ही प्रीति भक्तिरस कहलाती है।[१२०] इसमें अनुग्रह पात्र की भगवान से सेवा भावना मूलक प्रीति होती है। यह दासत्व एवं पालत्व भाव से क्रमश: दो प्रकार की होती है—संभ्रम प्रीति एवं गौरव प्रीति।

संभ्रम प्रीति रस : संभ्रम प्रीति विभावादि से परिपुष्ट होकर संभ्रम प्रीति रस कहलाती है। इसका स्थायी भाव सभ्रम प्रीति है। प्रभुता ज्ञान के कारण संभ्रम, कंप व चित्त मे आदर की समष्टि को सभ्रम प्रीति कहते है।

आलंबन : कृष्ण और उनके दास। चैतन्य लीलापरक काव्य मे चैतन्य महाप्रभु। कृष्ण के दो रूप आलबन है—द्विभुज रूप कृष्ण जो गोकुलवासियो के आलंबन हैं तथा गोकुल से अन्यत्र द्वारिका मथुरा आदि मे कही द्विभुज रूप व कही चतुर्भुज रूप हैं। संभ्रम प्रीति रस मे आलंबन हरि का स्वरूप महिमा मंडित है। वे कृपा-समुद्र, ईश्वर, क्षमाशील, शरणागतपालक, प्रेमवश्य, सर्वज्ञ आदि महत्तापूर्ण गुणों से युक्त है। इस रस मे श्रीकृष्ण का जो रूप आलंबन बनता है उसके कुछ गुण निम्न पद मे वर्णित किये गये हैं, उसका कुछ अंश प्रस्तुत है—

गोकुलानद गोपीजनानंद श्रीनंदानंद नयनानंद प्यारे।
गिरिराज उद्धरन सुरराज-मदहरन वदन पर दुजराज कोटि वारे।
× × ×
असुरलोचन अगोचर महामहिम निजजन-करामल पर-अह्वारासी।
भक्तजन भयहरन चरन अशरणशरण सकल सुखकरण दुखदोष हारी।
रूपबल कोटिकंदर्पदर्पापहर हरध्यात पद-कमल विश्वबंधो।
नामआभास अघरासि विध्वंसकर सकल कल्याण गुनग्राम सिंधो।[१२१]
जगत ईश, सच्चिदानंद, प्रेमकंद, नवद्वीपचंद्र

नित्य आनंद स्वरूप महाप्रभु गौराग भी भक्ति के आलंबन हैं—

गौर-हरि गौर-हरि भजत भज भागवत
तत्व विस्तार निस्तार गति लेखे।
वेद वेदांत सिद्धांत संति संतन के
पुष्टि परमान घर ध्यान मति देखे॥
नवद्वीप चंद्र सच्चिदानद प्रेम-कंद,
वृंदावन वृंद वध हृदय प्रति पेखे।
नित्य आनंद महाप्रभु जगत् ईश,
अग्र रामराय ने जु विनोद भर कति निमेखे॥[१२२]

श्रीकृष्ण एवं चैतन्य महाप्रभु की कृपाशीलता, शरणागतपालकता, क्षमा-शीलता, आदि अनेक महान गुणों का गान इन भक्त कवियों ने अपने काव्य के अंतर्गत किया है।

आश्रय रूप दास चार प्रकार के कहे गये है—कृष्ण के आश्रित, आज्ञाकारी, विश्वस्त और प्रभु ज्ञान में विनम्र बुद्धि वाले, जिन्हें क्रमशः अधिकृत, आश्रित, परिषद तथा अनुग कहते हैं।

उद्दीपन : श्रीकृष्ण का अनुग्रह, उनकी चरणधूलि, प्रसाद ग्रहण एवं भक्तों का सग आदि प्रीति रस के असाधारण उद्दीपन कहे गये हैं। साधारण उद्दीपनों मे श्रीकृष्ण का मुरली-नाद, श्रृंग-ध्वनि, स्मित अवलोकन, गुणोत्कर्ष श्रवण, चरण-चिह्न, अंग-सौरभ इत्यादि कथित है।

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भक्तों का संग, श्रीकृष्ण का अनुग्रह गुणोत्कर्ष श्रवण, चरण धूलि उद्दीपन विभाव रूप मे चित्रित हुए है।

गुणोत्कर्ष श्रवण—

अद्य संहारिनि अघम उधारिनि,
कलिकाल-तारिनी मधु-मथन गुन-कथा।

× × ×

मथि वेद गथि ग्रंथ कथि व्यासादि,
अजहुं आधुनिक तन कहत हैं मति जथा।
परमगद सोपान करि गदाधर पान,
आन आलाप तें जात जीवन वृथा॥[१२३]

अनुभाव : भगवद्-आज्ञा का पालन, कृष्णदास के प्रति मैत्री, प्रीति मात्र में निष्ठा आदि असाधारण कार्य।

भगवद् आज्ञा का पालन—

श्रीराधामाधव करात ज्यौं त्यौं सब करतब करत देह धरि।
पात चलात बात बिनु नाही तिमि पुमर्थ असमर्थ गेह भरि॥[१२४]

प्रीति भाव में निष्ठा

श्री चैतन्य पद पंकज भजोरे।
योग यज्ञ जप तप जितो नीरस करम कठिन सबही परिहरोरे।
कठिन कलिकाल में शरण गहि कै अबै भव दुखसागर सबै ही तरोरे।
किशोरीदास महाप्रभु भजि ब्रज वृंदावन सब ही सुख लहोरे।।[१२५]

सात्त्विक : स्तंभ आदि समस्त सात्त्विक भाव। इन सात्त्विक भावों का प्रकाशन मधुर भक्ति-रस के परिपोषण में हुआ है।

व्यभिचारी : प्रीति भक्ति रस में नौ के अतिरिक्त अन्य चौबीस व्यभिचारी भावों का प्रकाशन संभव होता है, वे हैं—हर्ष, गर्व, धृति, निर्वेद, दैन्य विषण्णता, स्मृति, चिंता, शंका, मति, औत्सुक्य, चपलता, वितर्क, आवेग, लज्जा, जड़ता, मोह, उन्माद, अवहित्था, बोध, स्वप्न, व्याधि, विषाद, मृति। इनमें से अनेक भावों की अभिव्यक्ति ब्रजभाषा पदों में हुई है, इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

हर्ष—

श्री गोविंद-पद-पल्लव सिर पर विराजमान,
कैसे कहि आवै या सुख को परिमान।
ब्रज नरेस देस बसत कालानल हू न ग्रसत,
विलसत मन हुलसत करि लीलामृत पान।।

× × ×

तिनके मुख कमल दरस पावन पद रेनु परस,
अधम जन गदाधर से पावै सनमान।। [१२६]

दैन्य, विषाद—

मोहि तुम्हारी आस, जिनि करहु न निरास।
मन मेरो बंध्यो मोहपास, स्वारथ पर सौंधो कैसो दास।
मोहि अपनी करनी के त्रास, निसि बीतति भरि-भरि लेत स्वास।।
रचि-रचि कहिये वातैं पचास, मन की मलिनता को कहुं न नास।
जौ चितवैं नेकु श्रीनिवास, गदाधर मिटहि दोष दुख अनायास।।[१२७]

प्रीति रस में वियोग एवं योग (संयोग) दो प्रकार की अवस्थाएं मानी गयी है।

गौरव प्रीति रस : अपने को कृष्ण द्वारा पाल्य मानने वाले भक्तों में गौरव प्रीति होती है और यही प्रीति विभावादि द्वारा परिपुष्ट होने पर गौरव प्रीति रस कहलाती है। 'भक्तिरसामृत सिंधु' में इस रस के भी विभाव, अनुभाव, उद्दीपन आदि अंगों का विवेचन किया गया है। ब्रजभाषा काव्य में भक्त कवियों का कृष्ण एवं चैतन्य द्वारा पाल्य होने का भाव तो व्यक्त हुआ है परंतु रस रूप में इसका स्फुरण नहीं मिलता। प्रीति रस का सम्यक् निर्वाह द्वारिका लीला के प्रसंग में हो

सकता था परंतु चैतन्य सम्प्रदायी काव्य में माधुर्योपासना के निमित्त ब्रजलीला क ही विशद गान हुआ है, अन्य धाम की लीलाओं का वर्णन प्रायः नगण्य है।

शांत भक्ति रस

चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में प्रधान रस यद्यपि मधुर भक्ति रस है तथापि भगवद्-भक्ति के लिए जहा तत्त्व-ज्ञान व वैराग्य का उपदेश दिया गया है वहा शात रस की अभिव्यक्ति हुई है। यह शांत रस कृष्ण-रति या मधुरा रति का अग है। भक्तिमार्ग की सामान्य चेतना के रूप मे अभिव्यक्त शांत रस मधुर भक्ति रस का परिपोषक है। कृष्ण भक्ति के लिए कवियों ने सांसारिक विषयों के प्रति अनासक्ति का उपदेश दिया है।

शांत रस की परिभाषा करते हुए रूप गोस्वामी का कथन है—वक्ष्यमाण विभावादि द्वारा शात रति रूप स्थायीभाव 'शम' वालों के आस्वाद का विषय होकर शांत भक्ति रस कहलाता है।[१२८] शांत रस मे शांति रति स्थायी भाव है, केवल निर्वेद नही क्योकि इसमे कृष्ण रति अपेक्षित है, चाहे वह सुशात ही हो। परपरागत काव्यशास्त्रो मे शांत रस का स्थायी-भाव शम या निर्वेद माना गया है परतु गौडीय विद्वानो ने इसे स्वीकार नही किया है। उनकी मान्यतानुसार बुद्धि की भगन्निष्ठता का नाम ही शम है और शाति रति के बिना बुद्धि भगवान के प्रति निष्ठ नही हो सकती, अतएव शांति रति को ही स्थायीभाव मानना समुचित है।

आलंबन : चतुर्भुज कृष्ण एवं शांत जन। कृष्ण का चतुर्भुज रूप इसलिए आलंबन है कि उस रूप से उनके ब्रह्मत्व का बोध होता है, द्विभुज रूप मे लौकिकता की भ्रांति हो सकती है। इस रूप में इन गुणों से युक्त श्रीकृष्ण विषय रूप विभाव होते है—सच्चिदानंदघन, आत्माराम शिरोमणि, परमात्मा, परब्रह्मस्वरूप, सम, दात, शुचि, वशी, सदास्वरूप प्राप्त, हतारिगतिदायक, विभुत्व आदि। चैतन्य भक्तिपरक काव्य मे चैतन्य महाप्रभु का षड्भुज रूप आलंबन है। तापस एव आत्माराम—दो प्रकार के शांत जन इस रस के आश्रय रूप आलंबन विभाव है।

उद्दीपन : शांत भक्ति रस के उद्दीपन विभाव दो प्रकार के माने गये हैं—साधारण एवं असाधारण। असाधारण उद्दीपनों में उपनिषदों का श्रवण, एकात स्थान का सेवन, श्रीकृष्ण रूप की स्फूर्ति, तत्त्व-विवेचन, विद्या की प्रधानता, विश्व रूप दर्शन, ज्ञानी-भक्तों का संसर्ग आदि बताये गये है। चरणामृत की तुलसी गध, शख-नाद, पुण्य पर्व, शुभ अरण्य, सिद्ध क्षेत्र, देवनदी गगा, विषयादि की क्षण-भगुरता, काल का सर्व-संहारकत्व इत्यादि साधारण उद्दीपन विभाव है।

विषयादि की क्षणभंगुरता एवं काल का सर्व-संहारकत्व—

घरी-घरी घरियाल रटति समझि रे,
तेरी आयु घटति हटत् क्यों न बिकार तें

× × ×

निसि [illegible] [illegible] [illegible] समुदा
टरि टरि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
सूरदास [illegible] [illegible] [illegible] प्रपंच
भक्ति-भजन [illegible] छूटो (अटक) मोह जंजार में।[128]

अनुभाव : नासाग्र पर नेत्रों को स्थिर रखना, अवधूत की भांति व्यवहार, ज्ञान-मुद्रा का प्रदर्शन, कृष्ण के भक्तों से भी द्वेष न करना, सिद्धता तथा जीवन्मुक्ति के प्रति अधिक आदर, निरपेक्षता ममता रहित अहंकारशून्य एवं मौन आदि शीत क्रियाएँ—ये असाधारण विशेष अनुभाव हैं। जृंभा, अंगमोटन, भक्ति का उपदेश हरि को नति एवं स्तुति आदि साधारण अनुभाव हैं।

माधुर्य की प्रधानता होते हुए भी भक्त कवियों ने अपने काव्य में जहाँ आराध्य से अनुरक्ति एवं विषयों से वितृष्णा का उपदेश दिया है वहाँ शांत रस के अनुभाव देखने को मिल जाते हैं। काव्य के प्रारंभ में मंगलाचरण के अंतर्गत आराध्य के प्रति नमन एवं स्तवन किया गया है।

भक्ति का उपदेश—

जौलों प्रान रहैं तनु तौलों भजु जन श्रीराधामाधव हरि।
चार दिना की चारु चाँदनी चमक रहे चंचल चाल ढरि॥
थिर न रहत जह भरम भराभर अंधकार पावस परावसरि।
श्रीरामराय भगवतदास हितु कहत छाड़ि परपच स्वरव करि॥[130]

× × ×

मृगतृष्णा जल विषय सुख शांति न पावै धीर।
ललित लड़ैती श्याम भज मिटै कठिन भव पीर॥[131]

स्तवन—

जयजय महाप्रभु जगत बंदन श्रीशचीनंदन हरे।
जयाद्वैत आनंद कंद नित्यानंद मनवांछित करे॥
जय गौर राधा भाव भूषित श्याम श्यामल उर धरे।
जय पतित पावन दुख नसावन दीनजन अंकन भरे।[132]

सात्त्विक भाव : प्रलय को छोड़कर स्वेद, रोमांच आदि समस्त सात्त्विक भाव शांत रस में मान्य हैं। इन सात्त्विक भावों का प्रकाशन मधुर रस के परिपोषण में हुआ है।

संचारी : निर्वेद, धृति, हर्ष, मति, स्मृति, विषाद, औत्सुक्य, आवेग, वितर्क आदि।

वितर्क, आवेग, निर्वेद, विषाद—

कहा हम कीनो नरतन पाइ।
हरि परितोषण एको कबहू मनि लायो न उपाइ

हरि हरिजन आराधि न जानें कृपण वित चित लाइ ।
वृथा विषाद उदर की चिंता जनमहि गयो बिलाइ ।
× × ×
जैसे चोर भोर के आये इत चितवत बिललाइ ।
ऐसे ही गति भई गदाधर प्रभु किन कन्हु सहाइ ।।[133]

प्रयोभवित रस (सख्य)

सख्य रूप स्थायी भाव अपने अनुरूप विभावादि द्वारा पुष्ट होकर प्रेय भक्ति रस कहलाता है ।[134] इसका स्थायी-भाव सख्य रति है । समान प्राय दो व्यक्तियो की संभ्रम रहित तथा विश्वास रूपिणी रति को सख्य कहते है ।

आलंबन : श्रीकृष्ण एवं उनके सखागण ।

उद्दीपन : श्रीकृष्ण की वयस्, रूप, शृंग, वेणु, विनोद, परिहास, राजा, देवता अवतार की चेष्टाओं का अनुकरण ।

अनुभाव : प्रेय-भक्ति रस के अनुभाव भक्ति रस शास्त्र की मौलिक सूझ है । बाहुयुद्ध, कंदुक, द्यूत आदि क्रीड़ाएं, साथ-साथ सोना, बैठना, परिहास, नाचना-गाना आदि समान रूप से होने वाले व्यापार प्रेयरस के अनुभाव कहे गये है ।

सात्त्विक : समस्त सात्त्विक भाव ।

व्यभिचारी : उग्रता, त्रास व आलस्य के अतिरिक्त अन्य सभी व्यभिचारी प्रकट होते हैं ।

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे सख्य भाव को अभिव्यक्त करने वाले पद तो उपलब्ध होते हैं परतु सख्य का रस रूप में स्वतंत्र प्रस्फुटन नही हो सका है । सख्य भाव संबधी कुछ पदों की विवेचना भाव-चित्रण नामक पिछले अध्याय मे की जा चुकी है ।

गौण भक्ति रस

काव्य-शास्त्र मे मान्य अन्य रसों को कृष्ण भक्ति मे गौण भक्ति रस के अतर्गत माना गया है । चैतन्य सप्रदाय के रस विवेचको के अनुसार ये है—हास्य, अद्भुत, वीर, करुण, रौद्र, भयानक एवं वीभत्स । इनका अंतर्भाव मुख्य पाच रसों में किया जा सकता है । वस्तुतः ये सभी कृष्ण रति के एकत्व से ही संबद्ध, उसी के विस्तृत रूप एवं निवर्त है । अतएव परंपरा निर्वाह हेतु 'भक्ति रसामृत सिंधु' के उत्तर विभाग मे इन प्रसिद्ध रसों को गौण रसो की कोटि में स्थान देकर विवेचना की गयी है । इस संप्रदाय के रसाचार्यो की स्पष्ट एवं दृढ मान्यता यही है कि रसो की प्रधानता-अप्रधानता विभावादि सामग्री के अधीन होती है अतएव मुख्य भक्ति रस की अपेक्षा जहां गौण रस की सामग्री अल्प मात्रा मे उपलब्ध होती है वहां गौण रस व्यभिचारी भावना को प्राप्त होकर अपने से प्रबल मुख्य रस को पुष्ट करता

हुआ उसी मे लीन भी हो जाता है गौण रस भी हो पर मुख्य रस संपुष्ट होकर प्रधान भी हो सकता [illegible] काव्य मे प्रथम स्थिति ही परिलक्षित होती है अर्थात् इस काव्य की मूल चेतना माधुर्य भाव संपृक्त होने के कारण गौण रसो को रस रूप मे स्वतंत्र एव पूर्ण स्थान नहीं मिल सका है यद्यपि वे मुख्य रसो—मधुर व वात्सल्य के पोषक अवश्य रहे हैं। गौड़ीय आचार्यों द्वारा इन गौण रसों के विभावादि सभी उपकरणों की विवेचना की गयी है परंतु विस्तार-भय से यहा उन सबको नही लिया जा रहा है. ब्रजभाषा काव्य मे प्राप्त इन गौण रसों के कुछ उदाहरण दिये जा रहे हे जिनमे मुख्य रसो का पोषण हुआ है।

कृष्ण की बाल-विनोद भरी क्रीडाओं, गोपियो का उद्धव से व्यंग्य एव उपहास पूर्ण वार्तालाप में हास्य का पुट देखने को मिल जाता है जिनसे वात्सल्य एवं मधुर रस परिपुष्ट हुआ है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

> बैठत पूजा करन नद जब ध्यान लगावत।
> शालिग्राम उठाय कृष्ण मुख भीतर राखत ।।
> खोलत दृग पावत नही हेरत इत उत मूर्त्ति ।
> बिहसत मन मे नद जू निरखि श्याम कर तूल ।।[135]
>
> × × ×
>
> एक दिवस हरि गये भवन इक गोप वधू के।
> राख्यो माखन मैत प्रीति सों हरि हितु जाने ।।
> कहत सखा मणि खभ प्रति निज प्रतिबिंब निहारि ।
> आधो माखन देहु तोहि जन कहियो बलिहारि ।।
> हंसत गोपी दुरी ।।[136]
>
> × × ×
>
> ता ऊपर आपुन चढै जब हाथ न पावै।
> दुग्ध भड भेदन करै पीवत माथ डुलावै ।।
> ता औसर गृह देखन को हम सब जब आई।
> चल्यो पलाइ धर्यो मही तब करसि उपाई।।
> सन्मुख मुख भरि खीर छींट मेरे नैननि मेली।
> ठेलि गयौ गजराज ज्यों हू रही ठगी-सी अकेली।[137]

गोपियों से कृष्ण के मिलन, मधुर व्यंग्य विनोद एवं दानलीला आदि लीलाओं के प्रसंग में भी हास-परिहास के उदाहरण देखने को मिल जाते हैं जिनसे मधुर रस का पोषण हुआ है, इनके उदाहरण पिछले अध्याय मे माधुर्य भाव की विवेचना के अंतर्गत दिये जा चुके हैं।

अद्भुत रस का उदाहरण वात्सल्य के अतर्गत देखने को मिलता है। श्रीकृष्ण की कौतुकमयी क्रीड़ाएं अद्भुत रस का संचार करती है जिनसे यशोदा नंद का वात्सल्य भाव उल्लसित होता है। यथा—कृष्ण के मिट्टी खाने पर यशोदा उनको मुह खोलकर दिखाने को कहती है और वे अपना मुह खोलकर उसमे समस्त

ब्रह्मांड का दर्शन उनको कराते हैं। उस अद्भुत कौतुक को देखकर यशोदा चकित रह जाती है—

इक दिन संग के सखा कहत यसुदा पै आई।
मो देखत तेरो कान्ह आज है माटी खाई॥
लकुटी लै त्रासन चली कहत खोल मुख लाल।
खोल्यो मुख देख्यो तहां सप्त आकाश पताल॥
चकित रही मातु लखि॥[138]

व्यास जी के साधु-विरह संबंधी पदों में करुण रस प्रवाहित हुआ है। रामानंद, हितहरिवंश, रूप, सनातन, सूर आदि संत-भक्तों के विरह मे रचित पद करुणा से परिपूर्ण मर्मस्पर्शी है। इनमे हृदय की वेदना व्यक्त हुई है—

साधु-सिरोमनि रूप-सनातन।
× × ×
तिन बिनु 'व्यास' अनाथ भये, अब सेवत सूखे पातन।
× × ×
साचे साधु जु रामानंद।
× × ×
जिन बिनु जीवत मृतक भयें हम, सह्यौ विपति कौ फंद।
तिनु बिनु उर को सूल मिटै क्यों, जियै 'व्यास' अति मंद॥
× × ×
हतौ सुख रसिकनि कौ आधार।
बिनु हरिबंसहिं सरस रीति कौ, कापै चलि है भार।
× × ×
पद-रचना अब कापै ह्वै है, निरस भयौ संसार।
बड़ौ अभाग अनन्य सभा कौ, उठिगौ ठाठ-सिंगार॥[139]

वियोग शृंगार एवं वात्सल्य के सहायक रूप मे भी करुण अभिव्यक्त हुआ है। कृष्ण के वियोग मे राधा व गोपियों एवं यशोदा-नंद के दुःख की मार्मिक व्यंजना हुई है जिसका विवेचन पहले किया जा चुका है। इसमे करुण रस के उदाहरण देखने को मिल जाते हैं।

निम्न पद मे मधुर रस के साहचर्य (अंग) रूप मे वीर रस का निर्वाह हुआ है—

वक्षस्थल रण-खेत कंठ जल शंख बजावत।
भ्रू सारंग चढ़ाय कुटिल नयनन शर मारत॥
नाभि-चक्र, भुज गदा सम, मृदु मुसक्या कटारि।
लरत मनहुं नप मदन सों पंचायुध हरि धारि॥
कृष्ण तन मय भई[140]

आलोच्य कवियो का वर्ण्य विषय रौद्र भयानक व वीभत्स रस के अनुकूल न होने के कारण इनका स्वतंत्र रूप मे चित्रण नही मिलता, केवल प्रसंगानुकूल सीमित रूप मे, अन्य रसो के सहायक व पोषक बनकर ये रस अभिव्यक्त हुए है उदाहरणार्थ—

भयानक रस—

साकत देखे डरु लागत है, नाहर हू तें भारी।
भक्त हेत मम प्रान हनत है, नैंक न डरै मद्धारी ।।[151]

शात रस के प्रधानत्व मे वीभत्स रस (जुगुप्सा)—

जूठन जे न भक्त की खात।
तिनके मुख सूकर-कूकर के, अभखि-भखि पोषत गात।
जिनके बदन सदन नरकिन के, जे हरि-जननि घिनात।
काम बिबस कामिनि के पीवत, अधरन लार-चुचात।
भोजन पर माखी मूतति है, ताहू रुचि सों खात ।।[152]

इस प्रकार चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे गौण रसों का स्वतंत्र व प्रमुख रूप से प्रस्फुटन नही हुआ है बल्कि वे मधुर किंवा वात्सल्य रस के सहायक रूप मे आये है।

संदर्भ

१. भक्तिरसामृतसिंधु, २।५।६४
२. वही, २।५।६७
३. वही, ३।५।१
४. उज्ज्वल नीलमणि-रूप गोस्वामी कृत, स्थायीभाव प्रकरण।
५. वही, श्लोक स० ३७-४७, १५०-१६०।
६. वही, नायक भेद प्रकरण—श्लोक स० ७-१५
७ भ० र० सिं०, ३।५।४
८ उ० नी०, श्रीकृष्णबल्लभा प्रकरण, श्लोक स० २-१५
९. रस-चंद्रिका · हरिदेव जी कृत, दोहा स० १, पृ० स० १७
१०. वही, दोहा स० ३, ४, पृ० सं० १७
११ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद स० २४
१२. बल्लभ रसिक की वाणी, पृ० स० ६४, ६५
१३. किशोरीदास की वाणी, पद सं० ५, पृ० सं० ४३
१४ मधुर मिलन छं० स० ५७
१५ सूरदास मदनमोहन की वाणी पद १०६

१६. आदिवाणी—(पूर्वार्द्ध), रामराय कृत, पद सं० ७८
१७ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद १५
१८ किशोरीदास की वाणी, पृ० स० ४२, ४३
१९. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद १८
२०. आदिवाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय पद स० ३५
२१ मधुर मिलन—बांकेपिया, छं० स० ३७
२२. रस चन्द्रिका, छ० स० ११, पृ० स० ४५
२३. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद ३४
२४. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० सं० ६६
२५. किशोरीदास की वाणी, पृ० सं० ४३
२६ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद स० ९२
२७ वही, पद सं० ८९
२८. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० सं० २०, २१
२९ किशोरीदास की वाणी, पृ० ५३
३० व० र० वाणी, पृ० सं० ३२
३१. मधुर मिलन, छ० सं० ५७, पृ० १५
३२ 'साहित्य-दर्पण' मे २८ प्रकार के अलकार (अनुभाव) माने गए है जिनमें प्रस्तुत अलकारो के अतिरिक्त, मद, तपन, मौग्ध्य, विक्षेप कुतूहल, लसित, चकित, केलि—ये ८ स्वभावज अलकार और मान्य है।
३३. एतभाव-भूषाय भूषित राधा-अंग।
देखिले उछले कृष्णेर सुखाब्धि-तरग॥
'किलकिंचित्' भाव-भूषार शुन विवरण।
ये भूषाय भूषित हरे कृष्ण-मन॥
—चैतन्य चरितामृत, २।१४।१६४-१६६
३४. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० स० ९९
३५. गदाधर भट्ट की वाणी, प० सं० ६०
३६. वल्लभ रसिक की वाणी, दो० सं० १४, पृ० सं० २३
३७. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० सं० २९
३८. आदि वाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय, प० स० १०
३९. निकुज माधुरी छद्म—बांकेपिया कृत, पृ० सं० १-२
४०. शोभन पदावली—शोभन गोस्वामी कृत, पद स० ३, पृ० स० ३७
४१ रस चंद्रिका—दोहा सं० १०, पृ० सं० ५५
४२. भ० व्यास, वाणी—रास पंचाध्यायी, पृ० ४००, छ० ४
४३. शोभन पदावली, पद सं० ७, पृ० ३८
४४. मधुर मिलन—बांकेपिया, छं० ६०
४५ रस चन्द्रिका—हरिदेव पद २३, पृ० ५८

४६ भ० यास वाणी प० स० ६८३
४७ वही ६२२
४८ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद सं० ३०
४९ वल्लभ रसिक की वाणी, गी० २८, पृ० ५६
५० वही, पद ८, पृ० ५७
५१ शोभन पदावली, पद १६, पृ० २०
५२ प्रेमोद्दीपनी—बांकेपिया छ० ४, पृ० २
५३ पथिक मराल—बांकेपिया, छ० ५०, पृ० ११
५४ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद सं० ४२
५५ रस कलिका —ललित किशोरी कृत, नवा दल, पद सं० २५१
५६ प्रेम रस वाटिका --बांकेपिया प्रथम विटप—छ० २
५७ गदाधर भट्ट की वाणी, पद ४१
५८. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद ५३
५९. प्रेमोद्दीपनी—बांकेपिया, छ० ८, पृ० ४
६०. माधुरी वाणी, दान माधुरी—कवित्त ३१
६१. रसिक कर्णाभरण लीला—मनोहरराय, पृ० सं० १७
६२. पथिक मराल—बांकेपिया, छ० ३६-३७
६३ गदाधर भट्ट की वाणी, पद ३४
६४ वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ५६
६५ पथिक मराल, छ० ३८
६६. वही, छ० २१
६७. शोभन पदावली, पद ६, ७, पृ० ३८
६८. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद १२४
६९ उज्ज्वल नीलमणि, शृंगार भेद प्रकरण, श्लोक सं० २
७०. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद ३७
७१. वही, पद १८
७२. माधुरी वाणी, 'उत्कंठा माधुरी'—दोहा ४८, ७३
७३. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद २१
७४. वही, पद २३
७५. माधुरी वाणी—'उत्कंठा माधुरी'—दोहा २९
७६. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद ६१
७७. माधुरी वाणी, 'उत्कंठा माधुरी'—दोहा २५
७८. आदि वाणी—रामराय, पद ६०
७९ शोभन पदावली, कवित्त १, पृ० ४१
८०. वही, २, पृ० ४१
८१ मधुर मिलन—बांकेपिया, छ० ४२

८२ शोभन पदावली सो० २४ पृ० २१

८३ सूरदास मदनमोहन की वाणी पद ४६

८४ शोभन पदावली, क० ३१, पृ० २२

८५ रस कलिका—ललित किशोरी, चौथा दल—दो० ३३०

८६. मधुर मिलन, छ० ४०

८७ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद ८६

८८. उद्धव चरित्र—गो कृष्ण चेतन्य 'निज कवि', पृ० ५२२

८६. पथिक मराल—बाकेपिया, छ० ३३

६० प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, छ० २१, पृ० १०

६१. वही, छ० ११, पृ० ५

६२ वही, छ० २७, पृ० १०

६३. वही, छ० २४, पृ० ६

६४ मधुर मिलन, छ० ४३

६५. पथिक मराल, छ० ३८, ३६

६६. उज्ज्वल नीलमणि, सभोग प्रकरण, श्लोक सं० १

६७. शोभन पदावली, पद ४-७, पृ० ३८

६८. प्रेमरस वाटिका—बाकेपिया, वि० २, प० ६४

६६ सू० म० वाणी, पद ५४

१००. प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, छं० ३८, ३६, पृ० १५

१०१. मधुर मिलन—बाकेपिया, छ० ५०, ५१

१०२. आदि वाणी—रामराय, पद ६

१०३. भ० र० सि० ३।४।१

१०४. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद स० ६

१०५. रस कलिका, नवां दल, पद स० २

१०६. प्रेम रस वाटिका—बाकेपिया, वि० ३, पद सं० ३३

१०७. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद सं० ८

१०८. प्रेम रस वाटिका, वि० १, पद ६

१०६. किशोरीदास की वाणी, पृ० सं० २७

११०. वही, पृ० सं ३३

१११ प्रेम रस वाटिका—बाकेपिया, पद स० ७, पृ० स० ६

११२. मधुर मिलन, छ० स० २१, पृ० स० ७

११३. प्रेमोद्दीपनी, छ० स० ४, पृ० स० १७

११४. किशोरीदास की वाणी, पृ० स० २७

११५. मधुर मिलन—बाकेपिया, छ० सं० १८, पृ० ७

११६. प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, छ० १, पृ० १६

११७. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद स० ११४

११८ किशोरीदास की वाणी प० स० २६

११९ प्रेम रस वाटिका—वार्कपिया, पद स० ३२, पृ० ६९

१२०. भ० र० मि०, ३।२।३

१२१. गदाधर भट्ट की वाणी, पद स० १२

१२२. आदि वाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय, पद स० ८९

१२३ गदाधर भट्ट की वाणी, पद स० १८

१२४ आदि वाणी (पूर्वार्द्ध)—रामराय, पद स० ७९

१२५. किशोरीदास की वाणी, पृ० स० ४

१२६ ग० भ० वाणी, पद स० १०

१२७ वही, पद स० २६

१२८ भ० र० मि०, ३।१।४

१२९ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद २

१३० आदि वाणी (पूर्वार्द्ध), पद स० ८०

१३१. श्री किशोरी करुणा कटाक्ष—ललित लड़ैती, चेतावनी के पद—दोहा २४

१३२. श्री राधारमण पद मजरी, गल्लू जी (गुणमजरी) कृत—मगलाचरण—पद सं० १

१३३. गदाधर भट्ट की वाणी, पद स० ३

१३४. भ० र० मि०, ३।३।१

१३५ प्रेमोद्दीपनी—वार्कपिया, छ० १२, पृ० २०

१३६ वही, छ० २८, पृ० २५

१३७ माधवदास की वाणी—बाल लीला, दो० १२-१४, पृ० २

१३८. प्रेमोद्दीपनी, छ० २३, पृ० २४

१३९. भ० व्यास, वाणी, पृ० १९६, १९७, १९८

१४० प्रेमोद्दीपनी—वार्कपिया, छ० २६, पृ० १० एव द्रष्टव्य भ० व्यास, वाणी, प० ५८८, पृ० ३४८

१४१ भ० व्यास वाणी, प० २९१, पृ० २६४

१४२ वही, प० १५८, पृ० २३१

छठा अध्याय

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में कला-पक्ष

अनुभूति की सीमा से भाव जब अभिव्यक्ति के क्षेत्र में गति करता है तब उसे कला की अपेक्षा होती है। इसीलिए काव्य में भाव-पक्ष की प्रधानता के साथ कला-पक्ष की महत्ता भी कम नहीं होती। श्रेष्ठ कलाकार इन दोनों का अपूर्व सामंजस्य स्थापित कर देते है। परंतु अभिव्यक्तिपरक अतिशय सजगता से कवि जहां भाव-अनुभूति को गौण बनाकर कला-पक्ष को अपना साध्य बना लेते है, वहां काव्य का प्रभाव क्षीण हो जाता है। भक्ति-कालीन कवियों ने अपने काव्य में भाव-अनुभूति को प्रधानता दी है, कला-सौंदर्य उसमें स्वतः आ गया है, इसी से काव्य का प्रभाव भी अतिशय होता है। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में भी यही बात परिलक्षित होती है। भक्त कवियों का साध्य भक्ति-भावपरक पदावली की रचना करना रहा, इसी से उनका ध्यान काव्य के शिल्प को सजाने-सवारने की ओर अधिक केंद्रित नहीं हो सका, किंतु इस ओर विना किसी विशिष्ट सजगता के भी इनके काव्य में कलागत सौंदर्य किसी रूप में कम नहीं है।

भावों के चित्रण, अभिव्यंजन, आलेखन, रस-निरूपण में कला की जो सूक्ष्म गति है, उसका निदर्शन आवश्यकतानुसार भाव-पक्ष एवं रस-निरूपण के प्रसंग में कर दिया गया है. यहा पर कला-पक्ष के अन्य तत्वों—अलंकार-विधान, भाषा, शैली, छंद आदि का जो स्वरूप चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य के अंतर्गत मिलता है उसका स्वतंत्र रूप से विवेचन किया जा रहा है।

अलंकार-विधान

चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों की वृत्ति भाव-निरूपण की अपेक्षा अलंकरण गौण रही है इन भक्त-कवियों ने अपने काव्य में अलंकारों का प्रयोग केवल

चमत्कार-प्रदर्शन हेतु नहीं किया है. जहां उनकी भक्ति भावना आराध्य के प्रति अत्यन्त उत्कट होकर चमत्कृत हो उठी है वहां अलंकार भाव के साथ स्वतः संश्लिष्ट हो गये है और इस रूप में वे अलंकार भावों को अधिक संवेद्य बनाकर रसानुभूति में सहायक होने से काव्य के बाह्य साधन नहीं अपितु अंतरंग हो गये हैं। भक्त कवियों की चेतना राधा-कृष्ण के रूप-सौंदर्य से सर्वाधिक चमत्कृत हुई है, अतएव इसी प्रसंग में अलंकारों का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। शब्दालंकार एवं अर्थालंकार---दोनों सहज रूप में प्रयुक्त हुए हैं।

शब्दालंकार : इनमें अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश का अधिक प्रयोग हुआ है, यमक एवं श्लेष का प्रयोग कम है। जहां शब्दालंकारों का प्रयोग हुआ है, वहां चमत्कार तो उत्पन्न हुआ ही है, उससे भाषा में सजीवता एवं संगीतात्मकता का समावेश होने से भाव अधिक संवेद्य व कथ्य अधिक प्रभावोत्पादक बन गये हैं।

अनुप्रास : सभी कवियों की काव्य रचनाओं में अनुप्रास के उदाहरण मिल जाते है। अनुप्रास अपने कई भेदों में प्रयुक्त हुआ हैं। अनुप्रासिक चमत्कार में चैतन्य संप्रदाय के कवियों की वृत्ति कहीं-कहीं ऐसी रमी है कि पूरा पद सानुप्रासिक है। यह प्रवृत्ति ललित किशोर, शोभन गोस्वामी, वल्लभ रसिक, सूरदास मदनमोहन, के काव्य में विशेष रूप से विद्यमान है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

सूरदास मदनमोहन के पूरे पद में 'ट' के प्रयोग द्वारा अनुप्रास की अनुपम छटा है—

चटकीलौ पट, लपटानौ कटि,
बंसीबट---जमुना के तट, नागर नट।
मुकुट लटक और भृकुटी मटक देखि,
कुंडल की चटक सौं अटक दृगन भई,
चरन लपेटी आछी कंचन-लकुट॥
चटकीली बनमाल, कर गही द्रुम-डार,
ठाड़े है नवल लाल, छवि छाई घट-घट।
सूरदास मदनमोहन कों एकटक देखें गोपी ग्वाल,
टारे न टरत इत-उत, निपट-निकट आवै सौंधे की लपट॥[1]

—सूरदास मदन मोहन

जूट लटक छंदक चटकारे शिर घघरारे वार॥
ता पर माल मालती मधुकर करत गुंजार।
अलकन झलक तिलक ललकत चमकत श्रुति कुंडल युगगंड।[2]

—गदाधर भट्ट

दुरन मुरन उमगन मिलन सिमटन जुगुल विहार।
चुंबन की गोहन लगे करै आपने वार॥[3]

—ललित किशोरी

अरस परस अर वरष विनास रस दरस न दीन छीन निशानव रग मे।
नागर नवल गुण सागर विहार बार, वार वार परे ढरि उछरि उछंग मे।
हास परिहास के प्रकाश में सुवास अति हिये के हुलास सखी संग मे।
उठत तरत नाना रगन के अग अंग रसन की शशि होत मोहन की भंग में ॥[४]

—माधुरीदास

कुंद केतकी मालधर केशर कलित कपोल।
श्री कृष्णा जू के चरन प्रनति मु नैन सलोल ॥[५]

—रामराय

'रस कलिका' के रचयिता ललित किशोरी ने अनुप्रास का प्रयोग आद्योपा किया है। निम्न पद में अनुप्रास की छटा तो द्रष्टव्य है ही, साथ ही अनेक पुष्पो नामों की परिगणना भी की गयी है—

केवडा केतकी कासनी कामिनी कोयली कदम कलकुंद क्यारी।
मालती माधुरी मधुर मंदार मृदु मोतिया मदन बानादि डारी।
गैंदा गेंदी गुलाबाग गुलदावदी गुल सगुरहर गुलाचीन शोभा।
सावनी सेवती सोसनी सोनजुही सुभग सुरजमुखी सरस सोभा।
जाफरा जाफरी जोयजाही जुही नवल नरगिस नफरमां निवारी।
ललित लज्जावती लहिर लाले रहे चांदनी चूनिया चंप चारी।
हार सिगार गुलनार कचनार चहुं ओर रही चित चटकी चमेली।
विविध विपटन रही लपटि बहुं भाति की कुसुम कुसुमित ललित।
कलित बेली ॥[६]

ऐसे अनेक पदों की रचना ललित किशोरी ने की है जिनमें पूरे पद में अनुप्रास ा सरस, एव सुदर प्रयोग के साथ कही फलों, लताओं, वृक्षों अथवा पक्षियों के नाम गनाये गये है।

वल्लभरसिक ने सानुप्रास वर्णमत्री से युक्त शब्द-योजना के प्रति विशेष आग्रह दर्शित किया है। उनकी 'वाणी' में लकार के अत्यधिक प्रयोग (प्रायः संपूर्ण काव्य) और अनुप्रासो की मधुर मंद ध्वनि ने काव्य को सरसता प्रदान की है। एक दाहरण प्रस्तुत है—

लोचन विशाल करै कानन सो ख्याल लाल अधर रसाल मनो पल्लव
रसाल को ॥
लाल दशन सिवार बार सार बार कहा राजत जंगाल रग कंचुकि के
जाल कों।
मरे जान विधि हूं बनायो हाल वल्लभ रसिक लाल पुण्य जाल ही सों
रूप बाल को ॥[७]

अलंकरण की प्रवृत्ति शोभन गोस्वामी मे विशिष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

अनुप्रास के अतिरिक्त अन्य अलकारो का प्रयोग भी इनके काव्य म प्रचुरता स किया गया है। कही-कही अलंकारों का आग्रह भावाभिव्यक्ति मे भी प्रधान हो गया है परंतु अन्य स्थलों पर अलंकारो के सहज प्रयोग से भाव-सौंदर्य में वृद्धि हुई है। समस्त पद मे अनुप्रास प्रयुक्त हुआ है—

कर कजन कंचन ककन है कुच कुभन कंचुकी कामिन के।
कच कोमल केल कपोलन पै करै कौन सह सके भामिन के।
कल किंकिणि कूजन सो कटि में कछु कानन कांति गुहामिन के।
कलकठ पै कबु से वार दिये कवि सोभन कीरत दामिन के॥[8]

व्यास जी के रास के पदो मे अनुप्रास का प्रयोग अधिक हुआ है।

पुनरुक्ति प्रकाश : इसका प्रयोग कही चमत्कारप्रियता के कारण हुआ है, कही यह अलकार भावनाओ की प्रबलता का अभिव्यजक भी बना है तथा कही संगीतात्मकता व मधुरता के लिए प्रयुक्त हुआ है। पुनरुक्ति प्रकाश का प्रयोग वल्लभ रसिक एवं शोभन गोस्वामी ने अत्यन्त सहजता एव प्रचुरता से किया है। माधुरी जी के काव्य मे भी इस अलकार के माध्यम से भावो की प्रबल व्यजना हुई है। किशोरीदास ने इसका प्रयोग प्रमुखतया संगीतात्मकता के लिए किया है। चैतन्य संप्रदाय के कवियों द्वारा प्रयुक्त पुनरुक्ति प्रकाश के कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

झूम झूम रुम रुम घुम घुम घिर घिर
× × ×
घुमड़ घुमड़ घटा आई सरसाई है।
घड़ी घड़ी झड़ी सी लड़ी सी परै भूमि माझ,
घूम सी पड़ी है हरि धनुष धुआई है।[9]
× × ×

शोभन गोस्वामी

आई ऋतु सरद सुहाई विमलाई छाई,
छाई नभ भूतल गृतल तल ताल में।
अलि कुल राजे कुज कुजन मे गुज गुज,
पुज पुज कुसुम समूहन के जाल में।
शोभन भनत नव खजन चकोरन की,
नीकी पांति भांति भांति सोभित मराल मे।
विधि मुखी ख्यालन मे गधित तमालन में,
वालन मे राजित विहारी वनमाल मे॥[10]

—शोभन गोस्वामी

रुकि रुकि रही जु नवल तिय धुकि धुकि पलकं माहि।
लुकि लुकि देखें लाल को भुकि भुकि झटक व है
× × ×

छूटि छूटि अंचल गये छूटि टूटि गय हार।
लूटि लूटि छबि पिय छके घूंटि घूंटि रस सार ।।
दरकि दरकि चोली तनी तरकि तरकि गई टूटि।
सरकि सरकि तनमन मिले ढरकि ढरकि रस लूटि ।।[12]

—वल्लभ रसिक

होड़ा-होड़ी नृत्य करैं रीझि-रीझि अंक भरैं,
ततथेई ततथेई रटति मन मगन।
'सूरदास मदनमोहन' रास-मंडल में प्यारी कौ,
अंचल लै-लैं पोंछती है श्रम-कन ।।[13]

—सूरदास मदनमोहन

हों वारी बृजचंद्र आंगन खेलौ पायनि पायनि।
रुनझुन रुनझुन नूपुर बाजै इनके चाय निवांयनि ।।
सुंदर श्याम केस घुघरारे देखो आयनि आंयनि।
किशोरीदास जननी हुलरावत सोहिले गांयनि गायनि ।।[14]

—किशोरीदास

कहि कहि काहि सुनाइए, सहि सहि उपजै शूल।
रहि रहि जिय ऐसे जरैं, दहि दहि उठैं दुकूल ।।[15]

× × ×

बार बार रीझि रीझि कहत बिहारीलाल देखिए निहारी
प्रिये शोभा बंशीवट की।
झलकत जल में झलकि नाना भांतिन की झूमि झूमि डारे
सब धरनि सों लटकीं ।।[16]

—माधुरीदास

लटकि लटकि जात ठठकि ठठकि रहे,
अटकि अटकि मौज मेन सिर ताज है।।
बादर आलहरियां झूमि महामत्त घूमि घूमि,
डारत फुहारें मानों फुही गज राज है।[17]

—मनोहरदास

वल्लभ रसिक के निम्न पद में 'छ' वर्ण की आवृत्तिमूलक अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार का एक साथ सरस एवं सुंदर प्रयोग हुआ है—

सोंधे सनी बनी चोली ते छनि छनि छवि की छटा छबीली
छुवत छैल छलक्यो अनुराग।
छलकि छलकि छलि छलि रति पति की छकनि छके लखि
छिपि छिपि छिन छिन वल्लभ रसिक सखि चखभाग ।।[18]

यमक वल्लभ रसिक एवं शोभन गोस्वामी ने यमक का विशेष प्रयोग किया है अन्य कवियों में कम हुआ है इनके काव्य में यमक के प्रयोग से रचना की

अलंकृति के साथ भाव-व्यंजना प्रबल हुई है वहीं कुछ स्थलों पर भाषा में दुरूहता भी आ गयी है। प्रायः वल्लभ रसिक की रचना में 'मांझी' का एक लम्बा पद है (२३८ पंक्तियों का) जिसमें प्रायः पूरे पद में यमक एवं अनुप्रास की अद्भुत छटा दिखलायी देती है, उसके कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत है—

सजि सिंगार बैठी ही चोकी चौकी चोकी प्रीति।
जो परिवारी तो परिबारी फुलबारी नलि नीति॥
भूषन छौंनी मद गज गौनी धरि स्याम सलौनी नाम।
ललिता रस सलिता हित बनिता ल्याई पूरन काम॥
भोरी गोरी यों कह्यौ को धोंरी तेरे संग।
सोतन निरखति हरखति परखति बरखि श्याम घन रंग।
कहि ललिता यह साझी चीतनि रीतिनि नीतिनि जोर।
गीतनि सों जीतनि जीतनि प्रीतिनि सों ल्याई रहि ओर।

× × ×

मोरनि लगीया अंगिया लगिया को पिया कोहिया भयो बोर।
धर्यो मोरि मरोरि करोरी रसिक बर मोर मरोरत मोर॥
मुहरा कैंचुकि मुहरा धरि जुहरावे बुधि बल मीन केत।
पिय मन सूबन टुहरावै मुहरा तन मुहरा जेहेत॥
चली खेलि फूल ले लटकति मटकति अटकति साझी रंग।
नवल लालसी अवला लसी नवला सी फेरी संग॥[19]

अन्य कवियों द्वारा प्रयुक्त यमक के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

फूल में फूल अति फूल बाते करे।
रामराय प्रभु फूल में निरखि जोहै॥[20]

—रामराय

मधुसूदन भगवान् तनु, 'मधुसूदन'—पद आश।
देत सुरस रस भक्ति मधु, सूदन करि अघराशि॥[21]

—बाकेंगिरा

मन हरि को तब हरि लियौ, परी प्रेम की पास॥[22]

—सूरदास मदनमोहन

शोभन गोस्वामी के काव्य में यमक के साथ अनुप्रास की छटा द्रष्टव्य है—

कोमल कमल कुल विमल गुलाब दल,
गुल मखमल भल नैंक ना दिखाती है।
विद्रुम गुलाल जवा जावक सुलाल पुनि
नूतन तमाल दल दुति दूरि जाती है

शोभन भनत चख लख नख कोरन कौं
ससि की मयूख सूख सूख गड़ जाती है।
जन सुख कारी तन मन धन हारी नव,
नवल किशोरी पद मद कद जाती है ॥[२३]

× × ×

अंजन सौं रजन से खंजन समान नैन,
बैन सुन मैन हू लजाय होय रूठौ सौ।[२४]

श्लेष : श्लेष का प्रयोग बिरल है। राधा-कृष्ण की व्यग्य विनोद पूर्ण वार्त्ता के प्रसग मे श्लेष वक्रोक्ति का प्रयोग मिल जाता है। श्लेष का निम्न उदाहरण प्रस्तुत है—

ऊधो जू या रोग के जोग न औषध और।
बिना सुदरसन ना मिटै विरह विषम जुर घोर।[२५]
—कृष्ण चैतन्य

अर्थालंकार : अर्थ को अलंकृत करने के लिए कवियों ने सादृश्यमूलक अलकारो का प्रचुर व अत्यंत सुदर प्रयोग किया है यद्यपि अन्य प्रकार के अलकारों को भी स्थान मिला है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का यह कथन कि 'सूरदास जब अपने प्रिय विषय का वर्णन शुरू करते है तो मानों अलकार शास्त्र हाथ जोड़कर उनके पीछे-पीछे दौड़ा करता है। उपमाओ की बाढ आ जाती है, रूपकों की वर्षा होने लगती है...'[२६] चैतन्य सप्रदाय के कवियो पर भी लागू होता है। इनके काव्य मे भी उपमा, रूपक एव उत्प्रेक्षा की प्रधानता है। राधा-कृष्ण व चैतन्य महाप्रभु के रूप-सौदर्य के वर्णन में इन अलंकारों का सहज सौदर्य व वैभव दिखायी पड़ता है।

उपमा : परंपरागत उपमानों—कमल, खंजन, मीन, चंद्रमा, कदली-खभ, गज, पिक, व्याल आदि के अतिरिक्त अभिनव एवं मौलिक उपमाएं भी दी गयी है। इन उपमाओं के सहज प्रयोग ने विशेष आकर्षण उत्पन्न किया है। सूरदास मदन-मोहन उपमा के क्षेत्र मे मौलिक उद्भावनाए की है, उदाहरणार्थ—

जब जाय मिलि लपटाने हरि हियौ भरि,
जैसे फिरि परसैं रहति कांसै की ठनक।[२७]

× × ×

मोहन लाल के संग ललना ज्यौं सोटैं,
जैसे तरुण तमाल के ढिग फूल सौनो जरद कौ।
बदन काति अनूप भांति नहि समात, नीलाम्बर-
गगन में जैसौ प्रकट्यौ है ससि सरद कौ॥
मुक्ता आभूषण प्रतिबिंबित, अंग-अंग,
चूनौ मिलि रंग दूनौ होत जैसे हरद कौ॥[२८]

× × ×

सूरदास मदनमोहन' ललफत जैसे चातक मीन
माघ की मध्य रात, जग ज० दुपहैरी ॥[29]
—सूरदास मदनमोहन

कवियो द्वारा प्रयुक्त उपमाओं का उल्लेख राधा-कृष्ण के रूप-माधुर्य-वर्णन के प्रसंग मे पहले किया जा चुका है अत. यहा कुछ उदाहरण ही प्रस्तुत किये जा रहे है—

राजति मयद चाल बाजत किंकिणि जाल भ्राजत है
बिंदु लाल ८द, गम भाल को।
लोचन विशाल करै कानन सो ख्याल लाल अधर रसाल मनो
पल्लव रसाल को ॥
लाल दशन सिवार बार मार बार कहा राजत जगाल रंग
कचुकि के जाल को।
मेरे जान विधि हू बनायो हाग वल्लभ रसिक लाल पुण्य
जाल ही सों रूप बाल को ॥[30]
—वल्लभ रसिक

माधुरी लता मे अति मधुर विलासन की,
मधुकर आनि लपटानी सब सखियां।
दुलहिन दुलहू के फूल के विलास कछु,
वास लै-लै जीवति है जैसे मधु-मखियां।[31]
—माधुरीदास

कबु कंठ कचन के कलस समान कुच
सुंदर उदर नाभि बापी जों बसी सी है।
रंभा सम जघा युग पाद पद्म मृदु अति
गति है प्रसम राजहंस सी लसी सी है॥[32]
—गोपाल गोस्वामी

बैठि कहा कविता सी करौ सुधि है कछु गावर के तन की।[33]
—माधुरीदास

ललित किशोरी के निम्न पद मे वृक्ष की उपमा विभिन्न आभूषणों से दी गयी है—

कहुं कहुं द्रुम मुतिया लगे, कहुं चुन्नी रतनार।
कहुं कुंडल कहुं झूमका, वृंदावन तरु डार॥
लगे लगाये घुंघरू, नूपुर कहूं लगाय।
वृंदावन में द्रुमन द्रुम, भूषन सब कलियाय ॥[34]

चैतन्य सप्रदाय के कवियो द्वारा प्रयुक्त उपमाओ मे विविधता एवं व्यापकता है। कवियों ने अपनी कल्पना व अनुभूति के आधार पर वस्तु के रूप, गुण, भाव

और स्वभाव के अनुरूप उपमानों का कुशलतापूर्वक सुदर चयन किया है।

रूपक : रूपक अलंकार का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। इस सम्प्रदाय के कवियों के रूपको की रचना सहज, सुदर तथा परंपरागत उपमानो पर आश्रित है। कुछ मौलिक कल्पनाएं भी की गयी है। रूपको की रचना स्थल-स्थल पर देखने को मिल जाती है। साधारण रूपकों के अतिरिक्त रूपक के अंग-प्रत्यगों सहित प्रयोग मे सागरूपको का विशेष आग्रह मिलता है। कवियों ने सांगरूपको की योजना प्रचुरता से एवं विस्तृत रूप से करके अद्भुत कौशल का परिचय दिया है। इनमे कुछेक अतिविस्तृत सांगरूपको मे नीरसता एव दुरूहता आ गयी है, किंतु उन्हे छोडकर शेष मे भाव एवं कल्पना का अपूर्व सयोग है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

नमो नमो जय श्री गोविद।
आनद मय व्रज सरस सरोवर, प्रगटित विमल नील अरविंद।
जसुमति नीर नेह नित पोषित, नव-नव ललित लाड़ सुखकद।
व्रजपति तरनि प्रताप प्रफुल्लित, प्रसरित सुजस सुवास अमद।।
सहचर जाल मराल सग रग, रसभरि नित खेलत सानद।
अलि गोपीजन नैन गदाधर, सादर पिवत रूप मकरद।।[35]

—गदाधर भट्ट

वरसाने वर सरोवर प्रगट्यौ अद्भुत कमल।
वृषभान किरन प्रकास पोष्यौ हेत प्रफुलित,
सदा ही यह सरस सुदर अमल।।
सखी चहुंदिसि केसर-दल करनिका,
आकार राजति राधिका जस धवल।
श्री 'सूरदास मदनमोहन' पीय,
नव-मकरंद हित सदा अति नलिन अलि।।[36]

—सूरदास मदनमोहन

रूप सिंधु नाभी भंवर, जल पीयूष उमंग।
पैरत प्यारी लाल लख, छवि की उठत तरंग।।

× × ×

गौर श्याम विव लतानव, प्रीति बगीची आंहि।
नैन कटार कटाक्ष जल, तिहि कर सीचे जांहि।।[37]

× × ×

—ललित किशोरी

दुर्लभ गौर उपासना, ध्यान कंटीले नैन।
मन सूर-सो समर नित श्रीवृदावन अैन।।[38]

—ललित किशोरी

माली नव मदन तरुनी तन आलबाल,
अतन जुगति सों जोबन बीज बोयौ है।
उपज्यौ है अंकुर सनेह को सरस अति,
सुरति के मेह सों सुनित सरसायौ है।
मूल प्रतिकूलता सुमन फूल फूलि रह्यौ,
हाव भाव पल्लव सघन छाह छायौ है।
मधुर ते मधुर लग्यौ है एक मान फल,
सोई जाने सुख जिन लोभी रस लयौ है।[३९]

—माधुरीदास

व्यास जी ने राधा के नेत्रों को नट का रूप प्रदान करते हुए उनकी प्रत्येक क्रीड़ा का सांगोपांग चित्रण किया है—

नटवा नैन सुधंग दिखावत।
चंचल पलक सबद उघटत है, थ्र थ्र तत् थई थेई कल गावत।
तारे तरल तिरप गति मिलवत, गोलक सुलप दिखावत।
उरप भेद भ्रू-भंग संग मिलि, रतिपति कुलनि लजावत।
अभिनय निपुन सैन सर ऐननि, निसि बासिद बरषावत।
गुनगन रूप अनूप, ब्यास प्रभु निरखि परम सुख पावत।[४०]

उत्प्रेक्षा : रूप वर्णन के प्रसंग में उपमा की भांति उत्प्रेक्षाओं की भी झड़ी लगा दी गयी है। विशेषतः नख-शिख वर्णन में उत्प्रेक्षा का प्रचुर प्रयोग किया गया है। चैतन्य सम्प्रदाय के प्रायः सभी कवियों ने उत्प्रेक्षा का प्रयोग किया है। इन कवियों द्वारा प्रयुक्त उत्प्रेक्षा के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं जिनमें इनकी कल्पना एवं अनुभूति की क्षमता का सम्यक् परिचय प्राप्त होता है—

लाडिली गिरधरन प्रिया पिय नैननि आनंद देतिरी।

× × ×

हसन लसन अधरन अरुनाई अति छबि बढ़ी अपार री।।
मनहु रसाल मृदुल पल्लव पर बगरायो घनसार री।।
रचि अवतंस रसाल मजरी फबी कपोल सुआर री।
मानहुं मैन मूर बैठ्यौ करि हरि मन मृग की घात री।।
खुटिला खभी जराइ जगमगत मोपै जात न भाखि री।
मनहुं मार हथियार अपाने एक ठौर धरि राखिरी।।
कंठ कपोत पोत पुंजनि में मनि-मनिआं रंग रातेरी।
मानहुं उतरि धरनि सुत यमुना नीर अन्हातेरी।।[४१]

—गदाधर भट्ट

कालिंदी को जल किधौं जग मगि रह्यो अनूप
क ~~ रस को मना राजत परम सरूप

जगमगाय रहि पुलिन अति, कोटि मानकी कांति।
विकसि रह्यो वासर मनौ, निशा न जानी जात ॥[४२]

—माधुरीदास

उदर सुभग सौंदर्य निधि फूल्यौ बाग अनूप।
तामे जल सींचत मनो नाभि सुधा रस कूप ॥
कोमल रोमावलि उदर शोभा देत अपार।
कालिंदी की लहर पै मानो लसत संवार ॥[४३]

—ललित लडैती

ब्रज वधू मानौ ध्वजा वसन हरि रही तन फहरात।
'सूरदास मदनमोहन' पिय पाछै चले जात ॥[४४]

—सूरदास मदनमोहन

गौर स्याम सुंदर मुख देखत मेरे नैन ठगे।
मानहुं चंद-किरन मधु पीवत, राति चकोर जगे।
सरद कमल मकरंद स्वाद रस, जनु अलिराज खगे।
निरखत हास-विलास-मधुरता, लालच पल न लगे ॥[४५]

—व्यास

इस प्रकार इन ब्रजभाषा कवियों ने उत्प्रेक्षण द्वारा अद्भुत वैभव, अलंकृति-सूक्ष्मता, संश्लिष्टता, कोमलता, कल्पनात्मकता एवं उक्ति वैचित्र्य का विशेष परिचय दिया है।

रूपकातिशयोक्ति : केवल उपमानो के उल्लेख द्वारा राधा-कृष्ण के युगल स्वरूप का चित्र—

आवत सखि चंदा साथ अँध्यारी।
घन-दामिनी, चकोर-चातिक मिलि, मोरती राका प्यारी ॥
गज, मराल, केहरि, कदली, सर, बक, चकवा, सुक सारी।
खंजन, मीन, मकर, कच्छप, मृग, मधुप, भुजंगिनि कारी ॥
कमल-मृनाल, लाल-मनि, मुक्ता, हीरा सरसु पवारी।
'व्यास' स्वामिनी की सुख-संपति, लूटत कुंज बिहारी ॥[४६]

—व्यास

प्रतीप : रूप वर्णन में इसका प्रयोग हुआ है। आराध्य के रूप-सौदर्य के समक्ष सभी उपमान तुच्छ लगते है।

प्यारी तेरौ बदन देखि लाजै कोटि शरद के चंदा
तासौ मेरौ मन चकोर।[४७]

—रामराय

चंद बदन मुख सदन पै कोटिक मदन लजात[४८]

—ललित लडैती

कहा मृग मीन कारे खंजन बिचारे हारे
श्यामता भए हैं तन तम दिन चारे री।[49]

— सोभन गोस्वामी

मतवारे नैनान की, उपमा को कछु नाहि।
अलिसुत खंजन कंजहू, तिहु सम कहे न जाहि।।[50]

— ललित किशोरी

व्यतिरेक—

चौकी की चमकनि के आगे, दामिनि भई कुचैनी।
बसि पताल व्याल नहि आवत, जानि मन्यारी बैनी।।[51]

—व्यास

संदेह : रूप के संभ्रम में, कल्पित विविध रूप-छायाओं तथा भाव-व्यंजक उपमानों में संदेह का प्रयोग हुआ है यथा—

तार है कि वार है कि बानी की सी धार है कि
शोभित सिवार कहा होत मन धोखो सो।
रति पति मार है कि राजत तुषार है कि
प्रतिपद संभार कहा राखो शशि चोखो सो।
सोभन भनत त्यों लुकंजन अपार है कि
बुद्धि को प्रचार चारु होत नहि सोखो सो।।[52]

—सोभन गोस्वामी

कै कपूर की धूरि है, किधों चंद को चूर।
सरस सरोवर मे किधो, करे सुधा घन पूर।।[53]

—माधुरीदास

किधौ कनक नवबेलि पुरट पकज वन संका।
कै खेलन औतर्यौ आजु अकलंक मयंका।
पीत चवेली विपिन किधौं बिज्जुल की माला।
चंपक कानन किधौं करत जंगम है ज्वाला।[54]

—मनोहरदास

भ्रांतिमान : विरह के प्रसंग में चित्त की विभ्रम अवस्था में इसका प्रयोग हुआ है—

उच्च स्वरन क्रंदन करत तन की दशा बिसारि।
तब छवि नयनन मे बसी भ्रमवश तिमिर निहारि।
सो आलिंगन करत।।[55]

—चाकेपिया

कृष्ण के रूप-वर्णन के प्रसंग में भ्रांतिमान—

भँवरन को संभ्रम करि भँवरिन, भेंटत अलकनि आइ।
खेलत नैननि सों खंजन, भुव धनुषहिं रहै उराइ॥
दार्‌यौ दसन जानि सुकदाता, भँवरनि बाँधि अकुलाइ।
अधर सुधाकर मानि चकोरी, दुख मेटत सुख पाइ॥[५६]

अनन्वय—

चंद लंछनी अंबुविष रवि में आतप छाय,
पिय आनन सम आन नहिं आनन ही है हाय॥[५७]

—कृष्ण चैतन्य

अनन्वय के साथ प्रतीप का भी प्रयोग—

तन सो—है सैतसारी, फीकी लागै—
उजियारी, तोसी तुही वृषभानु दुलारी॥[५८]

—सूरदास मदनमोहन

अतिशयोक्ति विरह के प्रसंग में इसका प्रयोग हुआ है—

लटक लटक नाचहिं सिखी मेघ कटक घुघकार।
त्यों त्यों चटक चटक परत बिरहिन मुक्ताहार॥[५९]

—कृष्ण चैतन्य

ताप देत सखि बिनु प्रीतम अंग शीतल चंदन।
लाल अंगारा सो लागत सखि माथे वंदन॥
पत्रावली कपोल पै, पत्र आक सम जान।
सैंदुर माग सुहाग की, ज्येष्ठ मास को भानु॥
सहित द्वादश कला॥
पुष्प भार सम लगत, अलक जिम नागिनि कारी।
अंग अंग आभरण लगत, पाहन सम भारी॥[६०]

— बांकेपिया

उदाहरण : काव्य को प्रभावपूर्ण, सशक्त एवं सुंदर बनाने के लिए उदाहरण एवं दृष्टांत अलंकार का प्रयोग किया गया है। जैसे—

जैसे पकरत मृग बधिक, मोहिनि बेणु सुनाय।
तैसेइ युवतिन मन हर्‌यौ, मुरली मधुर बजाय॥[६१]

दृष्टान्त—

जुगुन विहार के रूप में तुले न अज्ञान
रैन प्रकासानंद जग सूरज सामर्थ म॰ [६२]

उल्लेख

मोहनी को मोहन प्यारो।
आनंद कंद सदा वृंदावन, कोटि चंद उजियारो।
ब्रजवासिन के प्रान जीवनि धन, गोधन को रखवारो।।
नंद-जसोदा को कुल मंडन, दुष्टनि मारन वारो।।[६३]

—व्यास

विशेषोक्ति—

अहो मोह कैसी करै नहीं विरह को थाह।
डूबी नेह प्रवाह में तब हूं दाहत दाह।।[६४]

—कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि

विभावना—

हियो छहै दृग वहै पिय चलै रहै ना पास।
बिना मरन जीवन मरन नेह अनोखी आस।।[६५]

—कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि

तद्गुण—

हीर हार प्यारी हिये, निरखत प्यारो लाल।
प्रतिबिंबित छवि सों भई, नीलमणिन की माल।।[६६]

—ललित किशोरी

स्मरण : स्मरण के साथ प्रतीप भी प्रयुक्त—

हे मराल तव चाल लखि, लज्जित मत्त गयंद।
मोहिं करावत स्मरण, मद चलन ब्रजचंद।।[६७]

—बांकेपिया

विरोधाभास—

उत भूले सुधि लेत ना इत भूले न भुलात।
भूलेहू सुधि करौ तौ बेसुधि सुधि ह्वै जात।।[६८]

—कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि

× × ×

निपट अटपटी रीति ये लगनि अगिनि की आंहि।
दूरि भए हीयें जरै लपटनि हिये शिरांहि।।[६९]

—वल्लभ रसिक

परिकर—

इती अनीत मती करो मीत अमीत मिलाय।
जीवन घन घनस्याम है प्यासी मारत जाय।।[७०]

चैतन्य

मीलित

खोरि साकरी छैल छबीलो अंचल पकर्यौ धाइ।
तैसी निसि अँधियारी, तैसोई स्याम, न जान्यौ जाइ ॥[७१]

—व्यास

यथासंख्य—

कमल चकोर चंचरीक चातकी की चाह।
जाने कहा रवि चंद कंज घन हाय हाय ॥[७२]

—कृष्ण चैतन्य 'निज' कवि

इस प्रकार विविध अलंकारों के प्रयोग द्वारा चैतन्य संप्रदाय के कवियों ने जहा अपने काव्य को सुदरता से अलकृत किया है, वहीं कथ्य को अधिक प्रभावशाली बनाकर अर्थवत्ता, गरिमा एवं सौष्ठव प्रदान किया है।

शब्दों का ध्वन्यात्मक प्रयोग—

चैतन्य सप्रदायी कवियों ने प्रसंगानुकूल शब्दो का ध्वन्यात्मक प्रयोग कर अपने काव्य में भाव-वृद्धि की है, वही नाद-सौदर्य भी उत्पन्न किया है। ध्वनि की अनुकरणात्मकता के आधार पर शब्दों का प्रयोग इस प्रकार से किया गया है कि ऐसा अनुभव होता है मानो शब्द स्वयं बोल रहे हो। वातावरण की सजीवता, सगीतात्मकता एवं चित्रात्मकता के विशिष्ट गुण इनके पदों मे विद्यमान है। कुछ उदाहरण इसके प्रमाण हैं

देखोरी रुनक झुनक पैजनी पग, डगमगी चाल ॥[७३]

—सूरदास मदनमोहन

घनन घनन घंटिका रटित कटि सुदर सुखद सुताल।
खनन खनन नूपुर श्रृंखल से बाजत लजत मराल।[७४]

× × ×

तब चली चरण मथर बिहार। रन झनन झनन नूपुर झंकार॥[७५]

—गदाधर भट्ट

राधा प्यारी जू की झूलन रंग करैं।
रमकनि रमकनि चलन हिंडोरे की लैत है मनहि हरैं॥[७६]

× × ×

—किशोरीदास

हों वारी ब्रजचंद आंगन खेलौ पायनि पायनि।
रुनझुन-रुनझुन नूपुर बाजै इनकै चांय निवायनि॥[७७]
सुवरण वरण हजार चुनावट बेलि बुनावट गति की।
गुल अनार नीमा सीमा में झलमल झलमल अति की॥[७८]

—वल्लभ रसिक

गाय गाय दामिनी दिखान [illegible] दमि
दुखिया दुखिन [illegible] दुरा पाय पाय।
छाग छाग छाजन छबीली छिन छाजन पै,
छाजन छलाल लाल छवि सों सु गाय गाय।
साय सांय शोभन समीर चले सोय सांय,
गाई सुभ्र लूटन भवानी निविटाय टाय।
झाय झाय झरना झागाक झरे झूम झूम,
झरन झटान से [illegible] झुमकाय काय।।
पिइ० पिइ० करके पपैया पिय काढि लेत,
नैन छिन देति साय पापी पिक गाने सै।।[५६]

—शोभन गोस्वामी

भाषा

भाषा भावाभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है, अतएव काव्य में भाषा का महत्त्व असंदिग्ध है। सुंदर, गंभीर एवं उदात्त भाव होने पर भी यदि भाषा शिथिल एवं असमर्थ है तो भाव प्रभावहीन एवं निर्जीव हो जाते हैं। इसके विपरीत सशक्त एवं समर्थ भाषा साधारण भाव में भी विलक्षणता एवं प्रभावशीलता उत्पन्न कर देती है। अत: रचना की श्रेष्ठता का आधार भाव एवं भाषा का उचित संतुलन, समायोजन एवं श्रेष्ठ समन्वय है। इस सामंजस्य का निर्वाह चैतन्य संप्रदायी ब्रजभाषा काव्य में भली प्रकार से किया गया है। कवियों ने भाव-गांभीर्य एवं माधुर्य के साथ भाषागत सौंदर्य प्रभविष्णुता एवं उदात्तता का भी ध्यान रखा है।

चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य में यद्यपि प्रमुख रूप में साम्राज्य ब्रजभाषा का है तथापि कवियों द्वारा भाव, विचार एवं प्रसंग के अनुकूल भाषा प्रयुक्त होने के कारण भाषा का स्वरूप विभिन्न रहा है तथा अन्य भाषाओं के शब्दों के समावेश से भी इस काव्य का भाषागत क्षेत्र संकुचित न रहकर विस्तृत हो गया है। इसीलिए कहीं शुद्ध संस्कृतनिष्ठ भाषा देखने को मिलती है और कहीं सरल बोलचाल की मिश्रित भाषा—जिसमें पंजाबी, उर्दू, गुजराती, बंगला आदि भाषाओं के शब्दों को भी अपनाया गया है। किसी भी भाषा की सशक्तता एवं सामर्थ्य का बहुत बड़ा आधार शब्द-भंडार होता है, यहाँ इस संप्रदाय के कवियों द्वारा प्रयुक्त भाषा के विभिन्न स्वरूपों एवं शब्द-भंडार का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा ब्रजभाषा कवियों में अनेक संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे। इनमें से कुछ ने तो संस्कृत में काव्य रचना भी की है। अत: इनकी ब्रजभाषा रचनाओं पर भी संस्कृत का प्रभाव एवं प्रयोग स्वाभाविक है। कुछ ब्रजभाषा काव्य-रचनाओं में संस्कृत के श्लोक उपलब्ध हैं। गदाधर भट्ट की वाणी में कुछ संस्कृत के पद समाविष्ट हैं और कुछ पदों पर संस्कृत का पूर्ण प्रभाव है यथा—

सुभग नव सुजल जलदाभजलपूरा।
निखिल कलिकलुषौघनिर्द्दलन शूरा ।।
धर्म्मधन कामादिकामित विधायिनी।
तीरभुवितनुमुचे परमपददायिनी ।।[८०]

तथा—

गजराज धीरगति मृगराज विक्रमी रसराज रसरसिक वनविहारी।
भक्तजन भयहरन चरन अशरणशरण सकल सुखकरण दुख दोष-हारी ।।[८१]

संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा का प्रयोग अधिकतर वंदना-स्तुतिपरक पदों में एव सिद्धांत निरूपण के प्रसग में किया गया है, जो गभीर प्रसंग एवं विचार-दर्शन के सर्वथा अनुकूल गभीर एवं उदात्त भाषा है। इस रूप में अनेक कवियों के काव्य मे मगलाचरण, स्तुतियों एवं आराध्य के माहात्म्य-वर्णन के प्रसंगों तथा अन्य स्थलो पर भी संस्कृत गर्भित ब्रजभाषा का प्रयोग देखने को मिल जाता है। संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा का विशिष्ट रूप से प्रयोग करने वाले कवियों में गौरगणदास, वल्लभ रसिक, शोभन गोस्वामी; वृंदावनचंद्र एव मनोहरराय के नाम उल्लेखनीय हैं। इनकी काव्य-रचनाओं में से कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

समाकीर्नं बहुरत्न भूषितं जात रूप जल जात प्रभा।
अरुन जात शुचि मृदुल गौर ससि वक्रमाल रचि जात प्रभा।
स्वर भानु छवी विलुप्तं बहु चित्रित रश्मी जात प्रभा।
नतोस्मि तस्मै रुचिरांग देवी रस वृद्ध कारिनी जात प्रभा ।।[८२]

× × ×

मंजुल कल कुंजतल विमल मंडल धवल नवल रस रास बिरचित किशोरी।
ललित ललितादि सखि गचित कर परस्पर मंडलित चलित अति गति न थोरी ।।
प्राण समतूल अनुकूल प्रिय अस भूज मूल घृत मध्यमंडल सुगोरी।
त्रिविध सुर ग्राम अभिराम गुण धाम बल श्याम आलापयति सुमति भोरी ।।[८३]

× × ×

कैधौं प्रेम वारिध को उज्ज्वल सुथल भल,
कैधौं ये विमल पारिजात को सुपात है
कैधौं मृदु कंचन को कोमल सहेट नट,
काम को अखेट थान अमल सुहात है।[८४]

× × ×

कहते तो कंचन कौ दिव्य रवि कीसी आधा,
सीरो चंद्रमा, सौ कोटि चंद्र को प्रकास है।

चन्मा असम्यन को जथ वध पाक चक
हाइ चकाकृति महा चद्र यो प्रमानियं।
झमकै किरन सब चद्रन की लहरेसी,
जैसो चंद रासो है व्रजवसि जानिये ॥[८४]

तत्सम शब्द : संस्कृत के तत्सम शब्द इस काव्य मे प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होते है जिनसे भाषा की गरिमा मे वृद्धि हुई है। कवियो द्वारा सामान्यत: बहुलता से प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द ये है—अरविंद, पल्लव, घन, विहग, भूषण, कुज, प्रतिबिंब, पुष्प, रासेश, अलि, भ्रमर, खजन, मीन, सौरभ, सुधा, तमाल, तरु, मृदु, समीर, अभिराम, नव, मन्मथ, मंजुल, उडु, ससि, चंद्र, मुख, कर, चरण, हस्त, भृकुटी, जंघ, नेत्र, चक्षु, नासिका, उर, सौंदर्य, माधुर्य, कनक, स्वर्ण, पवित्र, परब्रह्म, कृपासिंधु, भक्त शिरोमणि, सच्चिदानद, परमात्मा परमेश्वर, परमतत्त्व, नित्यानद, गौरवर्ण, प्रेमानंद, आनंदकंद, दृष्टि, महोत्सव, उज्ज्वल, मुक्ता, युगल विहार शृंगार, शयन, दिव्य, मुदित, मुकुलित, पुलकित, पुलिन, स्तभ, नृत्य, सरोज, नीर, आदि।

सरल एव लोक प्रचलित ब्रजभाषा . संस्कृत के शब्दो का कुछ स्थल पर प्रयोग होते हुए भी चैतन्य सप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की भाषा सामान्यत: सरल, सहज एवं स्वाभाविक है। कुछ कवियो ने, जिनमे रीतिकालीन कवि प्रमुख हैं, जहां ब्रजभाषा मे संस्कृत बहुल शब्दो के प्रति विशेष आग्रह प्रदर्शित किया है, उनके काव्य मे उन स्थलो पर क्लिष्टता, दुरूहता एवं कृत्रिमता आ गयी है। इन्हे छोडकर भाषा मे सरलता एव प्रवाहमयता विद्यमान है। इस संप्रदाय के काव्य की भाषा अत्यंत सतुलित एवं लोक-प्रचलित ब्रजभाषा है जो जन-जीवन के अधिक निकट है। इसमे बोलचाल के सहज-स्वाभाविक एवं व्यावहारिक शब्दो का प्रचुरता से प्रयोग किया गया है। राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओ एवं सखियो के साथ राधा-कृष्ण की व्यग्य-विनोदपूर्ण वार्ता मे अत्यंत सहज बोलचाल की ब्रजभाषा विशेष रूप से देखने को मिलती है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

ब्रज की खोर सांकरी।
जब-जब भेंट अचानक होवै, हौं—
सकुचति उर, उलट्यौ चाह री।
जित तित ह्वै मग रोकत-टोकत,
डगर तजत पग गड़त कांकरी ॥[८५]

× × ×

छैलवा कहा पर्यौ तू लारै ॥
केसर रंग पिचकारी सौं मेरी अंगिया रंग डारै।
दौर उठाय गुलाल घूंघरि मे परसत तन रिजवोरें ॥
देख अकेली आय आप अरत है गिनत न सांज सवोरे।

मन भायो करि छाड़त रसिया करत न नैंक बिचारैं।।
किशोरीदास ब्रजचंद्र बिहारी रिझ अपनो बोरे।।[८७]

× × ×

कन्हीयां पकर कैं मुख माड़ौ।
आजौ काजर डारो गुलाल रग गारिन से वहु भाड़ो।।
छैल नद को डीट लंगरवा फिरत हुनो मद चाड़ो।
होरी के ब्रजचंद्र किशोरी भरुया करके छाड़ों।।[८८]

× × ×

इनकी कहा चलावत लपट अपनी बात बतावो।
जाये कौन कौन गांव को कासो यह बन पायो।
ये तो श्री वृषभान किशोरी या बन की ठकुरानी।।[८९]

ललित किशोरी, ललित लड़ैती, बाकेपिया व गौरगणदास आदि कुछ कवियो के काव्य मे खड़ी बोली हिंदी मिश्रित ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है—

रस रग बोरी प्रिये चकोरी प्रीति रीति दर्शाती है।
चंद्र-बदन के संभ्रम मे तू तप्त अंगारे खाती है।।
शीत उष्ण गुण एक करत क्या कठिन योग सिखलाती है।
श्यामा श्याम मद गति डोलन ताको भाव बताती है।।[९०]

× × ×

हम वृंदावन के वासी है।
दो अक्षर का मंत्र रैन दिन जपते बारामासी हैं।
ललित किशोरी ध्यान धारणा मगन सदा सुखरासी है।
रवि ससि छवि छाया अंक जाकी जोतिर रूप उपासी है।[९१]

इसी प्रकार कवि व्यास के काव्य मे खड़ी बोली की क्रियाए प्रयुक्त हुई है—

सपने हरि सौं मन न लगाया।
जार भरतार कियौ दुख पाया।
व्यास सुहागिल स्याम रिझाया।[९२]

भाषा के इस सरल एवं लोक-प्रचलित स्वरूप में तद्भव एवं व्यवहार में प्रचलित अन्य शब्दो का बाहुल्य है। मिश्रित भाषा भी प्रयुक्त हुई है जिसमे कही उर्दू के शब्दों का मिश्रण है तो कही पंजाबी-राजस्थानी आदि अन्य भाषाओं के शब्दों का। इनमे प्रयुक्त विभिन्न शब्द इस प्रकार हैं—

तद्भव शब्द : इस संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य मे प्रयुक्त कुछ प्रतिनिधि तद्भव शब्द ये हैं—सीस, अनियारे, पनारे, सुमिरन, औसर, अनत, सनेह, चरन, जुवति, रैन, नैन, पूत, अंकवारि, घरनी, सांझ, मेह, अंगुरी, मांझ, उछंग, सरिस, सांवरो, कान्ह, सजनी, सुरति, परसत, जतन, फागुन, भादों, छिन, पांति, सिंगार, मूरति रतिया दुति कुंअरि- अंचरा, माखन, आंसू, बूद, धीरज, हुलसत, रिस,

चद्रमा असख्यन कौ जय वध चाक चक
होउ चकाक्रांत महा चद्र यों प्रमानियै।
चमकै किरन गन चद्रन की लहरैसी,
जैसो नद सरसो है व्रजवसि जानियै ॥[८५]

तत्सम शब्द : सस्कृत के तत्सम शब्द इस काव्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते है जिनसे भाषा की गरिमा में वृद्धि हुई है। कवियों द्वारा सामान्यतः बहुलता से प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द ये है—अरविद, पल्लव, घन, विहग, भूषण, कुज, प्रतिबिब, पुष्प, सौरभ, अलि, भ्रमर, खंजन, मीन, सौरभ, सुधा, तमाल, तरु, मृदु, समीर, अभिराम, नव, मलय, मंजुल, उडु, ससि, चद्र, मुख, कर, चरण, हस्त, भृकुटी, जंघ, नेत्र, चक्षु, नासिका, उर, सौंदर्य, माधुर्य, कनक, स्वर्ण, पवित्र, परब्रह्म, कृपासिधु, भक्त शिरोमणि, सच्चिदानद, परमात्मा परमेश्वर, परमतत्त्व, नित्यानद, गौरवर्ण, प्रेमानंद, आनदकद, दृष्टि, महोत्सव, उज्ज्वल, मुक्ता, युगल विहार शृंगार, शयन, दिव्य, सुदिन, मुकुलित, पुलकित, पुलिन, स्तंभ, नृत्य, सरोज, नीर, आदि।

सरल एवं लोक प्रचलित ब्रजभाषा : संस्कृत के शब्दों का कुछ स्थल पर प्रयोग होते हुए भी चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की भाषा सामान्यतः सरल, सहज एवं स्वाभाविक है। कुछ कवियों ने, जिनमे रीतिकालीन कवि प्रमुख है, जहाँ ब्रजभाषा मे संस्कृत बहुल शब्दों के प्रति विशेष आग्रह प्रदर्शित किया है, उनके काव्य मे उन स्थलो पर क्लिष्टता, दुरूहता एवं कृत्रिमता आ गयी है। इन्हे छोड़कर भाषा में सरलता एव प्रवाहमयता विद्यमान है। इस संप्रदाय के काव्य की भाषा अत्यंत सतुलित एवं लोक-प्रचलित ब्रजभाषा है जो जन-जीवन के अधिक निकट है। इसमें बोलचाल के सहज-स्वाभाविक एव व्यावहारिक शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया गया है। राधा-कृष्ण की मधुर लीलाओं एवं सखियों के साथ राधा-कृष्ण की व्यग्य-विनोदपूर्ण वार्ता में अत्यंत सहज बोलचाल की ब्रजभाषा विशेष रूप से देखने को मिलती है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

ब्रज की खोर सांकरी।
जब-जब भेंट अचानक होवै, हौं—
सकुचति उर, उलट्यौ चाह री।
जित तित ह्वै मग रोकत-टोकत,
डगर तजत पग गड़त कांकरी ॥[८६]

× × ×

छैलवा कहा पर्यौ तू लारै ॥
केसर रंग पिचकारी सौं मेरी अंगिया रंग डारै।
दौर उठाय गुलाल घूघरि में परसत तन रिजवारै ॥
देख अकेली आय आप अरत है गिनत न साज सवारै।

कोयि ग्वारिन वाजर बरखा उपा ग०१२ बिछरत पिय बिलोकि रिस
जा।

लोक प्रचलित तथा देशज शब्द : लोक जीवन से सम्बद्ध रहने के कारण इन कवियों के काव्य में ब्रज में प्रचलित लोक व्यवहार के शब्दों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। किशोरीदास एवं सूरदास मदनमोहन के काव्य में ऐसे शब्दों का सर्वाधिक व्यवहार हुआ है। संस्कृत से व्युत्पत्ति सिद्ध न होने वाले ऐसे देशज शब्दों में से कुछ के उदाहरण इस प्रकार है—धरिक, चटपटी, छाक, अटपटी, ठगौरी, लरिकाई, डहकि, गोगो, हूठ, मुसकि, गोहन, उराहनो, ओट, ठकुराइन, धगरी, खिसियानो, घारी, झार्गा, आगेगन इत्यादि।

पंजाबी शब्द : ब्रजभाषा के साथ पंजाबी का मिश्रण वल्लभरसिक एवं ललित लडैती के काव्य में कतिपय स्थलों पर उपलब्ध होता है। ये पद पंजाबी भाषा में स्वतंत्र रूप से लिखित नहीं है अपितु इनकी रचना में शब्दावली, बहुवचन एवं विभक्तियों आदि के पंजाबीपन के कारण ये कुछ अलग से प्रतीत होते है। ऐसे कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

पथ असाड़े कोई पैर न रक्खो असी लखि लग्गूबो लाग हंमारे।
नह नगर दे अदर नू असी फिरदे पैर चलाये।।
मत्थे बिंदी हत्थों मिहदी अक्खीं कज्जल पाये।
छके छबीली छैल सैल पर वल्लभ रसिक कहाये।।
आह पत्रेननि वाह की सौदा असी निस्सी राहां चल्ला।
इश्क दिलादे नाले नाले मह बका दी गल्ला।।
स्याह जुलफ छल्ले जिम छल्ले असी थर सल्ले तिसी महल्ला।
वल्लभ रसिक ख्याल लाल पर झूमि हमैसे अल्ला।।[६३]

× × ×

सानूं प्यारा ही लगदा। दिलदा महरम नदलाल।[६४]

× × ×

जाती थी कुंज गलियों दधि बेचवे कूं मैंना,
आयो कहूं तें मोहन हसि करत सैन नैना।[६५]

× × ×

सखि हम बाजत या ब्रज के नाथ।
तोसी किती भवन आवत नित लियें सहेली सग।[६६]

× × ×

तीस दिनां की बात है मैंनां हमपे सही न जाई।।[६७]

राजस्थानी शब्द : कुछ स्थलों पर राजस्थानी भाषा के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं उदाहरणार्थ—

तन मन सौंप्यौ मित्र कों, बहुरि न मूक्यौ बैंन।[६८]

× × ×

तू आ [illegible]

[illegible]

[illegible]

तुम [illegible]

[illegible]

बुंदेलखंडी शब्द : [illegible] के कारण व्यास जी की भाषा में [illegible] शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

उदाहरणार्थ —

[illegible]

[illegible]

[illegible] कथा की

यह सुनि सकुचि गये वन मोहन, गिरधर मौरी[107] आनी ॥[108]

विदेशी शब्द : समकालीन परिस्थितियों के अनुरोध से अनेक अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओं के शब्दों का जन-साधारण में प्रचलन हो गया था, उसके प्रभाव से ये आलोच्य कवि भी अछूते न रह सके इसीलिए इनके काव्य में इन विदेशी शब्दों का प्रयोग हुआ है। इन शब्दों के रूप एवं ध्वनि में अपनी भाषा की प्रकृति के अनुसार परिवर्तन कर लिया गया है। ललित किशोरी व बांकेपिया के काव्य में अरबी, फारसी के शब्दों का सर्वाधिक प्रयोग मिलता है। इन दोनों कवियों ने अपनी काव्य रचनाओं में कुछ स्थलों पर उर्दू की गजलों की रचना भी की है। ललित किशोरी द्वारा बहुप्रयुक्त कुछ शब्द हैं—अजब, गजब, जुलमी, दिल, आफत, खफा, मिला, नाजुक, आशिक, अलबेली, इश्क आदि। बांकेपिया ने दिल, निशान, सफाई, आशिक, आसमान, शर्म, शकल, गम, निराली, बांकी अदा आदि शब्दों का व्यवहार किया है।

इनके अतिरिक्त 'वल्लभ रसिक की वाणी' में इश्क, दिल, शहर, महबूब, आशिक, किश्ती, रूमाल, मुश्किल, परदा, जुलफ आदि शब्द पाये जाते हैं। 'गौरांग भूषण मंजावली' (गौर गणदास कृत) में स्याह, दिल, जुलम, कहर, चमन, शाह, गुलदस्ता जैसे शब्दों का प्रयोग हुआ है। 'उद्धव चरित्र' (कृष्ण चैतन्य रचित) में पीर, आखिर, गरीब, यार, कायल, खेद, घायल आदि शब्द व्यवहृत हुए हैं। दिल,

जवाब हाल शहर रोज पीर जैसे बहुप्रचलित शब्दों का प्रयाग अन्य कवियों के काव्य में देखने को मिल जाता है। फारसी प्रधान भाषा का एक उदाहरण गौरगणदास कृत 'गौरांग भूषण मन्त्रावली' से द्रष्टव्य है—

> वैसा ही रूप सजा दिलवर, हम ग्राहक हुस्नपरस्ती के।
> देखत ही मुझे नकाब किया, हो इश्क परस्ती मस्ती के।।
> हम भी कदमों के चेरे हैं, तुम हो महरूम इस बस्ती के।
> इस इश्क पेच का भवर कठिन, तुम हो खेवा उस किस्ती के।।[१०९]

लोकोक्तियां एवं मुहावरे : लोक प्रचलित भाषा में इनके प्रयोग से भाषा में प्रौढ़ता, सहजता, एवं अर्थ-गाभीर्य उत्पन्न होता है। प्रस्तुत काव्य में लोकोक्तियां एवं मुहावरों का पर्याप्त प्रयोग मिलता है, कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

> दिन चार की चादनी चोखी रहे पुनि रात अंध्यारी निहार लैरी।[११०]
>
> × × ×
>
> बौरी भई मति तेरी अवली हाथ के कगन कौ कहा आरसी।।[१११]
>
> × × ×
>
> मोपै होय पर जायगि सु उरझायौ नी मन सूत।[११२]
>
> × × ×
>
> दिना चारि में देखियो सु किसकर बैठें ऊट।[११३]
>
> × × ×
>
> चार दिना की चारु चांदनी चमक रहे चन्चल चाल बटरि।[११४]
>
> × × ×
>
> बिरह रोग उपचार के जोग न औषध ठान।
> ऊधौ नीम हकीम हू कहियत खतरे जान।।[११५]
>
> × × ×
>
> आंखिहूं न खोलें नेक मुख हू न बोले,
> तनक न डोलें सब मरे से परे रहें।।[११६]
>
> × × ×
>
> अहो इते सुख भोग लै पठ्यौ जोग वरीठ।
> हम हिय दीनी रावरे हमकों दीन्हीं पीठ।।
>
> × × ×
>
> 'बातनि खेंचत खाल बार की', लीपत भुस पर भीति।[११७]
>
> × × ×
>
> दोष रहित गुन रहित, व्यास अंधे की दई चरावै।।[११८]

भाषा संबंधी उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि चैतन्य संप्रदाय के काव्य में प्रयुक्त भाषा अत्यंत सशक्त एवं विविधात्मक है। भाषा संबंधी अनेक विशेषताएं इसमें विद्यमान है। सामान्यतः भाषा के विशिष्ट गुण—सरलता एव सहजता का

पर्याप्त ध्यान रखा गया है एव उसम क्लिष्टता तथा दुरूहता लाने का विशप प्रय न नही है इस रूप मे साहित्यिक ब्रजभाषा का भी प्रयोग है और सरल बोल चाल की भापा का भी। पद-शैली में रचित काव्य में संगीतात्मकता, मधुरता एव रमणीयता के विशेष गुण निहित है। शब्दों के ध्वन्यात्मक प्रयोग से भापा में नाद-सौंदर्य व चित्रात्मक का समावेश हुआ है। पूर्व विवेचन से यह स्पष्ट है। इस प्रकार कवियों द्वारा प्रयुक्त भाषा जहा एक ओर अलंकृत, सुसंस्कृत, परिष्कृत एव गंभीर है वही दूसरी ओर अलंकृत, सरल, सहज, मधुर, ललित, सुष्ठु एव कोमल भाषा का रूप भी देखने को मिलता है।

प्रस्तुत कवियों द्वारा प्रयुक्त भाषा भावो के अनुकूल है। भावों को अभिव्यक्त करने की क्षमता प्रबल रूप से उसमें विद्यमान है। भाव पक्ष की विवेचना के अतर्गत प्रस्तुत उद्धरण एवं संकेत इसके प्रमाण हैं। विविध लीला-प्रसगो में एव रूप-माधुर्य के वर्णन से अत्यत कोमल एव मधुर शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इस सम्प्रदाय के काव्य का प्रमुख वर्ण्य-विषय भावपरक विभिन्न लीलाओं का होने के कारण भाषा उसी के अनुकूल माधुर्य व प्रसाद गुण से युक्त है. वर्णन प्रधान स्थलों पर साधारण भापा का प्रयोग है। इस प्रकार विषय के अनुरूप भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है।

शैली एव छंद

काव्य की शैली के प्रमुखतया तीन भेद हैं—आख्यान, पद एव मुक्तक शैली। अन्य ब्रजभाषा कृष्ण-काव्य की भांति चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभापा काव्य मे पद शैली की प्रधानता है। वर्णन-प्रधान आख्यान शैली मनोहरराय कृत 'रसिक कर्णाभरण लीला' एव गो० कृष्ण चैतन्य 'निज कवि विरचित' 'उद्धव सदेश' नामक काव्य में प्रयुक्त हुई है। ये दोनों खंड काव्य हैं। 'चैतन्य चरितामृत' का सुबल श्याम कृत ब्रजभाषा पद्यानुवाद चरित काव्य की दृष्टि से आख्यान शैली का उदाहरण है। इसके अति-रिक्त अन्य काव्य-रचनाओं मे लीला-वर्णन के प्रसंग में प्रबंधात्मकता होने से आख्यान शैली के सुंदर उदाहरण मिल जाते है। दान लीला, चीरहरण लीला, रास लीला आदि मधुर लीलाओं के प्रसंग में वर्णनात्मकता के साथ स्निग्धता, सरसता एवं भावात्मकता का भी यथेष्ट संयोग है। हां, इतना अवश्य है कि ये लीला-प्रसंग स्वतंत्र रूप से प्रबध काव्य नही कहे जा सकते, इनमें प्रबंधात्मकता के कुछ विशिष्ट गुण ही निहित हैं। अधिकतर काव्य मुक्तक एवं पद शैली मे रचित हैं।

प्रस्तुत काव्य में विविध शैलियों का सम्मिश्रण प्राप्त होता है। वस्तुतः प्रबध मे मुक्तक की-सी स्वतंत्रता एवं वैयक्तिकता तथा पद की गेयता होने से उसमे मुक्तक एव पद शैली का भी समावेश हो गया है। इसी प्रकार पद शैली में विविध लीलाओं में परस्पर संबंध का निर्वाह होने पर प्रबंध शैली का मिश्रण हो गया है।

वैसे पद शैली की प्रभावात्मकता के समक्ष इस काव्य की अन्य शैलियां परास्त-सी हो गयी हैं। पद रचना चैतन्य सम्प्रदाय के बंगला काव्य की भांति ब्रजभाषा काव्य की सर्वप्रमुख शैली है।

काव्य में कलात्मकता की दृष्टि से छंदों का भी अपना विशिष्ट स्थान है। छंद-विधान पद्य की लय में एकरूपता, गति में नियमितता, भावों की अभिव्यक्ति में स्पष्टता व स्थिरता एवं संवेदनशीलता में वृद्धि कर देता है। जहां तक पद-शैली का संबंध है छंद-शास्त्र की दृष्टि से मुक्तक पद-रचना में छंद का विशेष आग्रह नहीं रहा है क्योंकि गीति काव्य होने के कारण उनकी रचना स्वर, लय, ताल और नाद को ध्यान में रखकर संगीतात्मक रूप में अधिक की गयी है। अधिकांश कवियों की रचनाएं रागाश्रित हैं। विविध राग-रागनियों में पद-रचना करते हुए इन कवियों ने विविध प्रकार के छंदों का प्रयोग स्वाभाविक रूप में इतनी सशक्तता एवं सुंदरता से किया है कि उनके गेय पदों में छंद घुलमिल गये हैं। संगीतात्मकता के विशेष अनुरोध से कहीं छंदों के स्वरूप में भी परिवर्तन कर लिया गया है।

छंद-विधान के अंतर्गत किन्हीं काव्य-रचनाओं में एक ही छंद का प्रयोग हुआ है एवं अन्य में मिश्रित छंद प्रणाली या अनेक छंदों का प्रयोग किया गया है। मुख्यतः पद, दोहा, रोला, कवित्त, सोरठा, चौपाई, कुंडलिया, छप्पय, सवैया, मांझ आदि छंदों का बहुशः प्रयोग मिलता है। आलोच्य काव्य में प्रयुक्त विविध प्रकार के छंदों का विवेचन यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

दोहा : दोहा अथवा 'दूहा' छंद का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। पद शैली में रचित काव्य में भी पदों के साथ-साथ दोहा प्रयुक्त हुआ है। प्रमुखतया ललित किशोरी के बृहद् काव्य-ग्रंथ—'रस कलिका' में इसी प्रकार पदों के मध्य अन्य छंदों के साथ दोहा भी प्रयुक्त हुआ है। ललित लड़ैती कृत 'दंपत्ति विलास' एवं 'श्री किशोरी करुणा कटाक्ष' में भी यही छंद-पद्धति देखने को मिलती है। 'अभिलाष माधुरी' (ललित किशोरी कृत) में दोहा बहुलता से प्रयुक्त हुआ है।

> लै अब हम लो चलत पी, होत अबेर निदान।
> उठत बनत ना हीय पै, खटका लगी कुलकान।।[११९]
>
> × × ×
>
> बंशीवट छबि मोहनी, कूजत कोकिल कीर।
> मनमोहन मनमोहनी, निरखौं कुंज कुटीर।।[१२०]
>
> —ललित किशोरी
>
> नवल छबीली राधिका, रसिया मोहन छैल।
> उरझे रस बतियान में, निरखूं श्री बन गैल।।[१२१]
>
> × × ×

अंग अंग पै सज रहे भूषन बसन अमोल
रूप शील गुण खान की, कौन सके छबि तोल ॥[१२२]

—ललित लड़ैती

अन्य काव्य-रचनाओं—'माधुरी वाणी,' 'वल्लभ रसिक की वाणी', 'अष्टयाम' (वृंदावन चंद्र कृत), शोभन 'पदावली' आदि में भी दोहा छंद का प्रचुर प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है—

अनियारे कारे कछू, कजरारे कल बाम।
बाचक चाहनि चाह को, मोचक मदा सकाम ॥[१२३]

—माधुरी

सतनु रहें सकतो अतनु, पर तनु घस ते आइ।
अतनु भयो अब सतनु के, परत परत धसि जाइ ॥[१२४]

—वल्लभ रसिक

उन बिन दिन दूनौ लगै, सूनो लगै समाज।
तन मन अति व्याकुल रहै, सो कहुं तुमसों आज ॥[१२५]

—शोभन गोस्वामी

व्यास कृत साखियों में दोहा छंद प्रयुक्त हुआ है, उदाहरणार्थ—

'व्यास' न कथनी काम की, करनी है इक सार।
भक्ति बिना पंडित वृथा, ज्यों खर चंदन-भार ॥[१२६]

दोहे का एक विशिष्ट प्रकार का प्रयोग बाकेपिया ने किया है। उन्होंने दोहे के अंत में १० मात्राओं की एक लघु पंक्ति जोड़कर एक विशेष प्रकार की भेदात्मकता उत्पन्न की है। 'प्रेमोद्दीपनी' एवं 'मधुर मिलन' नामक काव्य रचनाओं में आद्योपांत दोहे का यही विशिष्ट प्रयोग मिलता है। एक उदाहरण इस प्रकार है—

पाय चकोरी चंद मनु, गई कुमोदिनि फूलि।
शिखी मोर कों पाय घौ, गई बिरह दुख भूलि ॥
श्याम श्यामा मिले ॥[१२७]

चौपाई : चौपाई छंद का प्रयोग माधुरीदास, वल्लभ रसिक, ललित किशोरी, ललित सखी आदि कवियों ने किया है। १६ मात्रा की चौपाई एवं १५ मात्रा की चौपाई में कई स्थलों पर भेद नहीं रखा गया है।

धाय धाय सब जल म आईं। अपने अपने जूथ बनाईं।
अरस परस छिरकत हैं दोऊ। एक वैस गुण घटित न कोऊ ॥[१२८]

—माधुरीदास

लहलहानि हुलसानि गात मे। मिसहीं मिसु उर परस बात मे।
रीझ परस्पर तान देत कर। उमग कपट लपटन कों अवसर ॥[१२९]

—वल्लभ रसिक

ललित निकज अति ही सुखदानी स्वच्छ फटिक मणि की निरमानी
तामे फटिक मणी की नहिरैं। जल पीयूष भरी सुचि लहिरैं।।[130]

—ललित किशोरी

हाथन में लै डोरि नवेली, गति सगीत चतुर अलबेली।
चलै झमकि पग नूपुर बाजैं, हारन हीरा पादक विराजैं।।[131]

—ललित सखी

छप्पय : मनोहरदास ने 'राधारमणरस सागर' में चन्द्रगोपाल ने 'राधामाधव ऋतु विहार' मे, वृंदावन चद्र ने 'अष्टयाम' में, गौरगणदास ने 'गौरांग भूषण मंझावली' मे तथा माधुरीदास ने छप्पय छद का प्रयोग किया है। छप्पय छद में अंतिम दो चरणों मे मात्राओं का अंतर देखने को मिलता है।

उन्यौ नव रस मेह नेह निसि बरस परस पर।
चुरी मेड़ सब चुरी आड़ कहूं दुरी महावर।
श्रम कन सलिल अपार पलक खग प्रेम पसीजें,
सकत न पख पसारि जुगल खंजन रस भीजै,
उड़ि सकत न सथिल सुभाव तें सुचपल चपलता मिट गई,
हृदै भरे सरोवर सहचरी सुनहु विलास बरसा नई।[132]

—माधुरी

सजल जलद तन दमक, चमक चख चकित तडित पद।
मोर मुकुट झल मलै, चलै मृदु मरुत जमुना तट।।
अग त्रिभंगी बलित, ललित भूषन मनरंजन।
अरुण अधर मधु बेन, नेन नृत्यत युग खंजन।।
छरी टेकि दक्षिण भुजनि मणि कुंडल मंडित श्रवण।
वाम मनोहर दाम बन जै जै श्री राधारमण।।[133]

—मनोहरदास

कुदन मृदुल सु फैंन जटित नग धरन परस्पर।
प्रतिबिंबै जुत माल लता प्रतिकुज सघन वर।
फूलन सकुल ललित जहां भरी रहत एक रस।
खग कुहकत कल बोल केलि के मंत्र वेस वस।
त्रिविध समीर बहै जहां वृंदाविपिन सुछंद।
विहरत लाडिली लाल जहां बंधे प्रेम रस कंद।।[134]

—वृंदावनचद्र

सोरठा : सोरठा छंद ललित किशोरी, माधुरीदास, शोभन गोस्वामी, ललित सखी आदि कवियों ने व्यवहृत किया है।

सुनत और तिय नाम, मान कियो प्यारी विशद।
बैठी है अति वाम, लाल विकल है पग परत।।[135]

—शोभन गोस्वामी

चतुर सिरोमनि बाल, तुमहूं क्यो आई पलटि।
मन कछु रहत न ख्याल. कौन काज हम कित चली।[136]

—ललित किशोरी

लीनी निकट बुलाय, ललित लड़ैती कुवरि मै।
पूछति मृदु मुसिकाय, लाड़ गहेली हंसि जबै।।[137]

—ललित सखी

जिन मुक्ता की माल, गुही हिये हरि गुन सरस।
उज्ज्वल परम रसाल, सब अंगन भूपन किये।।[138]

—माधुरी

रोला—

अरुण रंग की लता, ललित फूली बहु भांतिन।
अरुण फूल फल अरुण, अरुण पल्लव नव पांतिन।।[139]

—माधुरी

रसना रसद निनाद, वाद मनमथसों ठान्यो।
रंभाखभ समान, जघ सुदर मनमान्यो।।[140]

—गदाधर भट्ट

अरिल्ल : अरिल्ल छंद का प्रयोग चंद्र गोपाल ने 'श्रीराधाविरह शतक' में पूरी रचना मे किया है। प्रियादास ने भी चाहवेली में आद्योपांत अरिल्ल प्रयुक्त किया है। इसके अतिरिक्त मनोहरदास जी की रचना 'राधारमण रस सागर' एवं ललित सखी की 'कुवरि केलि' में भी यह उपलब्ध होता है।

हाहा मृदुपंकज दल सोहन, चित्रित जावक रंग।
हाहा नखमनि चंद्र चंद्रिका, नाना उठत तरग।।[141]

—प्रियादास

बात बतावत कहत, मिलौ मोहि अतरसौं।
भीजै सौंधे बार, भये सनि अतर सौं।।
फूली केसर ललित, सुगधी बाट में।
तोले ऐसौ को है, जहं सुख बाट में।।[142]

—चंद्रगोपाल

मांझ : चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों में 'मांझ' मे काव्य रचना करने वाले दो कवि हुए है—वल्लभ रसिक एवं गौरगणदास। मंज या मांझ नामक रचनाओं में प्राय: खड़ी बोली और अरबी-फारसी के शब्दों का प्राचुर्य होता है परंतु वल्लभ रसिक ने ब्रजभाषा में इसकी रचना की है। इनकी 'सदा की सांझ' नामक रचना की भाषा पंजाबी मिश्रित है। गौरगणदास ने फारसी-अरबी के शब्दों के साथ सस्कृतनिष्ठ पदावली का भी बहुलता से सुष्ठु प्रयोग किया है

माझ २८ मात्रा का छन्द होता है जिसमें १६ मात्रा पर यति होती है माझ

का मन । नक अदर विद्यमान पय प्त रासना त्र गाव वि तार गायन के कारण अधिक है ।

> भरि गुलाब जल विमल सरोवर, दंपति केलि संचाई ।
> श्रेणी अमल कमल नैनी अलि, पकज पालि जुलाई ।।
> गहि गहि कलस तरगनि बदलत, डूबत उछरनि लाई ।
> बल्लभ रसिक अंग अंगनि तें, निज निज छवि दरसाई ।।[१६३]
>
> —बल्लभ रसिक

> चन्द्र खंड युग सरस गंड छवि, लोलित चंचल मदन तुरंग ।
> रति रहस स्थल स्फुरित छटागन नृत्यते उडुगन काम कुरंग ।
> तरल तरुन पाठिन मुवन दृग स्फुरै जलज दल अली तुरंग ।
> रुचिर कीर छवि दीप्त मुत नव विद्रुम दल अधर सुरंग ।।[१६४]
>
> —गौरगणदास

कुंडलिया : ललित किशोरी, ललित सखी, गौरगणदास एव बांकेपिया के काव्य में यह उपलब्ध होता है । बांकेपिया ने 'विवेक मजरी' की पूरी रचना कुंडलिया छंद में की है ।

> पलटि पलटि सब आवही, छाडी अपनी गैल ।
> चौहट मे छौना कछू, कियो नंद के छैल ।
> कियो नंद को छैल, कछू टोना सो मग मे,
> पढि पढि डारे उरद. सखी देखो पग पग मे ।
> लीजे बात विचारि, बनी अलि बहुतै अटपट,
> दीजे पाछे पाय, डगर पुनि आवै न पलटि ।।[१६५]
>
> —ललित किशोरी

> श्री गुरुपद अंबुज सरस, राख्यो उर सर लाय ।
> घटन हित मकरंद नित, मन भौंरा मड़राय ।।
> मन भौंरा मड़राय, सदा इकरस लखि जाको ।
> भक्ति योग रवि अचल, निरंतर सेवत ताको ।
> बाके पिय उर माहिं, बसै तेहि लागि निहोरी ।
> कुंज केलि व्रजचंद, सहित वृषभान किशोरी ।।[१६६]

× × ×

> पर उपकारी जीव जो, महापुरुप सो होय ।
> निज स्वारथ सब त्याग के, परहित लागत सोय ।।
> परहित लागत सोय, करत उपकार परायो ।
> [illegible] सहत करि आप, देत हैं सुख औरन को ।।
> [illegible] यश करत आपमें पृथ्वी सारी ।
> सप [illegible] को पर उपकारी [४०]

ललित सखी ने कुंडलिया के स्वरूप में कुछ परिवर्तन कर लिया है। बी
की अधिकता है एवं दोहा का अंतिम चरण रोला के आदि में ज्यों का
गाया है बल्कि बाद मे रोला के द्वितीय दल का अंतिम चरण तृतीय
न मे प्रयुक्त हुआ है—

कुवरि किसोरी सू जबै, ललिता दई जताय,
तेरे दरसन कारनै सांवल आई धाय।
अब जान्यो भेद जु (लाडिलो) मन में रही लजाय,
प्रीतम को सनमान करि हंसि कै कंठ लगाय।
हसि कै कंठ लगाय जानि यह तेरी प्यारी,
त्रीया रूप धर्‌यो (ये) भटूइनि तो हितकारी॥[१६८]

सवैया : सवैया छंद का प्रयोग शोभन गोस्वामी, बल्लभ रसिक, माधुरी,
न चद्र, ललित सखी आदि कवियो ने किया है।

दीन अधीन फिरै विन जीवन मीन कुलीन प्रवीन जु हेरो।
गौगण माल बिहाल बिना तृण छाल सरोवर और न हेरो।
व्याकुल मोरहुं शोर करे करुणानिध बाचक दातक हेरो।
पीर अबै यदुवीर हरो वहु नीर झरीन लगाय के हेरो।[१६९]

—शोभन गोस्वामी

विहार सबै बन को तन में, जुरयौ रमि कै मम प्राणन में।
कदरी कुसुमावलि कुदलता, विकसे अलि अंबुज आनन में।
शुक सारस कोककपोत सिखी प्रगटी पिक पचम गानन मे।
नव बैन कुणे सुरे रंग खरे बिहरे, नित काम के कानन मे॥[१७०]

—माधुरी

ललित सखी ने २४ वर्णो के सवैये की रचना की है—'ही' इसमें अधि
ा देने पर २३ वर्णों का होता है—

तू तो सांवल रूटि की बात करै अब खेल्यौ लड़ैती सो हैगो सही।
झूट न बोलियै ये मन भावती, ललितादिक साखि भरै सब ही।
हम देखति है तुम गोट धर्‌यो, अहो जानि कै मोसू कहौ तब ही।
चूकि कै दाव चली जब लाड़िली, हंसि कै मुरलीधर बाह गही।[१७१]

इसी प्रकार का प्रयोग शोभन गोस्वामी के काव्य में भी परिलक्षित होता
का अतिरिक्त संयोग है। यह मात्रिक सवैया भी है। यह ३१ मा
ल्हा) छंद का ही दूसरा नाम है। यहा 'के' को हटाने पर ३१ मात्राओ

—

कजन कचन कंकन है, कुच कुंभन कंचुकी कामिन के
कोमल केल कपोलन पै, करै कौन सह सकै भामिन के

व दावन चद्र ने अनेक कवित्तो के पश्चात एक एक दोहे का विधान किया है अष्टयाम का रचना अधिकाशत कवित्तो म ही हुई है

कुदन स दिव्य अग वसन सहान भव्य,
ऐसी है सुदेवी जू की सोभा स्वछ सारे हैं।
चिकुर लडैती जू के खुले रस तुले जिन्है,
ओले कर नैन मैन उठै मंजु चारै है।
ज्यौ त्यौ केस भर पाटी पारी मांग मोती भर,
लाल गुनी सरस दरस उठै धारे हैं।
बैनी गुहि अंजन दै मंजन करी है आंखैं,
खंजनन हाथै किधौं दौनी तरवारे हैं॥[३२६]

ललित सखी ने 'कहानी रहसि' की रचना आद्योपांत एक दोहे के पश्चात् एक कवित्त के क्रम से की है। एक-दो स्थलों पर दोहे के स्थान पर सोरठे का भी प्रयोग हुआ है।

शिखरिणी : इसका प्रयोग शोभन गोस्वामी ने किया है—

बजै वंसी भारी युवति मनहारी निशन में।
चले क्यो ना प्यारी निखिल दुखहारी सरन में॥
अरी वो है कोरी ललित गिरधारी भवन मे।
अभी तू है बारी नवरस बिहारी विपिन मे॥[३२७]

पद-शैली के अतर्गत भी विभिन्न छंद व्यवहृत हुए हैं जिनमें मात्रिक छंदों का प्रमुख स्थान है। इनमें सार, सरसी, समान सवैया, ताटक आदि छंद बहुशः प्रयुक्त हुए हैं। गदाधर भट्ट के पदों में विविध प्रकार के छंदों का विशेष प्रयोग हुआ है। चैतन्य संप्रदाय की ब्रजभाषा पदावली में उपलब्ध प्रमुख छदों का विवेचन यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

विष्णुपद : इस छंद मे १६, १० के विराम से २६ मात्राए होती हैं एवं अंत मे एक गुरु वर्ण होता है। इस छंद का पद-रचना मे बहुलता से प्रयोग मिलता है।

याही सों नित मती करत प्रिय, दृष्टि न अनत गई।
पीवति अधर करति रति कूजति, गति विपरीति ठई॥[३२८]

—गदाधर भट्ट

उरज तें कंचुकी चुरकुट भई, कटि तट ग्रंथ हटी।
चतुर सिरोमनि 'सूर' नंद-सुत, लीनी अधर घुटी॥[३२९]

—सूरदास मदन मोहन

मधुर भाव भूषन तन भूपित, विलसत शील घनी।
केश पाश किशलय कोशातर, राजति अलिन अनी॥[३३०]

—रामराय

बादर बरमें चपला चमकै, कूकत मोर फिर
मधुर मधुर कोयल बन बोले, हंस कलोल करें ।।[152]

—ललित लड़ैती

सुघर अनोखी छबि दिखलादे, मोर मुकटवारे।
सरबस लीन्हों घायल कीन्हों, नयन बाण मारे ।।[153]

—बालिरिया

सार, सरसी : सार में १६, १२ के क्रम से २८ मात्राएं होती हैं और अंत में प्रायः दो गुरु वर्ण होते हैं। सरसी में १६, ११ के क्रम से २७ मात्राएं व अंत में गुरु लघु। पद साहित्य में ये छंद सर्वाधिक प्रयुक्त हुए है। प्रायः कवियों के ये सर्वप्रिय छंद रहे हैं। कहीं-कहीं सार व सरसी का मिश्रितरूप भी मिलता है।

सार—

बंदी-जन अरु भिक्षुक मुनि सुनि, देस देस ते आये।
इक पहिले ही आसा लागे, बहुत दिनन ते छाये ।।[153]

—सूरदास मदनमोहन

नाम प्रताप प्रबल पावक के, होत जाल सलभा गम।
इहि कलिकालि कराल व्याल विष, ज्वाल विषम भोये हम ।।[154]

—गदाधर भट्ट

अब तो मेरे मन को भायो, दोऊ नेग चुकावौ।
नंदरानी कीरति दे रानी, ढाढिनि को पहरावौ ।।[155]

—किशोरीदास

लाजु अकाजु तजी क्यों जा विधि, हौं हियरे पछिताऊं।
ज्यौ ज्यौं करत अनोखे चितवन, कौतुक सचु अलसाऊं ।।[156]

—रामराय

अब ही पलक लगी पीतांबर, तान्यो रति अनुरागे।
हरुवें चल बाजै ना झाझें, नूपुर रव कटु लागे ।।[157]

—ललित किशोरी

तेरे री सुत भयौ अनोखो, करत दूध में पानी।
मांगत दान न कान काहु की, भलो भयो दधि दानी ।।[158]

—ललित लड़ैती

सरसी—

महा लालची लाल विहारी, बदन बिलोकन काज।
रस सागर गंभीर नीर जहा डूब्यौ लाज जहाज ।।[159]

यात अब तू सावधान हो, सब विधि ममता त्याग।
ललित लड़ैती कर हित चित सों, युगल चरण अनुराग ॥[१७०]

—ललित लड़ैती

रानी जसुमति ढोटा जायौ, गायौ मगल चार।
देति दान भूषन मनि मुक्ता, व्रजपति परम उदार ॥[१७१]

—किशोरीदास

दूजो नाहि और या जग मे, प्रभु सम परम उदार।
भजन भाव व्रज नियम बनत नहि, ना कछु सत्य विचार ॥[१७२]

—व्रजप्रिया

पीतहि वसन पीत आभूपन, पीतहि केसर रग।
पीत तड़ित दुति पीतम प्यारी, पीतहि उठत तरग ॥[१७३]

—ललित किशोरी

देखत सोभा सुख सपति अरु, मन मे यहै विचार।
व्रजनारी हम क्यो न भई धौं, कहति सबै सुर-नारि ॥[१७४]

—सूरदास मदनमोहन

नयन बयन कर चरन कमल से, कुडल मकर समान।
अलकावली सिवाल जाल तह, भौंह मीन भो जान ॥[१७५]

—गदाधर भट्ट

ताटंक : १६, १४ मात्राओं पर यति एवं चरणांत मे मगण वाला छंद ताटंक कहा जाता है। सार छंद के अंत में गेयात्मक दृष्टि से जोड़े गये 'रे' आदि गुरु वर्ण को यदि छंद का अंग मान लिया जाय तो यह ताटक का उदाहरण हो जाता है। व्रजभाषा काव्य मे ऐसे अनेकानेक पद उपलब्ध होते हैं।

जोटा देत सखी ललितादिक, रमकि झमकि अधिकाई रे।
दमिकति दामिन चमकित प्यारी, प्रीतम उर लपटाई रे ॥[१७६]

—किशोरीदास

लंगर लाल लगराई करि करि, मुख मांडत लै रोरी रे।
झपटि लपटि घूघट पट खोलत, लखि पावत जित गोरी रे ॥[१७७]

—ललित किशोरी

रटत रटत राधा मनमोहन, अपनों जन्म बितावैगे।
लिखत लिखत लीला रस दंपति, नैनन नीर बहावैगे ॥[१७८]

—ललित लड़ैती

पटह निसान भेरि सहनाई, महा गरज की घोरें हो।
मागध सूत वदत चातक पिक, बोलत बंदी मोरे हो ॥[१७९]

—गदाधर भट्ट

झूलना [illegible] में १० [illegible] मात्राएं [illegible] एवं अंत में जगण का विधान है। [illegible] २७ मात्राओं [illegible] को भी सम मान लिया जाता है [illegible] झूलना छंद [illegible] प्रयुक्त हुआ है।

कुंद द्युति दसनन पै, दामिनी हसन पै,
कंचुकी कसन पै, रति निछारी।
अलक की झलक पै, झूमन अलि उरन पै,
कुचन पै कनक के, कुंभ वारी।[150]

—ललित किशोरी

विमुख परचित्त ते, चित्त जाको सदा,
करत निज नाह की, चित्त चोरी।
प्रकृति यह गदाधर कहत कैसे बनै,
अमित महिमा इतै, बुद्धि थोरी।[151]

—गदाधर भट्ट

स्याम-स्यामा सुभग, फूल के महल में,
फूल-सिंगार कर, अतिहि सोहैं।
फूल सारी बनी, फूल कंचुकी तनी,
फूल के हार बहु, फूल पाहैं।[152]

—रामराय

फूलन की पटुली, डांडी फूलन की,
फूलन को छत्र तनायो हो।।
फूलन की पाग, फूलन को सेहरो,
फूली सखियन मिलि गायो हो।।[153]

—सूरदास मदनमोहन

हरिप्रिया : इस छंद में १२, १२ और १२, १० के विराम से ४६ मात्राएं होती हैं। अंतिम चरण में दस के स्थान पर आठ या नौ मात्राएं भी प्रयुक्त हुई हैं। मात्रा संबंधी शिथिलता परिलक्षित होती है। कहीं गुरु को लघु एवं लघु को गुरु मानना होता है।

ब्रज नरेस देस बसत, कालानल हू न त्रसत,
विलसत मन हुलसत करि, लीलामृत पान।
भीजे नित नयन रहत, प्रभु के गुण ग्राम कहत,
मानत नहिं त्रिविध ताप, जानत नहिं आन।।[154]

—भट्ट

पाप पूण होत जात इन्द्रियनि के रंध्र गाल,
ज्यों बेलि भरि बुड़ात, क्रम-क्रम जल भारतै।
निसि बासर मनियां ज्यों, काल गिनत रहत सदा,
टेरि टेरि यम सुनावत, मौगरी प्रहार तै।।[३८५]

—सूरदास मदनमोहन

रूपमाला, शोभन : रूपमाला में १४, १० के यति क्रम से २४ मात्राओं का तथा अंत में एक गुरु-लघु वर्ण का विधान है। रूपमाला के अंत में जगण होने पर वही शोभन छंद बन जाता है।

रूपमाला—

अधमता उर आनि अपनी, सरत कत अकुलाइ।
अधम अगणित उद्धरे तव, कहत यों संसार।।[३८६]

—गदाधर भट्ट

हरित सारी पहिर आई, झूलत संग ब्रज नारि।
गौर श्यामल रंग मिल दोउ, हरित आभा देत।[३८७]

—वांकेपिया

शोभन—

कचनि रचना राहु छिपही, मुदित वदन मयंक।
तिलक बान कमान दृग मृग, रहै निपट निसंक।[३८८]

—गदाधर भट्ट

हरित भूमि हरित लता द्रुम, हरित शुक पिक टेर।
हरित उड़त अनेक पक्षी, रहि घटा बन घेर।[३८९]

—वांकेपिया

कुंडल, उड़ियाना : कुंडल में १२, १० मात्राओं पर यति एवं चरणांत में दो गुरु वर्ण रहते हैं। कुंडल के चरणांत में एक गुरु होने पर वह उड़ियाना छंद बन जाता है।

कुंडल—

कंचन उर हार छांडि, काच क्यों बनाऊं।
सोभा सब हानि करी, जगत को हंसाऊं।।[३९०]

—सूरदास मदनमोहन

अलकै अलबेलि भाल, लटकि मुकुट राजै।
निकट निकट भृकुटि विकट, पेंच पाग छाजै।[३९१]

—ललित किशोरी

उड़ियाना—

सीस मुकट लटा छुटी, और छुटी अलकें।
सुर नर मुनि द्वार ठाड़े, दरस हेतु किलकें।[३९२]

—सूरदास मदनमोहन

श्रवन कहत अलख मनो मधुकर लाहला।
मानहु ससि वृंद बिंब, जमुना मं झलक।

—ललित किशोरी

समान सवैया . १६-१६ मात्राओं के यति-क्रम से ३२ मात्राओं के इस छंद का ब्रजभाषा पद-साहित्य में व्यापक प्रयोग हुआ है। लगभग सभी पदकर्त्ताओं ने इसका व्यवहार किया है। कहीं समान सवैया का सार, सरसी व ताटक के साथ मिश्रित रूप भी मिलता है।

ललिता ललित कलस कंचन के, पुलकित है सिर सों ढरकाई।
भीजे प्यारी पिय सहचरि जन, प्रेम सिंधु मंजन पद ढाई।[194]

— रामराय

नव सत सजि गृह गृहनि निकसी, मानहु कमल कली सी बिकसी।
पिक बचनी तन चंपक बरनी, उपमा को नहि मनोभज धरनी।[195]

—सूरदास मदनमोहन

प्रगट दरस-मुचकुंदहि दीन्हों, ताहू आयुसु सों तम केरो।
सुत हित नाम अजामिल लीनो, या भव में न कियो फिरि फेरो।[196]

—गदाधर भट्ट

मुकलित नैन पूतरिन आभा, अलि बालक मानो नवलीने।
लता तमाल कनक बेली जुरि, मरुरि अंग असन भुज दीजै।[197]

—ललित किशोरी

सुनी न देखी त्रिभुवन में कहुं, तुम सम ललित मनोहर जोरी।
युगल चंद मुख निरखन के हित, प्यास मरत हैं नैन चकोरी।[198]

—ललित लड़ैती

लूट लूट दधि गोरस खायो, खायो कछुक भूमि ढरकायो।
चीर छोरि डारन अटकायो, कंठसरी मुक्तन (की) लर तोरी।[199]

—बांकेपिया

समान सवैया एवं सरसी का मिश्रित प्रयोग बांकेपिया के पदों में द्रष्टव्य है—

पावस ऋतु समाज जुरि आयो, श्याम घटा घन गरज सुहायो।
दामिनि दमक मेघ झर लायो, चलत सुगंध समीर।
दादुर मोर पपीहा बोलैं, हंस चकोर मद गति डोलैं।
पशु पक्षी सब करत किलोलैं, पिक चातक अलकीर।[200]

विजया : इसमें १० १० १० १० पर यति एवं चरणांत में प्रायः रगण का विधान होता है

मगल विधायिनी, प्रम रस दायिनी,
भक्ति अनपायिनी, होइ जिय सर्वथा।
परमपद सोपान, करि गदाधर पान,
आन आलाप ते, जात जीवन वृथा।[२०१]
—गदाधर भट्ट

पलक अलकन लुकी, तिलक झलकन झुकी,
कमल कुडल रुकी, ललक भृकुटी तनी।
अधर दर कदरी, सुघर वर सुदरी,
जुगल गल चंदरी, धवल हीरन खनी।[२०२]
—रामराय

बोलत मधुर बैन, चलत चपल नैन,
फिरत अकेली कहुं, मदन दहाई हो।
ललित लड़ैती फिर, जाउ सब भवन को,
याही मे बड़ाई, (कुल) लोक भलाई हो।[२०३]
—ललित लड़ैती

व्यास कृत 'रास पंचाध्यायी' की पूरी रचना त्रिपदी छद मे हुई है।[२०४]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि चैतन्य संप्रदाय का ब्रजभाषा काव्य भाव व रस की दृष्टि से ही नहीं अपितु भाषा, शैली, अलकार, छंद आदि कला के क्षेत्र मे भी अत्यंत समृद्ध एवं अनूठा है।

संदर्भ

१ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद २४
२. गदाधर भट्ट की वाणी, पद ६१
३. अभिलाष माधुरी—'युगल विहार शतक'—(द्वितीय)—ललित किशोरी कृत—दोहा १२
४. माधुरी वाणी—केलि माधुरी, क० १०७
५. आदि वाणी—रामराय कृत, दोहा ४
६. रस कलिका—प्रथम दल—वृंदावन विलास माधुरी, पद स० २३, पंक्ति स० १९ से २६
७. वल्लभ रसिक की वाणी, छ० स० ११, पृ० ५२
८. शोभन पदावली, छ० ९, पृ० ८२
९. वही, पृ० १९
१०. वही, छ० ६, पृ० ३०
११. वल्लभ रसिक की वाणी, दो० १४, पृ० २३

१२. वल्लभ रसिक की वाणी, दोहा ५४, ५५, पृ० ४८, ४९
१३ सू० म० वाणी, पद सं० ३०
१४. किशोरीदास जी वाणी, पृ० २७
१५. माधुरी वाणी, छन्द १४, पृ० ४
१६. वही, छन्द २८७, पृ० ४६
१७ श्री राधारमण रस सागर मनोहरदास कृत, छन्द ६५, पृ० २५
१८. व० र० वाणी, छन्द ८, पृ० २१
१९ वही, साँझी का पद, पृ० सं० ६ में १०
२०. आदि वाणी, पद ६८
२१. पथिक मनाम—मंगलाचरण, पृ० १
२२ सू० म० वाणी, पद १०३
२३. शोभन पदावली, छन्द २२, पृ० ५५
२४. वही, छन्द ४, पृ० ३५
२५ उद्धव चरित्र, पृ० १३८
२६ हिंदी साहित्य—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० १८४
२७ सूरदास मदनमोहन की वाणी, पद २४
२८. वही, पद ६७
२९. वही, पद ६१
३० व० र० वाणी, छन्द ११, पृ० ५२
३१ माधुरी वाणी, छन्द ३२, पृ० ७५
३२. शोभन०, छन्द ३, पृ० ३५
३३ माधुरी वाणी, पृ० ७९
३४ अभिलाष माधुरी—वृंदावन शतक (प्रथम), दो० ९२, ९३
३५. स० म० वाणी, पद २८
३६ सू० म० वाणी, पद ५
३७. अभिलाष माधुरी, दो० १२ व ३७, पृ० २२ व २४
३८. वही, दो० २, पृ० २१
३९. माधुरी वाणी—मान माधुरी, पद ३५, पृ० ८२
४०. भ० व्यास वाणी, प० ३४२, पृ० २७९
४१ गदाधर भट्ट की वाणी, प० ३९
४२. माधुरी वाणी—दो० २५७, २५८, पृ० ४१
४३. दंपति विलास—'जुगल शृंगार'—ललित लड़ैती कृत, दो० १६, १७
४४. सू० म० वाणी, पद १०३
४५. भ० व्यास वाणी, प० ४३७, पृ० ३०६
४६. वही, प० ४४०, पृ० ३०७
४७. आदि वाणी, पद ७८

४८ द० वि० 'जगल शृंगार' दो० १
४९ शोभन० छन्द १३, पृ० ३४
५०. अभिलाष माधुरी, दो० १४, पृ० २९
५१. भ० व्यास, वाणी, प० ३६७, पृ० २८६
५२. शोभन० छन्द १३, पृ० ४७
५३. माधुरी वाणी, दो० २५६, पृ० ४१
५४ रसिक कर्णाभरण लीला, पृ० १३
५५. पथिक मराल, छन्द २१, पृ० ५
५६ भ० व्यास वाणी, प० ४०३, पृ० २९६
५७. उद्धव चरित्र, पृ० ३४७
५८. सू० म० वाणी, पद ५९
५९. उद्धव चरित्र, पृ० १२७
६०. प्रेमोद्दीपनी, छन्द १८, १९, पृ० ७
६१. मधुर मिलन—बांकेपिया, छन्द ३७, पृ० ११
६२. अभिलाष माधुरी—ललित किशोरी, दो० १०, पृ० ३१
६३. भ० व्यास वाणी, प० ६९३, पृ० ३८२
६४. उद्धव चरित्र. पृ० ३२५
६५. वही, पृ० ९९
६६. अ० मा०, दो० २०, पृ० २२
६७. पथिक मराल, छन्द १
६८. उद्धव चरित्र, पृ० ३०८
६९. ब० र० वाणी, दो० १४, पृ० ४४
७० उद्धव चरित्र, पृ० ३०७
७१. भ० व्यास, वाणी, प० ७२०, पृ० ३८८
७२. उद्धव चरित्र, पृ० २७९
७३. सू० म० वाणी, पद ९
७४. ग० म० वाणी, पद ३२
७५. वही, पद ६०
७६. किशोरी वाणी. पृ० १४
७७. किशोरी वाणी, पृ० २७
७८. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० २
७९. शोभन पदावली, पद १, २, पृ० १७
८०. गदाधर भट्ट की वाणी, पद २०
८१. वही, पद १३
८२. गौरांग भूषण मजावली—गौरगणदास, छन्द ५२, पृ० १२
८३. वल्लभ रसिक की वाणी, छन्द १२, पृ० ६६

८४ शोभन पदावली ७३ पृ० ६६
८५ अष्टयाम व [illegible] पृ० ७
८६. सूरदास मदनमोहन की वाणी, पृ० ५८
८७. किशोरीदास की वाणी, पद ६६
८८. वही, पृ० ५८
८९. रस कलिका—ललित किशोरी, पद ११२
९० ऋतु प्रमोद - आकेलिया, पद १२, पृ० ४
९१. रस कलिका - ललित किशोरी, दल १६, पद ५९८
९२. भ० व्यास वाणी, प० ८८, पृ० २१३
९३ वल्लभ रसिक की वाणी—'सदा की मांझ', २, ३, पृ० ३६
९४. श्री किशोरी करुणा कटाक्ष—'श्याम विरहिनी लीला', ललित लड़ैती कृत, पद ९
९५ वही, नवल सखी दान लीला, दो० ११
९६. वही, 'माखन चोर लीला', पद १५
९७. दंपति विलास—'उराहनौ लीला',—ललित लड़ैती कृत, पद ७
९८ रामहरि ग्रंथावली —रामहरि कृत, दो० ५६, पृ० ५
९९. सूरदास मदनमोहन की वाणी, प० ३३
१०० किशोरीदास की वाणी, पृ० ५४
१०१. रस कलिका, दल १५, पद १०९
१०२. वही, पद १५७
१०३. वही, पद १२१
१०४. हुकास—अधिक मात्रा में जल पीने की प्यास
१०५. रासत—अंगीकार करना।
१०६. उबीठी—अरुचिकर या अनाकर्षक होना।
१०७. भौरी—जंगल से बीनी या तोड़ी गई लंबी जलाने योग्य लकड़ियों का बोझ।
१०८. भ० व्यास वाणी
१०९. गौरांग भूषण मंजावली, पृ० २२
११०. शोभन पदावली, पद ३२, पृ० २२
१११ वही, पद ३३, पृ० २२
११२. माधवदास की वाणी, पद ८, पृ० १०९
११३. वही, पद ११, पृ० १०९
११४. आदि वाणी—रामराय, प० ८०
११५. उद्धव चरित्र—कृष्ण चैतन्य 'निज कवि', पृ० १३९
११६. वही, पृ० ४२३
११७. वही, पृ० ३७३
११८. भ० व्यास वाणी
११९. रस कलिका, दल १६, दो० ८

१२० अभिलष माधुरी, दो० २२, पृ० ३

१२१ कि० क० क० दो० ८, पृ० २

१२२. दंपति विलास—'जुगल शृंगार', दो० २

१२३. माधुरी वाणी, दो० ४४, पृ० ६

१२४. ब० र० वाणी, दो० ४४, पृ० ६

१२५. शोभन०, दो० ४०, पृ० २३

१२६. भ० व्यास वाणी, साखी सं० ५८, पृ० ४१२

१२७. मधुर मिलन, दो० ५०, पृ० १३

१२८ माधुरी वाणी, चौ० ४३, पृ० १५

१२९. ब० र० वाणी, चौ० ६, पृ० ५५

१३० रस कलिका, प्रथम दल, चौ० ७४

१३१. कुंवरि केलि, चौ० ४५, पृ० २२

१३२. माधुरी वाणी, छं० ११८, पृ० ५८

१३३. राधारमण रस सागर, छं २२, पृ० ८

१३४. अष्टयाम, पृ० २६

१३५. शोभन पदावली, सो० २४, पृ० २१

१३६ रस कलिका, दल १३, सो० ६१

१३७ कुंवरि केलि, सो० ४७, पृ० २२

१३८. माधुरी वाणी, छ० १२७, पृ० ५६

१३९ वही, छ० २०, पृ० २२

१४०. ग० भ० वाणी, छं० ४६, पृ० ५

१४१ चाहवेली, छं० १५, पृ० २७

१४२ श्री राधाविरह शतक—(चैतन्य संप्रदाय और हिंदी साहित्य को उसकी देन, डा० नरेश चंद्र बंसल, पृ० २६५ पर उद्धृत)।

१४३. वल्लभ रसिक की वाणी, पृ० ३६

१४४. गौराग भूषण मञ्जावली, छं० ८१, पृ० १७

१४५. रस कलिका, दल, १३, छ० ५६

१४६. प्रेम रस वाटिका, पृ० २३

१४७. विवेक मंजरी, छं० स० ४१

१४८. कुंवरि केलि, छ० सं० ५७, पृ० २४

१४९. शोभन पदावली, छ० ५६, पृ० २७

१५०. माधुरी वाणी, छं० ७४, पृ० ६६

१५१. कुंवरि केलि, छ० ५५, पृ० २४

१५२. शोभन, छं० ६, पृ० ८२

१५३. वही, छं० २०, पृ० ४९

१५४. माधुरी वाणी, छं० १२४, पृ० ५६

१५५ ब० र० वाणी छं० ८, पृ० ५१
१५६. अष्टयाम, पृ० ३७
१५७. श्रीभक्त० सि० १, पृ० ७८
१५८. ग० भ० वाणी, पद १६
१५९. सू० म० वाणी, पद २८
१६०. आदि वाणी, पद २४
१६१. दंपति विलास, बन झूलन लीला, पद ९
१६२. प्रेम रस वाटिका, पद ८०, पृ० ६०
१६३. सू० म० वाणी, पद ३
१६४. ग० भ० वाणी, पद १७
१६५ किशोरी० वाणी, पृ० ६
१६६ आदि वाणी, पद ५
१६७ रस कलिका, दल २, पद १
१६८. कि० क० क०, खराहुनो लीला, पद ६
१६९ आदि वाणी, पद २०
१७०. दंपति विलास, पृ० १७
१७१. किशोरी० वाणी, पृ० २०
१७२ प्रे० र० वा०, पद २३, पृ० १४
१७३. रस कलिका, दल १०, पद ६
१७४. सू० म० वाणी, पद ८४
१७५. ग० भ० वाणी, पद ३५
१७६. किशोरी० वाणी, पृ० १५
१७७ रस कलिका, दल १०, पद २१६
१७८. कि० क० क०, 'मन उमग', पद २१
१७९. ग० भ० वाणी, पद ९
१८०. रस कलिका, दल ६, पद ३१
१८१. ग० भ० वाणी, पद २९
१८२. आदि वाणी, पद ६९
१८३. सू० म० वाणी, पद ८६
१८४ ग० भ० वाणी, पद १०
१८५. सू० म० वाणी, पद २
१८६. ग० भ० वाणी, पद १६
१८७. प्रे० र० वा०, पद २, पृ० ६१
१८८. ग० भ० वाणी, पद ३७
१८९. प्रे० र० वा० पद १ पृ० ६१
१९० सू० म० वाणी पद १

१६१. रस कलिका, दल ४, पद २३०

१६२. सू० म० वाणी, पद ११

१६३. रस कलिका, दल ४, पद २३०

१६४. आदि वाणी, पद १४

१६५. सू० म० वाणी, पद ८२

१६६. ग० भ० वाणी, पद १५

१६७. रस कलिका, दल २, पद १८६

१६८. कि० क० क० 'विनय', पद ६

१६६. प्रे० र० वा०, पद ३५, पृ० ३८

२००. वही, पद २६, पृ० ३३

२०१. ग० भ० वाणी, पद १४

२०२. आदि वाणी, पद २३

२०३. दंपति विलास, भाग २—'सांझी लीला', पद १०

२०४. भ० व्यास, वाणी—राम पंचाध्यायी, पृ० ४००-४०७

उपसंहार

चैतन्य महाप्रभु की माधुर्य भावपरक प्रेमाभक्ति के अजस्र प्रवाह ने जनमानस की चेतना को दिव्य आलोक से प्रकाशित कर दिया। चैतन्य में राधा-भाव (महाभाव) की चरम प्रेमानुभूति का पूर्ण उन्मेष हुआ था। उनके प्रेम-सागर के वर्षण से लोक-जीवन रस-सिक्त एवं मधुर हुआ। चैतन्य सम्प्रदाय का भक्ति रस, दर्शन, अध्यात्म, संगीत, साहित्य, शिल्प आदि क्षेत्रों मे अपूर्व योगदान है। इस संप्रदाय की भक्ति-पद्धति, रस-दर्शन तथा उपासना विधि का व्रज तथा व्रजेतर प्रदेशों, अन्य संप्रदायों तथा उनके द्वारा रचित साहित्य पर भी व्यापक रूप से प्रभाव पड़ा। फिर, चैतन्य संप्रदाय का ब्रजभाषा साहित्य अपने ही सम्प्रदाय के प्रभाव से किस प्रकार अछूता रह सकता था? संप्रदाय की रस-साधना और साहित्य से प्रेरित होकर ब्रजभाषा में सुंदर एवं मधुर पदावलियों की रचना की गयी।

शास्त्रीय रस-पद्धति एवं दर्शन का जो सैद्धांतिक विधान गौड़ीय आचार्यों ने किया था, उसका व्यावहारिक रूप ब्रजभाषा काव्य में मुखरित हो उठा। ब्रज-भाषा कवियों ने अपने काव्य मे नित्य विहार के विधायक तत्त्वों—राधा, कृष्ण, वृंदावन, सहचरी-मंजरी का मनोमुग्धकारी सरस कथन किया है। इस रूप मे चैतन्य संप्रदाय का अपना विशिष्ट महत्त्व तो है ही, ब्रजभाषा कवियों का भी भक्ति-भाव, संगीत, अध्यात्म, दर्शन, साहित्य, कला, संस्कृति, लोक-जीवन आदि क्षेत्रों मे अपूर्व योगदान है। विगत अध्यायों मे किये गये विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है। यहाँ समग्र रूप से इस संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य का मूल्यांकन संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

कृष्ण-भक्ति साहित्य लोक-जीवन की भाव-भूमि पर निर्मित हुआ है, अतः लोक-संस्कृति के तत्त्व इस साहित्य में प्रचुरता से उपलब्ध होते हैं। चैतन्य संप्रदाय का ब्रजभाषा साहित्य भी लोक-जीवन से गहनता से संबद्ध रहा है। अपने इष्टदेव

लोक रजक कृष्ण की ब्रजलीला को अपने काव्य में अभिव्यक्ति प्रदान करने वा ये कवि ब्रज संस्कृति में आकंठ निमग्न है ब्रज के सामाजिक व सांस्कृतिक जीव की सजीव झांकी उन्होंने प्रस्तुत की है। इनमें लोक-जीवन के क्रिया-कलापों, ब्रज उत्सव, पर्व, सामाजिक मान-मूल्यों, रीति-रिवाजों, परंपरागत रूढि-विश्वासों ब्रज-प्रदेश के निवासियो की वेश-भूषा व आचार-व्यवहार आदि का सुंदर व यथार्थ चित्रण किया गया है।

ब्रज के गोप-ग्वालों की वेशभूषा का परिचय हमें ब्रजभाषा पदावली में मिलत है। कृष्ण का वेश भी गोप-बालक का ही है—

पीत बसन कटि काछिनी उर वैजंती माल।
पाग सुरंगी शीश पै शोभित मदन गुपाल।।
गोप को वेष धरि।।
मणिन जटित नूपुर चरण फेंटा कस्यो सुधारि।
तामें बंशी लसि रही, कर लकुटी संग ग्वार।।
जात बन धेनु लै।।[1]

लोक-जीवन के विभिन्न उत्सवो एवं पर्वों के माध्यम से जहां जन-साधारण के अतिशय आनंद एवं उत्साह की अभिव्यक्ति होती है, वहीं हमारे सांस्कृतिक धरोहर—मान-मूल्य, परंपराएं आदि भी विनष्ट होने से बचे हैं। इनकी सुरक्षा लोक-साहित्य के माध्यम से और भी सुदृढ़ हुई है। विभिन्न पर्वों, त्यौहारों व संस्कारों का चित्रण चैतन्य संप्रदायी कवियों ने किया है। कृष्ण, राधा व चैतन्य के जन्मोत्सव पर विभिन्न संस्कारों के साथ जन-समूह का आनंदोल्लास, उमंग व उत्साह देखते ही बनता है। (वात्सल्य भाव के प्रसंग में इनका उल्लेख किया जा चुका है)। नामकरण, छठी आदि शैशव के संस्कारों से लेकर गोचारण, गोदोहन आदि पौगंड के एवं विवाहादि कैशोर के संस्कारो का आलोच्य काव्य में समावेश है। वर्षोत्सवो में फाग (होली) का विशिष्ट चित्रण हुआ है। ब्रज की होली में चाचर नृत्य व विभिन्न रीतियों का सजीव चित्र खींचा गया है। दान-लीला, पनघट-लीला आदि विभिन्न लीलाओं में ब्रज-नारियों के स्वभाव, हास-परिहास की झांकी व ग्रामीण वातावरण देखने को मिलता है।

ब्रज की नारियों के प्रातःकालीन क्रिया-कलापों का एक सजीव चित्र देखिए, जिसमें वे प्रभात होने से पूर्व ही उठकर, दीपक जलाकर पहले मटकी, मथनी आदि की पूजा करके फिर दही बिलोने के कार्य में लगती हैं और साथ-साथ ऊंचे स्वर में कृष्ण के गुणों का गान करती रहती हैं—

प्रथम प्रभात के ही जोति करि वारिवाला।
मथनानि पूजि कें मथत दधि भई हैं।।
दीप की दीपति तें दीपति मन आभरन,
नेती खैंचिवे में कंकनादि धुनि सई है।

हलहि नितंब कुच [illegible] वनफूल लोन
तमक कपाल न [illegible]ी मसार सी छई है
[illegible] के चार औन मरिके को सार सा तो,
राश्य सी गुज्यां मानो खरग बजाई है।

लोक-जीवन के ऐसे अनेकानेक चित्र इस सम्प्रदाय के काव्य मे चित्रित हुए है जिनका विवेचन पिछले अध्यायों मे प्रसंगानुकूल किया जा चुका है। भारतीय संस्कृति के अनुरूप विभिन्न व्यवहारों, शिष्टाचारों की भी काव्य में अभिव्यक्ति हुई है। कृष्ण का नंद आदि अपने से पूज्य जनों का चरण-स्पर्श, ब्रज-जनों का अतिथि-सत्कार, विनयपूर्ण व्यवहार आदि उल्लेखनीय है। लोक-संस्कृति को चैतन्य सप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की यह महत्त्वपूर्ण देन है कि जहां इस काव्य के माध्यम से लोक-जीवन को स्वाभाविक एव सजीव चित्र परिलक्षित होते है, वहीं विभिन्न लोक-परंपराओं, सांस्कृतिक मान-मूल्यों का रूप भी सुरक्षित रह सका है।

धर्म, अध्यात्म, दर्शन के गभीर व गूढ़ स्वरूप को कृष्ण-भक्ति-साहित्य ने सरस व सरल बनाकर जन-साधारण के लिए सहज रूप से ग्राह्य बनाया है। आलोच्य कवियों के इस संबंध मे योगदान को अस्वीकार नही किया जा सकता। राधा-कृष्ण के विविध भाव-विन्यासो को इन कृतिकारों ने रोचकता से प्रस्तुत कर जन-सामान्य के भक्ति के प्रति आकर्षण को प्रबल बनाने मे अपना अपूर्व सहयोग प्रदान किया है। अपनी रस-सिक्त वाणी मे राधा-कृष्ण की लीलाओं का अनेक रूपेण संधान कर, इन कवियों ने अनेक रसिकों को आकृष्ट करके, प्रेमाभक्ति की ओर प्रेरित किया है। भक्ति-भाव के प्रभाव एवं वृद्धि मे यह योगदान अतिशय है। आध्यात्मिक एवं दार्शनिक सिद्धांतों की गुत्थियों को काव्य के माध्यम से इस सहजता से सुलझाकर प्रस्तुत किया गया है कि सामान्य जन के लिए वह सहज रूप से ग्रहणीय हो गया है।

सांप्रदायिक मान्यताओं का परिचय आलोच्य काव्य मे उपलब्ध होता है। विगत अध्यायों में संप्रदाय के सिद्धांतों के आलोक में ब्रजभाषा काव्य का परीक्षण स्थान-स्थान पर किया गया है, उससे यह बात स्पष्ट होती है कि चैतन्य संप्रदाय की मूलभूत भावना माधुर्य-भावपरक है। ब्रजभाषा-काव्य मे भी इसे सर्वोपरि स्थान मिला है। इसमें संप्रदायगत माधुर्य भक्ति एवं ब्रज-रस की प्रगाढ़ व्यंजना हुई है। दूसरे, सांप्रदायिक सखी भाव की अभिव्यक्ति भी प्रस्तुत काव्य मे हुई है। राधा-कृष्ण की प्रेमपूर्ण-लीलाओं मे गोपियां सखी भाव से भावित होकर राधा-कृष्ण की सेवा मे रत रहती है। चैतन्य संप्रदाय में सखी भाव से भी गहनतम मंजरी भाव की साधना उच्चतम मानसी साधना मानी गयी है जिसकी अतिशय महत्ता है। मंजरी भाव की उपासना इस संप्रदाय की मौलिक विशेषता है जिसकी सरस अभिव्यंजना ब्रजभाषा काव्य मे हुई है। उपासना-विधि एवं अष्टकालिक नित्य सेवापद्धति के संबंध में सांप्रदायिक परंपरा का निर्वाह हुआ है। ('भक्ति तत्त्व' नामक अध्याय में यह स्पष्ट हो चुका है)। इसके अतिरिक्त गौरांग-चैतन्य विषयक

पदावली की रचना इस सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य की अपनी विशिष्टता है जो इसे ब्रज के अन्य सम्प्रदायों से पृथक् व विशिष्ट रूप प्रदान करती है। इसमे गौरांग महाप्रभु के दिव्य स्वरूप, उदात्त व भावुक व्यक्तित्व तथा महान चरित्र का वर्णन तो मिलता ही है, सखी भावोपन्न गौरांग-लीलाओं का विविध रूप मे सरस निरूपण भी महत्त्वपूर्ण है। वस्तुत: चैतन्य की मधुर लीलाएं राधा-कृष्ण की प्रेम-पराकाष्ठा की महाभावपरक लीलाएं है। रस-विवेचन के प्रसंग में यह स्पष्ट किया जा चुका है कि सांप्रदायिक रस-विषयक मान्यताओं का व्यावहारिक रूप आलोच्य काव्य में विद्यमान है।

दूसरी ओर यह बात भी ध्यान में रखने योग्य है कि एक ही स्थल पर एक ही समय में विद्यमान विभिन्न संप्रदायों की प्राणवंत साधनाओं का परस्पर सांस्कृतिक संगम होता ही है। अत: विभिन्न संप्रदायों की मान्यताओं का एक-दूसरे पर प्रभाव स्वाभाविक है। चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य पर अन्य सम्प्रदायों का सहज प्रभाव पड़ा है। इसी प्रकार चैतन्य संप्रदाय ने भी अन्य संप्रदायों के साहित्य को प्रभावित अवश्य किया है। डा० स्नातक स्वयं राधावल्लभ संप्रदाय पर चैतन्य सम्प्रदाय के प्रभाव को स्वीकार करते है—'गौड़ीय भक्ति के शास्त्रीय विधान पर राधावल्लभ संप्रदाय की कोई छाप नही है, क्योंकि वह तो पूर्व ही विस्तारपूर्वक तैयार हो चुका था। उस क्षेत्र मे हितहरिवंश जी ने स्वय प्रेम लक्षणा के वैधी रूप के निर्माण में गौड़ीय गोस्वामियों से कुछ न कुछ ग्रहण किया होगा।'[3] ब्रज-रस, परकीया, मान, विरह आदि को जो स्थान अन्य संप्रदायों के काव्य मे मिला है, उसके मूल में चैतन्य-साधना का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसी प्रकार चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने भी अन्य संप्रदायों से प्रभावित होकर वात्सल्य भाव तथा अन्य भक्ति पद्धतियों व उपासना विधियों को स्वीकार किया है।

जहा तक साहित्यिक प्रतिभा का संबंध है, चैतन्य संप्रदाय के ब्रजभाषा कवियों ने इसका उत्कृष्ट परिचय दिया है। भावों में विविधता, सूक्ष्मता, मार्मिकता एवं पर्याप्त मधुरता है। वही कला-पक्ष भी अत्यंत समृद्ध है। रूप माधुर्य के चित्रण मे जहां एक ओर इन कवियों का सौंदर्य-बोध प्रकट होता है, वहीं अनेक सुंदर उपमानों के प्रयोग द्वारा इन्होंने अपने हृदय की सरसता का भी परिचय दिया है। इस प्रकार इस संप्रदाय का ब्रजभाषा काव्य भाव, रस, भाषा, शैली, अलंकार आदि किसी भी रूप मे अन्य किसी भी संप्रदाय से कम नही है। अनेकानेक कवि एवं उनकी अनेकानेक काव्य-रचनाओं ने भावों एवं रसों के विविध सोपानों द्वारा जिस रसात्मक अनुभूति एवं आनंदातिरेक को निष्पन्न किया है, वह इस संप्रदाय का हिंदी साहित्य को महत्त्वपूर्ण योगदान है।

इस संप्रदाय का ब्रजभाषा काव्य मात्रा में तो विपुल है ही, काव्य-रूपों की दृष्टि से भी वैविध्यपूर्ण है। काव्य-परिचय के अंतर्गत किये गये उल्लेख से यह स्पष्ट है कि इन कवियों ने लगभग सभी काव्य-रूपों में रचना की है। प्रबंध, मुक्तक, पद शैली तथा चरित काव्य, भ्रमरगीत काव्य परंपरा (संदेश काव्य) को अपनाया गया है। रस

व छंदशास्त्रीय लक्षण-ग्रंथों, स्तोत्र-काव्य, नीति उपदेश-परक काव्य तथा अनेक लीला-काव्यों की रचना हुई है। मौलिक रचनाओं के अतिरिक्त अनूदित काव्य-रचनाओं की भी प्रचुरता है जिनका भी कम महत्त्व नहीं है, क्योंकि अधिकतर अनुवाद-ग्रंथ साम्प्रदायिक सिद्धांतों व लीलाओं के सरस अनुवाद हैं। ब्रजभाषा काव्य में कृष्ण-लीलापरक रचनाएं भी हैं और गौरांग लीलापरक भी। इस प्रकार काव्य के क्षेत्र में विषय एवं भाषा—दोनों दृष्टियों से विविधता एवं प्रचुरता है। इस प्रचुर साहित्य के सृजन से ब्रजभाषा कवियों ने हिंदी साहित्य के भंडार को भरकर उसे और अधिक समृद्ध किया है। कृष्ण चैतन्य 'निज कवि' ने 'उद्धव चरित्र' की रचना द्वारा परंपरा में उपेक्षित पात्र उद्धव को महत्त्व प्रदान कर उनके चरित्र में मानवीय उज्ज्वल स्वरूप की प्रतिष्ठा की है। इस प्रकार भ्रमरगीत परंपरा में 'निज कवि' का महत्त्व अक्षुण्ण है और उनका प्रदेय अमूल्य।

वैष्णव भक्ति एवं अध्यात्म के गाम्भीर्य को संगीत के मधुर समाश्रय से अभिव्यक्त करने में आलोच्य कवियों का अभूतपूर्व योग है। भावों के वैविध्य एवं समय के अनुरूप संगीत की विविध राग-रागनियों का समायोजन अद्भुत है। पद-साहित्य की रचना शास्त्रीय संगीत की प्रणाली पर होने से भारतीय संगीत की श्रीवृद्धि हुई है। इन पदों का कीर्तनों के रूप में बहुलता से गायन इनकी लोकप्रियता का प्रमाण है। आज भी वृंदावन के मंदिरों में, समाजों में तथा अन्य स्थलों पर भी चैतन्य संप्रदाय के इन ब्रजभाषा कवियों के पदों का भाव-विभोर गान होता है। अपने पदों में संगीत के संयोजन द्वारा एक ओर इन्होंने अध्यात्म को रागात्मकता का स्वरूप प्रदान कर आकर्षक बनाया है तो दूसरी ओर भक्ति को जन-जन के मानस में गहराई तक प्रविष्ट कराने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया है। इस प्रकार संगीत और साहित्य के माध्यम से मानव की लौकिक वृत्तियों को इन कवियों ने परिष्कृत एवं रससिक्त करके 'सत्यं शिवं सुंदरम्' का मार्ग प्रशस्त किया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भक्ति भाव-व्यंजना, रसानुभूति अध्यात्म-दर्शन, शिल्प व कलागत सौंदर्य सामाजिक मान-मूल्य, सांस्कृतिक वैभव, सांगीतिक रागात्मकता—सभी दृष्टियों से चैतन्य सम्प्रदाय के ब्रजभाषा काव्य का अपूर्व एवं चिरंतन योगदान है। कृष्ण-भक्ति धारा से संबद्ध अन्य सम्प्रदायों के साहित्य की भांति इस संप्रदाय के ब्रजभाषा काव्य का भी अपना अक्षुण्ण महत्त्व है। इस दृष्टि से आलोच्य काव्य का महत्त्व भक्ति के साथ-साथ उच्च कोटि के साहित्य के रूप में भी है।

संदर्भ

१. प्रेमोद्दीपनी—बाकेपिया, प० १९, १६, पृ० २२
२. उद्धव चरित्र—कृष्ण चैतन्य 'निज कवि', पृ० ७६
३. राधा-वल्लभ संप्रदाय—सिद्धान्त और साहित्य, पृ० ५८६

परिशिष्ट-१

विविध संग्रहालयों में उपलब्ध चैतन्य सम्प्रदाय के हस्तलिखित ब्रजभाषा काव्य-ग्रंथों की विवरणात्मक तालिका

(अकारादिक्रमानुसार)

क्र. सं.	ग्रंथ-नाम	कर्ता	पत्र संख्या	आकार सें. मी. में, पंक्ति प्रति पत्र, अक्षर प्रति पंक्ति	अवस्था लिपि	लिपिकाल (वि. संवत्)	प्राप्ति स्थल, ग्रंथांक	अन्य विवरण
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१.	अनन्य मोदिनी	प्रियादास	१-९	२३ × १६, १८; १७-१८	पूर्ण, अतिउत्तम, लि. अति सुंदर व स्पष्ट	१७८३	महाराजा संग्रहालय, जयपुर, ग्रं. २४३७	लि. स्था. रूपनगर, लि. क. हेमराज। इस गुटके के अंत में कुछ स्फुट कवित्त वल्लभ रसिक व मनोहरदास कृत है।
२.	अनन्य मोदिनी	प्रियादास	१०	१९ × १५	पूर्ण, उत्तम लि. साधारण	१९८४	कृ. जं. से. संस्थान मथुरा, ग्रं. ३६००४३	लि. क. नारायणप्रसाद, लोई बाजार, वृंदावन। बाबा कृष्णदास (कुसुम सरोवर, मथुरा) के संग्रहालय से उपलब्ध प्रति।

१	२	३	४	५	६
३.	अनन्य मोदिनी	प्रियादास	१-६	१७.५ × २७; १९; २४-२९	पूर्ण, उत्तम लि. अति सुदर व स्पष्ट
४.	अभिलाष माधुरी	ललित किशोरी	१२०	१८.७ × २७.३; १२-१९; ३०-३८	पूर्ण, उत्तम लि. साधारण
५.	अष्टयाम	वृंदावनचंद्र	२१३	१७ × १०.८	अपूर्ण, जीर्ण
६.	अष्टयाम सेवा सुधा	चंद्रगोपाल	१०	२१.७ × १८.५; १२; ४०	पूर्ण, उत्तम लि. सुंदर व स्पष्ट

७	८	९
१९७५	श्री रामेश्वरदास टाटीवाला, जयपुर	इस रचना के बाद मे हरिराम व्यास कृत १८ पद लिपिबद्ध है जो हरिराम जौहरी द्वारा लिखाई गयी पोथी (लि. का. सं. १८२६) की प्रतिलिपि है। प्रतिलिपि-कार—कृष्णप्रसाद, वृंदावन निवासी, मुहल्ला श्री राधा-रमण जी।
२०वीं श.	प्रा.वि.प्र., अलवर ग्र. ५३९९ (३३०-३४३)	पं. रामदत्त शर्मा द्वारा प्रदत्त ग्रंथ। इसमें कवि कृत १४ लघु रचनाएं हैं।
	कृष्ण चैतन्य भट्ट, वृंदावन	
१९८७	वृं. शो. सं. वृंदावन ग्रं. ४२०२	लि. क. यमुनावल्लभ गोस्वामी, वृंदावन।

१	२	३	४	५
७.	अष्टयाम सेवासुधा	चंद्रगोपाल	८	१२·२ × १७·८; १८; १९
८.	उक्ति जुक्ति रस कौमुदी	गो कृष्ण चैतन्य 'निज कवि'	४५४	३२.२ × २०.४; २२-२३, १६-२०
९.	उत्कंठा माधुरी	माधुरीदास	४१	२१ × १७; १०; १८
१०.	कवित्त संग्रह	प्रियादास आदि	१	१२.२ × ३१.५; ३०, ३५

७	८	९
	वृ. शो. स., वृंदावन, ग्रं. ७६२८	
१९२८	पूर्वार्द्ध भाग – डॉ बंसल, कासगंज (बाबू ब्रजभूषणदास द्वारा प्रदत्त) उत्तरार्द्ध भाग—बाबू ब्रजरत्नदास का संग्रह, भूषण लाज, लंका (वाराणसी)	कुल छं. सं. ५४७१
	कृ. ज. से. सं., मथुरा, ग्रं. ३६००४२ वृं. शो. सं., वृंदावन ग्र. ३३०८	लि. क. वंशीदास । लि. स्था. गोविन्द कुंड, वृंदावन। पत्र के एक ओर लिखित। इसमे प्रियादास, आनंदघन व चतुर्भुजदास के कवित्त हैं।

१	२	३	४	५	६
?१.	कहानी रहसि व कुवरि केलि	ललित सखी	२४	१९ × २५	पूर्ण, लि. स्पष्ट
,२.	किशोरीदास की वाणी	किशोरीदास	४	१६.८ × ११; ९; २४	अपूर्ण, जीर्ण-शीर्ण
,३	किशोरीदास की वाणी	किशोरीदास			
,४	केलि माधुरी	माधुरीदास	११	२० × २५.७; १६; २६	अपूर्ण, अनि उत्तम

८	९
कृ ज.से.स., मथुरा, ग्र. ३५८०२८	र.का.सं. १८३६ । कुल छं.सं. ५३ व ११९। बाबा कृष्णदास के संग्रह से प्राप्त। गो. कुंजीलाल (बरसाने निवासी) के पुस्तकालय की ह. प्रति की बाबा जी द्वारा की गयी प्रतिलिपि ।
वृं.शो.सं., वृंदावन, ग्र. १७८३	केवल पत्र सं. ४०, ४१, ५० व ५१ हैं।
छुट्टन जी भट्ट ग्रंथागार, मदन-मोहन जी का मंदिर, वृंदावन	
वृं.शो.सं. वृंदावन, ग्र ८४१९ (ए)	र.का.सं. १६८७

१	२	३	४	५	६
१५.	क्षणद्वा गीति चिंतामणि	मनोहरदास	१५	२१.४ × ११; १०; २४	पूर्ण, अति उत्तम
१६.	क्षणदा गीति चिंतामणि	मनोहरदास	५१	१६.२ × २०.२; १८; ३०	पूर्ण, उत्तम
१७.	क्षणदा गीति चिंतामणि	मोनहरदास			
१८.	गदाधर भट्ट की वाणी	गदाधर भट्ट	२९	१३.८ × १९.५	पूर्ण, जीर्ण
१९.	गदाधर भट्ट का पद (गोविन्द स्वरूप का वर्णन)	गदाधर भट्ट	१	१०.५ × २१.५; १९; २५	जीर्ण
२०.	गदाधर भट्ट की पदावली	गदाधर भट्ट	२०	१८ × २७.८	पूर्ण, उत्तम
२१.	गीत गोविन्द भाषा	मू. जयदेव टी. वैष्णवदास 'रसजानि'	७५		